विषय सूची

सं०	विषय	पृष्ठ
	भूमिका	१
१	मेवाड़ और मारवाड़ (बापा रावल)	१३
२	चित्तौड़ का पहला साका (महारानी पद्मिनी) ...	२१
३	राना हमीर	४६
४	राजकुमार चन्दासिंह	६४
५	राना कुम्भ	८१
६	पृथ्वीराज और ताराबाई	६८
७	राना सांगा	११५
८	चित्तौड़ का दूसरा साका (म० करुणावती) ...	१३४
९	राना उदयसिंह	१४३
१०	चित्तौड़ का तीसरा साका	१५७
११	हल्दीघाट का युद्ध	१७४
१२	राना प्रताप	२००
१३	सुकेतसिंह के १६ लड़के	२१६
१४	दिल्ली और मेवाड़ का मिलाप	२३२
१५	मारवाड़ के विशेष सूरमा (उमरावसिंह) ...	२४७
१६	जसवन्तसिंह वालिये मारवाड़ और उस की रानी ...	२६३
१७	३० वर्षीय युद्ध	२७६

सं०	विषय	पृष्ठ
१८	राना संग्रामसिंह	२६३
१९	अजीतसिंह के लड़के	३०८
२०	धार्मिका कृष्णाकुमारी	३३२
२१	जयसिंह वालिये अम्बर	३४६
२२	घाटी के सरदार	३७०
२३	सती का शाप	३८४
२४	जैसलमेर के राजकुमार	३९९
२५	जयसलमेर के बाज़ २ सरदार	४१४
२६	मीरांबाई	४३१
२७	आल्हा ऊदल और उनकी माता देवलदेवी ...	४४०
२८	संयोग्यता (कन्नौज की राजकुमारी)	४६[illegible]
२९	एक देश अच्युत राजपूत	४[illegible]
३०	जैसलमेर की राजपूतनी	[illegible]९३
३१	एक राजपूतनी का सन्देशा	५०५

* ओ३म् *

भूमिका

तपसा येऽनाधृष्यास्तपसा ये स्वर्ययुः ।
तपो ये चक्रिरे महस्तांश्चिदेवापि गच्छतात् ।
ये युध्यन्ते प्रधनेषु शूरासो येतनूत्यजः ।
येवा सहस्रदक्षिणास्तांश्चिदेवापि गच्छतात् ।

अर्थ—तप के बल से जो किसी से दबते नहीं, और तप के बल से जो स्वर्गधाम को प्राप्त होते हैं, और जिन्होंने अत्यन्त श्रेष्ट तप किया है, हे महाभाग्य तुम उनमें जाकर मिलो। जो संग्रामों में युद्ध करते हैं, और जो शूर बीर रण क्षेत्र में जूझ जाते हैं, और जिन्होंने सहस्राणि सहस्र दक्षिणाएं दी हैं तुम उन में जाकर मिलो। (ऋग्वेद)

"सत्य" की घोषणा के लिए सुन्दर शब्दों अथवा विचित्र वाणी की आवश्यकता नहीं "सत्यता" की वेदी (प्लेटफारम) स्वयम् एक ऐसी जगह है कि जहां विविध प्रकार के आचार विचार, मत, मतान्तर, और रुचियां रखने वाले मनुष्य आनन्द से परस्पर मिल सकते हैं। और जिस समय "सत्यता" की महा बलवान शक्ति अपना प्रभाव दिखाने लगती है उस समय उस की थरथरा देने वाली घोर गर्जन श्रोताओं और उपस्थित जनो

के श्रवण इन्द्रिय को वेधन करती हुई उनके हृदय व मस्तिष्क में प्रविष्ट होती है। और जब एक बार किसी हृदय पर वह अपना अधिकार कर लेती है तो फिर दुनियां भर की कोई शक्ति उसे उसके अधिकार से वंचित और विहीन नहीं कर सकती। अति गर्ववान ऊंचे पहाड़ इस महान शक्ति के श्री चरनों में अपना सिर रखते हैं, सामुन्द्र की विकराल लहरें उसका प्रचण्ड वेग देखकर मौन मारुत (दम बखुद) होजाती है। अग्नि, वायु, जल, पृथिवी, आकाश सब उसके आगे हाथ बांधकर आधीनताई का दम भरते हैं।

"मोक्ष" का सन्मान करने वालो! मोक्ष व्यर्थ और कल्पित बातों पर वाद विवाद करने और लड़ने झगड़ने से प्राप्त नहीं होती, किन्तु "सत्यता" पर स्थिर होने, और, सत्य के अनुसार कार्य्य करने से प्राप्त होती है। संसार के घोर दुःखो और क्लेशों से घबराए हुए प्रिय मित्रो! "सत्यता" के अविनाशी और अटल रूप के संयोग से ही तुम्हें इन दुःखों और क्लेशों पर जय लाभ करने और "भवसागर" के पार जाने का अवसर मिल सकता है। उस अध्यात्मिक आदर्श की पूर्ति जिस की व्याख्या "वेदों" के मंत्र, उपनिषदों के आदेश "ऋषियों के बचन" और "शास्त्रों" के संक्षिप्त किन्तु सार गर्भित शब्दों में होती है तुम को केवल "सत्यता" के विकाश में दिखाई देसकती है। इस लिये इस विश्व व्यापी संग्राम की दशा में सत्यता को केवल एक बार अपने हृदयों पर अधिकार कर लेने दो और फिर तुम स्वयम् देखोगे कि तुम्हारी "निराशा" आशा से, तुम्हारा "दुःख" सुख से और तुम्हारा "बन्धन" निर्बंध

अर्थात् मोक्ष से बदल जायगा और दैनिक सांसारिक व धार्मिक कर्तव्यों के पालन में तुम्हारी सम्पूर्ण दिक़्क़तें सहज बन जायेंगी कांटे गुलाब के स्वहावने फूल बन जायगे मृत्यु जीवन के आकार में परिवर्तित हो जायगी। आदि से लेकर अन्त तक अप्रिय और दुःख उत्पादक घटनाएं आंखों से अदृश्य हो कर ऐसे विस्तीर्ण और खुले क्षेत्र में विहार करने और जगतपिता परमात्मा की विचित्रता के देखने का अवसर प्रदान करेंगी, जिसकी असीमता के आगे सीमा शब्द को लज्जा से सिर नीचा करना पड़ेगा, और क्या आश्चर्य्य कि तुम भी आत्मिक आवेश (रुहानी जज़बा) में आकर बेधड़क यह कह उठोः—

हे जगदीश जगत के कर्ता, अद्भुत तुम्हारी रचना।
बरणि जाय नहिं मुझसे स्वामी, ज्यों गूँगे का स्वपना।
गिरवर नदी सघन वन देखूँ, अथवा खानी * देखूँ।
नेत्र मेरे प्रभु केवल दो हैं, इनसे क्या क्या देखूँ।

यह "सत्यता" की महिमा है यह सत्यता का अनन्त तेज है। उसके सामने सांसारिक सुख और आनन्द तुच्छ हैं। उसका संयोग होते ही आप नित्य (नफ़सानियत) की घृणित काया चूर २ हो कर बिनष्ट हो जाती है। और अयुक्तिक तुच्छ व काली सठता की बदसूरती की जगह सुन्दर स्वहावनी ज्योति का रूप मुक्तामणि की भांति चमचमाता हुआ अपनी वास्तविकता का प्रकाश करने लगता है।

---

*खान अर्थात् मादन का कान।

क्या तुम ऐसी "सत्यता" के जानने और उसके प्राप्त करने तथा उस पर स्थिर रहने के लिए तैयार हो ?

यदि सचमुच तुम्हारा हृदय इस भेद को जानना चाहता है, और तुम्हारे हृदय में लाभ उठाने की प्रबल उत्कण्ठा वर्तमान है तो तुम सत्यता की देवी से दूर नहीं रह सकते। तुम्हारे लिए यह संकेत ही यथेष्ठ होगा कि तुम किन महापुरुषों की सन्तान हो ? फिर तुम अपनी समस्त सोई हुई शक्तियों को अपने अन्दर सतेज और जाग्रत रूप में अवलोकन करोगे। सदाचार हीनता का जो उलहना दिया जाता है वह साहस और बीरता से बदल जावेगा। कहावत है कि:—

एक सिंह का बच्चा बचपन से ही भेड़ों और बकरियों के झुण्ड में रहता था और बड़ा होने पर उन्हीं की भान्ति गर्दन झुका कर घास चरा करता था और उन्हीं का सा जीवन व्यतीत करता था, परन्तु एक दिन समीप के जंगल में से एक भयंकर व्याघ्र निकल आया, और उन भेड़ों व बकरियों के रेवड़ पर झपटा, कुछ भेड़ बकरियां भाग गईं और कईयों को व्याघ्र ने मार डाला, भेड़ों में पला हुआ सिंह भी वहां खड़ा था व्याघ्र को उस की अवस्था पर शोक हुआ ! उसने उस से पूछा तू कौन है और यहां क्या काम करता है ? इस ने उत्तर दिया कि मैं बकरी हूं और तृण चरता हूं। बन का सिंह यह सुन कर लज्जित हुआ और उसे एक तालाब के किनारे लेगया और पानी में उस की परछाई दिखा कर कहा "देख ! मेरे व तेरे आकार में क्या अन्तर है ? तू बकरी नहीं सिंह है क्योंकि तेरा रूप बकरियों का सा नहीं है" इतना सुनना था कि उस

सिंह के दबे हुए संस्कार नए सिरे से उभर पड़े, उसके नेत्रों में खून उतर आया, बकरियों का स्वभाव जाता रहा, बकरियों के रेवड़ का रहने वाला शेर बच्चा पहाड़ की तराई में बिफरने लगा, और इर्द गिर्द के पशुओं का शिकार करने लगा, जंगल ने उस को अपना राजा स्वीकार किया, और जिस समय वह ज़ोर से कछार में गूंजता था तो उस की भयंकर गर्जना को सुन कर भेड़ बकरी को कौन कहे रीछ, हाथी, मैंडे चीते तन्दुवे तक कांप उठते थे।

यह एक कल्पित कथा है परन्तु अलंकार और उपमाओं की श्रेणी में अविद्या रूपी अन्धकार में छिपी हुई "सत्यता" पर निश्चय प्रभा (रौशनी) डालती है।

हे प्यारे आर्य्य भाइयों! तुमको भी उस अज्ञान शेर बच्चा की तरह अपनी वास्तविकत से अवगत होने की आवश्यकता है और जिस समय तुम अपनी वास्तविकता (असलियत) से अवगति लाभ कर लोगे तो यह अविद्या का काला बादल जो तुम को विद्या के सूर्य्य से पृथक रखता है और उस से ज्योतिर्मान होने नहीं देता पानी की तरह से पिघल कर नदी नालों की राह से बह जावेगा। ज्ञान का प्रकाश होगा अज्ञानता का नाश होगा, मिथ्या विश्वास, कल्पित मत, अशुद्ध विचार अपवित्र क्रियाएं सब आप ही दूर हो जावेंगी न किसी से द्वेष होगा, न किसी से घृणा होगी। बरन् तुम इस कल्याण और शुभदायक माननीय प्रसाद की प्राप्ति से मनुष्य जीवन के उच्च आदर्श की पूर्ति कर सकोगे, जिस को विस्तीर्ण व्यवस्था से शास्त्रों के पृष्ट के पृष्ट भरे पड़े हैं।

अब प्रश्न यह है "कि तुम कौन हो" ? और "तुम्हारी वास्तविकता (असलियत) क्या है ?

हम इस मनोरञ्जक प्रश्न का उत्तर ऐसे रूप में कभी न देंगे जैसा कि प्रायः भूले हुए और शास्त्रों के यथार्थ अर्थ को उलटा समझने वाले सन्यासी दिया करते हैं। हम जो बात कहेंगे अथवा लिखेंगे वह सच्ची होगी।

जैसा यह प्रश्न सरल है वैसे ही इसका उत्तर भी सरल होगा, और जिस प्रकार वनराज सिंह ने बकरियों में पले हुए सिंह बच्चे को सरलता से कहा था, कि 'तू बकरी नहीं सिंह का बच्चा है' और उस ने तुरन्त अपनी पिछली घृणित अवस्था को त्याग उग्र अवस्था को धारण किया था। उसी प्रकार हे प्यारे पाठको ! हम भी तुम से कहते हैं :—

कि तुम ऋषियों की सन्तान, महात्माओं के बालक, और महाराजा रामचंद्र जी जैसे धीर वीर आर्य्य योधाओं के नाम लेवा हो। तुम थोड़ी देर के लिए अपनी वास्तविकता पर विचार करो और अपनी आधुनिक दुरावस्था को सोचते हुए हाथ पांव मारने की चेष्टा करो, ताकि उन महात्माओं की तरह तुम भी दुनिया को दिखला सको "कि हम में भी वही तेज और बल है"

इस उत्तर को सुन कर तुम को अचम्भा हुआ होगा, निस्सन्देह तुम्हें आशा हुई होगी कि इसका उत्तर तत्ववेताओं की दृष्टि से दिया जायगा जिस में कोई नवीन विचार, नवीन तत्व, नवीन सूक्ष्म सिद्धान्त अथवा मुक्ति पाकर तुम महा मग्न होजाते। परन्तु प्यारे मित्रो ! "सत्यता" से बढ़ कर न कोई

वस्तु नई है और न प्राचीन है। न उस से कोई चीज अधिक आकृष्टकारी है न अधिक मनोरञ्जक। जब हम यह कहते हैं कि दुनिया को सभ्यता की शिक्षा देने वाले तुम्हीं हो जिन्हों ने उजाड़ जंगलों को बसा कर रमणीक बनाया था, नगर और ग्रामों की नींव (बुनियाद) डाली थी। विद्या और शिल्प का प्रचार किया था, ज्ञान और विज्ञान को न केवल प्रज्वलित किया था, किन्तु उस के उत्पादन कर्ता भी थे। चार खून्ट पृथिवी में तुम ही प्रभुता का डंका बजाते थे, और तुम्हारे सन्मुख संसार की विविध जातियां दंडवत प्रणाम कर सभ्यता व भद्रता की पुस्तक पढ़ती थीं। तो इस से अद्भुत और विचित्र बात अन्य क्या हो सकती है। और जब पिछले समय की उन्नत शील दशा का वर्तमान समय की गिरी हुई दशा से तुलना करते हैं तो इस से बढ़ कर दुखदाई और विचित्र घटना दृष्टिगत नहीं होती।

शास्त्रकार कहते है, कि "आत्मा वैजायते पुत्र" अर्थात पुत्र पिता का आत्मा है। यह शतपथ ब्राह्मण का वचन है। वर्तमान समय के यूरपीयन तत्ववेताओं का शिरोमणी प्रोफैसर हैकसले भी इस सूक्ष्म सिद्धान्त को स्वीकार करता हुआ बतलाता है कि आचरण (कैरैक्टर) पीढ़ी प्रति पीढ़ी (नसलन बाद नसलन) बराबर किसी न किसी रूप में अङ्कुरित होता रहता है। और यदि वह किसी कारण कभी दब जावे तो इस से यह नहीं समझ लेना चाहिये कि उस का बीज विनष्ट होगया, क्योंकि बहुधा देखा गया है, कि मनुष्य के गुण यदि उस के बालक में प्रकाशित नहीं हुए और किसी प्रतिकूल

कारण से सद्‌गुणों के स्थान में अवगुणों का प्रकाश हुआ किन्तु उस के * पौत्र वा † प्रपौत्र के आकार में विशेष रूप से प्रकाशित हुआ, और देखने वालों ने साक्षी दी कि वह सच मुच अपने पूर्वज का अनुरूप था। इसको किंचित अधिक सपष्ट करने के लिए हम राजस्थान के पढ़ने वालों को राना संग्रामसिंह (सांगा) उदयसिंह, और महाराना प्रताप के जीवन चरित को विचार पूर्वक अध्ययन करने की प्रेरणा करते हैं। राना संग्रामसिंह (सांगा) इस प्रकार का वीर योधा क्षत्रिय हुआ है जिस का सम्पूर्ण राजपूतों को पवित्र अभिमान है।

उदयसिंह इसके विरुद्ध दुर्बल कायर और साहस हीन था, परन्तु फिर तीसरी पीढ़ी में इसी उदयसिंह का लड़का प्रताप राना सांगा की शूरवीरता का पैदा हुआ, और उसने राना सांगा के नियमों को नए सिरे से प्रचलित किया। प्रताप स्वयम कहा करता था, कि सांगा के पश्चात् मुझे होना चाहिये था, यदि मेरे और सांगा के बीच में उदयसिंह अन्तरवर्ती न होता तो मुझको दुनियां में कोई शत्रु परास्त न कर सकता। संस्कार के एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में प्रकाशित होने का यह एक उत्तम और दृढ़ उदाहरण है। जिस प्रकार एक मनुष्य का स्वभाव उसकी सन्तान में सिलसिले के साथ प्रकाशित होता रहता है वैसे ही समुचितरूप (मजमूई तौर) से जातीय स्वभाव के सम्बन्ध में भी समझ लेना चाहिये। और जब कोई जाति ऐसे जबरदस्त शूरवीर योधाओं की सन्तान हो

---

* १ पोते † २ पड़पोते

जिन्हों ने दुनिया में महान करणी की है तो समझ लेना चाहिये कि उनके हृदयों के भीतर भी उसी प्रकार के साहस गम्भीरता शूरवीरता आदि के भाव बीज रूप में अवश्य मौजूद होंगे, और केवल प्रतिकूल सामानों के कारण दबे हुए पड़े होंगे किन्तु जहां और जब कहीं अनुकूल सामान प्राप्त होंगे, वह फिर किसी न किसी समय उभर खड़े होंगे ।

भाग्य उदय *कणिका के होंगे निश्चय राखो मन में,
कृपा सिन्धु का कृपा हाथ है व्याप रहा प्रति जन में।

इन छिपे हुए संस्कारों के उन्नत व सतेज करने और किसी गिरी हुई जाति को उन्नति के पथ पर चलाने के लिए सब से उत्तम विधि जो है वह यह कि समयानुसमय उसके वीर पूर्वजों के कारनामे याद दिलाए जांय ताकि उन में वीर भाव उत्पन्न हों, वह अपनी वास्तविकता को समझें और जातीयता के भाव व जातीय मरियादा की शृङ्खला में अपनी अस्ति (हस्ती) को स्थिर रखते हुए अपने आपको मृत्यु के पञ्जे से सुरक्षित रख सकें। वीरपूजा (सेल्फ परसती) के नियम के कायम करने का सब से बढ़कर और मुख्य कारण यही था परन्तु शोक ! कि इस असल उद्देश्य को न समझने के कारण मूर्खता ने एक ओर उस पर मतवाद की मोहर लगा दी और दूसरी ओर श्रेष्ठ जीवनधारी व सन्मान के योग्य विशेष २ आत्माओं को साधारण मनुष्यों के समुदाय में धर घसीटा और इस प्रकार की नासमझी ने वीरपूजा

---

* जर्रह ।

की प्रणाली को इस देश में एक प्रबल धक्का लगा दिया, यहां तक कि वह पूर्णतः नष्ट और लोप होगई. और जो चीज़ वास्तव में जातीयता के भावों की संचालक और प्रेरक होती वह ऐसी व्यर्थ और निकम्मी बन गई कि जाति को उन्नत और सतेज करने के स्थान में उसको दिनों दिन शोक और दुःख के रसातल में गिराती जाती है।

अब भी यदि किसी प्रकार से वीरपूजा की श्रेष्ट और आवश्य प्रणाली का उचित संशोधन करके उसका अभिप्राय लोगों को समझाया जाय तो सम्भव है कि आर्य्य जाति के नव युवकों में उनके पूर्वजों का जोश और धर्म्म का सच्चा अनुराग तुरन्त उत्पन्न व जाग्रत हो जाय और वह सुगमता से उन्नति के मार्ग में पदार्पण कर सकें।

वृटिश राज्य का जो सब से श्रेष्ट लाभ आर्य्य सन्तान को प्राप्त हुआ है वह यह है कि उसके विद्वानों के परिश्रम ने जातीय कारनामों के सुरक्षित रहने की सामग्री उत्पन्न कर दी। अन्यथा दिल्लीपत पृथिवीराज चौहान के पश्चात् देश की परतंत्रता ने तो हमारे जातीय इतिहास के नष्ट भ्रष्ट करने और विविध स्थानों के पुस्तकालयों के जलाने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। इन सन्मान के योग्य सत्यप्रिय इतिहासकारों की श्रेणी में जिस विद्वान पुरुष का नाम सब से पहले लिखे जाने का अधिकारी है वह करनल टाड साहब हैं, जो राजिस्थान में पोलीटिकल एजंट के पद पर बरसों तक नियुक्त रहे थे। इनकी प्रसद्धि पुस्तक "राजिस्थान" वास्तव में एक अमूल्य

भंडार है जिस से प्रत्येक जन को अवगत होने की आवश्यकता है।

शोक ! कि यह पुस्तक अपनी अतिकायता (अधिक ज़ख़ामत) व बहुमूल्यता के कारण सर्व साधारण के हाथों तक नहीं पहुंच सकती थी मिस गबरेल फि्टिंग साहिबा ने उनका सार लिखा और हम अब उन से और सर जार्ज बर्डवुड साहब बहादुर के० सी० आई० से आज्ञा लेकर टाड राजिस्थान से सहायता लेने व मनोरंजक वृद्धि करने के पश्चात उसको आर्य्य जाति के सुशिक्षित नव युवकों के भेंट [नज़र] करते हैं और परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि जिस पवित्र और उच्च उद्देश्य को लेकर यह लिखी गई है वह उसके पाठ और अध्ययन से पूरी हो और हमारे पढ़ने वाले अपने पूर्वजों के कारनामों का स्मरण करते हुए अपनी वास्तवविकता के समझने और उन्हीं की तरह मनुष्यत्व के पथ पर चलने का उद्योग करें।

यदि पढ़ने वालों के हृदयों पर ऐसे प्रभाव उत्पन्न हुए तो लेखक अपने परिश्रम को सुफल समझ कर धन्य २ होगा :—

यह इच्छा है मेरी प्यारो ! सत्य कहूं मैं तुम से
हममें सभी नेक धार्मिक हों, मधुर वचन कहें मुख से।
विद्वान् हों देश के सेवक, चतुर गुणी सब विध से,
साहस करें दुःख सब नाशे, बल पाकर बल निधसे।

शिवव्रतलाल

मेवाड़ और मारवाड़

दोहा।

नृप की शोभा न्याय है, कवि की है कवितायं ।
शूर की शोभा खड्ग है ईशानदेव कह गाय ।

१—बापा रावल ।

क्या आर्य्या सन्तान जवानाने हमीं थे,
जी हिम्मतो जी मतंबत व साहबेदीं थे ।
आगाह दिलो अहले वफ़ा अहले यक़ीं थे,
गुञ्चा दहन महरलक़ा माहे मुबीं थे ।
बरबाद करें कोह को हामू को उलट दें,
आसानी से हां क़िलए गरदूँ को उलट दें ।

कई सौ वर्ष व्यतीत हुए भारतवर्ष में एक नगर बलंभीपुर के नाम से आबाद था, सिलादित्य नामी महा प्रसिद्ध और प्रतापी योधा उसका राजा था । उसने चिरकाल तक न्याय और धर्म्म के अनुसार राज्य किया। दूर व निकट के राजे उसकी बीरता और पराक्रम का सुयश सुन कर कांप उठते थे वह रणक्षेत्र में अकेला हज़ारों को भगा देता था। लाखों का दल उसका रूप देखते ही थर्रा जाता था, और इस लिए वह बलंभीपुर के इर्द गिर्द के मुलकों में अत्यन्त शूरमा और वीर समझा जाता था ।

कहावत है कि उसके पास एक अत्यन्त असील चंचल और बलवान घोड़ा था, उसकी चतुरता और होशियारी के सम्बन्ध में भांत २ की विचित्र और अलौकिक कथाएं वर्णन की जाती हैं। उन में से कितनी ऐसी विचित्र हैं कि जिनको बुद्धि स्वीकार नहीं करती। वह एक सुन्दर हयशाला में बन्धा रहता था, और राजा सिलादित्य अवश्यकता के समय जब उसकी पीठ पर सवार होकर ललकारता तो देखने वालों के नेत्र चकित रह जाते थे। और कोई जन उसका सामना नहीं कर सकता था। कथाओं में वर्णन किया गया है कि यह रत्न घोड़ा सूर्य्य ने प्रसन्न होकर उसे दिया था और उसकी सारी कृतकार्य्य व प्रसिद्धता का भेद कैवल इसी घोड़े को समझना चाहिये।

एक समय किसी प्रबल शत्रु ने वलंभीपुर पर चढ़ाई की परन्तु किसी के मन में इस बात की आशंका तक नहीं थी कि बीर सिलादित्य किसी प्रकार परास्त होगा। लेकिन उसका दुष्ट मंत्री शत्रु से मिल गया और उस से कहा कि मुझे कुछ पुरस्कार दो तो मैं सिलादित्य की बरबादी की तदबीर तुमको बता दूंगा। शत्रु ने पुरस्कार देने का वादा किया तब उस दुष्ट मंत्री ने कहा, कि किसी प्रकार सिलादित्य के उत्तम घोड़े को विनष्ट कर दो और हयशाला को अपवित्र करदो फिर तुम्हारी जय होगी, क्योंकि जब घोड़ा हाथ से जाता रहेगा तो उसके साहस को आघात पहुंचेगा और फिर वह कुछ न कर सकेगा।

शत्रु प्रसन्न हुआ और मंत्री ने किसी न किसी यत्न से घोड़े को वहां से पृथक करा दिया और हयशाला को अपवित्र करा डाला।

इस घटना के थोड़े ही दिनों के पश्चात राजा के गुप्तचरों (जासूसों) ने खबर दी कि शत्रु निर्भीकता से नगर की ओर आ रहा है। और इस बार उस में असाधारण उत्साह और विशेष कर हर्ष के चिन्ह दिखाई देते हैं। सिलादित्य ने दूतों के मुख से यह वृतांत सुन कर अपनी फौज में डङ्का बजाने की आज्ञा दी और आप भी शत्रु से युद्ध करने के लिए अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित होने लगा, परन्तु जब वह हथियार बांध कर घोड़े पर सवार होने के लिए हयशाला में गया तो वहां क्या देखा कि उसका जीवन धन, रण क्षेत्र का साथी बहादुर घोड़ा वर्तमान नहीं और हयशाला में इतस्ततः रुधिरकी बून्दें छिड़की हुई हैं। इस दुर्घटना से राजा के हृदय को महा आघात पहुंचा। उसने अपने मनमें समझ लिया कि अन्तिम समय आगया, घोड़े का पृथक होना मेरे लिए संसार असार से शीघ्र विदा होने का संकेत है। उसने तलवार के कबजे पर हाथ डाला और दूसरे घोड़े पर चढ़ कर किले के बाहर वीरता और साहस से युद्ध करना आरंभ किया।

निराश ने उसको बिलकुल निर्भय बना दिया था, उसे जीने मरने की कुछ परवाह नहीं थी केवल शत्रु के संहार करने की लगी हुई थी। जिस तरफ़ उसने घोड़े की बाग उठाई शत्रु सेना की पलटने पल में साफ कर डाली। उस की तीक्षण खड्ग ने हज़ारों का रक्त पिया और हज़ारों उस के घोड़े की टापों के नीचे कुचल कर मर गए। किन्तु परिणाम यह हुआ कि वह स्वयम् भी मैदान युद्ध में काम आया। उस का स्वर्गधाम को सिधारना था कि शत्रुओं ने बलभीपुर के राजवंश के मनुष्यों

को एक २ करके बध कर डाला और सुन्दर व शोभायमान नगर को पूर्णतः विध्वंस कर डाला।

बहादुर सिलादित्य की रानीयां अपने पति की लाश के साथ चिता पर बैठ कर भस्म होगईं। केवल एक रानी इस लिये जीवित बची कि वह उन दिनों अपने पिता के घर किसी धार्मिक रसम के उपलक्ष में गई हुई थी वह गर्भवती भी थी। अभी वह अपने पिता के घर से लौट कर आही रही थी कि मार्ग में एक भद्र पुरुष ने उस से कहा कि हे सन्मान के योग्य महारानी! महाराज सिलादित्य रणक्षेत्र में जूझ गया और उसकी शेष सब रानियां पवित्र अग्नि के द्वारा सुरलोक को सिधार गई अब वहां शत्रुओं का अधिकार है इस लिए तुझे वहां जाना उचित नहीं। बलभीपुर विध्वन्स किया जा रहा है, राजकुमार बुरी तरह मारे जा रहे हैं।

रानी ने यह दुःख प्रद समाचार सुन कर अपना माथा पकड़ लिया, उसपर मानो शोक व दुःख का पहाड़ गिर गया। उसकी आँखों में सारी दुनिया अन्धेर हो गई। और वह उसी समय वहां से भाग कर पहाड़ के दर्रे में जा छिपी।

यहां उसके गर्भ से एक बालक उत्पन्न हुआ। ग़रीब रानी ने उस बालक को एक पुजारी ब्राह्मण को सौंप दिया और उससे प्रार्थना की देखो इस बच्चे को ब्राह्मण के पुत्र की तरह शिक्षा देना परन्तु इसका विवाह केवल क्षत्रिय कुल की कन्या से करना। यह कह कर वह दुखिया पृथिवी पर लेट गई आँखें ऐसी बन्द हुई कि फिर इस संसार में कभी नहीं खुलीं। ब्राह्मण ने उस बालक को पालना करने के निमित्य अपनी कन्या को

दिया, और उसके पर्वत में उत्पन्न होने के कारण उसका नाम गुहा रक्खा गया और उसका लालन पालन भली भांत होने लगा।

उसके रक्षा कर्ताओं की यह इच्छा थी कि गुहा ब्राह्मणों के कर्तव्य सीखे और उस में निपुणता लाभ करे। परन्तु उन की इच्छा पूरी न हुई उन्हों ने जान लिया कि उसका स्वभाव पूर्णतः और भान्त का है। उसका स्वभाव उत्कट*हठी† और लड़ाका था, ब्राह्मणों के साथ खेलने से घृणा करता था और आखेट व मृगया* करके प्रसन्न होता था। राजपूतों के बालक जो स्वभाविक मनचले बहादुर होते हैं उन्हें प्रिय समझता था लड़ना झगड़ना तो उसके लिए साधारण बात थी। वह बचपन में शेरों चीतों और रीछों का मुकाबला करता था और उनको मार कर प्रसन्नता लाभ करता था।

अभी उसकी उमर पूरे ग्यारह वर्ष की भी न हुई थी कि वह ब्राह्मण के घर को छोड़ कर चला गया। और जंगल के भीलों में रहने लगा।

भील भारतवर्ष की एक प्राचीन जाति है यह लोग जंगलों और पहाड़ों में ही रहते हैं। शरीर ठिगना, रंग काला, परन्तु बड़े फुरतीले होते हैं। शिकार और शत्रु पर बहुधा तीर चलाते हैं, और इस ज़ोर से तीर मारते हैं कि शत्रु के प्राण नहीं बचते। वह जंगलों में रह कर स्वाधीनता (आज़ादी) का जीवन व्यतीत करते हैं न किसी को कर (महसूल) देते हैं, न किसी को अपना मालिक समझते हैं। वह स्वयम् अपने लिए आवश्यक नियम

---

* तुन्द। † जिद्द। * शिकार।

तैयार करते हैं जिस से यह प्रकट होता है कि वह प्राचीन समय की किसी स्वतंत्र जाति की सन्तान हैं जो केवल पंचायती के नियम को मानती थी।

मेवाड़ या उदयपुर के दक्षिण का प्रदेश ईदर के नाम से प्रसिद्ध है भीलों का एक समूह यहां रहता था और गुहा ने यहां आकर उनके साथ रहना अधिक पसन्द किया।

एक समय ऐसा संयोग हुआ कि कुछ नवयुवक भील गुहा के साथ खेल रहे थे, उन नवयुवकों के मन में खेलते २ यह इच्छा उत्पन्न हुई कि अपने पड़ोसियों की तरह वह भी अपना एक स्वामी नियत करें। गुहा का रूप रंग उन सब भीलों से अच्छा था उसके मुख मंडल से तेज और वीरता की किरणें निकलती थीं। लड़कों ने उसे पास बुला लिया और एक भील ने हंसी २ में अपनी उंगली ज़ख़मी करली और उस से जो रुधिर निकला उसी से गुहा के माथे पर तिलक कर दिया। जब भीलों के सरदार ने इस बात को सुना तो वह लड़कों के इस काम से बहुत प्रसन्न हुआ। और गुहा तथा उसकी सन्तात के लिए ईदर का इलाका सदा के लिए उसे सौंप दिया ताकि वह वहां का राज्य करें। गुहा की सन्तान गुहलौत राजपूत कहलाती है।

समय के हेर फेर से यवनों के अत्याचारों से पीड़ित होकर जगत विख्यात न्यायशील नौशेरवां नामी शहनशाह ईरान की सन्तान भारतवर्ष में भाग आई थी ईरानी नसल की एक शहज़ादी भी थी जो पारस के धार्म्मिक बादशाह की पोती होती थी।

गुहा का उसके साथ विवाह होगया और उदयपुर के राना गौरव स्वरूप इस बात को वर्णन करते हैं कि माता की ओर से वह नौशेरवां की सन्तान हैं।

गुहा के पश्चात् उसकी सन्तान ने लगातार आठ पीढ़ी तक राज्य किया परन्तु अन्त में भीलों को उनसे घृणा होती गई और वह खुल्लम खुल्ला कहने लगे कि हम को दूसरी जाति के मनुष्य को स्वामी मानने की कोई आवश्यकता नहीं। इसका फल यह हुआ कि एक दिन राजा जब जंगल में शिकार खेल रहा था बहुत से भील उस पर टूट पड़े और उस अकेले को घेरकर निर्दयता से मार डाला और उसके बंश वालों ने वहां से भागकर बड़ी मुश्किल से अपने प्राण बचाए।

यद्यपि गुहा ब्राह्मण की कन्या के घर से भागआया था परन्तु राजा होजाने पर उसने उसको याद किया था और उसकी सन्तान को बुलाकर बंश का पुरोहित बना दिया था जो आदि से अन्त तक राज बंश की पुरोहताई के काम को करती रही थी। जिस समय गुहलौत बंश पर आपदा आई उस समय ब्राह्मणों में से एक ब्राह्मण ने उस राजा के तीन वर्ष के नन्हें बालक को (जिसे भीलों ने जंगल में मार डाल था) शत्रुओं के हाथ से बचाया। पहले उसने उसको एक पहाड़ी किले में लेजाकर छिपा रक्खा, परन्तु उस किले को भी उत्तम रक्षा का स्थान न देखा, इसलिए वह उस को नगेन्द्र नामी अच्छे कसबे में लेआया। यह कसबा उदयपुर नगर से जो अधुनिक समय मेवाड़ की राजधानी है उत्तर की ओर दस मील दुरी पर है।

यहां ऊंची पहाड़ी के दर्रों में एक ब्राह्मण "एकलिङ्गशिव" और उनके "वाहन नन्दी" की पूजा किया करता था।

यह दर्रा तीन ओर से फटा हुआ और इतना भयानिक था कि साधारण मनुष्यों को इधर जाने का साहस नहीं होता था, तरह २ के वृक्षों और झाड़ियों से भरपूर था जिन में रीछ और चीते तक वास करते थे, दुखिया माता ने उस जगह को अच्छी समझकर अपने अकलौते बेटे को यहाँ लाकर छिपाया और बड़े दुःखों तथा कष्टों के साथ उसकी पालना की। इस बालक का नाम उसने "बापा" रक्खा था जिसका अर्थ है "बच्चा" ऐसा जान पड़ता है कि उस दुखियारी ने भय के मारे उसका सुन्दर नाम नहीं रक्खा था। बापा की ऐसे उजाड़ और भयंकर दर्रे में पालना हुई। जब उसकी आयु ज़रा बड़ी हुई वह निर्विघ्नता से इधर उधर घूमने लगा। और आस पास के ग्रामों के रहने वाले लड़को से मित्रता पैदा करली। और उनके साथ प्रातःकाल से लेकर सायंकाल तक गाय चराया करता था। इसमें सन्देह नहीं कि उसको विद्या और शिक्षा लाभ करने का अवसर नहीं प्राप्त हुआ था परन्तु नसलों के राज्य के संस्कार ने उसको औरों से श्रेष्ठता प्रदान की, और वह उन ग्वालों का सरदार बन गया, और गाय चराने वालों का जथा उसकी आज्ञा हृदयगत भाव से पालन करने लगा।

सावन भादों के महीने में जब धरती हरी २ घास से ढक जाती है, खेत व जंगल हरे भरे दिखाई देते हैं बादल की झूमती हुई घनघोर घटाएं दुनिया को विशेष प्रकार का आनन्द देती है। उन दिनों भारतवर्ष के प्रत्येक विभाग में झूले का

मेला हुआ करता है बालक बालिकाएं वृक्षों की शाखाओं में रस्से डालकर झूला झूलते हैं और समय के अनुसार गीत गाकर प्रसन्नता लाभ करते हैं। यह आनन्द दायक त्योहार देश के प्रत्येक विभाग में मनाया जाता है, परन्तु वृन्दावन तथा मथुरादि वृज के झूलों के मेले अपनी विशेषता व सुन्दरता के लिए बहुत नामी और प्रसिद्ध हैं। बापा की आयु अभी कुछ ज़्यादह नहीं थी कि वह गाँव के बाहर अपने साथियों के साथ वृक्षों के साए में खेल रहा था, इतने में नगेन्द्र नगर के सरदार की लड़की अपनी सखी सहेलियों को साथ लिए हुए वहां झूला झूलने की इच्छा से आ निकली संयोग से वह रस्सा साथ लाना भूल गई थी। रस्से के बिना झूला डालना कठिन था, देर तक सब बालिकाएं सोचती रहीं।

अन्त में उन्हों ने बापा से रस्सा लादेने की प्रार्थना की। बापा ने उन्हें उत्तर दिया कि रस्सा तो मैं तुम्हें लादूंगा और तुम सब को अच्छी तरह झुला दूंगा परन्तु पहले तुम मेरे साथ एक खेल खेलो।

सरदार की कन्याने सरलता से पूछा कि वह क्या खेल है? बापा ने कहा आओ हम सब विवाह का खेल खेलें।

लड़के लड़कियां सभी खेल के इच्छुक होते हैं। बचपन में गुड्डी गुड्डा के विवाह का खेल एक प्रसिद्ध बात है। सरदार की कन्या ने खेलने की इच्छा प्रगट की। उसकी साड़ी का अञ्चल बापा के दुपट्टे से बांधा गया और नगर की छैः सात लड़कियां हाथ में हाथ मिलाकर एक वृक्ष के गिर्द फेरे देने लगीं जब यह रीति पूरी होगई तो बापा ने उनके झूलने का

प्रबन्ध कर दिया, भोली कन्याएं देर तक झूलती रहीं । और जब झूल चुकीं तो चुपके से अपने २ घर को चली गईं और खेल के परिणाम की ओर किंचित ध्यान नहीं दिया ।

परन्तु बापा ने सब ग्वालों को एकत्र किया और उनसे सौगन्द ली कि इस खेल को वह भूलकर भी किसी से वर्णन न करेंगे। और यह भी इकरार करा लिया कि इस विशेष घटना के विषय में नगर में जो कुछ चर्चा सुनाई दे उस से उसे तुरन्त अवगत करें ।

बापा नित्यप्रति गाएं चराया करता था । ग्वालों को चिन्ता हुई कि भूरी गाय जो सब गौओं से अच्छी और हृष्ट पुष्ट तथा दूध देने के योग्य है सायंकाल के समय कुछ भी दूध नहीं देती । जब यह बात नित्य होने लगी तो सब को सन्देह होने लगा कि उस गाय का दूध बापा पीलिया करता है। और दूत उसके पीछे लगाए गए ताकि जब वह दूध चुराकर पान करे उसी समय उसे पकड़ लें ।

बापा को भी यह बात मालूम होगई कि उस पर लोग अनुचित सन्देह कर रहे हैं। उसको यह बात बुरी मालूम हुई उसने क्रोधित होकर कहा कि मैं चोर नहीं हूं न दूध चुराता हूं मुझे स्वयम् आश्चर्य है कि गाय के दूध को क्या हो जाता है और कौन दुह लेता है ?

उस दिन से वह भूरी गाय की विशेष चौकसी और रक्षा करने लगा। गाय रोज़ एक झाड़ी में घुसकर आंखों से छिप जाती थी और देर तक बाहर नहीं आती थी एक दिन बापा

उसके साथ २ रहा, जब गाय झाड़ी में जाने लगी, तो वह भी पीछे २ चला गया थोड़े फासले पर घने वृक्षों के मध्य में शिव जी की मूर्ति दिखाई दी और पास ही एक साधू समाधि लगाए ध्यानावस्थ था। उसको संसार असार से कोई प्रयोजन नहीं था। योगाभ्यास के द्वारा परमात्मा के दर्शन का इच्छुक होकर संसारी मनुष्यों से पूर्णतः विरक्त रहता था बापा को उसकी दशा देखकर आश्चर्य्य हुआ उसने साधू का हाथ पकड़ कर जगा दिया।

साधू सच मुच सिद्ध की अवस्था को पहुंचा हुआ था, उसने अपनी आसाधारण बुद्धि शक्ति से मालूमकर लिया, कि बापा राज वंश से है। और वह संसार में महत करणी करनी के लिए उत्पन्न हुआ है। बापा ने साधू को प्रणाम किया और कहा मैं ग्वाला हूं इस गाय के खोज में यहां तक आया हूं। और इसी के द्वारा आप के दर्शन मुझे प्राप्त हुए हैं। महा पुरुष साधू ने कहा कि गाय ईश्वर की प्रेरणा (आज्ञा) से मुझको दूध देने के लिए यहाँ प्रति दिन आती है।

उस दिन से बापा लगातार गाय के साथ साधू के दर्शन को जाने लगा और उसका शिष्य (चेला) बन गया। वह रोज़ उसके चरण धोता स्नान कराता, दूध, फल फूलादि लाकर भेंट धरता। साधू ने उसको धार्म्मिक शिक्षा देनी आरम्भ की और बापा ने अपने गुरु से शिवजी की पूजा की विधित सीखी, और सच्चे दिलसे शिवजी का उपासक बनगया फिर उस महात्मा ने बापा को यज्ञोपवीत पहनाया, उसी दिन बापा ने रात्रि को स्वप्न में देखा कि लाल रंग के वस्त्र पहने हुए एक दिव्य स्त्री

सिंह पर सवार होकर आई है और उसको एक भाला, एक धनुष बाणसमेत और एक दोधारी तलवार देती है ताकि वह अपने लिए देशको विजय करे। तलवार विशेष कर ऐसी थी कि जिसको बलवान युवा पुरुष ही उठा सकता था, प्रातःकाल बापा ने इस स्वप्न का वृत्तान्त अपने गुरु से वर्णन किया उसने समझ लिया कि मेरा उद्देश्य पूरा हुआ उसने बापा को सम्बोधन करके कहा, कि कल प्रातः काल मैं इस संसार असार को त्याग दूंगा और स्वर्गधाम को सिधार जाऊंगा तुम प्रभात होने से पहले यहां हाज़िर रहना ताकि मैं तुमको अपना आशीर्वाद देता जाऊं।

बापा ने उसी समय पहुंचने का वादा किया परन्तु रात के समय आलस्य और निद्रा ने उसे ऐसा दबाया कि वह प्रातः काल देर तक सोता रहा, जब आंख खुली वह व्याकुल होकर उस तरफ़ को दौड़ा, और शिवजी की मूर्ति के निकट पहुंचकर देखा तो साधू वहां विराजमान न था फिर बापा ने इधर उधर निगाह दौड़ाई परन्तु वह दिखाई न दिया तब उसने आकाश की ओर दृष्टि पात की तो क्या देखा कि साधू एक सुन्दर सिंहासन पर बैठा हुआ ऊपर की ओर जा रहा है और इन्द्र लोक की अप्सरायें उसका विबान अपने कन्धों पर उठाए हुए हैं। साधू बापा की प्रतीक्षा (इन्तिज़ार) कर रहा था। जब बापा की और उसकी चार आंखें हुईं तो साधू ने कहा

" सिर ऊंचा कर और मेरा आशीर्वाद ले "

कहते हैं कि साधू के मुख से यह बचन निकलते ही बापा का शरीर बीस गज़ ऊंचा हो गया, साधू ने फिर उस से कहा

'अपना मुँह खोल दे' बापा ने अपना मुँह खोल दिया, साधू ने उसपर थूक दिया। बापा को घृणा मालूम हुई वह और पीछे को हट गया, इसलिए साधू का थूक मुँह में पड़ने के स्थान में उसके पांव पर जा पड़ा। चलते हुए साधू ने कहा कि यदि तूने मेरा बचन माना होता तो अजर अमर हो जाता परन्तु जा अब भी कोई शस्त्र तुझको काट न सकेगा।

इतिहास इस घटना को इस प्रकार वर्णन करता है सम्भव है कि यह भी एक स्वप्न हो।

इसके पश्चात् बापा अपनी माता के पास आया और उस को सारा वृतान्त कह सुनाया, माता बहुत विस्मित और आनन्दित होकर कहने लगी कि हे भाग्यमान पुत्र तू ग्वाला नहीं है तेरा पिता राजा और तेरी माता रानी है मैंने तेरी पालना की और तुझे शत्रुओं से बचाने के निमित्य भेष बदल लिया था जा अब सिंह पुरुषों की तरह अपने वंश की विशेषता का प्रकाश कर ईश्वर ने तुझको इसी उद्देश्य के लिए उत्पन्न किया है वह शुभ उद्देश्य अपने जीवन से पूरा कर, बापा ने माता को धैर्य देकर कहा कि मैं ऐसा ही करूंगा।

जब बापा के नगेन्द्र नगर से चलने का समय आया तो सरदार की कन्या से जो विवाह का खेल खेला था उसका चर्चा होने लगा। कारण यह कि वह अब व्याहने के योग्य हो गई थी। जब सरदार को यह बात मालूम हुई कि बापा ने खेल २ में उसके साथ विवाह कर लिया है तो वह बहुत ही क्रोधित हुआ क्योंकि देश के चलन और रीति के अनुसार अब उसका विवाह किसी दूसरे पुरुष के साथ नहीं हो सकता था।

बापा को उसके साथियों ने इस बात से अवगत कर दिया वह सरदार के क्रोध का समाचार सुन कर चित्तौड़ चला आया जो बड़े विस्तीर्ण मैदान में बसा है। यहां उस का मामां राज्य करता था। जो मालवा देश के प्राचीन राज बंश का राजा था, उसने बड़े आदर से भानजे का स्वागत किया और अपने सरदारों में उसको पदवी दी।

दरबारी लोग बापा की मान प्रतिष्ठा को देखकर मन ही मन में जलते थे। और उनको इस पद से गिराने के लिए अनेक मनसूबे सोचते थे। एक बार एक यवन शत्रुने चित्तौड़ पर चढ़ाई की, ईर्षाग्नि से जले हुए सरदारों ने राजा की ओर से शत्रु से लड़ने से इनकार कर दिया, और साफ शब्दों में कह दिया कि जिस बापा का इतना आदर व सन्मान किया जाता है उसको अकेले लड़ने के लिए भेजा जावे हम अपना पद त्यागने को तैयार हैं परन्तु हम चित्तौर के लिये कभी तलवार न उठाएंगे।

जब बापा ने यह वृतान्त सुना तो उसकी आंखों में खून उतर आया, उसने भरे दरबार में कहा, कि जिस में देश और जाति का प्रेम नहीं है वह मनुष्य नहीं है उन्होंने वृथा चित्तौड़ में जन्म लिया है। मैं अकेला रण क्षेत्र में जाऊंगा और शत्रु को परास्त करके आऊंगा।

डर से न क़दम ठहरेंगे, बेदादगरों* के।
यक दम में उड़ा दूंगा सिर, उन खैरहसरों † के।

---

* ज़ालिमों के। † सरकशों के।

निदान जब वह फ़ौज लेकर शत्रु से लड़ने के लिए चला तो चित्तौड़ के सरदार बहुत लज्जित हुए, और ईर्षा द्वेष रखने पर भी उनकी राजपूती वीरता ने यह बात सहन नहीं की, कि चित्तौड़ की रक्षा का काम एक गैरजन के सिपुर्द किया जाय, वह भी शत्रु से लड़ने के लिए निकल खड़े हुए।

बापा ने रणक्षेत्र में ऐसी बीरता दिखाई कि शत्रु मित्र सभी दङ्ग रह गए। उसकी अद्भुत बीरता को जिसने देखा उसी के मुख से प्रशंसा की ध्वनि निकली:—

चक्रित भए देवता मन में, नभ में करें प्रशंसा।
ईशान देव कह धन्य वीर तू, क्षत्रिय बंश उत्पन्नसा।

शत्रु दल पराजय हुआ उसके सरदार ने जिसका नाम सलीम था और जो ग़ज़नी से चढ़कर आया था वीर बापा को अपनी बेटी ब्याह दी।

बाबा की वीरता ने थोड़े ही दिनों में सब सरदारों के मन को मोह लिया। वह अपने दुर्बल और साहस हीन राजा से अप्रसन्न थे, उनकी यह इच्छा थी कि कोई शूरबीर योधा चित्तौड़ की राज गद्दी को सुशोभित करे। उन्होंने बहादुर बापा को सब प्रकार से इस पद के योग्य पाया, और उसे राजपद ग्रहण करने की प्रेरणा की। बापा ने भी इस बात को पसन्द किया, चित्तौड़ के राजा को अपना कोई सहायक दिखाई न दिया, तो वह वहां से भाग कर किसी अन्य देश को चला गया।

बापा ने राजसी मुकुट अपने सिर पर रक्खा, और अपना उपनाम (खिताब) "इकलिंग का दीवान", "हिन्दुओं का

सूर्य" "राजगुरु" और दुनिया का सरदार प्रसिद्ध किया।

बापा ने बहुत दिनों तक चित्तौड़ में राज किया और इर्द गिर्द के प्रान्तों को विजय करके उसमें मिला लिया।

वह महावीर, साहसी, और बलवान पुरुष था उसकी कई रानियां थीं, विन्द्रद्वीप की सुन्दर रानी को सब से अधिक प्यार करता था, और जब बापा चित्तौड़ से अलोप हो गया तो उसी रानी के गर्भ से उत्पन्न हुआ २ राजकुमार उसकी जगह गद्दी पर बैठा।

बापा के जीवन चरित्र के सम्बन्ध में तरह २ की कहावतें प्रसिद्ध हैं। उसकी मृत्यु के विषय में इसी प्रकार की कथाएं राजिस्थान में सुनी जाती हैं। कहते हैं कि जब वह बूढ़ा हुआ उसने चित्तौड़ से पश्चिम की ओर कूच किया और उस तरफ़ के समस्त राजाओं को युद्ध में परास्त किया, खुरासान की उजड्ड जाति को अपने आधीन किया।

असफ़हान, कन्धार, कश्मीर, ईराक़, ईरान, काफ़रिस्तान, आदि के बादशाहों ने उसकी अधीनता स्वीकार की। और अपनी २ बेटियां उसके साथ ब्याह दीं। यह लड़कियां संख्या में तीस बतलाई जाती हैं। इनके गर्भ से एक सौ तीस बालक उत्पन्न हुए और एक २ लड़का एक २ पठान बंश का मुखिया हुआ। समुचित रूप (मजमूई तौर) से यह नौशेरे पठान कहलाते हैं। जब उसकी आयु अधिक हुई। उसने खुरासान के राज्य को भी त्याग दिया और कुछ दिनों योगाभ्यास करने के पश्चात् वह समाधि की अवस्था में जीवित पृथिवी में गड़ गया।

बापा शिस्सौदिया बंश के राजपूतों का सब से बड़ा और

मुखिया है। उसके प्रतिनिधि (जानशीन) भी रावल कहलाते थे। पीछे से उनकी उपाधि राना की हुई। बापा के समय से लेकर आजतक मेवाड़ का महाराना "शिव का दीवान" प्रसिद्ध है। और जब वह मन्दिर में जाता है तो पुजारी का कर्तव्य आपही पूरा करता है।

चित्तौड़ का पहला साका।

महारानी पद्मिनी।

दोहा।

पति प्रेम में पद्मिनी, ऐसी थी लवलीन।
ज्यों साधू हरिप्रेम में, सब आपा तजि दीन॥ १॥
प्रेम पती को ना तजे, प्राण रहैं की जांहि,।
मन वच क्रम पति को भजे, उसकी सम कोई नांहि॥ २॥
नहीं घर का नहीं द्वार का, नहीं पुत्र का सोग।
केवल पति वियोग का, लगा था उसको रोग॥ ३॥

जो जाति मरना जानती है अथवा जो मर कर अपनी वीरता का प्रमाण दे सकती है वही जीवित समझी जाती है और उसी में जीवन है। आज जापान* जातीय प्रेम की वेदी पर

* यह पुस्तक उस समय लिखी गई थी जब रूस और जापान में युद्ध हो रहा था।

किस प्रकार अपने प्यारे पुत्रों को बलिप्रदान कर रहा है किस प्रकार वह अमूल्य प्राणी, साहस और उत्साह के साथ जाति के नाम पर अपने आप को निवछावर कर रहे हैं। क्यों कि उन में जान है वह जीवित हैं। और उनमें इस प्रकार का जीवन है जिस को इर्द गिर्द के मुल्कों के निवासी अनुभव करने के बिना नहीं रह सकते। हिन्दी भाषा की एक प्रसिद्ध कहावत में जीवन के सिद्धान्त की शिक्षा और गूढ़ तत्वों का विषय कूट २ कर भरा है और वह यह है कि, "जीते जी कोई मनुष्य नाक पर मक्खी नहीं बैठने देता" और जापान कार्य्य परायण होकर भारतवर्ष की इस कहावत को अक्षर प्रति अक्षर सच्चा प्रमाणित कर रहा है।

एक समय था जब कि इस पवित्र भारतवर्ष में भी जान थी इस की सन्तान जीती जागती थी और जीवन के नियमों को अच्छी तरह समझती थी। औरङ्गज़ेब के अत्याचारों (ज़ुल्मों) से सताए जाकर लोग "गुरुतेग़ बहादुर" के पास आकर फ़रियाद करते हैं। भारतवर्ष का सच्चा पुत्र उन्हें बतलाता है, कि तुम कुर्बानी करो ताकि यह अत्याचार तुम पर से दूर हो सकें। और आगामी समय के दुःखों से मुक्ति दिलाने वाला बहादुर गुरु गोविन्द सिंह जो अभी किशोर व अल्पायु था बोल उठता है, महाराज ! क़ीमती से क़ीमती चीज़ की कुर्बानी हो, और आपसे बढ़कर क़ीमती कोई वस्तु नहीं है। "गुरुने समझा बालक सच कह रहा है" थोड़े ही दिनों के पीछे औरङ्गज़ेब के जल्लाद गुरु तेग़ बहादुर की क़ीमती ज़िन्दगी को निर्दयता

की खड्ग से समाप्त कर देते हैं, सिर धड़ से अलग होकर दूर जा गिरता है। और इस प्रकार उस मुबारक और पवित्र शरीर से जो सहस्रों रुधिर की बूँदें धरती पर गिरती हैं उनसे हज़ारों बीर और निडर सिंह पैदा होकर अपने जातीय जीवन का अनुभव करने के योग्य खेल दिखला देते हैं। ज़ुल्म का वृक्ष जड़ मूल से उखड़ जाता है और निडर सिंह पैदा होकर चारों ओर अपने जीवन और वीरता का प्रमाण देते हैं। इस कुर्बानी के भीतर जातीयता के जीवन और जाति पर निवछावर होने के भावों के भेद छिपे हुए है। उन्नति होने और बढ़ने के लिए आवश्यक है कि जीव धरती की तह में छिपकर अपने तुच्छ और अकिंचन अस्तित्व को मिटा दे ताकि वह एक से अनेकरूप धारण करे। और फिर उन्नत व विकश्यत होकर सारे संसार में चारों तरफ़ जिन्दगी उत्पन्न करें, क्यों कि जीवन प्रारम्भ में अन्न के द्वारा ही आता है और विविध घटनाओं को लांघकर वह विचित्र रूप से अपना प्रकाश दिखलाता है।

जिस देश या जिस जाति में इस प्रकार खुशी से मरने का नियम काम करता हुआ दिखाई दे, अथवा जिसमें ऐसे मनुष्य मौजूद हों जो औरों की भलाई के लिए अपने निज के लाभ को त्याग सकें, उसके विषय में यह कहना कि वह मुर्दा है मिथ्या होगा क्यों कि किसी न किसी दिन धरती की मोटी तहों को चीरकर और मज़बूत चटानों को फाड़कर उसमें से जीवन का नया वृक्ष उत्पन्न होगा, और अनुकूल तथा प्रतिकूल सामानों से सहायता लेता हुआ प्रकृति की मूल्यवान्

सम्पत्ति का अधिकारी बनेगा, और संसार की कोई शक्ति उसका मुक़ाबला न कर सकेगी।

प्राचीन आर्य्यावर्त में इस सिद्धान्त पर काम करने वालों की कमी न थी, और उस समय में भी जब मूर्खता ने अपना अधिकार जमाना आरम्भ कर दिया था, ऐसे उदाहरण यदि असंख्य नहीं तो कम भी नहीं हैं निम्नलिखित शिक्षा दायक वृतान्त सब प्रकार से हमारे विचार का समर्थन * करता है।

सन् १२७५ ई० में किशोर (नाबालिग) लक्ष्मी मेवाड़ की गद्दी पर बैठा। चित्तोड़ जिसके नाम में राजपूतों की दृष्टि में पवित्रता और सिद्धता वर्तमान है, मेवाड़ की राजधानी था। और हिन्दुओं के शिल्प व कला कुशलादि के काम ने उसको अत्यन्त सुन्दर और मनोहर नगर बना रक्खा था।

लक्ष्मी की बाल्य अवस्था में उसका चचा भीमसी उसके नाम पर राज कार्य्य का प्रबन्ध किया करता था और वह ऐसा बड़ा बुद्धिमान, चतुर और साहसी था कि उसके समय में मेवाड़ भीतरी झगड़ों से पूर्णतः बचा हुआ था और उसको उन दुःखों और क्लेशों से छुट्टी थी जिनसे कि ना समझ राजाओं पर बहुधा आपदा आया करती है।

महारानी पद्मिनी जिसका इस अध्याय में वर्णन है इसी बहादुर भीमसी की रानी थी। वह सिंगलद्वीप (लङ्का) की राजकुमारी थी। उसके पिता का नाम हमीरसिंह था उसके बाल्यकाल के वृतान्त इतिहास के पृष्ठों (सफों) में लिखे

* तसदीक।

नहीं गए। और यदि दिल्ली के मुसलमान बादशाह अला-उद्दीन खिलजी के अत्यन्त अत्याचार (निहायत जुल्म) न हुए होते तो कदाचित हम को जानने का अवसर भी न मिलता।

पद्मिनी के नाम ही से प्रकट है कि वह महा सुन्दरी और रूपवान थी। क्योंकि पद्मिनी की पदवी ऐसी स्त्रियों को दी जाती है कि जिनमें आन्तरिक और वाह्यक सर्व सुन्दर गुण और स्वभाव वर्तमान हों। भीमसी की स्त्री सचमुच पद्मिनी और महा सुन्दरी थी। भारतवर्ष के उस समय के कवीश्वर (शायर) चाहे वह हिन्दू थे या मुसलमान उस के जीते ही समय उसके रूप और गुणों की प्रशंसा में छन्दे, गज़लें, गीत आदि रचते थे।

दुर्भाग्य से उसके रूप की प्रशंसा ने अलाउद्दीन खिलजी के हृदय में पापी और मलीन भाव उत्पन्न कर दिए, वह इस प्रकार के उपाय सोचने लगा, कि महारानी पद्मिनी को किसी प्रकार अपने अधिकार (क़बजे) में ले आऊं।

इस नीच इच्छा को तृप्त करने के लिये उसने असंख्य सेना लेकर चित्तौड़ पर चढ़ाई करदी। कई महीने में कठिन रेगिस्तान को तिरोहित करके उसकी सेना क़िले के निकट पहुंची। और उसको चारों ओर से इस प्रकार से घेर लिया जैसे राहु चन्द्रमा को ग्रस लेता है।

यवनों ने क़िले को विध्वंस करने की पूरी चेष्टा की परन्तु भीमसी की वीरता और बुद्धिमानी से उनकी सब चेष्टा निष्फल गईं और अन्त में अलाउद्दीन का साहस नष्ट हो गया।

वह निराश होकर दिल्ली की ओर मुड़ने ही को था कि उसके कपटी सलाह देने वालों ने उसे यह सलाह दी कि राजपूतों को युद्ध में हराना बहुत कठिन कार्य्य है अलबत्ता वह सरल स्वभाव होने के कारण शीघ्र धोखे में आ सकते हैं। इसलिए उनको धोखा देना चाहिए। ताकि किसी तरह पद्मिनी आपके हाथ आजावे।

इस कपटता की सलाह के स्वीकार करने के पश्चात् अलाउद्दीन ने भीमसी के पास कपट संदेशा भेजा कि "यदि एकबार किसी प्रकार पद्मिनी को दिखा दिया जावे तो फौज का घेरा उठा लिया जायगा और फिर कभी चित्तौड़ के साथ लड़ाई न की जाएगी" भीमसी ने दो शर्तों पर यह कपट सन्देशा मान लिया। प्रथम यह कि बादशाह के साथ बहुत थोड़े मनुष्य किले में आवें, दूसरे उसको दर्पण के द्वारा पद्मिनी का प्रतिबिम्ब (अक्स) दिखलाया जायगा। अलाउद्दीन ने देखा कि मेरी कपटता काम नहीं आई। परन्तु उस परम सुन्दरी के देखने के लोभ से उसने दोनों शर्तें स्वीकार करलीं। और यह सोचकर कि इस दफा नहीं तो अगली दफा मेरा कपट चल जायगा चुप हो रहा।

पहली अप्रैल को अलाउद्दीन नगर में दाखिल हुआ और भीमसी ने अपने वचन के अनुसार बारह दर्पणों के द्वारा ही राजपूतनी का प्रतिबिम्ब (अक्स) उसे दिखला दिया। यद्यपि भीमसी ने इस बात से अपनी कोई बेइज्जती नहीं समझी, क्योंकि उस समय में हिन्दुओं के यहां परदे की रीति नहीं थी। परन्तु औरों ने इस में अपनी हतक समझी, कई वीर

राजपूत इस बातके बिल्कुल विरुद्ध थे, कि उनके सरदार की स्त्री इस प्रकार अपिमानित की जाए, परन्तु शत्रु सेना के घेरे से व्याकुल हो गए थे इस लिए विवश अपनी मौनता (खामोशी) से इस बात की आज्ञा दे दी कि दर्पणों की सहायता से पद्मिनी का प्रतिबिम्ब उसको दिखला दिया जायगा।

यह दृश्य शीघ्रही समाप्त हो गया और अलाउद्दीन भीमसी के महल से बिदा हुआ। वह केवल थोड़े मनुष्यों के साथ शेर की मांद में दाखिल हुआ था, परन्तु उसको दृढ़ निश्चय था कि जब एक बार राजपूत बचन दे चुकते हैं, तो कभी कपटता नहीं करते। परन्तु शोक! कि जो जन दूसरों के वचन व कार्य्य पर इतना भरोसा रखता था वह आप ऐसा सच्चा और ईमानदार न बन सका। जिस बात को वह बीरता और साहस से लाभ न कर सका था उसको छल और कपटता के द्वारा लाभ करना चाहा, उसने महाराना भीमसी को सम्बोधन करके कहा, आप जैसे योधा शूरवीर राजपूत के विरुद्ध फौज लेकर चढ़ाई करना अनुचित था, खैर जो कुछ हो गया सो हो गया अब मैं आगे को ऐसा कभी न करूंगा। आप पहाड़ के दामन तक मेरे साथ चलें और वहां से हम दोनों मित्रों की भान्ति अलग होंगे, और आगे को एक दूसरे की प्रतिष्ठा का खयाल रक्खेंगे। राजपूत में स्वभावतः छल कपट नहीं था। उसने समझा कि जब अलाउद्दीन स्वयम इस प्रकार बिना किसी भय व संकोच के मेरे महल में चला आया था, तो मैं किस लिए किसी बात का सोच व संकोच करूं, वह आनन्द पूर्वक उसके साथ चल पड़ा, और जब राना उसके साथ २ पहाड़ की तराई

तक पहुंचा तो कपटी धोखेबाज़ अलाउद्दीन का इशारा पाकर दुष्ट यवनों ने राना को कैद कर लिया और उसको अपने लश्कर में लेगए।

जब यह महा शोक प्रद समाचार चित्तौड़ वालों के कानों तक पहुंचा तो वह अत्यन्त व्याकुल और दुःखी हुए। थोड़े ही देर के पीछे दुष्ट ने नापाक सन्देशा भेजा, कि जब तक पद्मिनी हमारे तम्बू में न आवेगी तब तक भीमसी का छूटना पूर्णतः असम्भव है। महारानि पद्मिनी को इस सन्देसे से इतना दुःख पहुंचा कि उसका वर्णन नहीं हो सकता। उसके चेहरे का रङ्ग उड़ गया, नेत्रों की चमक और शोभा जाती रही। दोही चार घड़ी के भीतर वह अद्वितीय रूप जिसकी प्रशंसा में कविताएं रची जाती थीं इस प्रकार अलोप होगया मानो वह बरसों से रोगी थी। पूरे एक सप्ताह तक चित्तौड़ के महल में शोक मनाया गया, राजपूतों को अपनी और अपनी जाति की इज्जत का ख्याल था, उन्होंने दृढ़ता से कहा हम लड़कर मर जाएंगे परन्तु रानी को मुसलमान के खेमे में कभी न जाने देंगे। किन्तु उसके साथ भीमसी के कैद हो जाने का भी बड़ा दुःख था, क्योंकि उस समय मेवाड़ राज्य में भीमसी की बुद्धिता और योग्यता का एक भी मनुष्य नहीं था जो किशोर लक्ष्मी की ओर से राज कार्य्य संभाल सकता।

सब व्याकुल थे कोई उपाय नहीं सूझता था। निदान पद्मिनी ने सब सरदारों को एकत्र किया, दो तीन घंटा तक सब ने विचार किया, जब उन्हें कोई उपाय नहीं सूझा तो उस महासुन्दरी देवी ने कहा, जहां पुरुषों का बल और विक्रम काम

नहीं देता, वहां स्त्रियों की बुद्धि और चतुरता काम दिखाती है, सब जगह सचाई से काम लेना बहुत कठिन हैं। छल करने वाले के साथ जब तक छल न किया जाये, और धोखा देने वाले को जब तक धोखा न दिया जावे, तबतक कार्य्य सिद्ध होने की आशा रखना वृथा हैं। तुम लोग अब साहस का काम करो और मेरी बात मानलो।

जितने राजपूत उस समय वहां वर्तमान थे सब ने रानी की बात को पसन्द किया और उसे मान लिया, अलाउद्दीन का दूत वहां गया हुआ था, राजपूतों ने उस से कहा कि तुम जाकर अलाउद्दीन से कह दो कि पद्मिनी आपके पास आने को तैयार है परन्तु वह इस बात की आज्ञा मांगती है कि अपनी सखी सहेलियों को भी साथ लावे—

जिस समय अलाउद्दीन ने यह संदेसा सुना उसके आनन्द की कोई सीमा न रही, वह पहिले ही से पद्मिनी के प्रेम में डूबा हुआ था, उसने सुनतेही खुश होकर कहा, जावो जो कुछ रानी कहती हो वही करो, क्योंकि आज से वह मेरे राज और हृदय की स्वामी होगी। परन्तु जब एक राजपूत ने कहा, कि रानी के साथ कुछ हथियार बन्द राजपूत भी आवेंगे तो उसने मुस्कराकर उत्तर दिया "नहीं मैं अपने खीमे में शत्रु के मनुष्यों को न आने दूंगा। तुम निश्चय रक्खो कोई मनुष्य किसी स्त्री की बेइज्जती करने का साहस न कर सकेगा, क्योंकि मेरा हुकुम यहां आकाशवाणी से भी बढ़कर माना जाता है॥"

नियत दिन पर महारानी पद्मिनी की पालकी चित्तौड़ के महल से रवाना हुई उनके साथ सात सौ डोलियां चली

उनकी रक्षा और प्रबन्ध के लिए बादल नामी बारह बरस का नौजवान राजपूत लड़का चला जो महारानी पद्मिनी का भतीजा था और सिर से लेकर पांव तक हथियार बांध कर आया था। कई इतिहास लेखकों के लेखानुसार यह भी मालूम होता है कि गौरासिंह नामी पद्मिनी का चचा भी साथ आया था। इन सात सौ डोलियों को छैः २ कहार उठाए हुए थे जो सचमुच के शूरमा और बहादुर सिपाही थे। और डोलियों के भीतर सहेलियों के स्थान में हथियार बन्द राजपूत योधा भेष बदल कर बैठे हुए थे। इस प्रकार पांच हज़ार राजपूतों के लगभग अलाउद्दीन के लशकर में पहुंच गए।

जब यह डोलियां लशकर में पहुंच गईं, तो गौरा अथवा (बादल) ने अलाउद्दीन से कहा, कि अब हमारे सरदार को छोड़ दीजिये। अलाउद्दीन ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया, नहीं मित्र अभी नहीं। राजा को स्वतन्त्रता दी जाएगी परन्तु उस समय जब कि मैं उसकी रानी से विवाह कर चुकूंगा। क़ाज़ी आ रहा है थोड़ा सन्तोष करो। उस समय मैं तुमको इस सेवा के बदले बहुत सा धन पदार्थ पुरस्कार दूँगा। "राजपूत का चेहरा लाल होगया परन्तु उसने बेग को थामकर कहा, पद्मिनी आप से प्रार्थना करती है कि विवाह की रीति के होने से पहले उसको एक बार राजा से दो दो बातें कर लेने का अवसर दिया जावे।

अलाउद्दीन ने यह सोचकर कि अब इस लशकर से निकलकर कहां जा सकती है आज्ञा देदी। बनावटी रानी की पालकी भीमसी के पास पहुंचाई गई, और राजा को आधे घंटे

तक बात चीत करने के लिए कैद से छोड़ा गया। अलाउद्दीन स्वयम् व्याकुलता के साथ खीमे के बाहर पद्मिनी के आने की राह देख रहा था और उसने अपने नौकरों को यह आज्ञा दे रक्खी थी कि आधे घंटे के भीतर एक पूर्णतः नया और सुन्दर खीमा रानी के लिए तैयार कर दिया जावे। जब आधा घण्टा बीत गया और रानी न आई तो वह क्रोधित होगया, और उस खीमे के भीतर जो राजा और रानी के मिलने के लिये नियत हुआ था बेधड़क घुस गया, परन्तु यहां आकर भौचक रह गया जब कि उसने देखा कि वहां पद्मिनी नहीं बल्कि एक नव युवक शस्त्रधारी राजपूत खड़ा है और राजा से युद्ध के लिए तैयार होने की प्रार्थना कर रहा है। यह देखकर वह घबड़ा गया।

फिर वह ज़ोर से चिल्ला उठा कि राजा ने धोखा दिया, और उसके सिपाही खीमे की ओर दौड़ पड़े, वह समय बहुत कठिन था, भीमसी ने चारों ओर निगाह डाली और अपने शूरमा राजपूतों को हुकुम दिया कि मक्कार मुसलमानों का विध्वंस करो। उसकी आज्ञा पाते ही राजपूताना के चुने हुए बीर जो डोलियों में सवार होकर आये थे तुरन्त निकल आए और चारों ओर तलवार की आग बरसाने लगे। बारह बर्ष का लड़का बादल अलाउद्दीन पर टूट पड़ा, और यदि बहुत से मुसलमान उसको अपने बीच में न कर लेते तो निश्चय वह उसके हाथ से मारा जाता।

चारों ओर लोहे से लोहा बजने लगा इस धोखे की खबर जंगल की आग की तरह फैल गई, मुसलमान हिन्दुओं से

लड़ने के लिये चारों ओर से दौड़ आये, परन्तु इतनी देर में बहादुर राजपूतों ने अपना मतलब सिद्ध कर लिया था एक कसा कसाया अच्छा भागने वाला असील घोड़ा भीमसी के लिये खीमे के बाहर खड़ा था, वह उस पर सवार होगया और मेवाड़ की रक्षा के लिये उसने भागकर अपने प्राण बचा लिये। अपने सरदार की इज्ज़त के स्थिर रखने के लिये पांच हज़ार राजपूतों ने अपने प्राणों को तिनके की तरह निच्छावर कर दिया। वह आनन्द पूर्वक मौत के मुख में घुस गये। जब तक भीमसी चित्तौड़ के महल में दाखिल नहीं हुआ बांके राजपूत बराबर लड़ते रहे और यवन सेना को आगे बढ़ने का अवसर नहीं दिया। प्रातःकाल के समय पांच हज़ार के लगभग राजपूत चित्तौड़ से बाहर निकले थे संध्या के समय इने गिने दस बीस मनुष्य बचकर वापस गये यह शेरों की शेरमर्दी और योधाओं की वीरता का अद्वितीय उदाहरण था।

इन बहादुर राजपूतों में जो इस प्रकार जातीय मर्य्यादा की वेदी पर बलिप्रदान हुए माननीय और प्रतिष्ठित योधा गोरासिंह भी था। उसकी मृत्यु पर चित्तौड़ वालों ने महा शोक किया, परन्तु वह संग्राम भूमि में मरा था और अपने स्वामी की सहायता में काम आया था इसलिए उसकी मौत की घटना को आनन्द की घटना समझना चाहिये। उसकी युवा धर्म्मपत्नी सती होने के लिये तैय्यार होगई, और पति का शीश गोद में लेकर चिता पर बैठ गई, राजपूत स्त्री पुरुष सती के दर्शनों के लिये चिता के गिर्द एकत्र होगए। इस भीड़ में सती का अकलौता बेटा वीर बादल भी था सती

राजपूतनी ने अपने पुत्र को सम्बोधन करके कहा—

"बादल ! तेरे पिता ने किस तरह क्षत्रिय धर्म्म का पालन किया था"? नन्हे लड़के ने उत्तर दिया "हे माता ! पिताजी इस प्रकार शत्रुओं के सिर काटते थे जैसे किसान अपने हंसिए (औज़ार) से अन्न का खेत काटते हैं। मैं पग पग पर उनके साथ चलकर उनकी वीरता के कर्तव्य को देखता रहा, उन्होंने खून की नदी में हज़ारों को डुबो दिया, और जब अन्त समय आगया तो वह शत्रुओं की लाशों की सेज्या पर लेट रहे, और एक यवन का सिर तकिया बनाकर रख लिया और इस प्रकार धर्म्म के काम से थककर मैदान युद्ध में सो रहे"।

उस सच्ची सती ने मुस्कराकर फिर दूसरी बार प्रश्न किया, "बेटा बादल! अपने पिता के वीर वृत्तान्त को एक बार फिर वर्णनकर, मेरे प्राणप्रति ने किस प्रकार संग्राम भूमि में क्षत्रिय धर्म्म का पालन किया था"?

नन्हे वीर बालक ने फिर उत्तर दिया, "माता ! मैं क्या कहूं जब शत्रु दल में से कोई नहीं बचा जो उनकी वीरता की प्रशंसा करता अथवा उनकी बलिष्ट भुजाओं का सामना करता तब वह थककर लेट रहे और स्वर्गधाम को सिधार गए। "सती इस दफा का वृतान्त सुनकर हंसी और सब को आशीर्वाद देकर कहा देख बेटा ! तूने भी इसी प्रकार

जातीय मर्यादा (क़ौमी इज़्ज़त) का ध्यान रखना और अपने पिता के पद चिन्ह पर चल कर

वीर पदवी को प्राप्त होकर मेरी कोख को पवित्र करना, ले अब मैं जाती हूं। प्राणपति मेरे देर करने से घबराते होंगे। इतना कहना था कि आग की ज्वाला प्रचण्ड हुई, सिर के केश जलने लगे, गर्दन नीचे को लटक गई, और गौरासिंह की पतिव्रता स्त्री और बादल की राजपूतनी माता ने इस प्रकार प्राण त्याग किए। इस प्रकार की प्रशंसनीय माताएं वीर और योद्धा सन्तान उत्पन्न करती थीं।

महारानी पद्मिनी को सरदारों और विशेषकर गौरासिंह की मृत्यु का बड़ा शोक हुआ परन्तु पति के कैद से छूटने का आनन्द भी कम नहीं था।

इतना समय कहां था कि महल में इस छूटने का उत्सव मनाया जाता अथवा इस असाधारण कृतकार्य्यता के लिये परमात्मा का धन्यवाद किया जाता, क्योंकि पापी अलाउद्दीन की फ़ौज क़िले के फाटक पर आकर मौजूद होगई। राजपूतों की क्रोधाग्नि भड़क रही थी। गौरासिंह की सती स्त्री का उपदेश कानों में गूंज रहा था। और उसके स्वर्ग सिधारने का दृश्य आंखो के आगे घूम रहा था। वह सिंह के समान गर्जते हुए बाहर निकले, यद्यपि मुसलमानों का दल अगणित था, परन्तु राजपूतों के बढ़े हुए जोश के सन्मुख उसकी एक न चली, अलाउद्दीन को मुँह की खानी पड़ी और वह व्याकुल और विवश होकर दिल्ली को लौट गया।

दिल्ली लौट जाने पर भी उसके मन से महारानी पद्मिनी

की आकांक्षा दूर न हुई उलटा और भी भड़क उठी, क्योंकि वह विवश होकर सेना की कमी के कारण दिल्ली लौट गया था। अब दूसरी बार नए सिरे से विशेष तैयारी करके चित्तौड़ पर चढ़ाई की, और इस दफे उसने अपने मन में यह ठान लिया था, कि जब तक पद्मिनी हाथ न आवेगी क़िले के इर्द गिर्द से फौज न हटाई जावेगी। यह वृतांत चौदहवीं शताब्दी (सदी) के प्रारम्भिक काल का है।

अलाउद्दीन के चढ़ाई करने की खबर चित्तौड़ में पहुंची इस समय किशोर लक्ष्मी मर चुका था। उनकी जगह पर प्रजा के बहुत कुछ कहने सुनने पर भीमसी ने गद्दी पर बैठना स्वीकार कर लिया था। परन्तु आए दिन के मुसलमानों की चढ़ाई के कारण चित्तौड़ की दशा कुछ ऐसी खराब हो गई थी कि शाही सेना का सामना करने की सामर्थ्य बाकी नहीं रही थी। इस खबर को सुनकर वह घबड़ा गये थे, परन्तु महारानी पद्मिनी ने सब को धैर्य देकर कहा "हिम्मत न हारिये बिसारिये न हरनाम" । और सरदारों ने मिलकर सौगन्दें खाईं कि मरते २ मर जांयगे परन्तु कभी दुष्ट अलाउद्दीन की आधीनताई स्वीकार नहीं करेंगे। और न जीते जी अपने आपको कैद में डालेंगे।

अलाउद्दीन के चित्तौड़ पहुंचने पर महा युद्ध आरम्भ हुआ। कुछ कालतक बहादुर राजपूत योधा वीरता से लड़ते रहे। परन्तु अलाउद्दीन के पास सेना बहुत अधिक थी और किले की दीवारों में सुरंग उड़ाने से कई एक दरें हो गए थे इसलिए राजपूतों की आशा निराशा में बदल गई थी।

महारानी पद्मिनी और भीमसी दोनों महा शोकातुर थे क्योंकि वह जानते थे कि किले के सर होते ही अधर्मी अलाउद्दीन नगर के विध्वन्स करने की आज्ञा देगा और एक मनुष्य भी उसके पापी हाथों से जीवित न बचेगा।

उस समय का इतिहास लेखक इस आक्रमण (हमले) का वर्णन करते हुए एक अद्भुत वृत्तान्त लिखता है। इस घटना से हिन्दुओं की मिथ्या संस्कारता अवश्य पाई जाती है परन्तु यदि उसके परिणाम पर विचार किया जाय और गहरी दृष्टि पात की जाय तो मानना पड़ता है कि किसी दूरदर्शी मनुष्य ने उस समय के धार्मिक सिद्धान्तों से लाभ उठाकर भीमसी को इस बात के लिए उद्यत किया था कि वह अपनी सन्तान को मरने के लिए तैयार करे। घटना इस प्रकार है :—

दिन की लड़ाई के पश्चात् भीमसी खाट पर सोरहा था कि इतने में उसे यह शब्द सुनाई दिया "मैं भूखी हूं" भीमसी की आँख खुल गई, उसने देखा कि सामने एक स्त्री खड़ी हुई उपरोक्त शब्द कह रही है। राना ने उसे सम्बोधन करके कहा, "हे चित्तौड़ की देवी! मेरे आज नौ हज़ार सम्बन्धी तो मर गए क्या अब भी तुझको तृप्ति नहीं मिली?" स्त्री ने कहा मैं राजसी बलिदान चाहती हूं यदि तेरे बारह बेटे राजसी मुकुट पहने हुए रणक्षेत्र में लड़कर प्राण न देंगे तो चित्तौड़ की गद्दी पर अन्य वंश के लोग राज्य करेंगे।

इस घटना का उद्देश्य यह भी मालूम होता है कि भीमसी के बारहों पुत्र लड़ने के लिए तैयार रहें ताकि

अन्य शूरमाओं के हृदय उत्साह से रहित न हो जांय कदाचित इसी विचार से स्वयम् भीमसी ने ऐसा किया होगा।

प्रातःकाल उसने इस घटना का हाल सब से वर्णन किया। परन्तु किसी को विश्वास न आया सब ने हंसकर कहा महाराज! आपको भ्रम हुआ होगा। इस पर राना ने कहा आज सब लोग आधीरात के समय मेरे सयनस्थान* में मौजूद रहें! जब आधीरात का समय आया तो वही देवी सब को यह कहती हुई दिखाई दी कि अपने पुत्रों को एक २ करके राजसी मुकुट पहना और उनको रणक्षेत्र में भेजता जा। ऐसा करने से चित्तौड़ तेरे वंश के अधिकार में रहेगा।

जब सब ने साक्षात् अपनी आंखों से देवी को देख लिया और उसके वचनों को अपने कानों से सुन लिया तो दृढ़ रूप से निश्चय होगया, भीमसी के पुत्रों में इस बात के लिए झगड़ा पैदा हुआ एक कहता था कि मुझे पहले बलिप्रदान होने के लिए जाने दीजिए दूसरा कहता था, नहीं मैं सब से पहले रणक्षेत्र में मरना चाहता हूं। अन्त में राजकुमार उरसी जो सब से बड़ा था निकलकर बोला राज सिंहासन और गद्दी का अधिकारी मैं हूं। मेरे होते हुए किसी का अधिकार नहीं हो सकता अस्तु भीमसी ने उसको गद्दी पर बिठलाया और राज मुकुट उसके माथे पर रखकर रणक्षेत्र में लड़ने को भेजा, बहादुर राजकुमार बड़ी वीरता

---

* ख्वाबगाह।

से लड़ा, हज़ारों के मुंह फेर दिए, किन्तु मुसलमानी दल असंख्य था दुष्ट यवनों ने उसे चारों ओर से घेरकर उसी दिन बध किया। दूसरे दिन उसी प्रकार दूसरा भाई राज मुकुट पहने हुए रणक्षेत्र में आया और अपने क्षत्रिय धर्म्म का पालन करता हुआ अनेक यवनों को मारकर आप भी स्वर्ग धाम को सिधारा, इस प्रकार जब बारह लड़के समाप्त हो चुके और सब से छोटे की बारी आई, तो वह भी राजा के सन्मुख उपस्थित हुआ उसकी आयु केवल पांच वर्ष की थी लड़के ने कहा "पिता जी ! मैं राजा होने और मुसलमानों से लड़ने के लिये तैयार हूं। मुझे शीघ्र मुसलमानों के साथ लड़ने की आज्ञा दो"। किन्तु भीमसी का हृदय भर आया उसने मंत्रियों से कहा इसको मरने के लिये न भेजो इसको जीवित और सुरक्षित रक्खो ताकि राना का वंश बना रहे।

जब यह मूल्यवान बलिदान होचुके और कोई आशा विजय की दिखाई न दी तो भीमसी ने जौहर की आज्ञा दी। जौहर उस समय किया जाता था जब कोई आशा सूत्र बाकी न रहता था। राजपूत योधा केसरी वस्त्र धारण करके जीवन मरण की आशा त्याग हाथ में नङ्गी तलवारें सूंप संग्राम भूमि में कूद पड़ते थे और मरने मारने पर उद्यत हो जाते थे। स्त्रियां अपना पतिव्रत धर्म्म स्थिर रखने और अपने सम्बन्धियों का साहस बढ़ाने के निमित्य चिता अग्नि पर बैठ जलकर भस्म हो जाती थीं।

इस अवसर पर भी ऐसी ही वीर क्रिया की गई। एक महाभारी चिता तैयार की गई जिस पर कई हज़ार महा सुन्दरी

परम कोमलाङ्गी देवियां खुशी से बैठ गई इनमें अधिकांश देवियां राजवंश की थीं जब सब स्त्रियां शान्त चित्त होकर बैठ गई और क्षत्रिय वीर बलिप्रदान होने के लिए तैयार हो गए तो महा सुन्दरी सच्ची पतिव्रता और वीराङ्गना महारानी पद्मिनी जिसको मेवाड़ राज की सम्पूर्ण प्रजा अपने प्राणों से भी बढ़कर प्रिय समझती थी, मुस्कराती हुई सब के बीच में जाकर बैठ गई और चिता में अग्नि दाह कर की आज्ञा दीगई। चारों ओर से दरवाजे बन्द कर दिये गये। न कहीं चीखने चिल्लाने का शब्द सुनाई दिया। न किसी ने मरने का शोक प्रकट किया। सब स्त्रियां जानती थीं कि यह बलिदान है और बलिदान अच्छा फल उत्पन्न किये बिना नहीं रहता।

जब सब स्त्रियां अग्नि की गोद में बैठ कर स्वर्गधाम को सिधार गईं तो भीमसी ने छोटे बालक की ओर इशारह किया चतुर राजपूत समझ गये और कुछ योधाओं ने उठकर उसको अपने बीच कर लिया और वहां से चल कर किले के फाटक पर आए, फाटक खोल दिया गया, थोड़े से वीर राजपूत शत्रुओं की सेना को चीरते हुए आगामी काल में राना होने वाले बालक को जीता जागता बचा लेगए। वह कुछ दिनों तक एक सुरक्षित स्थान में छिपा रहा पश्चात् वहां से लौट आया और अपने पूर्वजों की राजगद्दी का स्वामी हुआ।

भीमसी ने केसरी वस्त्र धारण कर लिए। राजपूतों ने देखा कि हमारे स्वामी ने अपनी महा सुन्दरी स्त्री और बालकों का कुछ मोह नहीं किया, तो वह भी निर्मोही

हो गए और विशेष जोश से भर गए। महा तेहे और क्रोध में आए हुए राजपूत किले से बाहर निकले, सब के हाथों में नङ्गी तलवारें थीं सब की आंखें लाल और भौंहें चढ़ी हुई थीं। मन में एक मात्र शत्रुओं के मारने की धुन लगी हुई थी। अब उनके लिए दुनिया में जीवित रहने का कोई सुख बाकी नहीं रहा था "यह शत्रुओं के ऊपर क्रोधवान सिंह की तरह गर्जते हुए टूट पड़े। हज़ारों मुसलमानों को संहार किया और एक २ करके आप भी जाती मर्य्यादा की वेदी पर वलिप्रदान होगए। उनको मरे हुए सैकड़ों वर्ष बीत गए परन्तु अब भी उनकी वीरता की करणी के राग चित्तौड़ के पशु पक्षी तक अलाप रहे हैं। और इस समय के अफीमची राजपूत जब कभी उस जातीय गीत की ध्वनि सुन लेते हैं तो कुछ देर के लिए उनकी आंखें खुल जाती हैं।

जब सब वीर स्वर्गधाम को सिधार गए तो अलाउद्दीन चित्तौड़ में प्रविष्ट हुआ। नगर के गली कूचे लोथों से पटे हुये थे। एक मनुष्य भी जीवित नहीं बचा था। क्योंकि जिन को रणक्षेत्र में मरना प्राप्त नहीं हुआ था उन्होंने आत्मघात करके अपने प्राण त्याग दिये थे। देवियों की चिता का धुआं अब तक आकाश की ओर उठ रहा था। अलाउद्दीन महारानी की प्राप्ति के लिये महल में दाखिल हुआ परन्तु वहां उसकी परछाई भी न थी वह देवी पापी के आने से बहुत देर पहले अग्नि माता की पवित्र गोद में बैठकर स्वर्गधाम को सिधार चुकी थी। दुष्ट कामी पुरुष ने अपना सिर पीट लिया, और अपने पापी कर्मों पर महा लज्जित हुआ।

यह उन वीर पुरुषों का इतिहासिक (तवारीखी) सच्चा वृतान्त है जिनमें जातीय प्रेम और जातीय मर्यादा के भाव कूट २ कर भरे थे। पाठक ! यदि तुम उनमें से अथवा उनकी जाति तथा सन्तान में से हो तो तुम्हारा इस गुण से खाली रहना अवश्य लज्जा का स्थान होगा तुम को यह कहना चाहिये :—

सदा न फूले केतकी, सदा न सावन होय।
सदा न माता जन्मई, सदा न जीवे कोय॥
करणी ऐसी कीजिये, नाम अमर होजाय।
ईशानदेव रणमें मरे, की हरि भक्ति कमाय॥

(३)

राना हमीर

—:o:—

हिम्मत से उसके सारे, जबरदस्त ज़ेर थे।
१—रूबाह बन गए थे वह, जो दिल के शेर थे।
२—गोशों में छिपते फिरते थे, जितने दिलेर थे।
३—तूदे थे तर्कशो के, कमानों के ढेर थे।

❀ १ रूबाह—लोमड़ी।
,, २ गोशों—कोनों।
,, ३ तूदे—ढेर।

यह रोब दाब जाहो, *हशम था हमीर का।
क्या सामना भला करे, कोई अमीर का।

उस समय में जब कि अलाउद्दीन ख़िलजी की सेना ने चित्तौड़ को विध्वन्स नहीं किया था, राना लक्ष्मी का लड़का राजकुमार उरसी अपने बहादुर सिपाहियों को साथ लिए हुए अंडवा के जंगल में शिकार खेल रहा था, मनुष्यों के शोर का शब्द सुनकर एक जंगली शूकर अपनी मांद से क्रोधित होकर निकला, और जब राजपूतों ने उसका पीछा किया, तो वह पास के एक जुवार के खेत में घुस गया। जुवार के डंठे दस बारह फीट लम्बे थे। शूकर इस प्रकार छिप रहा कि ढूंढने से पता न लगा, राजकुमार और उसके साथियों ने शूकर के खोज में बड़ा परिश्रम किया। परन्तु सब उपाय निश्फल प्रमाणित हुआ। कोई मनुष्य दिखाई न दिया जो उसको खेत से बाहर निकाल लाता। केवल एक ग्रामीन लड़की फटे पुराने कपड़े पहने मचान पर बैठी हुई थी। उसका काम यह था कि खेत से पक्षियों को उड़ाया करती थी ताकि वह खेत के अन्न को हानि न पहुंचावें।

लड़की ने राजकुमार की व्याकुलता देख और हंसते हुए उसने कहा, क्या मैं तुम्हारे शूकर को खेत से निकाल लाऊं?

राजकुमार उरसी कन्या के इन वचनों से बड़ा प्रसन्न हुआ साथ ही उसके मन में अचम्भा भी हुआ उसने अपने मन में सोचा कि जो काम मेरे बहादुर सिपाही नहीं कर सके वह एक सुकमार कन्या कैसे कर सकेगी! कन्या ने एक जुवार का बृक्ष उखेड़ लिया, और उसके सिरे को नुकीला बनाकर मचान पर

---

* ४ ऐश्वर्य्य

चढ़गई और फिर उतर कर खेत के भीतर घुसी । राजकुमार और उसके सब साथी चकित थे । अभी वह उसके विषय में वाद विवाद कर ही रहे थे कि वह वीराङ्गना कन्या शूकर की लाश को खींचती हुई बाहर ले आई और उसके एक हाथ में वही जुवार का डंठल था जिस से उसने शूकर को वध किया था ।

जङ्गली शूकर का मारना सहज काम नहीं होता, लड़की शूकर की लाश देकर फिर अपने मचान पर चढ़गई, शिकारी प्रसन्न होकर शिकार लिए हुए नदी के किनारे गए और अपने खान पान का प्रबन्ध करने लगे इतने में क्या देखते हैं कि मचान की तरफ़ से एक गुल्ला आकर राजकुमार के घोड़े के लगा और उसकी टांग टूट गई ।

सब लोग क्रोध और आश्चर्य की दृष्टि से इधर उधर देखने लगे । लड़की चिड़ियों के हांकने के लिए अपनी गुलेल से मिट्टी की गोलियां फेंक रही थी जब उसको ज्ञात हुआ कि उसके गुल्ले से राजकुमार के घोड़े की टांग टूट गई है, वह निर्भयता से राजकुमार के पास चली आई और अपनी असावधानी के लिए क्षमा प्रार्थना की, उरसी को उसपर कुछ भी क्रोध नहीं आया प्रत्युत उसने उसकी प्रशंसा करके उसे विदा किया ।

सन्ध्या के समय जब शिकार से सब लोग अपने घर को लौट कर जा रहे थे, तो उन्होंने देखा कि फिर वही कन्या निर्भीकता से उनकी ओर चली आ रही है । उसके सिर पर दूध का घड़ा था, और दो बकरे रस्सी से बंधे हुए दाहने बांए चल रहे थे । जब वह सिपाहियों की भीड़ से गुजरती हुई अपने घर

का जा रही थी तो एक नवयुवक ने उसे दिक करना चाहा, कन्या ने उसके मन की बात जान ली परन्तु उसे कोई भय नहीं हुआ। उसने चुपके से अपने एक बकरे को छोड़ दिया वह दौड़ता हुआ उसी नवयुवक के घोड़े के तले से निकल गया जिसके कारण उसका घोड़ा ऐसा भड़का कि वह सवार धरती पर गिर पड़ा, और वह कन्या उसी प्रकार निर्भीकता से दूध का मटका सिर पर लिये हुए अपने घर को चली गई।

राजकुमार उरसी इस दृश्य को देख रहा था, उसने फिर कन्या को बुलाकर पूछा तुम कौन हो, और कहां रहती हो ?

उसने उत्तर दिया, मैं एक ग़रीब राजपूत की कन्या हूं और अपने पिता के घर में रहती हूं, मेरे पिता का घर यहां से समीप ही है।

राजकुमार ने कहा बहुत अच्छा तुम अपने पिता से कहो, कल प्रातःकाल वह मुझ से मिलें, यह कह कर उसने घोड़े के ऐड़ लगाई और आंखों से छिप गया।

प्रातःकाल एक वृद्ध पुरुष राजकुमार के पास आया और उसके निकट बेधड़क बैठकर इस प्रकार बात चीत करने लगा कि मानो उसका बहुत नज़दीकी रिश्तेदार है बड़े २ सरदार जो राजकुमार के साथ थे वृद्ध के इस व्यवहार से विस्मित हुए। राजकुमार ने उस बूढ़े से प्रार्थना की, "कि अपनी कन्या मेरे साथ ब्याह दे"। बूढ़े ने उत्तर दिया कि नहीं मैं अपनी कन्या का विवाह राजा के साथ न करूंगा।

यदि कोई दूसरा मनुष्य होता तो कदाचित बूढ़े को कैद

कर देता अथवा कठोरता वा बल से काम लेता, परन्तु राजकुमार उरसी अत्यन्त नेक और न्यायशील मनुष्य था। उसने इस विषय में फिर कोई बात चीत नहीं की। जब बूढ़े ने घर में जाकर अपनी स्त्री से इस घटना का हाल वर्णन किया और उसको आशा थी कि मेरी स्त्री मेरे कर्तव्य को उत्तम समझेगी परन्तु उसकी कामना व्यर्थ निकली, राजपूतनी ने उलटा उसे लज्जित किया वह क्रोधित होकर बोली, तुमने बड़ी नादानी की, राजकुमारों की प्रार्थना का ऐसा निरादर नहीं किया जाता, अब तुम जाकर उससे क्षमा प्रार्थना करो और यदि वह कन्या को चाहता है तो वेद रीति के अनुसार उसे संकल्प कर दो। सरल स्वभाव वाला राजपूत फिर राजकुमार उरसी के पास गया, और बड़ी दीनता के साथ उस से क्षमा प्रार्थना की। उरसी ने उसका बड़ा सन्मान किया और इस प्रकार उस बीर कन्या का राजकुमार उरसी से विवाह होगया।

हमीर इसी वीराङ्गना की कोख से उत्पन्न हुआ था और जिस समय उसके पिता ने चितौड़ की स्वाधीनता के लिये अपने प्राण दिए थे यह पूर्णतः अबोध बालक था।

राना लक्ष्मी ने जुदा होते समय अपने प्रिय पुत्र अजैसी से कहा, "मेरी यह इच्छा है कि तुम्हारे पीछे हमीर चित्तौड़ का राना हो" अजैसी ने कहा "यदि हमीर में सचमुच ऐसी योग्यता हुई तो मैं अवश्य आपकी आज्ञा पालन करूंगा। और अपने पश्चात् उसको राजगद्दी का स्वामी बनाऊंगा"।

उस भयंकर शाका के पश्चात् जिसमें राजपूतनियों ने

अपने आपको चिता पर जीतेजी भस्म किया था, और राज-पूतों ने अलाउद्दीन खिलजी की फौज पर गिरकर शेर की तरह लड़ २ कर जानदी। नए राना अजैसी ने किंचित मनुष्यों को साथ लेकर पहाड़ की घाटियों की शरण ली। और चिरकाल तक वहां ही दिन काटता रहा, इस काल में अला-उद्दीन की फौज ने चित्तौड़ की सारी सुन्दर ईमारतों को नष्ट कर दिया, केवल भीमसी और पद्मिनी का महल बाकी बचा था, और जब दिल खोलकर मेवाड़ को लूट मार से नष्ट कर दिया गया एक हिन्दू सूबेदार मालदेव नामी को अपना प्रतिनिधि नियत करके वह दिल्ली को लौट गया।

कीलवारा में हमीर को शिक्षा दी जाती थी। उसके साथ उसके चचा के दो भतीजे भी युद्ध विद्या के करतब सीखते थे। यद्यपि वहां कोई नियम पूर्वक पाठशाला नहीं थी, परन्तु पहाड़ के दरों में रहकर राजपूत शाहज़ादों ने लड़ने भिड़ने के कर्तबों से पूरी अवगति प्राप्ति करली। और अच्छी तरह जान लिया कि किस प्रकार घात में रहकर शत्रु पर वार करना चाहिये, और किस प्रकार उसके वार को रद्द करना चाहिये, अलाउद्दीन के आदमी जो चित्तौड़ में रहते थे, कभी सुख और शान्ति से नहीं रहने पाये। उनके साथ हमेशा लड़ाई झगड़ा रहा करता था। इसके सिवाय पहाड़ी सरदार जो इस राज्यहीन राना की आधीनता से विमुख थे अपने दुष्कर्म का फल भोगते थे। लुटेरे और डाकू अलग सताते थे. इन सब संग्रामों की तालिका में सब से अधिक वर्णन करने योग्य वह लड़ाई थी जो मंजा नामी एक सरदार

के साथ हुई थी। यह सरदार अपने लड़ाके सिपाहियों को साथ लेकर जंगल में घुस आया। और राना पर हमला किया। राना जीवित बच गया, किन्तु मंजा के भाले से उसके सिर में घाव आया।

राना अजैसी को इस घाव की कुछ चिन्ता नहीं थी। परन्तु जिस धृष्टता (गुस्ताखी) के साथ मंजा ने राना की मान हानि (हतक इज्जत) की थी उसका बदला लेना नितान्त आवश्यक था, उसने प्रण किया, कि जबतक मंजा का सिर काटकर उसके सामने न पेश किया जायगा तबतक उसको कभी चैन न आवेगा। उसने अपने लड़कों को बुला कर कहा, "तुम लोग मंजा से मेरा बदला ले सकते हो" ? इसका उत्तर जो उन्होंने दिया वह सन्तोष जनक नहीं था। अन्त में उसने हमीर को बुलाकर उससे वही प्रश्न किया, जो अपने बेटों से किया था। हमीर अभी बहुत छोटी आयु का था। परन्तु उसने उत्तर दिया कि "मैं शत्रु के मारने के लिये अभी जाता हूं और आऊंगा तो उसका सिर लेकर आऊंगा नहीं तो लौटकर नहीं आऊंगा"।

थोड़े दिनों के पीछे कीलवाड़ा में बड़ी खुशी मनाई गई। हमीर घोड़ा दौड़ाता हुआ लौट आया। राजपूत उसके स्वागत (इस्तकबाल) के लिए आगे बढ़े। उसकी कमर से कोई चीज़ लटक रही थी। उसने राना से चिल्लाकर कहा, "यह लो अपने शत्रु का सिर" और झट मंजा का सिर अपनी कमर से खोलकर राना के पावों के नीचे रख दिया।

अजैसी ने हमीर को यह कहकर गोद में उठा लिया;

कि "तू निःसन्देह मेवाड़ का राना है, और तेरे भाग्य में राज्य करना लिखा है"। फिर उसने मंजा का रुधिर अपनी उंगली में लगाकर उसी से हमीर के मस्तक पर तिलक (टीका) लगा दिया, जिस से सब लोग समझ गये कि अजैसी के पश्चात् हमीर मेवाड़ का स्वामी होगा।

अजैसी के लड़कों ने अपने पिता की आज्ञा में किसी प्रकार का विघ्न नहीं डाला। कारण यह, कि एक कीलवारा में मरगया था, दूसरा अपने भाग्य की परीक्षा के लिए विदेश चला गया था, और फिर लौटकर घर नहीं आया था।

उस समय मेवाड़ का राना कहलाना सहज काम नहीं था, क्योंकि चप्पे २ भर धरती दिल्ली के बादशाह के अधिकार में होगई थी केवल पहाड़ों, घाटियों और अगम्य उजाड़ रेतले मैदान बाक़ी रह गये थे। इस दशा को देखकर कहना पड़ता है कि यदि अजैसी का पुत्र विदेश जाने के स्थान में मेवाड़ ही में रहता और अपने चचेरे भाई हमीर की सहायता में लड़ता रहता तो बहुत अच्छा होता, क्योंकि कई पीढ़ी के पश्चात् उसी की नसल से शिवाजी मरहटा उत्पन्न हुए जिन्हों ने मरहटा राज्य की नींव (बुनियाद) डाली। और औरङ्गज़ेब के पद प्रभुत्व को मट्टी में मिला दिया, और पश्चात् उसके ही प्रतिनिधियों के हाथ से राजस्थान की बरबादी की सामग्री पैदा हुई।

राना की पदवी लाभ करने के पश्चात् हमीर अपनी सेना को ठीक करने के उपाय सोचने लगा। उसने राजपूतों को कहला भेजा कि "उनके लिए शोक और लज्जा का

स्थान होगा कि जो अपनी स्वतंत्रता* नीच और अधर्मी शत्रुओं के हाथ में देंगे, क्योंकि विद्वानों ने ऐसा कहा है :—

की हंसा मोती चुगे, कि लघन करि मरिजाय।
सहस वर्ष भूखा रहे, सिंह घास नहिं खाय॥

हमीर अपने भाइयों के पास सन्देशा भेजता है, जिन भाइयों में कुछ भी राजपूती वीरता का भाव बाक़ी है वह मेरे पास आवें और कीलवारा के किले में बसकर मेरी आधीनता स्वीकार करें। देश की स्वतन्त्रता का प्रबन्ध सोचें। और जिन चूहों (शाही सेना से अभिप्राय है) ने मातृभूमि को बनजर बना दिया, गांव उजाड़कर दिए, उनको मार कर भगादें। हमीर के पहाड़ी क़िले की दीवारें शत्रुओं के आक्रमण से सुरक्षित (महफ़ूज़) हैं कोई उसका सामना नहीं कर सकता"।

राजपूतों में अभीतक राजपूती साहस बाक़ी था, सब ने अपने स्वामी के सन्देसे को आदर पूर्वक सुना, और विविध स्थानों के राजपूत अपने २ परिवारों को साथ लिए हुए कीलवारा में आकर बस गये।

दिल्ली की सेना से राना हमीर का युद्ध छिड़ गया, कुछ काल तक वह राना हमीर की मार सहती रही परन्तु कहां तक सहती? अन्त में उसके पांव उखड़ गए, हमीर प्रबल आया। परन्तु मालदेव फिर भी चित्तोड़ पर अपना अधिकार बनाए रहा, वह चित्तौड़ से विचलित नहीं हुआ।

एक दिन उसने हमीर के पास यह सन्देशा भेजा, कि

---

* आज़ादी।

"मैं अपनी कन्या का तुम्हारे साथ विवाह कर दूंगा तुम शीघ्र चित्तौड़ आ जाओ" ।

हमीर ने अपने सरदारों से सलाह पूछी सब ने उत्तर दिया इसमें कोई छल है। मालदेव आप को धोखा देना चाहता हैं, परन्तु हमीर ने कहा जब तक गहरे समुद्र में डुबकी लगाने का साहस नहीं होता तब तक बहुमूल्य रत्न हाथ नहीं आते। मुझे चित्तौड़ अवश्य लाभ करना है, चाहे उसके प्राप्त करने में मेरे प्राण क्यों न चले जांय, परन्तु अपने पूर्वजों के स्थान को अवश्य छुड़ाऊंगा । यह अवसर अच्छा हाथ आया है मैं भीतर चलकर देखूँगा कि उसकी क्या दशा है" ?

ऐसे बहादुर राना की आज्ञा को कौन भंग करता, सबने उसकी बात स्वीकार की। थोड़े से लड़ाके शूरमा हमीर के साथ हुए, और वह आनन्द तथा उत्साह पूर्वक चित्तौड़ की ओर चला। ताकि मालदेव की कन्या से विवाह करे।

जब मालदेव के महल के समीप तक पहुंच गया तो उसके मन में भी सन्देह हुआ और सरदारों की सलाह सच मालूम हुई क्योंकि वहां पर विवाह के कोई चिह्न दिखाई नहीं देते थे। न कहीं मङ्गल की सामग्री वर्तमान थी न भाट पुरोहित और गायक आनन्द ध्वनि सुनाने के लिये उपस्थित थे। साथियों ने फिर कहा, महाराज ! सावधान रहना छल के लक्षण दिखाई देते हैं। हमीर ने कहा "इस समय हम सब को वीरता और साहस से काम लेना चाहिए"।

वह निर्भयता से महल में घुस गया, वहाँ मालदेव के सब सम्बन्धी उपस्थित थे ।, वह सब राना को देखते ही उसके

स्वागत के लिये उठ खड़े हुए। और विधि पूर्वक उसका आदर सन्मान किया गया। इस स्थान में उसने कोई भी ऐसी बात नहीं देखी, जिसमें उसे छल वा कपट मालूम हुआ हो। हां हर्ष की भी कोई सामग्री नहीं थी। मालदेव का संकेत पाकर लोग दुलहिन को ले आए, और एक ब्राह्मण ने जो वहां इस काम के लिए पहले से उपस्थित था, दोनों का गठबन्धन करके विवाह सम्बन्धी वेद मन्त्र पढ़ दिए। और वह एक दूसरे के पति पत्नी बन गये।

जब उस गृह में केवल वही दोनों रह गए और सब चले गए, तो हमीर को बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह किस प्रकार का अनोखा विवाह है। कहीं किसी कुरूपा के साथ तो नहीं उसका गठबन्धन किया गया? उसने दुलहिन का मुंह खोलकर देखा, वह बिचारी सुन्दर और सुशील थी और लज्जा से नेत्र नीचे किए हुए थी। और मुखारविन्द पर एक प्रकार की उदासी छाई हुई थी।

हमीर ने उससे प्रश्न किया कि यह विवाह कैसा है? और विवाह की दूसरी रीति भांति क्यों नहीं पुरी की गई और तू इस प्रकार क्यों उदास है?

स्त्री ने उत्तर दिया महाराज! इस उदासीन विवाह का कारण यह है कि आप के साथ छल किया गया, वास्तव में मैं विधवा हूं।"

हमीर इन शब्दों को सुनकर दु:खी और चिन्तित हुआ क्योंकि विधवा के साथ विवाह करने की रीति उस समय प्रचलित न थी। और लोग इस प्रकार के सम्बन्ध को घृणा

की दृष्टि से देखते थे। नेक और धार्मिका स्त्रियां पति के मरने पर सती होती थीं। जिनको ऐसा अवसर नहीं मिलता था वह व्रतादि रखकर साधुता का जीवन व्यतीत करती थीं और तपस्या तथा जप तप के द्वारा आयु काटती थीं। रांड का शब्द ही एक प्रकार की गाली समझा जाता था, ऐसी स्त्री से विवाह करना उस समय की रीति भान्ति के पूर्णतः प्रतिकूल था।

स्त्री ने फिर कहा महाराज! मेरी बात सुनो। जब मैं धाय की गोद में खेलती हुई अज्ञान कन्या थी, तब मेरा विवाह हुआ था, न मुझे उस पुरुष के रूप का स्मर्ण है जिस के साथ मैं ब्याही गई थी और न ब्याह की क्रिया से अवगत हूं। मेरे बाल्यकाल में ही उसका देहान्त हुआ था।

राना के मुख से न तो कोई कठोर शब्द निकला और न चितवन से उसने उसका निरादर किया वरन् उदास होकर वह पलंग पर बैठ गया और उस स्त्री की ओर दया और सहानुभूति की दृष्टि से देखने लगा। यह अवस्था देखकर स्त्री ने फिर कहा :—

महाराज! इस विषय में मैं पूर्णतः निर्दोष हूं। आप मुझे क्षमा करें। जिन लोगों ने आप से छल किया है आप उनसे बदला ले सकते हैं। मैं आपको वह उपाय बताऊंगी जिससे आपके पूर्वजों का यह नगर फिर आपके अधिकार में आ जायगा।

राना ध्यान के साथ उसके वचनों को सुनने लगा। यद्यपि वह विधवा थी परन्तु फिर भी नई रीति के कारण धर्म्म और पंचायत के मत के अनुसार उसकी ब्याहता स्त्री होचुकी थी

राजपूत के हृदय में स्वभावतः न्यायशीलता और स्वतन्त्रता होती है। राना ने देखा स्त्री चतुर और साहसी ज्ञात होती है उसने आंखों के संकेत से और बातें सुनाने की आज्ञा दी।

तब स्त्री ने कहा स्वामिन ! तुमको उचित है कि मेरे पिता से दहेज़ मांगो, और उसमें तुम न धरती लो और न धन लो, वरन् उस से यह कहो, कि अपना मन्त्री जलसिंह मेहता तुमको दहेज़ में दे। मुझे दृढ़ आशा है कि वह तुम्हारी प्रार्थना को अस्वीकार न करेगा। और जलसिंह मेहता जब आपके पास आ जावेगा तो चित्तौड़ के हाथ आने में कोई संदेह न रहेगा।

राना ने न तो क्रोध किया, और न लज्जित हुआ, स्त्री के हितकर वचन उसके मन भा गए, जब मालदेव और उसके सम्बन्धियों से राना अच्छी तरह आनन्द पूर्वक मिला तो उनको अचम्भा हुआ। क्योंकि उसका विचार था कि राना इस बात को पसन्द न करेगा। राना को प्रसन्न देख मालदेव ने दहेज़ का प्रश्न किया, कि आपको क्या दिया जावे ? राना ने कहा 'अपनी कन्या के दहेज़ में जलसिंह मेहता को मेरे हवाले करदो"। मालदेव ने वैसा ही किया। राना अपनी स्त्री और जलसिंह को लेकर कीलवारा में चला आया।

कीलवारा में आकर राना, रानी और जलसिंह तीनों मिलकर यह उपाय सोचते रहे कि चित्तौड़ किस तरह से हाथ में आवे। दो वर्ष के पश्चात् उन्हों ने एक दूत चित्तौड़ में भेजा उसने मालदेव के पुत्र के पास पहुंच कर संदेशा दिया कि रानी अपने एक वर्ष के बालक को लेकर चित्तौड़ में आना चाहती है ताकि कुलदेवी की पूजा कर जाय। मालदेव किसी संग्राम

में गया था, उसके बेटे में इतनी बुद्धि नहीं थी कि इस चाल को समझ सकता, उसने आज्ञा दे दी कि रानी खुशी से महल में आ जाय।

यह आज्ञा पाते ही रानी चल पड़ी। उसके साथ राना हमीर के वह चुने हुए शूरमा थे जो आवश्यकता के समय सिंह का भी सामना कर सकते थे, इनके साथ जलसिंह मेहता भी था।

महल के भीतर पहुंचकर रानी की चतुरता काम करने लगी उसने बहुत से मनुष्यों को अपनी ओर मिला लिया, और जब राना अपनी सेना समेत चित्तौड़ के फाटक पर पहुंच गया तो उन मनुष्यों ने फाटक को खोल दिया, और मेवाड़ का सूर्य्यमुखी झण्डा फिर चित्तौड़ के किले पर लहराने लगा। मालदेव की सेना ने सामना किया। परन्तु जब शेर किसी मान्द में घुस जाता है तो फिर उसका निकलना कठिन हो जाता है। लोहे से लोहा बजने लगा, और बात की बात में सारे मेवाड़ में यह समाचार फैल गया कि राना अपनी गद्दी पर आ गया, जो लोग उसके प्रेमक थे उनके झुण्ड के झुण्ड उस की सहायता के लिए आने लगे। हमीर की सेना की संख्या १ लाख के लगभग पहुंच गई। उसने आप शत्रुओं से युद्ध किया मालदेव का एक बेटा उसके हाथ से मारा गया। दूसरे बेटे ने आधीनता स्वीकार कर ली। और मेवाड़ का बहुत बड़ा भाग उसने विजय करके अपने अधिकार में कर लिया।

शाही सेना की सामर्थ्य नहीं थी उसका सामना करती। वह भाग गई और दिल्ली के बादशाह को हमीर के विजय का समाचार सुनाया। उसे दुःख तो अवश्य हुआ पर वह कुछ कर

नहीं सकता था। चित्तौड़ की गई दशा फिर बहुर आई। छीनी हुई स्वतन्त्रता फिर प्राप्त हुई। सूखी हुई नदी में नये सिरे से पानी आया। वह भूमि जो बनजर बनी हुई थी खेती और उत्तम प्रबन्धादि से अब फिर हरी भरी होगई। राना हमीर ने न केवल गिराई हुई इमारतों की मरम्मत कराई बरन् नये २ और सुन्दर२ महल बनवाकर चित्तौड़ को दुगनी शोभा प्रदान की।

अलाउद्दीन को अब दिल्ली के लड़ाई झगड़ों से ही छुट्टी नहीं थी। इसलिये उसने मेवाड़ की ओर से अपना ध्यान उठा लिया। और उसके मरने पर मेवाड़ को कुछ काल के लिये पूर्णतः शान्ति और सुख का समय प्राप्त हुआ।

जिनमें साहस और दृढ़ता है वह फिर भी अपनी अवस्था को संवार सकते हैं :—

जिनमें होवे साहस दृढ़ता, उनको होवे सहज कठिनता।

कहता था हमीर आओ, मेरे वार को देखो।
खंजर को सिपर* को, मेरे तलवार को देखो।
क्या सख्त है इस †गुर्ज़, गरांबार को देखो।
घोड़े को अगर देखो, तो असवार को भी देखो।
क्या डर उसे तूफां का, जो चालाक हो ऐसा।
जब बाढ़ पै दरिया हो, तो तैराक हो ऐसा।

---

* सिपर अर्थात् ढाल।

† गुर्ज़ अर्थात गदा।

(४)

राजकुमार चन्द्रासिंह ।

शेर ।

जिनके दरे दौलत के गदा(१),
शाहो गदा थे ।
जिनके अदल (२) वजूद (३) पर,
सब लोग फ़िदा (४) थे ।
जो सफ़शिकन(५) व (६) सफ़दरे,
मर्दाने विफ़ा(७) थे ।
बा हिम्मतो बा (८) नसरतो,
बा उन्सो(९) वफ़ा थे ।
अफसोस कहां हैं वह(१०),
यह क्या खूब सरा है(११) ।
जुज़(१२) ख़ालिके(१३) को नैन(१४),
ज़ुज़ो(१५) कल को फ़िना(१६) है ।

* (१)भिक्षुक (२)न्याय (३)अस्तित्व (४) निछावर (५) दलनाशक (६)बहादुर (७)रणक्षेत्र (८)ऐश्वर्य्यवान (९)प्रेम वाला (१०)पथिकालय (११)सिवाय (१२)स्वामी (१३)महान् (१४) सम्पूर्ण (१५)नाश ।

भीष्मपितामह के वृत्तान्त से हमारे पाठक अवगत हैं। जिस प्रकार उस सिंह पुरुष ने पिता की इच्छा को श्रेष्ठ समझा, और जिस प्रकार अपने वचन और प्रतिज्ञा पर दृढ़ रह कर जीवन पर्य्यन्त अपने वचन को पालन कर दिखाया, आज हम उसी प्रकार के एक और धार्म्मिक राजपूत के वृत्तान्त को वर्णन करते हैं।

यह वृत्तान्त कल्पित नहीं है वरन् इतिहासिक घटना है, यह उपन्यास के रचयिता के मस्तिष्क की घड़न्त नहीं प्रत्युत सच्ची कथा है जिसको पढ़कर हमारी नसों और शरीर में एक दो क्षण के लिए ऋषियों का पवित्र रुधिर जोश मारने लगता है। और हम यह सोचने के लिए बाध्य हो जाते हैं कि हाय! क्या हम उन्हीं महापुरुषों की सन्तान में से हैं जो जातीय कर्तव्य की वेदी पर अपने अस्तित्व को बलि करना जानते थे। जो जातीय जीवन के सिद्धान्तों से अवगत होकर जाति को जीवित व जाग्रत रखने के उपाय किया करते थे।

हाय आर्य्यवर्त्त! तुझ जैसा हतभाग्य संसार में कौन होगा? जहां ऐसे पवित्र धर्म्मात्मा उत्पन्न होकर मनुष्यत्व के सिद्धान्त को अपने जीवन दृष्टान्त से दिखलाकर उसकी व्याख्या व व्यवस्था करते थे। आज वहां ऐसी अयोग्य सन्तान बसती है जो कुत्तों की तरह थोड़े से प्रलोभन के लिए अपने भाइयों का खून चूसने और चुसवाने को तैयार है संसार तेरी लीला विचित्र है! कर्म तेरी गति प्रबल है। हम ऐसे बिगड़े हैं कि अब भी इस अच्छे राजा के राज्य में रहकर

भी नहीं सुधर सकते। हम ऐसे गिरे हैं कि संभलना कठिन हो गया है।

आर्य्यवर्त के रहने वालो सोचो! तुम एक विशेष जथा के सदस्य (मेम्बर) हो, जातीय मर्य्यादा के अनुसार तुमको उचित है कि अपनी जाति के हानि लाभ पर विचार करो। तुम एक विशेष देश के रहने वाले हो, एवम् उत्तम गृही और उत्तम सन्तान के अनुसार तुम्हारा कर्तव्य है कि अपने और देश के हित और कल्याण के उपाय सोचो! यदि तुम में इस बात की कमी है, तो शोक! तुम्हारा उत्पन्न होना बृथा है। तुम व्यर्थ अपने देश और जाति की लज्जा और शर्म के हेतु हुए।

अब हम अपने वृतान्त की ओर अभिमुख (रजूअ) होते हैं:—

राना लखासिंह चौदहवीं सदी के अन्त में मेवाड़ का राना हुआ। उसने हमीर के आरम्भ किए काम को जिस को उसके पुत्र ने सम्पूर्ण किया था बहुत दृढ़ता प्रदान की। इसने दिल्ली के बादशाह महमूद से कई एक ज़िले छीन लिये और कई इलाकों को जो मेवाड़ की दुर्वलता के समय समीप वर्ती राजपूत दबा बैठे थे फिर नये सिरे से प्राप्त करके मेवाड़ में सम्मिलित किया। महमूद तुग़लक को अनेक युद्धों में उस की सेना ने हार पर हार दी। उसने बदनौर के उजड़े नगर को नए सिरे से बसाया। देश की सुदशा और सुअवस्था के अभिप्राय से चांदी और सोने की कानें खुदवाईं—जिनके विषय में पहले कहावतें चली आती थीं। परन्तु किसी को

उनके खोजने अथवा उन से लाभ उठाने का साहस नहीं हुआ था।

राना के दो पुत्र थे बड़े का नाम चन्द्रासिंह[1] था! यह वीर साहसी बुद्धिमान, उन्नतचेता, और महा आत्म सन्मानी था। किन्तु अपने पिता की तरह थोड़ा सा हठी और कठोर भी था। छोटा भाई रघुदेवसिंह सुन्दर शान्त स्वभाव सरल और धैर्य-वान था। वह साधारण रूप से सम्पूर्ण देश में प्रिय समझा जाता था।

एक दिन राना दरबार में बैठा हुआ था एक राज्य के बसीठ (सफीर) ने उपस्थित होकर नारियल भेंट किया। जब कभी राजपूताना में नारियल भेंट किया जाता है, तो उसका मतलब यह होता है कि कन्या का विवाह स्वीकार कीजिये। यह बसीठ (सफीर) राव रनमल वालिये मेवाड़ की ओर से आया था। जो राना के साथ अपनी रूपवती कन्या हंसा को व्याहना चाहता था।

राना ने नारियल को देखा और मोछों पर ताव देकर मुस्कराते हुए कहा "इसको उठालो और मेरे बेटे चन्द्रासिंह को भेंट दो। तुम नहीं देखते मेरे बाल उज्जल होगये, अब मेरे लिये इस प्रकार के खिलौने नहीं चाहिये"।

यह साधारण बात थी। परन्तु जिस समय राजकुमार चन्द्रासिंह को इस घटना का पता लगा, उसने क्रोध और लज्जा से अपनी गर्दन नीची करली। कैसे सम्भव था जो कन्या उसके पिता के साथ विवाहित होने को थी वह चन्द्रासिंह को व्याही जाय। उसने कहा मुझे यह स्वीकार नहीं है। इस नारियल को तुम मारवाड़ लौटा ले जावो"।

१. कोई "चण्ड" लिखा है।

राना ने मंत्रियों से कहा, चन्द्रासिंह को समझाओ, उसे बुद्धि से काम लेना चाहिये, मारवाड़ हमारा मित्र और पड़ौसी है। उसका अपमान करना किसी प्रकार उचित नहीं है। इसके भिन्न मारवाड़ के साथ नाहक की लड़ाई होगी। और उसके (अर्थात् मारवाड़ के) लड़के कभी इस अपमान का बदला लिए बिना न रहेंगे। राजकुमार ने कहला भेजा कुछ परवाह नहीं अपने धर्म और कर्म का विचार अवश्य करना है। मैं राजकुमारी हंसा के साथ विवाह कभी अपने कानों से न सुनूँगा"।

राना इस उत्तर को सुनकर बहुत क्रोधित हुआ। उसने कहा यदि चन्द्रासिंह इतना अज्ञान है तो मैं उस राजकुमारी से स्वयम् विवाह करूंगा और यदि उसके पेट से बालक उत्पन्न हुआ तो वही मेवाड़ का राना होगा।

इसको सुनकर चन्द्रासिंह ने कहला भेजा "आपको अखतियार है जैसा चाहें वैसा करें। मैं आज से राजपाट की इच्छा अपने मन से दूर कर दूंगा। और राजकुमारी हंसा के पुत्र को राजगद्दी पर बैठाकर उसकी रक्षा और सेवा करता रहूँगा। परन्तु कोई भय अथवा संसार का कोई प्रलोभन मुझे ऐसे काम के लिये उद्यत नहीं कर सकता, जिसको मैं अपने मन में बुरा और अनुचित समझता हूं"।

राना बहुत क्रोधित हुआ पर क्या कर सकता था? उसने नारियल ले लिया। मारवाड़ की राजकुमारी चित्तौड़ में आई और विवाह सम्बन्धी क्रियायें वैदिक रीति के अनुसार पूरी की गईं। एक वर्ष के पश्चात् उसके गर्भ से एक बालक उत्पन्न हुआ जिसका नाम इतिहास में मोकुलसिंह है।

यह लड़का अभी अज्ञान ही था कि राना लखा को यह ध्यान आया कि हिन्दुओं के तीर्थस्थान गया को दिल्ली के मुसलमान बादशाह के अधिकार (क़बज़े) से निकाल लेना चाहिये। क्योंकि यह वह पवित्र स्थान है जहां सम्पूर्ण हिन्दू जातीय रीति पूरी करने जाते हैं। राना ने चढ़ाई करदी। पहलीवार उसके धावे से सम्पूर्ण मुसलमान भाग गये परन्तु उनके पास सेना अधिक थी धन भी बहुत था वह फिर चारों ओर से एकत्र होआए और राजा से युद्ध हुआ इस दफ़ा राना लखा मैदान युद्ध में लड़ता हुआ जूझ गया।

युद्ध पर जाने से पहले उसने चन्दासिंह को बुलाकर पूछा था कि मौकलसिंह को कौन सा इलाक़ा देना चाहिये क्यों कि मैं अब जीवित लौट कर नहीं आऊंगा।

राजकुमार ने तुरन्त उत्तर दिया कि मेवाड़ का राज सिंहासन उसे देना चाहिये। रानाओं का सुनहरा झण्डा उसके सिर पर फहराएगा और राजसी छत्र उसको सुशोभित करेगा। उसकी प्रजा में से मैं सब से प्रथम भेंट धरूंगा।

राना यह सुनकर प्रसन्न हुआ उसने समझा चन्दासिंह अपने भाइयों में सब से बड़ा है और इस कारण से मेवाड़ की गद्दी का अधिकारी है परन्तु वह अपने पिछले बचन और प्रतिज्ञा पर अटक रहेगा। इसलिये अब उसको कुछ और अनुमति देना व्यर्थ है। जो लोग आज इस देश के निवासियों को झूठा और मक्कार बनाते हैं वह इन घटनाओं पर दृष्टि पात करें। क्या दुनिया के किसी और भाग में भी ऐसे दृढ़ प्रतिज्ञ उत्पन्न हुए हैं ?

राना मुसलमानों से लड़ने गया था किन्तु उसका मनोर्थ सिद्ध न हुआ। जब मेवाड़ में यह शोक समाचार पहुंचा कि राना लखा ने शेरों की भान्त लड़ते हुए रणक्षेत्र में प्राण दिए और राजपूती वीरता को स्थिर रक्खा तो उसके परलोक गमन से सब लोग बहुत दुःखी हुए।

चन्दासिंह ने अपने छोटे भाई को राजगद्दी पर बैठाया और उसके नाम पर उसकी ओर से राज्य कार्य्य करने लगा। उसकी कुरसी राना के दाहनी ओर रहती थी और सब कागज़ पत्रों पर चन्दासिंह के हस्ताक्षर होने के पश्चात् राना की मोहर लगाई जाती थी। उसने बड़ी बुद्धिमानी और सोच समझ से राजकार्य का प्रबन्ध किया। प्रजा उसको अपने प्राणों के समान प्रिय समझती थी। परन्तु महारानी हंसा नाराज़ थी, क्योंकि चन्दासिंह के प्रति प्रजा का ऐसा प्रेम देखकर उसके मन में भय उत्पन्न हुआ कि कहीं वह आप राजा न बन जाय। उसने लोगों से कहा, "यह ठीक है कि इस समय चन्दासिंह मेरे बेटे की सहायता करता है परन्तु कोई समय आएगा जब कि वह राना का भी राना बन जायगा। उसकी चतुरता को कोई नहीं जानता, अभी वह भाई के नाम पर राज करता है और उसकी सहायता दिखाता है आगे चलकर वह और रंग लाएगा"। रानी अपने इन विचारों को थाम न सकी। उसकी यह बातें चन्दासिंह के कानों तक पहुंची। उसने सोचा ईर्षालु स्त्री के साथ बात चीत करना वृथा है। यही उचित है कि वह चित्तौड़ से पृथक रहे। उसने अपने पद का कार्य्य त्याग दिया और सौतेली

माता के ईर्षा दोष से दुःखी होकर अपनी रोती हुइ प्रजा से विवश जुदा हुआ, दो सौ सवार उसके साथ गये, क्योंकि वह अपने स्वामी से पृथक नहीं होना चाहते थे। यह चन्दासिंह के उच्च भावों का दूसरा दृष्टान्त है।

चन्दासिंह के चले जाने के पश्चात् रानी ने मारवाड़ से अपने रिश्तेदारों को बुलाकर बड़े २ पदों पर उनको नियुक्त (तईनात) किया। और उजाड़ मारवाड़ के रहने वाले खुशी २ मेवाड़ के उपजाऊ देश में आकर बसने लगे। राव रन्मल रानी हंसा का पिता भी चित्तौड़ में चला आया। और मेवाड़ उसे इतना अच्छा लगा, कि फिर वहां से लौट जाने का नाम तक नहीं लिया। रानी के भाई भी चित्तौड़ में आ गये और धीरे २ एक २ करके चित्तौड़ के सब पिछले विश्वास के पात्र (वफ़ादार) सरदारों को निकाल दिया। और आप मेवाड़ के कर्ता धर्ता बन बैठे। जो कुछ उनके जी में आता था सो करते थे, कोई उनसे पूछने वाला नहीं था।

मेवाड़ वाले मन ही मन में दुखित होते और पछताते थे, परन्तु इनके भय के मारे सांस न लेते थे। मारवाड़ी सरदार सब बड़े उच्च पदों पर नियुक्त थे। और अज्ञान बालक के हित के लिये कौन जन था जो अपने प्राणों को शंका में डालता! किन्तु एक प्राणी ऐसा था जो इस दुर्वस्था को न देख सका वह अल्पायु राना की धाय थी। राजस्थान में दायों की वफ़ादारी की कथाएं अनेक हैं। मुकुलसिंह की धाय भी वीर साहसी और स्वामी भक्ति के गुण से विभूषित थी।

एक दिन राव रन्मल अपने नाती को गोद में लिये हुए

सिंहासन पर बैठा था। लड़का थक गया वह धरती पर खेलने के लिये नीचे उतर आया। राव रन्मल फिर भी राज सिंहासन पर बैठा रहा, सब की आंखें क्रोध से लाल हो गईं परन्तु सब चुप रहे। धाय का क्रोध असह्य था, वह रानी के पास दौड़ी गई। और क्रोध से कहने लगे। देखो मेवाड़ की गद्दी की कैसी दुर्दशा हो रही है, और मारवाड़ का उजड्ड गंवार दूसरे देश से आकर राना के अधिकार में हस्तक्षेप (दस्तबुर्द) कर रहा है।

रानी ने अब जाके अपनी नादानी देखी। और उस दिन उसने अपने पिता को बहुत लानत मलामत की, परन्तु पक्का खुर्राट राव रन्मल स्त्री की बातों को कब सुनने वाला था। और विशेषकर जब वह उसकी कन्या थी। उसने कहा इसी में अच्छा है कि तुम चुप रहो, और जो कुछ मैं करूं अथवा तुम्हारे भाई करें उसे मान लिया करो। नहीं तो मेवाड़ के सिंहासन की कुशल न होगी।

रानी डर गई, मेवाड़ी भी इन बातों को सुन कर भयभीत होने लगे। राजकुमार चन्दासिंह के छोटे भाई नम्र स्वभाव वाले रघुदेव को राव रन्मल के नौकर ने मार डाला। राव रन्मल ने रघुदेव को उत्तम वस्त्र (खिलअत) प्रदान किये थे और जिस समय वह उन्हें पहनने लगा तो नौकर ने कलेजे में कटार झोंक दिया और निर्दोष बालक ने तड़प २ कर प्राण त्याग दिये। मेवाड़ देश में रघुदेव के मरने पर महा शोक छा गया। क्योंकि वह सर्व साधारण को इतना प्रिय था कि लोग प्यार व सन्मान के भावों से उसकी छवि छपने घरों मे सजाकर रखते थे। और उसके नाम पर बलिहार होते थे।

महारानी हंसा गौ की भान्ति अपने हृदय में कांपती थी वह अपने मन में सोचती थी कि कहीं ऐसा न हो कि जिन लोगों ने राजकुमार रघुदेव को मारा है वह उसके पुत्र को भी वध कर डालें। परन्तु ऐसा कोई पद न था जिस पर मारवाड़ी नियत न हो गये थे। इसके अतिरिक्त राव रन्मल ने एक यह भी महा अत्याचार किया था कि मेवाड़ के राज्यकुल की एक गरीब स्त्री को जो तरुण और रूपवती थी। कुदृष्टि से देखा था और पुनः बलात्कार पूर्वक उस दुखिया को अपने अधिकार में ले आया था। मेवाड़ की इस से अधिक और क्या मान हानि हो सकती थी।

चारों ओर से भयभीत और निराश्रय होकर रानी ने अपने अहङ्कार को त्याग किया और एक विश्वास के योग्य मनुष्य को पत्र देकर चन्दासिंह के पास प्रेषित किया। उस पत्र में रानी ने लिखा "हे पुत्र! मैंने तुझ पर अन्याय किया, तू मेरे अपराध को क्षमा कर दे। इस समय समस्त मेवाड़ देश पर आपत्ति आई है, यदि तेरे हृदय में कुछ भी अपने देश की प्रीति वर्तमान है और मेवाड़ की गद्दी की राज्य भक्ति का ध्यान है तो चित्तौड़ आने में कदापि देर न कर"।

जब यह पत्र दूत के द्वारा चन्दासिंह के पास पहुंचा और उसने उसका पाठ किया, तो उसका हृदय भर आया, उसने दूत से कहा कि तुम जाकर माता से कहदो मैं उसकी आज्ञा पालन करने में त्रुटि न करूंगा। उसके थोड़े ही दिनों के पश्चात् चन्दासिंह के कुछ साथी चित्तौड़ में लौट आए और उन्होंने यह प्रकट किया कि हमें जङ्गल में रहते हुए बहुत दिन हो गये थे

अब हम अपने पारिवारिक जनों के साथ रहेंगे उनकी प्रीति हमें जङ्गल में दुःखी रखती थी। किसी को भी उनके कथन पर सन्देह नहीं हुआ। और वह किले के भीतर रहकर पूर्ववत् जीवन व्यतीत करने लगे।

अवसर पाकर उन्होंने रानी से कहा तू धैर्य्य रख! मेवाड़ का सच्चा पुत्र शीघ्र आकर उसको छुटकारा दिलाएगा। कुछ दिनों के पश्चात् दीपमाला का दिन आया रानी आनन्द से ग्राम वालों के भोज * का प्रबन्ध कर रही थी, किशोर राना की सवारी नगर के बाहर निकलने वाली थी, और धाय तथा पुरोहितादि साथ थे। मारवाड़ी अफीम के नशे में चूर थे और यही अवस्था राव रनमल की भी थी।

इस साधारण उत्सव के समय राना के सच्चे शुभचिन्तक अपने मन में बहुत व्याकुल थे और वह इस प्रकार सोच रहे थे, "न जाने क्यों देर हो रही थे। यदि इस दिन भी चन्दासिंह न आया तो सूर्य्याकार झण्डा फिर चित्तोड़ के क़िले पर न लहराएगा"। जब यह भीड़ इस प्रकार सोचती हुई उस पहाड़ी के निकट पहुंची जिसे अलाउद्दीन खिलजी ने अपनी यादगार बनाई थी। तो चालीस अस्त्र शस्त्रधारी सवार जिनके शरीर पर केवल फटे पुराने वस्त्रों के सिवा और कोई आछादन नहीं था दिखाई दिए और भीड़ के पास पहुंचकर राना को प्रणाम किया"।

फाटक वालों ने पूछा तुम कौन हो? उस दल के सरदार ने कहा हम इस लिए आए हैं कि राना को कुशल सहित

---

* दावत।

महल में पहुंचादें । पहरे वाले चुप हो गए । और यह अस्त्र शस्त्रधारी योधा सब दरवाज़ों से गुज़रते हुए राम फाटक के समीप पहुंचे । इसके पीछे पहरेवालों ने इसी प्रकार के एक और दल को आते देखा इस से उनको सन्देह हो गया, कि यह लोग मेवाड़ के शुभचिन्तकों में से नहीं हैं उन्होंने रोकथाम आरम्भ की ।

अस्त्र शस्त्रधारी दल को जब मालूम हुआ कि चतुरता से काम न चलेगा । सरदार ने मियान से तलवार खींच ली और "श्रीरामचन्द्र की जय" बोलते हुए घोषणा (अलान) की, कि राजकुमार चन्दासिंह मेवाड़ की रक्षा के लिए आया है, । और उसके साथियों ने अपने सरदार के लिए महल के फाटक खोल दिए ।

वृद्धराव ने चन्दासिंह को अवश्य रोका होता, परन्तु उस का कहीं पता न था । अफीम खाकर वह पलंग पर लेट गया था । एक दुःखी और चिन्तवान स्त्री उसके पास बैठी थी । पता नहीं किसी ने उसको चन्दासिंह के आने की खबर दी थी वा नहीं, परन्तु वह अपनी मान हानि से अपने मन में बहुत उदास थी क्योंकि राव रन्मल ने उसके साथ विवाह नहीं किया था, वरंच रखेली स्त्री की भान्ति गृह में डाल लिया था । उसने राव की लम्बी पगड़ी खोलकर उसके हाथ पांव को इस तरह खाटके साथ जकड़ दिया था कि सिवा तलवार अथवा और किसी हथियार की सहायता के वह खुल नहीं सकते थे । उसने क्रोध की दृष्टि से एकबार राव की ओर देखा और फिर वहां से निकलकर हलाहल विष से आत्मघात कर लिया । इतने में

मनुष्यों के आने के हल्ले का शब्द सुनाई देने लगा। लोहे से लोहा बजने का शब्द सुना गया। राव रन्मल नींद से जाग्रत हुआ। परन्तु नशे के मारे उसकी दशा बहुत बुरी थी। उसने देखा, कि स्त्री ने अपनी मान हानि का बदला ले लिया। वह उठने को तो बल लगाकर उठ खड़ा हुआ परन्तु खाट उसके शरीर से पृथक नहीं हुई। उसके पास उस समय न तलवार थी न कटार था, एक पीतल का लोटा निकट पड़ा हुआ था उस को उठाकर उसने शत्रुओं के ऊपर फेंका और तत्काल ही चन्दासिंह के साथियों ने उसे टुकड़े २ कर डाला।

इस प्रकार चित्तौड़ को शत्रुओं के हाथ से स्वतंत्रता मिली और मुकुलसिंह फिर अपने सिंहासन पर सुशोभित हुआ। मारवाड़ के निर्लज्य मनुष्य फाटक के पास मरे हुए पड़े थे। इने गिने दस बीस मनुष्य जीवित बचे जिन्होंने भाग कर अपने प्राण बचाए।

राव रन्मल के बेटों में से राजकुमार योधा जीवित बचा था, वह भागकर मन्दौर में आया। जो मारवाड़ का इलाका था परन्तु चन्दासिंह ने यहां भी उसका पीछा किया। योधा वहां से भी भाग गया और लोनी नदी के किनारे पहुंचा वहां हर्वशंकल नामी साधू रहता था उसकी शरण ली क्योंकि उसका विश्वास था कि यहां चन्दासिंह को आने का साहस न होगा।

हर्वशंकल इस प्रकार का मनुष्य था कि रात दिन परमात्मा की तपस्या में लगा रहता था। परन्तु जब कोई मनुष्य उसका

आश्रित बनता था, तो वह तन मन से उसको आश्रय देता था। और अनेक बार उसको अस्त्र शस्त्र धारण करने का अवसर भी पड़ा था। वह राजिस्थान में पवित्र जीवन और दीन दुःखी मनुष्यों की सहायता तथा वीरता की करणी के लिये बहुत प्रसिद्ध था। कोई जन उसके झोंपड़े से खाली नहीं जाता था। और इसी विचार से योधा ने भी उसकी शरण ली थी।

हर्बशंकल ने योधा के ऊपर दया की किन्तु उसके जाने से उसे कुछ कष्ट भी पहुंचा उसको चन्द्रासिंह का कोई भय नहीं था। परन्तु उसने सोचा कहीं मेरी अपकीर्ति न हो क्योंकि उस दिन एकसो इक्कीस मनुष्य उसके भण्डार में से आहार खाकर गए थे। और घर में कोई पदार्थ बाकी नहीं था। और दैवसंयोग से एकसौ इक्कीस मनुष्य और उसी क्षण आकर मौजूद होगए, जो मार्ग की थकन और क्षुधा तृषा से व्याकुल हो रहे थे।

हर्बशंकल ने समीप के जंगल से एक प्रकार की बूटी मंगवाई और उसको रिंधवाकर उचित रूप से नमक और मसाला मिलाकर योधा आदि को प्रदान किया। यह सब बहुत भूखे थे खूब पेट भर कर खाया और उसकी बड़ी प्रशंसा की। रात के समय जब यह सोए तो ऐसी गहरी निद्रा आई कि किसी को अपने शरीर की सुध नहीं रही।

प्रातःकाल जब सब जागे तो देखते क्या हैं कि सब के बाल लाल हो गए हैं क्योंकि वह बूटी लाल रंग की ही थी। हर्बशंकल को चिन्ता हुई कि कहीं उसके प्राहुन (महमान) दुःखी न हों। उसने कहा, "शुभ हो यह आनन्द के लक्षण हैं किसी दिन

मन्दौर फिर तुम्हारे अधिकार (क़बज़े) में आवेगा"। राजपूत यह सुनकर प्रसन्न होगए और अतिथि सत्कार की किसी ने भी निन्दा नहीं की।

चिरकाल तक योधा अर्वली पहाड़के इर्द गिर्द रहकर अपना समय काटता रहा। चन्दासिंह मुकुलसिंह के नाम पर राज्य करता रहा, और मन्दौर पर बराबर अधिकार जमाए रहा, बहुत वर्ष बीत गए। राना बड़ा हुआ। रानी हन्सा के मन में अपने दुःखित भाई की दशा पर दया आई उसने मुकुलसिंह से कहा, योधा को उचित से अधिक दण्ड मिल चुका है अब मन्दौर का इलाका उसे वापस देना चाहिए। मुकुलसिंह ने माता का कहना स्वीकार कर लिया।

जिस समय योधा को इस घटना की ख़बर पहुंची वह हर्बशांकल के पास चला गया ताकि इस घटना की सूचना दे। जब वह वहाँ बैठा हुआ था। तो दूसरे दूत ने आकर कहा, चन्दासिंह दरबार में बुला लिया गया है केवल उसके दो बालक मन्दौर में हैं।

योधा ने सोचा मन्दौर मेरे बाप दादा की सम्पत्ति है मैं उसको पुरस्कार स्वरूप क्यों ग्रहण करूं। लड़कर उसपर क्यों न अधिकार (कबज़ा) लाभ करूं। इस बातको उसके और साथियों ने भी उत्तम समझा, मारवाड़ के सरदारों ने भी उसकी सहायता का वचन दिया और सौ चुने हुए सवार हर्बशांकल समेत चल पड़े।

चन्दासिंह अपने बड़े लड़के मनजासिंह को साथ लिये हुए चित्तौड़ जा रहा था उसने रात्रि के समय फिरकर देखा

मन्दौर में विशेष प्रकार की दीप्ति (रोशनी) हो रही है। चन्दासिंह ने अपने बेटे को सम्बोधन करके कहा। मैं राना की आज्ञानुसार चित्तौड़ जा रहा हूं तू मन्दौर की खबर ले आ"। जब मनजा फाटक पर पहुंचा, तो देखा कि क़िले में योधा का अधिकार है। और उसके साथी और सम्बंधी सब मारे गये हैं मंदौर वासियों ने योधा के लौटने पर आनंद प्रकाश किया है। जब मनजा ने देखा कि मेरा कोई भी सहायक नहीं है वह वहां से चल पड़ा परन्तु कुछ आदमियों ने उसका पीछा किया और मारवाड़ की सीमा पर उसे घेर कर मार डाला।

चंदासिंह यह समाचार सुनकर फिर मन्दौर लौट आया। योधा भी उससे लड़ने के लिये बाहर निकला दोनों लड़ने के लिए तैयार थे। योधा ने राना का पत्र निकाल कर दिखलाया, जिसमें लिखा था "आज से मन्दौर तुमको वापस दिया जाता है"। चन्दासिंह ने राज आज्ञापत्र को नेत्रों से लगाकर चुम्बन किया और कहा जब हमारा स्वामी तुमको मन्दौर प्रदान करता है तो मुझे तुम्हारे साथ लड़ने की कोई आवश्यकता नहीं है। तुम अपनी सम्पत्ति पर अधिकार रक्खो। मेवाड़ अपनी सीमा पर अधिकार रक्खे। मैंने तुम्हारे पिता को बध किया था तुमने मेरे पुत्रों को बध किया, आज से इस झगड़े की इति श्री हुई। किन्तु प्रथम इसके कि मैं चित्तौड़ जाऊं। तुम से वचन लेना चाहता हूं कि आगामी तुम मेवाड़ के मित्र और सहायक बने रहोगे। योधा ने स्वीकार कर लिया।

चन्दासिंह योधा से कई गुना बढ़कर बलिष्ठ था, उसका

सामना करना सहज काम न था परन्तु उसने देखा, राजपूतों के परस्पर अन्मेल ने राजिस्थान को दुर्बल कर दिया है । यहां तक कि वह परस्पर मिलकर शत्रु का सामना भी नहीं करते इसलिए उसने यह सोच विचार कर अपने प्रिय पुत्रों के खून का बदला लेना त्याग दिया । और कल जो दो राजकुमार एक दूसरे के महा शत्रु थे आज पक्के मित्र बन गए। खड़े २ उसने दोनों राज्यों की सीमाओं (सरहद्दों) का फैसला कर दिया । योधा ने कहा जहां मनजासिंह मारा गया है वहीं सीमा नियत की जावे और इस नियम के अनुसार मेवाड़ को गोदावर का उपजाऊ इलाका हमेशा के लिए मिल गया और आज तक उसके अधिकार में है ।

चन्दासिंह इस सन्धि (सुलह) से बहुत प्रसन्न हुआ। वह राना का सच्चा शुभचिन्तक था । उसकी वफ़ादारी निष्काम थी। जीते जी वह मेवाड़ के प्रबन्ध में भाग लेता रहा, और जब आपत्ति के समय उसने देखा कि योधा मेवाड़ का हित चिन्तक और मित्र है उसने परमात्मा को धन्यवाद दिया । इससे भी उसकी सहायता प्रकट होती है। और हमारे सुशिक्षित (तालीम याफ़ता) जन समझ सकते हैं कि किस प्रकार उस में स्वामिआज्ञाकारिता (डिसिंपलन)का भाव वर्त्तमान था।

यह उस राजपूत के जीवन के संक्षिप्त वृतान्त हैं जिस से हमारे पाठक देश तथा जाति के प्रेम की हितकर शिक्षा लाभ कर सकते हैं।

परमात्मा करे हम में चन्दासिंह और भीष्मपितामह की तरह फिर श्रेष्ट आत्मा उत्पन्न हों और हत भाग्य भारत अपनी

सन्तान की योग्यता और विशेषता से अपनी गई हुई महानता को फिर से लाभ करे।

हाय २ भारत पर कैसे शोक के बादल छाए ।
आशा के पौदे थे जितने वह सब हैं कुम्हलाए ।
अत्याचार सदा होते हैं एक से एक जो बढ़ कर ।
दुखी करें क्या हृदय आपका उनका वृत हम कह कर।
देशका दुःख निवारो मित्रो सभी शीघ्र रल मिलकर ।
भला करो सब विधि से उसका पुरुषारथ चित धर कर ।

——:o:——

(५)

राना कुम्भ

हमले जो किए जुल्म, सआरों को भगाया ।
हिम्मत से लईनों की, क़तारों को भगाया ।
मैदानों से प्यादों को, सवारों को भगाया ।
एक एक बहादुर ने, हज़ारों को भगाया ।
जांबाज़ी ओ तसलीम, रज़ा खतम थी उनपर ।
स्वामी पे तसद्दुक थे, वफ़ा खतम थी उनपर ।

राना मुकुलसिंह के दरबारियों में दो भाई चचा और

मीरा बड़े माननीय थे। यह मुकुलसिंह के दादा राना केती के लड़के थे। और यदि उनकी माता व्याहता होती तो राजकुमार चन्दासिंह के पश्चात् उन्हीं को सब से अधिक पदवी और सन्मान का अधिकारी समझा जाता। परन्तु वह बेचारी ग़रीब जाति की बढ़ई थी। और इस कारण से वह दूसरे दर्जे के सरदार समझे जाते थे। जब कभी उनकी जाति पंक्ति का इशारे में भी वर्णन आ जाता तो वह बेचारे अपनी जाति को तुच्छ समझ मन ही मन में बहुत कुढ़ते थे। क्योंकि दरबार में कोई भी ऐसा मनुष्य न था जो उनकी उत्पत्ति और कुल व गोत्र के वृतान्त से अवगत न था।

एक समय राना मुकुलसिंह किसी चढ़ाई पर गया हुआ था। उस समय चोर डाकू मेवाड़ के पहाड़ों में बहुधा रहा करते थे। और मुसाफिरों को लूट लिया करते थे। उनके दमन करने की सहस्रों चेष्टाएं कीगईं, परन्तु कुछ भी लाभ न हुआ। निदान राना को स्वयम् उन्हें दमन करने के लिये जाना पड़ा। इस चढ़ाई से लौटते समय वह वृक्षों की छाया तले सस्ताने के लिये बैठ गया। सब सरदार साथ थे जिस पहाड़ी वृक्ष के नीचे राना बैठा हुआ था उसका नाम नहीं जानता था। उसने एक सरदार से पूछा कि इस वृक्ष का क्या नाम है? उसने चचा और मीरा को लज्जित करने के लिये कहा, मैं नहीं जानता, इनसे पूछिये। बिना सोचे समझे मुकुलसिंह ने सरलता के साथ उनसे पूछा "आपही बताइये यह क्या है"?

चन्दासिंह की दृष्टि में यह प्रश्न साधारण सा ज्ञात हुआ परन्तु राना के लिये उसका परिणाम बहुत ही भयानक

प्रमाणित हुआ। चञ्चा और मीरा ने जाना कि राना ने जान बूझकर उनको सब के सन्मुख लज्जित करने की इच्छा से यह प्रश्न किया है उनके हृदय में क्रोध की अग्नि जल उठी और उसी समय से बदला लेने की ठान ली।

अभी सूर्य्य भगवान् अस्त नहीं हुए थे राना सन्ध्योपासन में प्रवृत हो रहा था कि दोनों पापी भाइयों ने तलवारों से उस पर हमला कर दिया और उसका प्राणान्त करके चित्तौड़ का रास्ता लिया। ताकि राज सिंहासन पर अधिकार करलें। परन्तु क़िले के पहरे वाले चतुर थे उन्होंने इनकी एक बात न सुनी और फाटक बराबर बन्द रक्खा।

इस राक्षसी क्रिया पर चारों ओर के मनुष्यों के हृदयों में भय और आश्चर्य्य हुआ। यद्यपि मुकुलसिंह को अभी राज कार्य्य का काम करते हुए बहुत अधिक समय नहीं व्यतीत हुआ था तथापि वह बहुत ही अच्छा मनुष्य था और हृदय का बहुत दृढ़ था। उसने बीरता से शत्रुओं का नाश किया था। और जैसा कि चाहिए मेवाड की रक्षा बहुत योग्यता और चतुरता से की थी। राजकुमार कुम्भ अभी अल्प वयस्क था। परन्तु उसने ऐसे विपद् काल के समय में भी अत्यन्त साहस और बीरता से काम लिया। जिस से लोगों पर यह विदित होगया कि वह अत्यन्त होनहार और ऐश्वर्य्यवान महाराजा होगा। उसने तत्काल ही योधाराव वालिये मारवाड़ के पास सहायता के लिए दूत प्रेषित किया और कहला भेजा कि "यह समय सहायता और तत्परता का है"।

योधा ने उसी समय अपने बेटे की आधीनता में सेना

रवाना की। ताकि कुम्भ के शत्रुओं से बदला ले और पीपा घातकों को ढूँढकर यमपुरी को पहुंचाएं। चचा और मीरा को मैदान में लड़कर अपना साहस दिखलाना कठिन था। वह पहाड़ों में जाकर छिप रहे। राजपूतों ने वहां भी उनका पीछा किया। निदान पहाड़ की घाटी पर "रतिकोट" नामी किले में जो उदयपुर से बहुत दूर के अन्तर्गत है जाकर ठहर गए और इस किले का उचित प्रबन्ध कर लिया। और राजपूतों का सामना करने की तैयारी करली। उनका विश्वास था कि यह क़िला सर होने वाला नहीं है। और मेवाड़ के राना और मारवाड़ के राना को यहां आने का साहस न होगा।

जब कुम्भ और मारवाड़ नरेश योधा का पुत्र दोनों पापी भाइयों को ढूंढते हुए जारहे थे तो पहाड़ की घाटियों में एक मनुष्य मिला। इनको देखकर वह धरती पर गिरकर लोटने लगा और सहायता के लिए प्रार्थना करने लगा। राजा ने कहा "तू अपना साफ़ २ वृत्तान्त वर्णन कर"। उसने उत्तर दिया मैं जाति का चौहान राजपूत हूँ। मेरा नाम सुजाह है। चचा, मीर ने इस तरफ़ से जाते हुए मेरी क्वांरी कन्या को देख लिया और उसको ज़बरदस्ती पहाड़ पर उठा ले गए। और परमात्मा जाने उस के साथ क्या व्यवहार किया"।

कुम्भ और उसका साथी ध्यान के साथ इस वृतान्त को सुन रहे थे। यह मनुष्य मूँह को लज्जा से ढांके हुए अपनी विपद् का वृतान्त इनको सुना रहा था। उसने कहा मैं राना के दरबार की ओर जा रहा था इतने में तुम दोनों मनुष्य मुझ दिखाई दिए मैंने समझा कदाचित् तुम शीघ्रता से मेरी इस

बेइज्जती का दण्ड उन पापियों को दे सकोगे इसलिए तुम से सहाय प्रार्थना की। मैं तुमको रतिकोट का मार्ग बता सकूंगा। क़िला इतना दृढ़ नहीं है। मैं मज़दूर का भेष बना लेता हूँ और जो लोग क़िले की मरम्मत कर रहे हैं उनके साथ मिलकर तुम्हारे प्रविष्ट होने का मार्ग निकाल लूंगा। पहाड़ के चट्टान ढलवान है। उन पर पांव रखना जोखिम है क्योंकि उस भाग को कठिन समझकर अभी तक मरम्मत का काम आरम्भ नहीं किया गया है"।

राना—क्या तुम सचमुच मुझे पहाड़ी तक पहुंचा दोगे?

मनुष्य—हाँ, मैं अवश्य आपको पहाड़ी तक पहुंचा दूंगा परन्तु आप मेरी सहायता करें। राना ने स्वीकार किया और उसी समय थोड़े से चुने हुए मनुष्यों को साथ लेकर रात के समय पहाड़ की चोटी पर जा पहुंचा। सब से आगे सुजाह था ताकि वह मार्ग बता सके, साथ ही मारवाड़ नरेश था।

रात अन्धेरी और सुनसान थी बिजली चमक रही थी। और उसकी घोर गर्जन से कानों के परदे फटे जाते थे। पानी मूसलाधार बरस रहा था और ऊपर से जगह २ पर धारें गिर रही थीं इस पर भी बीरसिंह पुरुषों का जो पांव उठता था आगे पड़ता था, हाय! अब ऐसे साहसी कहां हैं? जो परीक्षा और आज़मायश के समय जोखों और आफत का सामना करने के लिए तैयार रहते थे। पहाड़ के दर्रों में पांव रखकर चलना सहज काम नहीं था, राना ने कहा यद्यपि इन पत्थरों पर चलना भेड़ बकरियों के लिए भी कठिन है तथापि तुम सहज में पांव जमा जमा कर चलो। यदि किसी कारण से पांव फिसल जाय अथवा

नीचे गिर जाय तब भी आह का शब्द मुख पर न लाओ और न रास्ता पूछो । जिस प्रकार बने सम्भलते हुए चले जाओ। ताकि तुम्हारी आवाज़ से शत्रु चौकन्ने न हो जांय और पहरे वालों के कान खड़े न हो जांय। और फिर उनका परास्त करना कठिन होगा । बहादुर शूर सामन्तों ने अपने स्वामी के बचनों का सिर और आंखों से पालन किया । हाय ! यह आज्ञापालन और यह साहस तथा बीरता अब हम में कहां है ! क्या हम सचमुच उन्हीं बहादुरो के जाति जन हैं? इसका उत्तर हमारे पाठक अपने मन ही मन में सोच कर देखें ?

जब वह चोटी के आधे फासले पर पहुंचे, और सुजाह ने एक खड्ड की ओर पांव बढ़ाया तो उस के सामने चमकते हुए दो गोले दिखाई दिए, एक शेरनी उस पर झपट करने के लिए तैयार हो रही थी। रात के अन्धकार में उसकी आंखें गोले के समान चमक रही थीं परन्तु गरीब कन्या के पिता को अपनी बेइज्जती के खयाल से अधिक किसी बात की चिन्ता नहीं थी। इज्जत आबरू के सामने जान क्या चीज़ है? जब खानदानी इज्जत, जातीय मर्य्यादा, स्वदेशी मर्य्यादा आदि का प्रश्न आ जाता था राजपूतों की चमकती हुई तलवारें निर्णय के लिए म्यान से निकलती थीं। परन्तु क्या हम में अब भी वही आत्म सन्मान वर्तमान हैं? वही लज्जा और वही साहस वर्तमान है? हम क्या कहें सूर्य्य में दाग लग गया, आर्य्य जाति अपने सिद्धान्त से गिर गई, जिस भारत में देवता उत्पन्न होते थे आज वहां ...... उत्पन्न होते हैं जिनको न अपनी प्रतिष्ठा का ध्यान और न मर्य्यादाका ध्यान है।

बिगड़े भाग्य न जिनके संवरे, वह हत भागी हम हैं।
खोजि देखिए जगत्त के भीतर, ऐसे प्राणी कम हैं॥

बूढ़े चौहान ने राजकुमारों के हाथ को पकड़ कर खबर दी। शेर, चीता अथवा दुनिया का और कोई बलवान सन्मुख आजाय, किसी ने कब सुना हैं कि क्षत्रिय ने पीठ दिखाई हैं। उसी समय दो तलवारें म्यान से बाहर निकलीं और दोनों चमकते हुए गोलों के बीच में घुस गईं शेरनी मारी गई और खड्ड में गिर पड़ी।

चन्द्रा की लड़की किले में सो रही थी। शेरनी के गिरने के शब्द ने उसे जगा दिया, वह डर गई। बाप को जगाकर कहा "होशियार हो जाओ शत्रु निकट है"। चन्द्रा ने कहा "नहीं बेटी तेरा ख़याल है इस पानी में कौन आता जाता है। अन्धेरी रात में हाथ को हाथ नहीं सूझता यह बिजली के कड़क का शब्द है जो तू ने सुना है। शत्रु तो अभी कोसों दूर हैं तू निश्चिन्त होकर सो जा और केवल परमात्मा का भय रख"। उसको किञ्चित ख़याल नहीं था कि परमात्मा का अटल नियम कर्म्म के अनुसार काम करता है। उसको क्या पता था कि बदला लेने वाले वीर पुरुष उसके सिर पर पहुंच गए हैं वह प्रमाद में ग्रस्त होकर झूमता हुआ दीवार पर गिरा और नक़ारह को सिरहाना बना कर फिर सोगया।

थोड़े ही देर के पश्चात् रात के अन्धकार में शत्रु के आने का वृत्तान्त फैल गया। किला वाले भी राजपूत ही थे वह क्यों आधीनताई स्वीकार करने लगे थे, निदान लोहे से लोहा बजने

लगा। परन्तु किले वालों की सारी चेष्टा व्यर्थ प्रमाणित हुई, राना और राव के हाथों ने वह सफाई दिखाई कि बस रे बस ! मारवाड़ के राव ने मीरा का प्राणान्त किया और शुजाह की क्रोधवान खड्ग ने चचा के कलेजे में घुस कर उसका रुधिर पिया। इस प्रकार एक ही समय में एक छत्रपति वालिए मुल्क के पिता के बध और एक निर्दोष ग्रामणी कन्या की बेइज्जती का बदला लिया गया।

पिता के खून का बदला लेकर कुम्भ ने राज कार्य्य की ओर ध्यान दिया। दिल्ली में तैमूरलंग के आक्रमण ने यवन महिपाल को बेजान कर दिया था। उसके बादशाह काष्ट के पुतले थे महलों के गुलाम उन पर आज्ञा करते थे। जिन २ प्रदेशों को अलाउद्दीन खिलजी ने लड़ २ कर राज्य में मिलाया था सब धीरे २ स्वतंत्र बन बैठे। पूर्व में एक जन जवनपुर का बादशाह बन गया। और अवध के हिन्दू राजाओं ने उसको कर देना स्वीकार कर लिया। एक अधर्म्मी राजपूत जाति का शत्रु जिस को फीरोज़शाह दिल्ली के बादशाह ने गुजरात का सूबेदार नियत किया था वह विद्रोही बन कर उस सूबे का स्वतंत्र स्वामी हो गया। दक्षिण में छोटी २ रियासतें स्थापित हो गई थीं और वह प्रान्त चिरकाल तक दिल्ली की आधीनता से पृथक रहा। मालवा ने जो किसी काल में हिन्दू राज्य था दिल्ली के अधिकार से निकल कर एक मनचले मुसलमान सरदार के उद्योग से दृढ़ और बलवान् राज्य का आकार धारण कर लिया इस सरदार का नाम महमूद था।

महमूद की इच्छा थी कि दिल्ली के सूबों को मिला जुला

कर अपने लिए एक बड़ा राज्य स्थापन करे। उसने पहले अपने पड़ोसी रजवाड़ों पर धावा किया, फिर जवनपुर और दक्षिण को हराया और उनको मालवा का भाग नियत करके अजमेर को लाभ किया। जो राजिस्थान की कुञ्जी के नाम से प्रसिद्ध है। और गुजरात के जातीय शत्रु हिन्दू राजपूत को साथ लेकर मेवाड़ पर चढ़ाई करदी।

कुम्भ इस युद्ध के लिए तैयार था एक लाख सवार और पैदल और चौदह सौ हाथी अपने साथ लेकर वह महमूद से लड़नेके लिये चितौड़ से बाहिर निकला। यद्यपि वह समय भी हिन्दुओं के अधःपतन (ज़वाल) का था। परन्तु फिर भी उनमें कुछ न कुछ जान बाकी थी ! मुर्दह प्राण विहीन को पांव तले कुचलना सहज है, परन्तु जब तक शरीर में प्राण है कोई अपनी नाक पर मक्खी बैठने नहीं देता। यह जीवन का प्रबल लक्षण है। यह जीने का सच्चा प्रमाण है। यह लक्षण हैं जिनसे प्रत्येक जन मुर्दह और ज़िन्दह का निर्णय कर सकता है। युद्ध आरम्भ हुआ राना कुम्भ ने वह बीरता दिखलाई कि :—

दोहा—धन्य वीर तू धन्य है, धन्य तेरी तलवार।
करते थे यह देवता, नभ में शब्द उचार ॥१॥

मेवाड़ के लिए यह लड़ाई मौत और ज़िन्दगी का प्रश्न था। राना विद्युत खड्ग को हाथ में लेकर निकला, यदि कोई फ़ारसी कवि (शायर) उस दिन उसकी तलवार की

काट को देखता तो कदाचित "फौलाद हिन्दी" की प्रशंसा और भी बढ़कर करता। परन्तु हम यहां पर मृत मिरज़ा अनीस के किञ्चित शेरों को अंकित करते हैं जो उसकी यथावत दशा का प्रकाश करते हैं :—

इफ़लाक १ पर चमकी कभी, सिर पर कभी आई।
कौंधी कभी जोशन २ पर, सिपर ३ पर कभी आई।
गह ४ पड़ गई सीने पर, जिगर पर कभी आई।
तड़पी कभी पहलू पर, कमर पर कभी आई।
तय करके फिरी ख़तम, वह क़िस्सा था फ़र्श का।
बाकी था जो कुछ काट, वह हिस्सा था फर्श का।
बे पांव जिधर हाथ से, चलती हुई आई।
नद्दी उधर यक खूं की, उबलती हुई आई।
दम भर में वह सौ स्वांग, बदलती हुई आई।
पी पी के लहू लाल, उगलती हुई आई।
हीरा था बदन रङ्ग, जमर्रुद से हरा था।
जौहर जो कहो पेट, जवाहर से भरा था।
सिर पटके तो मौज ५ उसकी, रवानी को न पहुंचे।
क़लज़ुम ६ की भी धारा हो, तो पानी को न पहुंचे।
बिजली की तरह शोला ७, फ़िशानी को न पहुंचे।
खंजर की जबां तेज़, ज़बानी को न पहुंचे।
दोज़ख़ ८ की जबानों से भी, आंच उसकी बुरी थी।

* (१) आकाश (२) सन्नाह (३) ढाल (४) कभी (५) लहर (६) समुद्र। (७) अग्नि ज्वाल (८) नर्क।

बरछी थी कटारी थी, सिरोही थी छुरी थी।
पहुंची जो सिपर तक तो, कलाई को न छोड़ा।
हर हाथ में साबित, किसी धाई १ को न छोड़ा।
शोखी को शरारत को, लड़ाई को न छोड़ा।
तेज़ी को रुखाई को, सफ़ाई को न छोड़ा।
आजा ३ व बदन क़ता ४, हुए जाते थे सब के।
कैंची सी ज़बां चलती थी, फ़िक़रे थे गज़ब के।
बद्केश ५ लड़ाई का चलन, भूल गए थे।
नावक ६ फ़िगनी तेज़फ़िगन १, भूल गए थे।
सब हीलाकशी ७ अहद शिकन ८, भूल गए थे।
बे होशी में तर्कश का दहन ६, भूल गए थे।
मालूम न था जिस्ममें, जां है कि नहीं है।
चिल्लाते थे क़बज़े में, कमां है कि नहीं है।

लड़ते २ महमूद और राना का दूबदू सामना हुआ। राना की तलवार की चमक देखकर वह मूर्छित हो गया मुसलमान दल और उसके साथी राजपूत दल दोनों को हार प्राप्त हुई। महमूद बन्दी होकर चित्तौड़ के क़िले में क़ैद हुआ और छै: महीने तक राना की क़ैद में रहा। अब वह पछताता था कि नाहक़ मैंने राजिस्थान में पांव रक्खा, निदान राना कुम्भ ने उसको छोड़ दिया। और न उससे जज़िया और न कर के

* (१) दाव (२) चुलबुलापन (३) अंग (४) कटे (५) दुष्ट (६) तीर चलाने वाले (७) बहाना करने वाले (८) प्रतिज्ञा भङ्ग करने वाले।

विषय में हठ किया वरन् उसको अपनी ओर से खिलअत पहनाकर और कुछ पुरस्कार देकर कहा "जा निडर होकर राज कर, परन्तु अनीति और अन्याय से कभी काम न लेना"। यह राजपूतों की उदारता का उदाहरण था। इस उदारता के साथ शत्रुओं से व्यवहार किया जाता था, परन्तु आज दुनिया की क्या दशा है ? आधुनिक व्यवहार और आधुनिक सभ्यता तथा मनुष्यत्व के नाम पर कलङ्क है । निर्दोष साधू जो अकेले एक कोने में बैठकर भगवत् भजन करते हैं सुरक्षित नहीं रहने पाते। उनके भिक्षापात्र (कासयगदाई) के छीनने की इच्छा रहती है भीखमङ्गों के मुख के ग्रास के हड़पने तक की रुचि रहती है। और इन निर्दोषों और दुर्वलों के रुधिर में तलवार रंगना मरदानगी कहलाती है यह बहादुरी है या वह ? पाठक अपने मन में दोनों अवस्थाओं की तुलना करके प्रतिफल (नतीजा) आप निकालें।

दोहा—अन्तर है कितना बड़ा, इन दोनों के बीच।
वह वासी है स्वर्ग का, यह नारकी है नीच॥

राना ने महमूद के मुकट (ताज) को अपने धनागार (खज़ाने) में रख लिया । यह उसकी विजय की निशानी थी। इस उदारता और उपकार के बोझे से दब कर महमूद फिर कभी चित्तौड़ के विरुद्ध सेना लेकर नहीं चढ़ा—वरंच उसके

साथ मिलकर हमेशा दिल्ली के बादशाह की सेना को तहस नहस करता रहा।

वालिये मालवा पर विजय की यादगार में राना कुम्भ ने चित्तौड़ में एक जयस्तम्भ स्थापन किया, जो अब तक उस सिंह पुरुष की शेरमर्दी की याद दिलाता रहता है। जिन्होंने इस स्तम्भ को नहीं देखा वह न तो उसकी विशेषता को समझ सकते हैं, न देखने वाला उसको वर्णन ही कर सकता है। इसके बनाने में दस वर्ष व्यतीत हुए थे। वह १२२ फीट ऊंचा था और चारों दिशाओं से ३५ फीट की नीव (बुनियाद) है और गुम्बद के तले १७ फीट चौड़ा है। यह नवमहला है। चारों ओर द्वार बने हैं। चोटी पर लाल पत्थर (सङ्गमूसा) है और महाराजाओं की वंशावली खुदे हुए अक्षरों में अङ्कित हैं। हजारों छवियां बनी हुई हैं। स्त्री, पुरुष, सिंह, व्याघ्रादि के चित्र विचित्र रूप से आकृष्टकारी मालूम होते हैं। और वह दूर से अत्यन्त सुन्दर प्रतीत होता है।

राना कुम्भ के विषय में राजिस्थान में विशेष रूप से कहा जाता है कि वह शत्रुओं की सेना के मध्य में अकेला सिंह की तरह दिखलाई देता था।

राना कुम्भ को इमारतें बनवाने का स्वभावतः चाव था। उसने कृष्ण जी का मन्दिर बनवाया। और ब्रह्मा का मन्दिर अपने पिता मुकुलसिंह के सन्मान प्रदर्शन में बनवाया। आबू पर्वत और मेवाड़ के पश्चिमी पहाड़ी के मन्दिर उसके इस अनुराग के प्रत्यक्ष दृष्टान्त हैं।

कुम्भ मिथ्या विश्वासी नहीं था, वह मत का पक्षपाती अवश्य था, परन्तु समझता था कि मुल्क की रक्षा के लिये किला और सेना की नितान्त आवश्यकता है। जो लोग केवल मन्दिर बनवा कर यह ख़्याल करते हैं, कि भगवान उनके राज्य की रक्षा करेंगे। वह उसके उत्तम दृष्टान्त से शिक्षा लाभ करें, उसके क़िलों में सब से प्रसिद्ध कोमलमेर का क़िला है जो कुम्भ पर्वत पर स्थापित है। और जहां उसका पोता पृथ्वीराज रहा करता था, राना कुम्भ को छन्द और कविता से भी बहुत प्रेम था जब छुट्टी मिलती थी वह परमात्मा की स्तुति में भजन बनाया करता था।

उसकी रानियों में मीरा बाई का वृतान्त बहुत ही मनो-रञ्जक है इसको भी काव्य प्रिय थी। और परमात्मा के प्रेम में इतनी मग्न और मस्त रहा करती थी, कि कभी २ उसको अपने तन बदन की भी सुध नहीं रहती थी। वह बहुधा बाहर पूजा करने के मनोर्थ से चली जाया करती थी। कुम्भ को मेवाड़ की महारानी की यह क्रिया भाती नहीं थी। परन्तु मीरा की भक्ति दिन प्रतिदिन बढ़ती गई और वह इसी भक्ति के मार्ग में दृढ़ प्रतिज्ञ रहकर परलोक को चल बसी।

शेर—जो सच्चे दाता से, लौ लगी हो,

उसे किसी का ख़याल कब है।

कहां उसे ज़िन्दगी की परवा,
वह मौत से पायमाल कब है।

राना कुम्भ में जहां यह सब गुण थे वहां उसके जीवन रूपी निर्म्मल चादर पर यह क्रिया कुत्सित कलङ्क है कि वालिए झालावाड़ की कन्या किसी मारवाड़ी राजकुमार से विवाहित थी। कुम्भ ने किसी बात का विचार न किया और उसको ज़बरदस्ती छीन लाया और कोमलमीर की पहाड़ी में उसकी इच्छा के विरुद्ध उस से विवाह किया।

लोगों ने इस क्रिया को बहुत घृणा की दृष्टि से देखा क्योंकि इसके कारण मेवाड़ और मारवाड़ के बीच में फिर शत्रुता की आग भड़क उठी। यह ज़बरदस्ती से लाई हुई स्त्री भी उसको घृणा की दृष्टि से देखती थी, और कभी उसके साथ रहने पर प्रसन्न नहीं थी वह चाहती थी कि अपने असली पति के पास भेज दीजाय किन्तु कुम्भ इस बात पर उद्यत नहीं था। ग़रीब अबला सदा इस बात की चिन्ता में रहती थी कि उसका पति कब आकर उसे छुटकारा दिलावेगा। उसका ध्यान मन्दौर की ओर लगा रहता था, जब उसके पति ने यह वृतान्त सुना, तो वह एक रात कुछ मनुष्यों को साथ लिए हुए कोमलमीर आया और क़िले की दीवार फान्दकर रानी के महल की ओर आने लगा परन्तु शोक कि पहरेवाले सूचेत होगए और बहुत से मनुष्यों ने घेरकर उसे बधकर डाला। और इस ज़िन्दगी में उन दोनों को एक दूसरे के साथ मिलने का अवसर न दिया।

कुम्भ का बड़ा बेटा रायमल राजगद्दी का अधिकारी था, उसने एक बार राना से एक प्रश्न किया जिस पर कुम्भ उससे इतना अप्रसन्न हुआ कि उसे राजधानी से बाहर होजाने की आज्ञा दी। राना का नियम था कि जब तक सिर के गिर्द तीन बार तलवार नहीं घुमा लेता था तब तक किसी जगह पर नहीं बैठता था, रायमल ने पूछा 'इसका क्या मतलब है और ऐसा क्यों किया करते हैं'? राना ने इसका उत्तर देने के स्थान में यह आज्ञा दी "कि तुम अभी मेवाड़ से बाहर हो जावो।

ग़रीब राजकुमार ने देश को त्याग दिया। राना कुम्भ ने ५० वर्ष तक राज्य किया। अन्त में राना के दूसरे बेटे ने एक भाट को प्रलोभन देकर उसके हाथ से बध करा दिया।

पिता के मारे जाने पर उस पापात्मा ने मेवाड़ के राज्य को अपने हाथ में लिया। उसने पांच बरस तक राज्य किया, परन्तु कभी आनन्दित नहीं रहा। क्योंकि उस दुष्ट के बहुत से शत्रु होगए थे। वह अपने पड़ोस की रियास्तों को उत्कोच दिया करता था, ताकि जिस राज्य को उसने ऐसी बुरी तरह से लाभ किया था, उस से कुछ दिनों के लिये सुख उठावे, एक २ करके बहुत से ज़िले और क़सबे उसके हाथ से निकल गए। जब रायमल ने पिता के मरने का वृतान्त सुना, तो वह मेवाड़ में लौट आया। और उस पापात्मा ने उस से हारकर मेवाड़ छोड़ दिया, और बहलोल लोदी शाह दिल्ली के पास जाकर कहा "यदि आप मुझे सहायता देकर मुझे मेवाड़ का स्वामी बनादें तो मेवाड़ आपकी अधीनता में रहेगा और मैं सूर्य्यवंशी कहलाता हुआ भी आपको कर देता रहूंगा

और अपनी कन्या भी ब्याह दूंगा। बहलोल ने उसकी प्रार्थना स्वीकार की और अपनी सेना साथ देकर चित्तोड़ की ओर भेज दिया परन्तु परमात्मा की इच्छा नहीं थी कि बापारावल की सन्तान इस प्रकार तिरस्कृत की जावे। यह नीच मनुष्य दिल्ली के दरबार से लौटा जा रहा था, कि मार्ग में उसके सिर पर बिजली गिरी। उसके साथियों ने घबरा कर उसकी ओर देखा तो वह धरती पर गिरा पड़ा था, और मुंह बिलकुल झुलस गया था। मेवाड़ के रानाओं के चिट्ठे में कुम्भ के पश्चात् इस पापात्मा का नाम नहीं लिखा जाता। न किसी को मालूम है कि उसका क्या नाम था। कुम्भ के पीछे जो थोड़े दिनों के लिए मेवाड़ का राना बना वह हत्यारा कहलाता है और इस पापी मनुष्य के लिए इस के सिवाय और कोई पदवी नहीं दी जासकती थी।

जब मेवाड़ में उसके मरने का वृतान्त पहुंचा तो आनन्द मनाया गया। क्योंकि इस संसार से एक ऐसे अपवित्र आत्मा ने कूच किया जो क्षत्रियकुल के लिए कलंक का कारण था। मेवाड़ की प्रजा ने एक तन व एक मन होकर रायमल को अपना राना बनाया। और उसके नाम का सिक्का प्रचलित किया गया।

लानत है उस दुष्ट के ऊपर, जाति का हो जो शत्रू।
लानत है उस अधम के ऊपर, जाति का हो ना मित्रू।
गैरों से जो मिलकर चाहे, अपनी मान बड़ाई।
दुनिया दीन दुहूं पासों से, निज मुख कालक लाई।
नष्ट होय वह पापी मूरख, कबहूं कल नहिं पावे।
मरे स्वान की मौत दुष्ट वह, देव कवि यह गावे।

(६)

पृथ्वीराज और ताराबाई ।

बरछियां तोल के, हर गोल के १खूं ख्वार २ चढ़े ।
नेज़े हाथों में, संभले हुए असवार बढ़े ।
जंग जू लड़ने को, मैदान में यकबार बढ़े ।
देख तारा को चलीं, जिस्म से जानें सब की ।
मुंह के बाहर निकल, आई थीं ज़बाने सब की ।

उदयपूर के निकट पहाड़ी घाटी की सुन्दरता वास्तव में एक विचित्र दृश्य है। जिसका दृश्य कम्पित और अद्भुत चित्र देखने वाले के हृदय पर अपना प्रभाव डाले बिना नहीं रह सकता। यहां मध्यक्षेत्र में कोमलपुर नगर बसा है और उसके निकट मारवाड़ की सड़क के किनारे एक सादह चौरी अर्थात् समाधि बनी है जो उस मार्ग से जाने वाले को अपनी यथार्थता को खोजने के लिए विवश करती रहती है। इस का आकार गुम्बद कासा है। एक सुन्दर मण्डप को स्तम्भों के उपर स्थापित किया गया है। और उसके नीचे पृथ्वीराज और उसकी वीराङ्गना स्त्री की भस्म गाड़ी गई है। यह दोनों प्राणी योधा वीर और साहसी थे। और राजपूतों की वीरता के

---

* (१) दल (२) भयङ्कर से अभिप्राय है।

इतिहास में बहुत से पृष्ठ इनके कारनामों से अङ्कित व विभूषित किए गए हैं।

ताराबाई जो वास्तव में वीरता के गगन की चमकती हुई तारा थी राय शिवरत्नसिंह वालिए बदनौर की सौभाग्य वती कन्या थी। यह सुलङ्की जाति में से था। और अन्हलवाड़ा के प्रसिद्ध राजाओं की सन्तान था। तेरहवीं शताब्दी (सदी) में अलाउद्दीन के जुल्म और दुष्टता से यह राजवंश देश त्यागी बनकर मध्यभारत में रहने लगा। और विनास नदी के किनारे 'टोक थोड़ा' नामी नगर बसाकर आस पास के ग्रामों को अपने आधीन बना लिया था। परन्तु शोक! सलाहउद्दीन नामक पठान मुसलमान ने राय शिवरत्न का इस पर भी अधिकार न रहने दिया यह नगर भी उनसे छीन लिया और वह अपने पूर्वजों के गृह को लाचारी से त्यागकर अर्बली पर्वत के दामन में बदावर नामक स्थान में रहने लगे जो मेवाड़ की सीमा में है।

ताराबाई उस समय उत्पन्न हुई थी जब उसके माता पिता दुःख और विपद के पंजे में फंसे हुए थे। यह सोलहवीं शताब्दी की घटना है। वीराङ्गना ताराबाई ज्यों २ आयु में बढ़ती गई त्यों २ रूप गुण और तेज में भी बढ़ती गई। वह अपने पिता के युद्ध में परास्त होने के वृतान्तों को सुन २ कर अपने स्वभाव को परिश्रमी और साहसी बनाती गई। एक अवसर पर पांच वर्ष की आयु में आगामी समय की होनहार और माननीय महिला ने पिता जी बात को सुनकर डबडबाई हुई आंखों से कहा "पिता जी! परमात्मा को उचित था। कि मुझे

आपका पुत्र बनाता ताकि मैं सन्नह संजोवा (ज़िरह बकतर) पहनकर और हाथ में राजपूती तेग लेकर आपके शत्रुओं का संहार करती और आपके राज्य को शत्रुओं के हाथ से छुड़ा लेती"। उस समय के इतिहास में ताराबाई की माता का कुछ वर्णन नहीं किया, जिस से ज्ञात होता है कि वह बाल्यकाल में ही मर गई होगी। और यदि यह अनुमान सत्य है तो ताराबाई का पुत्र की भान्ति पालित होना और आगामी काल में असाधारण वीरता के साथ सिंह की तरह रणक्षेत्र में आकर हजारों मनुष्यों से युद्ध करना कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

यह स्पष्ट विदित है कि दुःखित मन पिता के हृदय को अपनी होनहार कन्या के स्वभाव से ढारस थी. पुत्र की भान्ति उसे शिक्षा दी गई। वह तीरन्दाज़ी, बरछाबाज़ी के गुणों में पूरी निपुण हो गई। और उसके साथ ही गृहस्थ सम्बन्धी काम काजों को भी पूरा करती रही, लड़ाई के करतब उसकी बीर प्रकृति के अनुसार थे। उसके रूप और गुण की प्रशंसा दूर २ प्रसिद्ध होगई। पन्द्रह वर्ष की आयु में वह स्त्रियों की सुकमारता (निज़ाकत) सम्बन्धी क्रियाओं से घृणा करती थी। और अपने पिता के सिपाहियों की तरह वस्त्र पहन कर वह घोड़े पर सवार होकर जङ्गल में शेर तथा पाढ़े का शिकार करने लगी थी। तीरन्दाज़ी में तो ऐसी सिद्ध हस्त (निशानेबाज़) थी कि घोड़ा बगटट दौड़ा चला जारहा है और ऐसी दशा में तारा की कमान से निकला हुआ तीर कभी निशाने पर लगने से खाली नहीं जाता था।

राय शिवरत्नसिंह ने अनेक बार टोंकथोडा को मुसलमानों

के हाथ से छीन लेना चाहा, परन्तु प्रत्येक बार अकृतकार्य्यता का ही मुख देखना पड़ा था, अब उसकी होनहार पुत्री रण-क्षेत्र की कठिनता और जङ्गल की आपत्तियां को अपने लिए आनन्द के कार्य्य समझती थी, इसलिए समय आगया था, कि कम से कम एकबार और भाग्य की परीक्षा की जाय।

अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित होकर काठियावाड़ के चंचल और असील पवन के समान वेगवान घोड़े पर सवार होकर वीराङ्गना ताराबाई सेना साथ लेकर टोंकथोडा पर धावित हुई। बड़ी चतुरता और वीरता से शत्रुओं का सामना किया गया। वीरा-ङ्गना तारा के बलिष्ट हाथों ने हज़ारों शत्रुओं की ख़ाक और ख़ून में सुला दिया, परन्तु प्रतिफल (नतीजा) अकृतकार्य्यता के सिवाय और कुछ न हुआ। पहले की तरह इस बार भी हार प्राप्त हुई। राजपूत मारे गये, सेना नष्ट होगई। हृदय निराश होगए साहस जाता रहा, शिवरत्नसिंह और तारा बदावर लौट आए किन्तु तारा के लाल २ अग्निमय नेत्रों से प्रकट होता था, कि उसको आशा है और वह शीघ्र टोंकथोडा पर अधिकार करने में कृतकार्य्यता लाभ करेगी और इस विचार से वह अपनी सेना की दुरुस्तगी में पुनः प्रवृत्त हुई।

गुलाब का बूटा उस समय तक घास पात में छुपा रहता है जब तक उसमें पुष्प नहीं आते। ताराबाई के रूप और गुण की प्रशंसा दूर २ तक फैल गई। कितने ही राजकुमार उसके विवाह के इच्छुक हुए। उनमें राना रायमल वालिये मेवाड़ का प्रतिनिधि जयमल भी था, जो बहादुर किन्तु स्वभाव का चिड़-चिड़ा था। उसने तारा से स्वयम विवाह की प्रार्थना की। तारा

का उत्तर मौजूद था। 'टोंकथोडा को शत्रुओं से छोड़ा दो यह तुच्छ हाथ आपका होगा'। उसने स्वीकार किया, और सेना लेकर टोंकथोडा पर चढ़ाई की परन्तु विजय न कर सका। तथापि वह तारा के मोह से बदावर में आकर महल के इर्द गिर्द चक्कर लगाने लगा ताकि अवसर पाकर उसे जबरदस्ती पकड़ लेजाय। और एक दिन जब उसने वीराङ्गना तारा के सम्बन्ध में कुछ अनुचित शब्द मुख से उच्चारण किए तो बहादुर शिवरत्न-सिंह के तेवर बदल गये और उसने बिना भय व संकोच के अपना कटार जयमलके कलेजे में भोंक दी। और वह वहीं मुर्दह हो गया।

इस प्रकार के कार्य्य राजपूतों में सदैव से परस्पर लड़ाई भिड़ाई के कारण हुए है और यदि सच पूछो तो आज हमारी गुलामी और मुल्क की खराबी का पता भी इस प्रकार के लड़ाई झगड़ों में मिलता है। हर्ष का विषय है कि मेवाड़ का राना बड़े दिल और दिमाग़ का मनुष्य था, वह जब तक मामले के प्रत्येक पक्ष को अच्छी तरह से विचार न लेता था, कभी कोई काम न करता था। लोगों ने उसके मन को उत्तेजित करना चाहा। और बदला लेने की प्रार्थना की, परन्तु धीर वीर दृढ़ चित्त, दूरदर्शी रायमल ने जिस चतुरता से उत्तर दिया वह इतिहास में स्वर्ण अक्षरों से लिखने के योग्य है। उसने कहा सुनों! "बेइज्जती पर इज्जत का ख्याल करने वाला सदा श्रेष्ठ है। यदि शिवरत्नसिंह जयमलकी बात सुनकर चुप हो जाता तब तो मैं उसको अवश्य दण्ड देता क्योंकि यह आचरण राजपूती मर्य्यादा के विरुद्ध था। उसने

अपनी मर्य्यादा स्थिर रक्खी, शेरों की प्रशंसा यह है कि वह शेर हों। जो किसी स्त्री के सतीत्व में विघ्न डालता है अथवा विपद् ग्रस्त राजपूत को प्रतिष्ठा को कलंकित करता है उस का दण्ड वही है जो जयमल को दिया गया। जावो शिवरत्न सिंह को मेरी ओर से यह खिलअत दो और मैं बदावर का इलाका उसे प्रदान करता हूं" । इस उदारता और दातव्यता को देखकर सब दंग होगए।

पाठक! जिस बात में एक भाई को अकृत्कार्य्यता हुई दूसरे भाई ने उसके पूरा करने का बीड़ा उठाया । इस नए प्रतिज्ञाधारी पुरुष का नाम पृथ्वीराज था और वह राजपूताना के प्रसिद्ध बीरों में से एक ही था।

इस स्थल पर हम अपने पाठकों को यह बतलाना आवश्यक समझते हैं कि यह लोग कौन थे? राना रायमल वालिए मेवाड़ के तीन लड़के थे जयमल, पृथ्वीराज और संग्रामसिंह (सांगा) तीनों ही योधा, साहसवान, और वीर स्वभाव थे। हाय! यह तीनों ही मिलकर काम करते तो भारतवर्ष की आज यह दशा न होती। तीनों पिता के सुख और शान्ति का कारण बनते और मेवाड़ एक जबरदस्त और महाराज्य बन जाता, परन्तु शोक! कि वह एक दूसरे के शत्रु निकले, उनकी शत्रुता महा हानिकारक थी। इस शत्रुता का कारण जो बताया जाता है वह इस प्रकार है।

एक दिन तीनों भाई अपने चचा सूरजमल के साथ बैठे हुए विवाद कर रहे थे, कि रायमल के पश्चात् कौन गद्दी पर बैठेगा? पृथ्वीराज के मुख से निकल गया "इस पद का

अधिकारी मैं हूं" दूसरे ने कहा नहीं २ इस पद के योग्य केवल मैं हूं । तीसरे ने सलाह दी कि "यह झगड़ा इस प्रकार न निपटेगा, उचित है कि हम सब लोग चरनी देवी के मन्दिर पर चलें (जो उदयपुर से दस मील पूर्व की ओर स्थापित है) और उसकी पुजारन से पूछें कि हम में से कौन राजा होगा । वही ठीक २ बता देगी । क्योंकि वह असत्य नहीं बोलती ।

निदान यह तीनों उस पुजारन के पास पहुंचे । पृथ्वीराज और जयमल पहिले पहुंचे और बिछी हुई चटाई पर बैठ गए । संग्रामसिंह (सांगा) कुछ देर से आया और वह उस बाघम्बर (शेर की खाल) पर बैठ गया जिस पर पुजारन स्वयम् बैठा करती थी । और सूरजमल उसका चचा भी उसी खाल के एक कोने में घुटना टेक कर बैठ गया । अभी पृथ्वीराज अपने आने का उद्देश्य कह ही रहा था कि पुजारनी ने कहा, बाघम्बर पर बैठने का शगुन उत्तम है । संग्रामसिंह राजा होगा । और उसके राज का एक भाग सूरजमल को मिलेगा । उचित तो यह था कि वह तीनों पुजारन के वचनों पर प्रसन्न होते किन्तु शोक ! कि अभी उसने अपने वचन को समाप्त नहीं किया था, उधर पृथ्वीराज ने तलवार मियान से खींच ली और चाहा कि संग्रामसिंह को मारकर इस भविष्यत वाणी (पेशीनगोई) को झूठ प्रमाणित करदे । सूरजमल पृथ्वीराज के इरादे को जान गया और संग्रामसिंह को बचाने के लिए वह आगे बढ़ा परन्तु वह अधिक घायल होगया । और पृथ्वीराज आप भी उसके वार से सुरक्षित न रह सका ।

संग्रामसिंह के शरीर पर पांच जगह तलवार के घाव लगे थे। वह वहां से भाग निकला। किन्तु भागते हुए भी एक तीर ने उसकी एक आंख को बेकाम कर दिया। जयमल ने उसका पीछा किया ताकि जिस काम को पृथ्वीराज ने आरम्भ किया था उसको पूर्ण करदे परन्तु सांगा की आयु बाकी थी वह बचकर निकल गया, और वर्षों तक पहाड़ों में छिपा रहा पश्चात् जैसा कि इतिहास के पढ़ने वाले जानते हैं वह गद्दी पर बैठा और इस प्रकार पुजारन की भविष्य वाणी (पेशीन गोई) सत्य प्रमाणित हुई।

संग्रामसिंह ने इस दुर्घटना के पश्चात् राठौर बेदा नामी-उदयादित्य के सरदार के यहां शरण ली परन्तु इस में जयमल व पृथ्वीराज के मुकाबला की सामर्थ्य न थी। यह बेचारा मारा गया और संग्रामसिंह ने बड़ी बड़ी कठिनता से अपने प्राण बचाए।

जब राजा रायमल को इन सब घटनाओं का पता मिला, तो वह पृथ्वीराज पर बहुत क्रोधित हुआ और हुकुम दिया कि 'मेरे सामने से चला जा'।

जब घाव अच्छे होगए पृथ्वीराज ने घर पर रहना उचित नहीं समझा।

गोदावर का प्रान्त (सूबा) हमेशा से मेवाड़ के अधिकार में था परन्तु अब बिगड़ बैठा था। रायमल में यह सामर्थ्य न थी कि उसको विजय करता। पृथ्वीराज ने अत्यन्त वीरता से उस पर धावा करके उसे विजय कर लिया।

जब पृथ्वीराज ने ताराबाई से विवाह की प्रार्थना की।

उसने उत्तर दिया "टोंकथोड़ा को विजय करो यह हाथ तुम्हारा होगा" यह उत्तर तारा ने बड़ी बड़ी प्रसन्नता से दिया था क्योंकि पृथ्वीराज की वीरता की भी धूम मची हुई थी और वह सुन्दर व सुडौल भी था। जिसको देखकर स्वभावतः हृदय आकृष्ट होता था। उसने कहा यदि मैं सच्चा राजपूत हूं तो अवश्य टोंकथोड़ा को विजय करूंगा।

मुहर्रम के दिन थे मुसलमान इस अवसर पर "हसन, हुसेन" का शोक मनाते हैं। यह दोनों अली के बेटे थे जो मुसलमानों के नेता महम्मद के उत्तराधिकारी (वारिस) और प्रतिनिधि (जानशीन) समझे जाते हैं। शत्रुओं ने इन्हें संसारिक प्रलोभन के कारण वधकर दिया था, मुहर्रम का शोक इस बेजा जुल्म और हसन हुसेन की मृत्यु की स्मृति है। इस समय मुसलमान अपने आप में नहीं रहते। थोड़ा के अफ़गान कट्टर मुसलमान थे। पृथ्वीराज ने चुने हुए पांच सौ सवारों की सेना अपने साथ ली। ताराबाई भी इस संग्राम में उसका हाथ बटाने के लिए साथ हुई।

जिस समय थोड़ा के मुसलमान लोगों का जथा ताज़ियों को उठाए हुए शहर की गलियों से गुज़रती हुआ अफ़गान सरदार के महल की ओर निकली पृथ्वीराज और ताराबाई उसके साथ मिल गए। अफ़ग़ान सरदार कपड़े पहन रहा था, ताकि स्वयम ताज़ियों के साथ जाय। उसकी निगाह पृथ्वीराज पर पड़ी। उसने कहा "यह नए सवार कौन है" इन शब्दों का मुँह से निकलना था कि पृथ्वीराज ने उस पर बरछा चला दिया, और साथ ही ताराबाई के कभी ख़ता न करनेवाले तीर ने

उसको धरती पर लिटा दिया, प्रथम इसके कि मुसलमान अपनी गफ़लत से चैतन्य हों। दोनों शूरमा फाटक की ओर चल पड़े। परन्तु फाटक पर पहुंचकर क्या देखा कि एक मस्त और मतवाला हाथी इसलिए खड़ा किया गया है कि ज्यों ही पृथ्वीराज व ताराबाई फाटक पर पहुंचें, अपनी सूँड से खैंच कर पांव से कुचल डाले। यह समय मौत और ज़िन्दगी के निर्णय का समय था एक ओर मस्त और मतवाले हाथी का सामना था दूसरी ओर हजारों अफ़ग़ान पीछे से आरहे थे पृथ्वीराज सोच में पड़ गया कि क्या करना चाहिए। परन्तु ताराबाई ने अपने घोड़े के एड़ लगाई, घोड़ा आगे बढ़ा, हाथी ने भी उसके पकड़ने के लिए अपनी भयानक सूंड उठाई परन्तु ताराबाई ने झट कमर से तलवार खींच ली और ऐसा भरपूर हाथ मारा, कि उसकी सूँड कटकर अलग जापड़ी। वह चीखता चिंघाड़ता भाग निकला।

थोड़ी देर में पृथ्वीराज ने आगे बढ़कर द्वार खोल दिया। उसके साथी जो उसकी सहायता के लिए छटपटा रहे थे तुरन्त भीतर घुस आए वह अपनी सेना से मिल गया और अफ़ग़ानों पर एक बार ही हमला किया गया। जिस समय पांच सौ बहादुरों का जथा उमड़ते हुए समुद्र की तरह आगे बढ़ा। अफ़ग़ानों के छक्के छूट गए और वह सब के सब भाग निकले। जिन्हों सामना किया वह मारे गए। नगर की प्रजा ने ताराबाई का प्रेम के साथ स्वागत किया। और जब राय शिवरतसिंह ने अपनी प्रजा से मिलकर ताराबाई और पृथ्वीराज को टोंकथोडा का स्वामी बनाया तो नगर वालों की आनन्द ध्वनि से धरती और आकाश गूँज उठे।

इस विजय के थोड़े ही दिनों के पश्चात विवाह का प्रबन्ध किया गया, कुछ काल तक दोनों सुख का जीवन व्यतीत करते रहे। ताराबाई और पृथ्वीराज का मिलाप सोने और सुहागा का मेल था। सब लोग इस विवाह और मेवाड़ बंश के नाते से प्रसन्न थे। राना रायमल ने भी शिवरत्नसिंह को साधु बाद का पत्र भेजा। इस घटना के पीछे शिवरत्नसिंह अपने राज कार्य्य के दुरुस्त करने में प्रवृत हुआ।

जब टोंकथोडा में सब तरह शान्ति होगई पृथ्वीराज और ताराबाई दोनों नई २ चढ़ाईयों की आवश्यकता अनुभव करने लगे। ताकि उनको अपनी वीरता और तलवारों के जौहर दिखाने का अवसर मिले। वह परस्पर सलाह करने के पश्चात् घोड़ों पर चढ़कर मेवाड़ की ओर चल पड़े। ताकि वहां की दशा को भी देख सकें। राना रायमल जीवित था परन्तु वह बीमार था।

सूरजमल जिसके विषय में पुजारन ने यह शब्द कहे थे कि वह राज के एक भाग का स्वामी होगा, समझ रहा था कि मैं सारा मेवाड़ ले लूँगा और इस इच्छा से राज के विरुद्ध षड़यंत्र (साज़िश) कर रहा था उसकी चेष्टा ने पृथ्वीराज के लौटने से पहले भयङ्कर रूप धारण कर लिया था।

मालवा के सुलतान को अपना सहायक पाकर सूरजमल ने विद्रोह का झण्डा खड़ा कर रक्खा था, और राना रायमल के ऊपर चढ़ाई करदी थी। रायमल ने भी जहां तक बस चल सका फौज एकत्र करली थी परन्तु वह इसका सामना करने के लिए यथेष्ठ (काफी) न थी। निकट था कि राना की हार हो। कि

इतने में ताराबाई एक सहस्त्र राजपूतों का दल लिए हुए उनकी कुमक पर आपहुंची। और लड़ने वाली सेनाओं के भाग्य का फ़ैसला कर दिया। कहते हैं उस दिन इस राजपूतनी ने ग़ज़ब का काम किया। कमान से तीरों की वर्षा हो रही है। तीरों के गिरने के साथ मनुष्य भी धरती पर लेटते हुए चले जा रहे हैं। देखनेवाले विस्मित हैं कि यह स्त्री है या पुरुष ? किसी को विश्वास नहीं होता था कि स्त्री इस प्रकार वीरता कर सकती है परन्तु उस देवी का प्रत्यक्ष रूप सब के सन्मुख था, वह सब के सन्देहों को निवारण करता था। इतिहास कार कहते हैं कि कितने ही मनुष्य उसके तीरों से घायल हुए कितने ही दृष्टि शक्ति के तेज से सहम गए क्या सामर्थ्य जो कोई सामने आसके। उसके मुख मण्डल पर अद्भुत तेज था। आंख सन्मुख हुई नहीं कि मनुष्य के होश व हवास उड़े नहीं। तीर बर्छा एक साथ काम करते थे :—

चण्डी रूप धर था उसने, अथ सिंह था मानों।
जिस पर वार किया देवी ने, मरा कल्हि का जानो।
चमकी कभी गर्ज कर देवी, झपटी शत्रु दल पर।
हाहाकार मचा रण भीतर, प्रलय भई भूतल पर।
धारा बही खून की ऐसी, ज्यों भादों की सरिता।
ईशानदेव बलिहार जाय, है अति पवित्र तव चरिता।

राजपूत पुरुष अपनी हेकड़ी दिखलाने को कहते हैं कि स्त्री समझ कर किसी ने ताराबाई पर हाथ नहीं चलाया इस कारण से उसने यह विजय प्राप्त की थी परन्तु यह व्यर्थ है।

सत्य यह है कि किसी में उसका सामना करने की शक्ति नहीं थी।

दिनभर लड़ाई होती रही, सायंकाल पृथ्वीराज सूरजमल से मिलने गया। उसका शरीर घावों से चूर २ हो रहा था, पृथ्वीराज के आते ही उसका घायल चचा उठा और छाती से लगाकर उससे इस प्रकार मिला मानों उनमें द्वेष और शत्रुता नाम को न थी।

पृथ्वीराज ने हंसकर पूछा चाचा जी! घावों का क्या हाल है? सूरजमल ने कहा "अच्छा है बेटे तेरे देखने से सारे घाव अच्छे हो गए"। यह केवल कहने की बात थी वास्तव में उस समय भी उसके शरीर में रुधिर बह रहा था। पृथ्वीराज ने फिर कहा "चाचा जी! मैं भूखा हूं कुछ खाने को मंगवाइए!" कहने की देर थी थाल में भोजन परोसा गया, चचा भतीजे ने मिल कर एक साथ भोजन किया। यह थे राजपूतों के निष्कपट हृदय! भोजन के पश्चात् पान दिया गया, पृथीराज के हृदय में किसी प्रकार का भय न था। लड़ाई के समय में बहुधा पान में डाल कर शत्रु को विष दिया गया है परन्तु उसने आनन्द् पूर्वक पान भी खा लिया। अन्त में उसने चलते समय कहा "चाचा जी! कल हम और आप लड़ कर इस युद्ध को समाप्त कर देंगे"। सूरजमल ने कहा "बहुत अच्छा बेटे! ज़रा सवेरे आना"।

दूसरे दिन प्रातःकाल से ही फिर युद्ध आरम्भ हुआ। ताराबाई कौंधती हुई बिजली की तरह शत्रुओं पर आ गिरी, जिधर वार किया परे के परे साफ हो गए। आज उसके हाथ

में तलवार थी। जिस प्रकार आज उसने तलवार से काम लिया मीर अनीस के निम्न लिखित शेर उसकी खड्ग की प्रशंसा के लिये अधिक उचित प्रतीत होते हैं।

इक आग सी थी चारों तरफ, शोला(१) फ़िशां(२) बर्क़।
वह बर्क़ कि खुद मांगती थी, जिससे अमां(३) बर्क़।
यां मौज तो वां सेल जू, यां अब्र तो वां बर्क़।
मुंह ज़हर बुर्श क़हर बदन, आग ज़बां बर्क़।
गरमी से हवा में शरर, उड़ते नज़र आए।
झोंका था गज़ब का, कि सिर उड़ते नज़र आए।
उठ कर कभी ठहरी, कभी लचकी कभी चमकी।
सिर गिर गए गर्दन, जिधर उस तेग़ की चमकी।
सीधी सफे दुश्मन को मिली, राह अदम(४) की।
सेफी थी कि गोया दमे, शमशेर पे दम की।
दम भर में सफें साफ थीं, बेदाद गरों की।
थी मुंह की तरफ खाक, पे बौछाड़ सिरों की।

मालवा नरेश को सहज में पृथ्वीराज ने कैद कर लिया। उसने कुछ घोड़े कर (खिराज) स्वरूप देकर चित्तौड़ के क़िले से छुटकारा पाया।

सूरजमल भतीजे की बहू की वीरता को देख कर दङ्ग हो गया। संग्राम का प्रतिफल यह हुआ कि उसके थोड़े से

---

(१)आग की चिनगारी, (२)बिजली, (३)शरण, (४) नर्क।

202

साथी बच रहे वह भयभीत होकर भाग निकला। और कठन के बन में जाकर पनाह ली। और वहां की जङ्गली जातियों को अपने आधीन करके देवला का किला बना लिया। और हजार गांव का राना बन बैठा। उसकी सन्तान का आज तक भी उस पर अधिकार है।

इस विजय के पश्चात् तारा बाई और पृथ्वीराज दोनों कोमलमेर में कुछ दिनों तक सुख का जीवन व्यतीत करते रहे। परन्तु उनकी वीर प्रकृति को बेकारी में कहां चैन था उन्होंने कई विशेष २ कार्य्यवाहियां कीं। यदि हम उनके सारे वृत्तान्त लिखने लगें तो यह पुस्तक बहुत बड़ी होजाय और सैंकड़ों पृष्ठ बढ़ जांय। इस लिये हम उनको केवल इसी सीमा तक वर्णन करना आवश्यक समझते हैं।

इनकी वीरता के राजपूताना में गीत गाए जाने लगे, हज़ारों राजपूतों के झुण्ड के झुण्ड आकर इनके झण्डे के तले जमा हो गये। इनकी तलवारें आकाश में चमकती थीं। और जंगल तथा बसती के निवासी उसे देखकर कांप उठते थे। परन्तु स्मरण रहे, ताराबाई और पृथिवीराज दोनों हमेशा दीन दुःखी और अनाथों की सेवा किया करते थे।

ऐसे मनुष्यों का जीवन बहुत लम्बा चौड़ा नहीं हो सकता था। वह दोनों निर्भय और निडर थे। यही उनके देहान्त का कारण हुआ। जैसा कि नीचे के वृतान्त से विदित होगा।

पृथिवीराज की बहिन के हाथ का लिखा हुआ पत्र आया। वह सिरोही के राजा को व्याही हुई थी। वह उसको सताता था वह उसके ज़ुल्मों से दुःखी थी। उसने लिखा "भाई मैं जीने से

दुःखी हूं। आओ और मुझे साथ ले चलो"। पृथिवीराज ने पत्र पढ़कर ताराबाई को दिया। उसने कहा हम दोनों को अभी चलना चाहिये"। परन्तु पृथिवीराज ने कहा, नहीं तुम्हारे जाने की आवश्यकता नहीं वह मेरा रिश्तेदार है मैं अकेले समझा बुझा लूँगा।

आधीरात के समय वह सिरोही में पहुंच गया। और दीवार फान्द कर महल पर चढ़ गया। प्रभुसिंह उसका बहनोई सो रहा था पृथिवीराज ने उसके गले पर कटार रखदी। वह घबरा कर जाग उठा और क्षमा करने के लिए गिड़ गिड़ाकर बिन्ती करने लगा। बहिन ने भी हाथ जोड़कर कहा, वीर अन्त में यह मेरा पति है, मैं कैसे रंडापे का दुःख उठा सकूँगी पृथिवीराज ने इस शर्त पर प्राणदान देना स्वीकार किया कि वह फिर कभी उसकी बहिन को दुःख न देवे। दुष्ट प्रभू ने स्वीकार कर लिया। और तब पृथिवीराज ने उसे क्षमा कर दिया।

प्रभू अपने मनही मन में इसके बदले का उपाय सोचने लगा, वह कायर खुल्लम खुल्ला इस शेर से लड़ नहीं सकता था। बिदा होने के समय उसने मिठाई में ज़हर मिलाकर देदिया। पृथिवीराज को कुछ पता नहीं था, वह हमेशा हृदय साफ़ रखता था, छल कपट उसके पास नहीं फटकते थे। जब कोमलमेर थोड़ी दूर रहगया। उसने उस मिठाई में से कुछ मिठाई खा ली। विष हलाहल था। वह केवल मायादेवी तक पहुंचने पाया था। कि टांगें लड़ खड़ाने लगीं सिर में चक्कर आने लगा। कण्ठ सूख गया। ज़बान कांटा बन गई। और आंखों के सन्मुख वृक्ष

और मैदान नाचते हुए दिखाई देने लगे । वह उसी जगह बैठ गया और मनुष्यों से कहा "जावो तारा बाई से कह दो आज मैं संसार से विदा होता हूं और तुम्हारे प्रेम का अमूल्य धन अपने साथ लिए जाता हूं" । यह कह कर पृथ्वीराज पृथ्वी पर लेट रहा । और थोड़ी देर में नाड़ियों का चलना बन्द होगया । शरीर ठंडा पड़ गया ।

दुखिया विधवा के दुःख का हाल कुछ न पूछो । वह दौड़ती हुई आई और पति की लाश पर आकर गिर पड़ी प्रभू के विरुद्ध उसके हृदय में क्रोध की अग्नि प्रचण्ड हुई । परन्तु वह दुःख के पहाड़ तले दबी हुई थी और अपने साथ एक दूसरी निर्दोष स्त्री को रंडापा में डालना उसने उचित नहीं समझा । वह मौन मूर्ती बन कर चारों ओर देखने लगी । मनुष्यों ने इशारा समझकर चिता तैयार की । ताराबाई ने पति की लाश को गोद में उठा लिया । उसके मुंह से जो अग्नि मय शब्द निकले वह यह थे "प्राण पतिः प्राण पति" । इसके पश्चात् अग्नि ज्वाला भड़क उठी । और उसने दो प्रेमी जनों के शरीरों को परस्पर एक में मिला दिया । और देखने वालों की दृष्टि से द्वैत भाव मिटा दिया ।

इस तौर पर वह दोनों, यह जरीर सिधारे ।
ग़म रहगया भारत के, दो ग़मख्वार सिधारे ।
नेकी है कहां जब वह, निको कार सिधारे ।
है शोक हाय ! कैसे हैं दुर्भाग्य हमारे ।
क्या हुसन अक़ीदत था, अजब दिल के जवां थे ।
नेकी पर फ़िदा होने को, यक दिल वजबां थे ।

(७)

राना संग्रामसिंह (सांगा)

तेगों को जो हम खींचें, सफ़ें दम में उलट जांय।
आगे जो बढ़ें हम तो, परे फ़ौज के हट जांय।
सिर तन से सवारों के, हर यक ज़र्ब में कट जांय।
ललकारें तो शेरों के, कलेजे अभी फट जांय।
तलवार जिन्हें हक़ ने, अता की थी वह हम है।
आईन शुजाअत की, बिना की थी वह हम हैं।

सोलहवीं सदी के प्रारम्भ में मेवाड़ के किसी छोटे से ग्राम में एक निर्धन तथा कङ्गाल किसान का घर बसा हुआ था। इने गिने कुछ बकरियों आदि पशुओं की नाड़ (गल्ला) उसकी सम्पत्ति थी। खाने पकाने के लिए दो एक कांसी के बर्तन थे। और शरीर के सड़े गले वस्त्रों के अतिरिक्त उनके पास और कुछ नहीं था। इस कुटुम्ब को एक प्रकार का जथा समझना चाहिए। जो समय के हेर फेर और निपट काल के कारण इस प्रकार का जीवन व्यतीत करता हुआ प्राचीन आर्य्यों की सभ्यता और आत्म सन्मान का उदाहरण बना हुआ था। निर्धनता पापों की जड़ बतलाई जाती है। कङ्गालता से अधिक दुनिया में कोई और पाप नहीं समझा जाता। स्वार्थ परायणता और साहस हीनता इसके साथ २ रहती हैं। परन्तु हाय! आर्य्यवर्त! तेरे निर्धन और तेरे कङ्गाल भी पहले पाप के कर्ता नहीं पाए गए। वह सन्तोष का प्रबल गुण तेरा

कहां गया ? एक और ग़रीब विपद् के सताए नवयुवक ने, इस कुटुम्ब में आकर शरण लेनी चाहिये। उसकी दशा और भी निकृष्ट थी। टब्बर के मुखिया ने कहा, यह दीन दुःखी मनुष्य दया का पात्र है। इसको गौएं चराने के लिये मैं नौकर रखता हूं इस बातमें तुम लोग चाहे प्रसन्न हो,अथवा अप्रसन्न।

मुखिया की स्त्री ने पति की ओर घृणा की दृष्टि से देख कर कहा, "ब्राह्मण और भिखारियों की सहायता करना अच्छा है। किन्तु पहले घर में दीपक जला कर फिर मन्दिर में जलाना चाहिए"। यह मनुष्य अजनबी है इसके चाल चलन से कोई अवगत नहीं है। आज कल कितने छली और कपटी लोग इधर उधर फिरते रहते हैं कौन जाने यह किस बात को लेकर यहां आया हुआ है ? और क्यों हमारे द्वार पर सहायता की प्रार्थना करता है। इस के सिवाय प्रत्येक मनुष्य गाय भैंस नहीं चरा सकता जिन्होंने बालकपन से यह काम किया है केवल वही कर सकते हैं। गाय बैल भी इस से *हिल न सकेंगे"।

स्त्री की बात में सचाई थी। पशु नये चरवाहे के रूप रंग को देखकर डर गये। कोई कहीं कोई कहीं भाग निकला। उनको मोड़ कर लाने में बहुत कष्ट उठाना पड़ा। टब्बर के मुखिया ने दो चार दिन तक शान्ति की परन्तु कहावत प्रसिद्ध है।

जिस का काम उसी को साजै,
अन्य के सीस चपेटा बाजै।

---

* मानूस।

नवयुवक का उद्योग काम नहीं आया निदान वह छुड़ा दिया गया। मालिक ने कहा "तुझ में तो इतनी भी बुद्धि नहीं है कि गाय भैंस की रखवाली का काम कर सके। मैं क्या करूं ?

नवयुवक ने कहा मैं तुम्हारे घर के अन्य कामों को करता रहूंगा। स्वामी ने उस से कहा अच्छा रोटी पकाया कर परन्तु वह इस प्रकार के कामों से भी अनभिज्ञ था रोटियां जल गईं, सारा परिवार भूखा रहा।

स्त्री के क्रोध की अग्नि और भी भड़की उसने कहा "तू कैसा निकम्मा और अज्ञान मनुष्य है जिसको भोजन बनाने तक की भी बुद्धि नहीं। खाने के समय वह सुस्ती कहां चली जाती है। क्या तेरी आंखें फूट गई थीं, कि रोटी को न देख सका। जा मेरे घर से दूर हो जिधर तेरे सींग समांय उधर चला जा"।

नवयुवक ने धैर्य्य और सन्तोष के साथ स्त्री के कठोर वचनों को सुना, वह निकम्मा अथवा सुस्त नहीं था परन्तु प्रकृति (नेचर) ने उसको चरवाहे अथवा रसोइए के काम के लिए नहीं उत्पन्न किया था। वह डील डौल में लम्बा नहीं था, परन्तु सुडौल था और प्रत्येक अङ्ग से असाधारण बल और विक्रम का प्रकाश होता था। शरीर पर चीथड़े लिपटे थे। हाथ में एक हथियार तक नहीं था। रूप रङ्ग भले-मानसों का सा था। समय के हेर फेर और आपदा ने उसकी यह दशा बना रक्खी थी।

वह नवयुवक राना सांगा था! देवी के मन्दिर में एक

सरदार ने इसकी रक्षा के लिए अपने आपको निवछावर कर दिया था। सांगा वहां से भाग निकला, उसको आशा थी कि चरवाहों के भेष में वह अपने भाइयों के जुल्म से सुरक्षित रह सकेगा क्योंकि किसको सन्देह हो सकता है कि राना का लड़का ग्वालों के बीच में होगा? परन्तु ग्वालों ने भी उसको अपने घर से निकाल दिया। कई दिन बीत गए, रोटी का एक टुकड़ा उसकी हलक से नीचे नहीं उतरा, दुःखों और कष्टों से घबराया हुआ राजपूत अकेला जंगल में विचर रहा था।

एक दिन जब वह सहज स्वभाव वन में फिर रहा था। कुछ सवार उस तरफ से गुज़रे। उन्होंने सांगा को देखते ही घोड़ों से उतर कर उसे प्रणाम किया। सांगा की एक आंख नष्ट हो चुकी थी। परन्तु कौन है जो एक बार ऐसे मनुष्य के रूप को देख कर भूल जायगा। सवारों ने कहा हम सब आपके भेद को गुप्त रखेंगे और पृथ्वीराज के देवतों तक को पता न लगने देंगे, हम हर समय आप पर निवछावर होने को तैयार रहेंगे आप चलें श्रीनगर के सरदार से मित्रता उत्पन्न करें। और वह आपके लिए घर बार साज सामान सब कुछ एकत्र कर देगा। हम लोग भी उसी के आधीन हैं। यह श्रीनगर का सरदार एक प्रकार का भयानक डाकू था उसका नाम सुन कर शेर का भी कलेजा थर्रा जाता था।

और कोई उपाय निर्वाह का नहीं था सांगा उस जत्थे में शामिल होगया। महीनों जङ्गल में वह आस पास के रईसों को लूटता रहा। और सच्चे सवार हमेशा खतरे के वक्त उसके इर्द गिर्द अपनी छातियों की ढाल बनाकर खड़े होते थे।

एक दिन बहुत सा भ्रमण करने के पश्चात् श्रीनगर का सरदार और उसके साथी बरगद के वृक्ष के नीचे ठहर गए ताकि खाने पीने का प्रबन्ध करें । सांगा से एक बार भोजन बिगड़ चुका था। इसलिए फिर उसने भोजन बनाने की चेष्टा नहीं की। उसके साथियों ने आग सुलगाई और ज़रूरी काम करने लगे। साँगा वृक्ष के छाए में लेट गया । जब रोटी बन चुकी राजपूत उसके पास ले आए। सांगा अपनी कटार सिर के तले दबाए हुए सो रहा था, और एक काला नाग बरगद की जड़ से निकल कर अपने फन से उसके सिर पर छाया किये हुए बैठा था उस नाग के फन पर एक श्वेत और श्याम रंग का सुन्दर पक्षी बैठा हुआ चहक रहा था। योग बश एक अहीर उस तरफ से निकला, और वह इस तमाशे को देखकर विस्मित व अवाक्य होकर खड़ा रह गया।

जब राजपूत भोजन लेकर आए सांगा ने अपने नेत्र खोल दिये । उसी समय अहीर ने उसे साष्टाङ्ग प्रणाम किया। और कहा धन्य है तू जो एक दिन राज सिंहासन पर विराजमान् होगा ।

सांगा ने कहा मैं एक निर्धन सिपाही और श्रीनगर में नौकर हूं ।

अहीर ने कहा यह कदापि सम्भव नहीं है तू राजवंश से है। और तेरे मुख मण्डल का तेज इस बात को प्रकट कर रहा है। "सांगा ने कहा नहीं यह विचार मिथ्या है"। अहीर तो वहां से चला गया । परन्तु चलते २ वह श्रीनगर के सरदार से कह गया कि यह सिपाही साधारण मनुष्य नहीं है"। सरदार

ने सांगा को बुलाकर कहा तुम कुछ भय न करो मैं तुमको अपनी कन्या ब्याह दूँगा और हर तरह से तुम्हारी सहायता करूंगा तुम सच २ अपना हाल वर्णन करो। सांगा ने अपना सत्य २ वृतान्त उससे कह सुनाया।

जयमल का देहान्त हो चुका था उसकी वेइज्जती की घटना से पाठक अवगत है। पृथ्वीराज का भाग्य सूर्य्य की तरह चमक रहा था, सारे राजिस्थान में उसकी वीरता के गीत गाए जाते थे यह खबर कि राज्य का अधिकारी श्रीनगर में है और वहां के सरदार की लड़की से ब्याहा जायगा कैसे गुप्त रह सकती थी? उसने भाई का पीछा करना चाहा। परन्तु प्रथम इसके कि वह कोमलमेर से प्रस्थान करे उसकी बहिनने सहायता के लिए बुला भेजा और वह फिर पहाड़ी क़िले में लौटकर नहीं आया। । पिछले पृष्टों में इस वार के मरने का वृतान्त आ चुका है।

पृथ्वीराज के मरने पर राना रायमल को बहुत शोक हुआ, उसका जीवन दुःख और शोक का जीवन था। इसमें सन्देह नहीं कि उसने अपने देश के प्रबन्ध में बहुत सफलता प्राप्त कर ली थी और जितनी खराबियां उसके भाई के समय में उत्पन्न हुई थीं, उसको बुद्धिमानी के कार्य्यों से सब का परिशोध (तलाफ़ी) हो चुका था मेवाड़ को अगर कुछ मिला नहीं तो रायमल के समय में कुछ हानि भी नहीं हुई। धार्म्मिक, सत्यप्रिय, नम्र स्वभाव राजसा गुण यदि वह इतिहास के पृष्टों के लिये नहीं छोड़ा गया, तो भी अपनी नेकी अच्छे स्वभाव शुद्ध आचरण न्याय शील आदि गुणों के कारण वह सर्व प्रिय

था। मेवाड़ के निवासियों ने उसकी मृत्यु पर बड़ा शोक मनाया। रायमल अपने पुत्रों को अपने वश में नहीं रख सका यही उसका दोष था।

सांगा का स्वभाव अपने पिता से पूर्णतः पृथक था। इस का असल नाम संग्रामसिंह था, अर्थात् "रणक्षेत्र का सिंह" यह सिंह सावर की पुजारन और अहीर की भविष्य वाणी के अनुसार मेवाड़ की राजगद्दी पर सुशोभित हुआ। सम्पूर्ण राजिस्थान और आस पास के राजाओं ने सुना कि एक जबर-दस्त बहादुर उत्पन्न हुआ है, जिसके सन्मुख सब को सिर झुकाना पड़ेगा। मारवाड़, अम्बर, अजमेर, बून्दी, ग्वालियर, काल्पी आदि सम्पूर्ण हिन्दू राजे उसके हुकुम के सुनते ही मैदान युद्ध में अपनी सेनाएं लाते थे। और अन्य शत्रु के सन्मुख डट जाते थे। मालवा से लेकर आबू की सरहद्द तक वह सरदारों का सरदार, और राजाओं का राजा कहलाता था। दिल्ली और मालवा के मुसलमान सरदारों के विरुद्ध उसकी सम्मिलित शक्ति ने अठारह बार आर्य्य वीरता का परिचय दिया। मुसलमानों ने हार पर हार खाई और उनकी वह दुर्गति हुई कि चुप ही भली। जिस प्रकार राना कुम्भ ने मालवा के सुलतान को बेदम करके छोड़ दिया था उसी तरह राना संग्रामसिंह ने भी किया था। मेवाड़ की राज्य सीमा चारों ओर से विस्तीर्ण हो गई थी। और उत्तर बयाना के पहाड़ी क़िले के समीप उसकी हदबन्दी की गई।

राना के ऐश्वर्य्य और अन्तिम समय की अकृत्काय्र्यता के विषय में एक विचित्र कहावत प्रसिद्ध है जिसको परित्याग

करना उचित नहीं जान पड़ता । कहते हैं कि "देव जी" (एक देवता) किसी मनुष्य को अपराध का दण्ड देने के लिए चित्तौड़ जा रहा था, मार्ग में संग्रामसिंह ने उसे पहचान लिया और उसका बड़ा सन्मान किया। विदा होते समय देव जी ने संग्रामसिंह को एक यन्त्र दिया जो थैली में बन्द था और कहा जब तक यह यन्त्र तुम्हारी गर्दन से हृदय पर लटकता रहेगा तुम बराबर जय लाभ करते रहोगे, परन्तु यदि किसी कारण से यन्त्र पीठ की तरफ जा रहा तो कुशल न होगी" इसके सिवाय देव जी ने एक मोर का पंख भी दिया था जिसके छुवा देने से मुर्दह सजीव हो जाता था । संग्रामसिंह ने देवजी की प्रतिष्ठा में एक मन्दिर बनवाया । जो संग्रामसिंह के पीछे भी बहुत दिनों तक बना रहा ।

चिरकाल तक राजपूत और मुसलमान संग्रामसिंह के नाम से डरते रहे, वह हर एक पर प्रबल आता रहा । परन्तु शोक संसार की दशा सर्वदा एक जैसी नहीं र ती ! उलट-पलट करते रहना इसका स्वभाव है । इबराहीम लोदी दिल्ली का बादशाह बहुत निर्दय अहङ्कारी मनुष्य था । अमीर गरीब सब उससे अप्रसन्न थे और इस लिए स्वयम उसका चचा ज़हीरउद्दीन शाह बाबर के लाने के लिए काबुल चला गया ताकि किसी प्रकार इबराहीम के जुल्म व अत्याचार से प्रजा को छुटकारा प्राप्त हो ।

इन नीच और दुष्ट सरदारों ने भारतवर्ष के इतिहास को पलट दिया, आज दो हज़ार वर्ष से इस हत भाग्य देश में अधिकतर ऐसे देश और जाति के शत्रु उत्पन्न होते हैं जिन

को अपने देश से कुछ भी प्रेम नहीं और जो नाशवान लाभ के निमित्य अपने देशवासियों की ज़िन्दगियों को ग़ैरमुल्क वालों के हाथ बेच देते हैं। यदि दिल्ली की दुर्बल दशा ने उस को बाहर वालों के लिए सहज शिकार न बना दिया होता तो इसमें किसको सन्देह है कि राजपूतों को फिर उन्नति प्राप्त होती।

बाबर की दृष्टि चिरकाल से भारतवर्ष की सम्पदा की ओर लग रही थी, उसकी नसों में चंगेज़ खां मुराद और तैमूरलंग तातारी का खून जोश मार रहा था, इन दिनों शुमाली हमला आवरों ने जो किसी समय भारतवर्ष में वह लूट मार और लड़ाई भिड़ाई मचाई थी कि त्राहिमाम ! मुसलमान लेखक इनको साक्षात् ईश्वर का कोप कहते हैं। पञ्जाब के किसी भाग में बाहरवाले का अधिकार था, और यद्यपि यहां के सुख व आनन्द के सामान प्रायः पहाड़ी मुल्कों में पहुंचते रहते थे तथापि उनको पाकर उनका प्रलोभन भारतवर्ष को प्राप्त करने के लिए दिन प्रतिदिन बढ़ता जाता था।

वह नदी की बाढ़ की तरह पंजाब से गुजरता हुआ दिल्ली पर चढ़ आया। इबराहीम की सेना उसकी सुशिक्षित सेना के मुक़ाबले की ताब न लाकर भाग खड़ी हुई। पानीपत में इबराहीम लोदी स्वयम उसके सामने आया। बाबर अपनी पुस्तक में लिखता है—कि "दिन चढ़े युद्ध आरम्भ हुआ प्रायः दोपहर तक दोनों पक्ष के मनुष्य लड़ते रहे उसके पश्चात् इबराहीम की सेना भाग खड़ी हुई और मेरी विजय हुई"। इबराहीम लोदी मारा गया दिल्ली की मसजिदों में बाबर के नाम खुतबा पढ़ा गया"।

इबराहीम लोदी की पराजय से हिन्दुओं का दिल छोटा नहीं हुआ। वह जानते थे कि राना संग्रामसिंह बाबर को जीत लेगा। सब के नेत्र मेवाड़ की ओर लगे हुए थे सब को यही निश्चय था कि जिस प्रकार दिल्ली और मालवा की सेना उसके सामने से भाग जाती थी वैसे ही बाबर के पांव भी उखड़ जायंगे।

राजिस्थान का जंग शेर ग़ाफ़िल नहीं था, विदेशी के आगमन को सुनते ही वह गर्ज उठा, उसकी गर्जना का शब्द सुनकर अस्सी हज़ार सवार सात बड़े २ राजे, नौ राव, एक सौ चार रावल और रावत पांच सौ हाथी, मैदान में आकर डट गए। सब से पहले वह ब्याना की ओर बढ़ा और किले को घेर लिया। परन्तु जब वह नदी में नहा रहा था यँत्र खिसक कर पीठ की ओर जा रहा, उसने समझा मेरा समय आगया।

बाबर भी उसके मुक़ाबले के लिए आरहा था, उसने पन्द्रह सौ सैनिक आगे २ भेजे थे। इन्हें राजपूतों ने आते ही तलवारों पर रख लिया, कुछ मनुष्यों ने भागकर जान बचाई और बाबर से कहा कि "राजपूत दिल्ली के निकम्मे सिपाहियों की तरह नहीं हैं"। कनवाहा के मैदान में जहां संग्रामसिंह ने मेवाड़ का सरहदी क़िला बनाया था। बाबर की फौज ने डेरा लगाया। बाबर के पास तोपखाना था। उस्ताद अली इस तोपखाना का बड़ा सरदार था। इनमें एक तोप बहुत अच्छी थी उसका नाम "फ़तहम" रक्खा गया था।

यह युद्ध देखने योग्य था। एक ओर रणपाण्डित्य समर

विजयी राना संग्रामसिंह था, जिसकी सम्पूर्ण आयु लड़ाइयों में ही व्यतीत हुई थी उसकी एक आंख, एक हाथ, और एक टांग लड़ाई की भेंट होचुके थी। इसके शरीर पर अस्सी घाव गोलियों के वर्तमान थे। उसके पीछे राजिस्थान के प्रसिद्ध राजे और सरदार थे जिन्होंने मैदान में कभी पीठ नहीं दिखाई था। इसमें अधिकतर नवयुवक राजपूत थे जो अपनी वीरता दिखाने और राजपूतों के धर्म का जौहर दिखाने के लिये आये हुए थे। सब बहादुर सब बांके और सब शूरमा थे। सब को अपने पूर्वजों के कारनामों पर घमण्ड था मृत्यु को वह नई नवेली दुलहिन समझकर उसके व्याहने की इच्छा से लड़ा करते थे। राजपूत भय शब्द को जानते ही नहीं थे वह वीरता के नशे में डूबे हुए थे इनके यह वचन थे :—

चौपाई

हम सम कौन वीर जगमाहीं, सिंह के सन्मुख भी हमजाहीं।
सिंह नाद करि गर्जें रण में, मारे शत्रु भगावें क्षण में।
झपटे घोड़ा जिधर हमारा, करे शत्रु दल हाहाकारा।
अर्जुन के सम युद्ध मचावें, कोटिन दल इकले बिचलावें।
रण में कभी पीठ न देवें, वज्र घात छाती पर लेवें।
यह है असली धर्म्म हमारा, यह है सच्चा कर्म्म हमारा।

दोहा—मरने से कोइ नहिं बचे, यह निश्चय करि जान।
ईशानदेव सो धन्य है, रण में तजै जो प्रान।

दूसरी ओर बाबर था जिसने बाल्यकाल में ही गृह त्याग दिया था, ग्यारह वर्ष की आयु में दो बार समरक़न्द की गद्दी पर बैठा था, और दोनों ही बार उस पर से उतार दिया गया था उसकी इच्छा थी कि वह अपने पूर्वजों के राज्य को सुशोभित करे किन्तु उसे भी राना संग्रामसिंह की तरह भाग कर प्राण बचाने पड़े थे। वह भी ग्वालों के बीच में छिपा रहा। आशा ने कभी उसका साथ नहीं छोड़ा। उसने बचपन की अवस्था में जब कि और बालकों को खेलने तक का ज्ञान नहीं होता काबुल पर अधिकार कर लिया था। और उसकी चतुरता वीरता और साहस को देखकर आकाश ने कहा "बाबर! तेरे ही जैसे स्वभाववालों को संसार में कृतकार्य्यता और प्रतिष्ठा प्राप्त होती है'। अब भी उसकी आयु चालीस वर्ष से अधिक नहीं थी। दो हट्टे कट्टे और बलवान मनुष्यों को वह बग़ल में दबाकर क़िले की फ़सील पर दौड़ सकता था। और बिना भय व झिझक एक कक्षा से दूसरी कक्षा पर कूद जाता था। ज़ीन उसकी बैठक थी। जङ्गल पहाड़ बियाबान उसके विहार स्थान थे। वह सचमुच सिपाही था। स्वभाव काव्यप्रिय था। बहादुर शत्रु का भी सम्मान करता था। कट्टर मुसलमानों की तरह उसकी ज़बान पर कभी काफ़र का शब्द नहीं आता था। दोनों योधा एक दूसरे की समता के थे।

इस युद्ध ने दरअसल धर्म्म युद्ध (मज़हबी जङ्ग) का रूप धारण कर लिया था। राजपूत जिनको अपनी तलवार का घमण्ड था मिथ्या कुसंस्कारों में ग्रस्त थे। "भवानी माता" की कृपा और सहायता पर भरोसा रखते थे मुसलमान कहते

थे अल्लाह उनको पाषाण पूजकों पर जय दिलावेगा, बाबर भी सांगा की तरह अफ़ीम खाता था और अधिक मात्रा में सेवन किया करता था।

दो सप्ताह तक दोनों दल आमने सामने पड़े रहे किसी को आगे बढ़ने का साहस नहीं हुआ। बाहर के मनुष्य व्याकुल थे देश की याद ने उन्हें तड़पा दिया था, वह बाबर को काबुल लौट चलने के लिये विवश करते थे। जिस रिसाला की राजपूतों ने दुर्गत बनाई थी। उसके बचे खुचे सिपाही अपने साथियों को डराकर और भी असाहस और कायर बना रहे थे। बाबर के साथी ज्योतिषी ने कहा शगुन खराब है शनिश्चर पश्चिम में है इसलिए दूसरी ओर से धावा करना बरबादी का हेतु होगा।

राजपूत लेखक कहते हैं कि इस काल में परस्पर पत्र व्यवहार भी होने लगा था, बाबर जानता था कि मैं बेगाने देश में हूं हार जाने पर न केवल दिल्ली के लूट के माल से हाथ धोना पड़ेगा किन्तु काबुल पहुंचना भी कठिन होजायगा। संग्रामसिंह भी चतुर व बुद्धिमान था वह मेवाड़ की कुशल के लिए अपना सब कुछ न्यवछावर करने को तैयार था। उस से अधिक अपने देश की प्रीति किस में थी? बाबर कुछ कहता न था परन्तु दोनों दलों के मनुष्यों ने यह सोच लिया था कि अवश्य सन्धि होजायगी। अन्त में जिन शर्तों पर वह सन्धि के लिए तैयार हुआ वह सब प्रकार से राजपूतों के लिए हित कर थीं। अर्थात् मेवाड़ की सीमा जैसी है वैसी ही रहे। यदि बाबर को दिल्ली के इर्द गिर्द के स्थान हाथ में रखने हों तो

वह वार्षिक कर स्वरूप कुछ धन सांगा को दे दिया करेगा परन्तु राजपूत कहते हैं कि सलेंदी नामक सरदार ने जो तोंवर जाति का था राना को धोखा दिया।

बाबर कहता है "कि प्रभात के समय जब मैं सेना के परि-दर्शन (मुआयना) के लिए निकला, तो मुझे याद आया कि ईश्वर (खुदा) के हजूर में मुझको हमेशा से तोबह करने की इच्छा थी, इससे अच्छा समय और कौन आएगा मैंने सौगन्द खाई कि राजपूतों पर मुझे जय प्राप्त हो। मैं मदिरा त्यागने की प्रतिज्ञा करता हूं। मैंने सोने चांदी के प्याले तोड़ डाले और उनको गरीबों को बांट दिया सारी मदिरा धरती पर फेंक दी"।

इस सौगन्द ने सब छोटे बड़ों पर अच्छा प्रभाव डाला। सब ने अच्छे कार्य्य को सन्मान की दृष्टि से देखा, और सब मन वच कर्म्म से उद्यत होगए कि चाहे कुछ ही क्यों न हो या तो मर मिटो या हिन्दुओं को जीत लो। इसके पश्चात् बाबर ने अपनी व्याकुल सेना को धैर्य्य देकर कहा, "भाईयो! संसार असार है, न कोई यहां रहा है, न रहेगा, मरना अवश्यमभावी है। अविनाशी केवल एक ईश्वर का रूप है। जो जीवन के आनन्दों से भरपूर है उसको मौत का प्याला पीना पड़ेगा, यह दुनिया का परिणाम है। जो इस पंचतत्व की सराय में आया है उसे एक न एक दिन अवश्य कूच करना पड़ेगा। प्रतिष्ठा की मृत्यु अप्रतिष्ठा के जीवन से कई गुना उत्तम है। अगर मरने से जातीय प्रतिष्ठा स्थिर रहे तो मैं उसे अच्छा समझता हूं। प्राण चले जांय परन्तु नाम

रह जाय। ईश्वर ने हम पर कितनी कृपा की है कि हम रणक्षेत्र में मरेंगे और वैकुण्ठ* में जायगे। यदि विजय प्राप्त हुई तो इसलाम की उन्नति होगी, आओ आज हम सब मिल कर सच्चे दिल से ईश्वर को सर्वव्यापी जानकर उसके सन्मुख प्रतिज्ञा करें कि जब तक जान में जान है रणक्षेत्र से मुँह न मोड़ेंगे।

बाबर के शब्दों में जादू था! सब का दिल भर आया। सब ने एक सिरे से दूसरे सिरे तक कुरान† हाथ में लेकर सौगन्द खाई कि जब तक दम में दम है बराबर लड़ते रहेंगे, सब सिपाहियों ने भी ऐसी ही प्रतिज्ञा की। सब की आंखों में खून उतर आया सब मरने पर तैयार हुए।

बाबर ने कहा "अब आगे बढ़ो" वह स्वयम् घोड़े पर सवार और सब के आगे था और सेना के सरदारों को उचित सूचनायें देता जाता था।

२७ मार्च सन् १५२७ ई० में शनिवार के दिन युद्ध हुआ और राजिस्थान के भाग्य का सूर्य्य अस्त हो गया।

पहले लोगों का ख़याल था कि यद्यपि यंत्र की विप्रीत घटना हो गई है तथापि और संग्रामों की तरह यहां भी राना की विजय होगी। दिल्ली की सेना ने कब अच्छी तरह राजपूतों का सामना किया था, जिस समय अफ़ीम के नशे में मतवाले राजपूत सवार घोड़ों को एड़ लगायेंगे उनके फ़ौलादी

---

* मुसलमानों के बिहिश्त से अभिप्राय है।

† मुसलमानों की धर्म्म पुस्तक।

खांडे शत्रुओं का खून पी जावेंगे, मुसलमान उनके सामने कब ठहरेंगे। कई घण्टा लड़ाई रही, निडर राजपूत लहरों की तरह उमड़ कर चले, परन्तु मुसलमानों को हरा न सके। बाबर के तोपची गोलों का मेंह बरसा रहे थे किन्तु राजपूत योधा पीछे न हटे। बाबर ने इस समय चालाकी से काम लिया, उसने अपनी सेना को पीछे हटने की आज्ञा दी उसकी सेना के कई भाग इस प्रकार पीछे हटे कि राजपूतों ने समझा कि उनके पांव उखड़ गए और उनका पीछा करने को तैयार हो गए। बाबर ने उनकी नादानी का लाभ उठा कर तोपों के सर करने की आज्ञा दी। सलेंडी तोंबर ने जो इस चालाकी से अवगत था चुपके से शत्रु सेना में जा मिला।

हत भाग्य आर्य्यवर्त तू अपने कुपूत और जाति द्रोही बालकों के हाथ से तबाह हो रहा है। हे कृपापात्र भारत! ऐसे अधम दुष्ट, पापी पुत्र क्यों तुझ में उत्पन्न होते हैं? हाय! दूध की जगह इन पापियों को घुट्टी में विष क्यों नहीं दिया गया? इन अधम निर्लज्यों के उत्पन्न होने की आवश्यकता क्या थी?

दोहा—जननी ने नाहक जना, ऐसा पूत कुपूत।
ईशानदेव कह दुष्ट के, अजहूं लागे जूत॥

घर का भेदी लङ्का ढावे, जब अपना ही रक्त मांस धोखा दे, जब अपने ही मनुष्यों को जाति मर्य्यादा ध्यान न हो, जब अपने ही भाई देश व जाति के गले को इस प्रकार कपटता की दोधारी कुन्द छुरी से रेतने लगें तो फिर क्या उन्नति और समृद्धि की आशा हो सकती है? राजपूतों में खलबली

पड़ गई उनका गोल फूट गया, तोपों ने ग़ज़ब कर दिया, जब जथा टूट गया तो कोई लड़ किस तरह सके, लोथों के ढेर लग गए, शूरमाओं ने खुशी से प्राण दिए, बहादुर राजपूत मैदान से नहीं हटे परन्तु वह क्या कर सकते थे। एक ओर सरदार चन्दावत का सिर धड़ से अलग पड़ा है और उसके तीन सौ स्वामी भक्त साथी अपने सरदार के साथ खून की नदी में लत पत हैं दूसरी ओर मारवाड़ का सरदार सैंकड़ों की संख्या के बीच में सिर कटा हुआ पड़ा है। कैसा भयानक दृश्य है।

धन्य है उन योधाओं की माताएं जिन्होंने इस प्रकार अपने देश और जाति की सेवा में अपने प्राण अर्पण किए, उन की हार भी विशेष प्रकार की विजय है। धृग है उन नीच और पापी मनुष्यों पर जिन्होंने अपस्वार्थता के जाल में फंस कर अपनी देशीय स्वाधीनता को दूसरों के हाथ बेच डाला। उन का जीवन पशुओं से भी निकृष्ट है। और आने वाली सन्तान उनको घृणा से स्मरण करेगी और उनके नाम पर थूकेगी।

एक छोटी पहाड़ी पर बाबर ने मुरदों की खोपड़ियों को एकत्र करके विजय का स्तम्भ खड़ा किया। और उसके सिरे पर राजपूत सरदारों के सिर क्रमागत स्थापन किए।

इस पराजय के पश्चात् भी आर्य्य वीर संग्रामसिंह का हृदय वैसा ही वीर और साहसी बना रहा। उसके हाथ, पांव टांगें सब कट चुकी थीं किन्तु जङ्गी शेर अन्त तक शेर ही रहा। उसने चित्तौड़ के किले में बन्द होना उचित नहीं समझा, उसने कहा, किले का फाटक खुला रहने दो ताकि दुश्मन आकर

फिर अपने मन का हौसला निकाले, मेरी राजधानी खुला मैदान और खीमा है जब तक मैं इस हार के कलङ्क को दूर न कर लूंगा कभी चैन न लूंगा।

राजिस्थान के सच्चे योधा सपूत बच्चे राना के झण्डे तले आकर जमा हुए, छोटी आयु के बच्चे कोमलाङ्गी स्त्रियां जातीय शत्रु के सामना की इच्छा से घर छोड़ २ बाहर आई। परन्तु संग्रामसिंह के भाग्य में बदा नहीं था कि फिर मैदान में आवे। एक वर्ष के अन्दर २ उसका तेजस्वी आत्मा इस शरीर को छोड़ गया। कितनों का खयाल है कि उसको विष दिया गया, परन्तु परिश्रम और महासंग्राम का जीवन अस्सी से अधिक घाव, कनवाहा के मैदान का भयानक परिणाम, बहादुर से बहादुर हृदय को ध्वन्स करने के लिए यथेष्ट कहा जा सकता है। मेवाड़ के रानाओं में यह सब से अधिक बलवान्, सब से अधिक बहादुर और सब से अधिक साहस वाला हुआ है। उसकी सन्तान यदि पिता के पद चिन्ह पर चलने वाली होती तो चित्तौड़ को फिर किसी के आक्रमण का कभी भय न करना पड़ता।

इस मुल्क और जाति के नाम पर प्राण देने वाले ने इस प्रकार अपने आपको बलि कर दिया शोक !

शेर—सांगा हमें बतलादो, कि तुम आज कहां हो ?
किस गोल में किस फ़ौज में, किस सफ़ में निहां हो ?
मैदां में हो या दश्त में, यां हो कि वहां हो ?
हम ढूंढ निकालें तुम्हें, बतलादो कहां हो ?

गर अब नहीं आओगे, तो कब आओगे सांगा !
भारत की जब मौत आयगी, तब आओगे सांगा !

रुबाई ।

सुनकर सांगा का नाम थर्राते थे,
आदाब गुलामाना बजालाते थे ।
आता मैदान में था जब वह शहज़ोर,
शेर और पिङ्गल जी॰ चुरा जाते थे ।

अन्यच्च ।

शोक ! न हम में मनचला है कोई,
शोक ! न हम में दिल चला है कोई ।
हम ऐसे जहां में हुए तबाह और ख्वार,
हम में नहीं एक भी भला है कोई ।

॰ (१) पलटन व कतार (२) जङ्गल (३) चीता ।

चित्तौड़ का दूसरा साका ।

महारानी करुणावती ।

ख़ौफ़ किस बात का और डर से, यह घबराना क्या ?
नङ्ग की बात है दुश्मन से, यह मिल जाना क्या ?
लब पर हर मर्तबा अलफ़ाज़, अमां लाना क्या ?
क्षत्री जब हुए फिर युद्ध से, शरमाना क्या ?
नाम लो राम का शमशेरो, सिपर बाँधो तुम ?
आज इस अज़्म पर हिम्मत, की कमर बांधो तुम ?

राना संग्रामसिंह तीन भाई थे । राना रायमल और पृथ्वीराज पहले मर चुके थे उनके पश्चात् संग्रामसिंह मेवाड़ की गद्दी पर बैठे थे । भाइयों की ईर्षा द्वेष से बाल्यकाल में ही घर त्यागकर बनों और पर्वतों में बिचरने और तरह २ की कठिनाइयों के सहने का अवसर मिल चुका था और इस का यह परिणाम हुआ था कि आगामी जीवन में वह दृढ़ स्वभाव और श्रेष्ट बुद्धिवाला राजा बन गया था ।

उसके समय मे मेवाड़ की दशा बहुत अच्छी थी । दूर २ के मनुष्य राना का नाम सुनकर कांप उठते थे । परन्तु शोक ! कि थोड़े ही दिनों के पश्चात् उसका ऐश्वर्य्य घटने लग गया । बाबर शाह ने चढ़ाई की और राना के शत्रुओं को अपने साथ मिलाकर मेवाड़ पर धावा किया । राना की हार हुई ! यदि वह जीवित रहता तो कदाचित फिर शत्रुओं पर प्रबल आजाता

परन्तु शोक ! कि अधर्मी मन्त्री ने विष देकर उसके हितकर जीवन का दीपक ठण्ढा कर दिया ।

राना संग्रामसिंह का शरीर छोटा और गठीला था नेत्र बड़े २ जैसा कि अब तक भी उसके बंशके देखे जाते हैं अपने भाई पृथ्वीराज के साथ लड़ाई में उसकी एक आंख फूट गई थी और इबराहीम लोदी की लड़ाई में एक हाथ बेकाम हो गया था। एक टांग थी तोप के गोले से उड़ गई थी। उसके शरीर पर अस्सी से अधिक गोलियों के घावों के चिन्ह थे इस पर भी लोग उसके नाम से कांपते थे क्योंकि वह शेर मर्द था। जिस स्थान पर उसकी दाह क्रिया की गई थी अब वहां एक चौरी वा मण्डप बनवा दिया गया है।

करुणावती इसकी सब से छोटी रानी थी और यह सब से अधिक धार्म्मिक और रूपवान थी। राना इसको अपने प्राण-वत प्रिय समझता था, रानी भी उसको वैसे ही चाहती थी और यद्यपि वह कुरूप होगया था तथापि करुणावती उसका वैसा ही आदर सन्मान करती थी जैसे कि सच्चे पुजारी अपने इष्ट देव का करते हैं। करुणावती अधिक काल तक पति के साथ नहीं रही, विवाह के थोड़े ही दिन पीछे वह दुष्ट मंत्री के हाथ से मारा गया।

कुछ महीनों के पश्चात् करुणावती के गर्भ से एक बालक उत्पन्न हुआ जिसका नाम उदयसिंह रक्खा गया। राना के मरते ही उसका बड़ा लड़का रत्नसिंह सिंहासन पर बैठा परन्तु उसके शत्रु बहुत थे और स्वयम् उसकी सौतेली माता जवाहरबाई चाहती थी कि उसका पुत्र विक्रमादित्य राज-

गद्दी पर बैठे। उसने गुप्त रीति से पत्र लिखकर बाबर को बुलाया और मालवा का ताज देने का वादा किया। परन्तु बाबर को अवकाश नहीं था।

रत्नसिंह ने अम्बर के राजा की कन्या से विवाह करना चाहा परन्तु बून्दी के राजा सूरजमल ने किसी प्रकार उस राज कन्या को पहले ही ब्याह लिया, परिणाम यह हुआ कि इन दोनों में युद्ध हुआ और दोनों मारे गए। विक्रमादित्य का दूसरा लड़का राजगद्दी पर बैठा, यह क्रोधवान और नीच स्वभाव वाला था, सरदार उसकी आधीनता पर प्रसन्न नहीं थे। और वह उन पर शासन (हकूमत) भी नहीं कर सकता था।

उदयसिंह करुणावती का पुत्र केवल छः वर्ष का था। लोग चाहते थे कि वह गद्दी पर बैठे और रानी काम काज करे परन्तु कुछ मनुष्यों की सम्मति न हुई उन्होंने कहा मेवाड़ में बालक का राज अशुभ समझा जाता है।

इस समय मेवाड़ को दुर्बल पाकर बहादुर सुलतान वालिए गुजरात ने चढ़ाई करदी क्योंकि राना संग्रामसिंह ने उसके बाप मुज़फ्फर को कैद कर लिया था, विक्रमादित्य ने लड़ने का इरादा किया परन्तु सेना बिगड़ी हुई थी कुछ जन शत्रु से जा मिले।

जब निर्लज्य राजपूत मुसलमानों के साथ मिलकर मेवाड़ से लड़ने आये तो करुणावती ने रणक्षेत्र में खड़े होकर उच्च स्वर से कहा, 'नामर्दों ! अपने राजा के विरुद्ध यह नमक हरामी" उसी समय राजपूतों का ख्याल पलट गया और सरदार फ़ौज ने खड़े होकर कहा "हम केवल बालक उदय-

सिंह को बचाने आए हैं ताकि विक्रमादित्य उसको हानि न पहुंचा सके"। और यद्यपि करुणावती ने फिर भी उनको लानत मलामत की परन्तु उनकी सहायता लाभ करना उचित समझ सब को अपनी सेना में मिला लिया।

बहादुर यह हाल देखकर पहले सहम गया परन्तु फिर क़िले को घेरने की चेष्टा की।

टाड साहब लेखक राजिस्थान कहते हैं कि चित्तौड़ के नाम में एक प्रकार की विशेषता है और वास्तव में भी यह सत्य है। भारतवर्ष का कोई ऐसा नगर नहीं है जिसकी सहायता इस प्रकार की गई हो, और स्त्री पुरुषों ने जिसकी रक्षा के लिए इस प्रकार निर्मोही होकर अपने प्राण निछावर करके जातीय मर्य्यादा का उदाहरण स्थापन किया हो।

धार्म्मिक करुणावती ने परस्पर के द्वेष और शत्रुता को भुलाकर सेना की कमान अपने हाथ में लेली। और राजपूतों को लज्जा दिला दिलाकर सहायता के लिए बुलाया। कौन ऐसा कायर था जो उसके सन्देसे को न सुनता। सप्ताह के भीतर हज़ारों का जथा करुणावती की आधीनता में लड़ने के लिए इकट्ठी होगया। और सब क़िला के बचाने के लिए उस वीरता और साहस से तैय्यार होगए जो केवल राजपूतों का भाग है।

बहादुर के पास ज़बरदस्त सेना थी और तोपखाना भी था जिसमें यूरपीयन काम करते थे।

महीनों तक चित्तौड़ घिरा रहा, रानी की दृढ़ता को देखकर राजपूत सब प्रकार के जोखों का समाना करने के

लिए उद्दित होजाया करते थे। परन्तु फिर भी कहां ज़बरदस्त सुशिक्षित सेना और कहां स्त्री की कमान ! बहादुर ने एक भाग क़िले का सुरङ्ग से उड़ा दिया। लोगो ने सेना की कमी रसद की कमी और सब तरह की हीनता का विचार करके सलाह की कि बहादुर के पास क़िले की कुंजी भेजदी जाय। परन्तु करणावती ने लाल २ नेत्र करके कहा राजपूत-नियों की छाती का दुग्ध पिये हुए लड़के ऐसी बात नहीं करते, मैं केवल तुम्हारे राज ही की माता नहीं हूं प्रत्युत तुम्हारी भी माता हूं। माता के लाज और धर्म की रक्षा करो और सपूत सन्तान की तरह माता के साथ जान दो"।

इस बात का कौन उत्तर देता ? राजपूत जानते थे कि अब क़िले के सर होने में कोई कसर बाक़ी नहीं रह गई है। रानी ने बहादुर सरदारों को क़िले की दीवार के पास खड़ा किया उस दिन रक्षाबन्धन के त्योहार का दिन था उसने एक मनुष्य के साथ में राखी देकर कहा "जाओ यह राखी और मेरा पत्र दिल्ली के बादशाह को दो' पत्र का सारांश यह था :—

"भाई हुमायूँ ! इस समय तुम्हारा भानजा कठिन विपद में है। तुम आकर उसको और अपनी बहिन को बचाओ और मेवाड़ राज के गाढ़े समय में काम आओ मैं तुमको आज से अपना राखीबन्द भाई कहकर पुकारती हूं"।

राखी की प्रथा (रसम) भारतवर्ष में चिरकाल से प्रचलित थी। जब कभी किसी स्त्री पर मुसीबत पड़ती थी, तो वह किसी पुरुष के पास राखी भेज दिया करती थी और

वह अपने तन, मन, धन से उसकी रक्षा किया करता था। यह कभी नहीं सुना गया कि इस प्रकार की प्रार्थना का किसी हिन्दू ने निरादर किया हो।

जिस समय राखी भेजी गई थी हुमायूं बङ्गाल में शेरशाह से लड़ रहा था वह राखी पाकर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने बङ्गाल की लड़ाई बन्द करदी और बरसम यलग़ार अर्थात् धावा मारता हुआ। चित्तौड़ आपहुंचा। परन्तु उसके पहुंचने से पहले ही किला सर हो चुका था। राजपूतों ने एक २ करके जान दी थी। वह अन्त समय तक बराबर लड़ते रहे और रानी अपनी वर्तमानता से बराबर उनका उत्साह बढ़ाती रही।

विक्रमादित्य काम आया। बाघ जी को राजा की पदवी दी गई। मेवाड़ का झण्डा उसके सिर पर लहराने लगा। इतिहासकार लिखता है कि जिस चमक दमक से इस दिन मेवाड़ का झण्डा चमक रहा था पश्चात् फिर कभी नहीं चमका बाघ जी भी मारा गया। यह सूरजमल बेटा था जिसने खुशी २ केवल मरने के लिए राजा की पदवी ग्रहण की थी।

अन्त में जब हुमायूं समय पर न आ सका और रानी ने समझा कि वह विशेष कारण से नहीं आया और अब बचने की कोई आशा नहीं रही, उसने सारे सरदारों को इकठ्ठा किया। सब रानी की आज्ञा पाकर एकत्र हुए और धैर्य्य के साथ उसकी आज्ञा की प्रतीक्षा (इन्तिज़ार) करने लगे। उसने सब को सम्बोधन करके कहा, "वीर पुत्रो! तुमने अपना धर्म्म पालन किया तुम्हारी माता प्रसन्न होकर तुमको आशीर्वाद देती है। परन्तु हे मेरे धर्म्म पुत्रो! तुम यह न समझ लेना कि

इस अन्तिम समय में मैं राजपूत के नाम को बेइज्जत होने दूँगी । कदापि नहीं, लो तलवार हाथ में लो शत्रुओं को मारते हुए शेरों की तरह जानदो यह मौत नहीं जीवन है" ।

राजपूतों का हृदय इन शब्दों से भर आया उन्होंने कहा, "उदयसिंह को और जगह चले जाने की आज्ञा दीजिये" रानी ने उसको प्रेम भरी चितवन से देखकर कहा, "पुत्रो ! मेरी दृष्टि में तुम और यह एक समान हो तुमको अख्तियार है इसके विषय मे जैसा उचित समझो वैसा करो"। जिस समय क्षत्रिय सरदारों ने अल्पवयस्क उदयसिंह को बून्दी में अपने मामा के पास जाने का सन्देसा सुनाया, छैः वर्ष का बालक रोता हुआ माता के चरणो से लिपट गया और कहने लगा मुझे भी भी साथ मरने दो। माता ने उत्तर दिया नहीं तुम को जाति का राजा होना है। जाओ जाति की आज्ञा पालन करो और आज का दिन स्मरण रक्खो। यद्यपि यह शब्द माता ने धैर्य्य के साथ कहे थे परन्तु जो लोग मातृप्रेम से अवगत है वह समझ सकते हैं कि ऐसे समय में माता हृदय की क्या दशा होती है ? उसके नेत्रों से दो तीन आंसू टपक पड़े। परन्तु रानी ने उन्हें हाथ से पोछ डाला और उसके हाथ का इशारा पाकर लोगों नेजबरदस्ती उदयसिंह को माता के पास से अलग कर दिया ।

जोहर की तैयारी होने लगी, दीवार में एक ओर सुरङ्ग उड़ाई गई, दुश्मन झुण्ड के झुण्ड नगर में आने लगे, बहादुर शूरमा राजपूत भी केसरी वस्त्र धारण करके रणक्षेत्र में कूद पड़े और जीने मरने की परवाह त्यागकर इस प्रकार शत्रुओं को बध करना आरम्भ किया, मानों इसी काम के

लिए उत्पन्न किए गए थे। एक राजपूत दस वीर और पचास को मारकर तब आप मरता था इधर पुरुषों की यह दशा थी उधर धार्मिका रूपवती वीराङ्गना करुणावती, सब स्त्रियों के समूह को साथ लिए हुए उस स्थान पर पहुंची जहां भारी चिता तैयार कीगई थी। उसने वहां भी एक बहुत ही हृदय स्पर्शी और प्रभावशाली व्याख्यान दिया। हे पुत्रियां! ऐसे अवसरों पर राजपूत स्त्रियां सदैव अग्नि की गोद में शरण लेती हैं निन्दनीय जीवन से मृत्यु उत्तम है। तुम जानती हो सती ने किस प्रकार प्राण दिए थे। सती स्त्रियों की आदर्श है तुम भी सती के पद चिन्ह पर चल कर, आज सती बन कर उस प्रण को पूरा करो"। यह कह रानी ने स्वयम् अपने हाथ से चिता के नीचे सुरंग में आग दी। और आप हंसती हुई तेरह हज़ार महा सुन्दरी बहू बेटियों के साथ धर्म्म का चर्चा करती हुई बीच में बैठ गईं। सब चुपचाप हैं। वह सन्नाटा है कि अगर सूई गिरा दी जाय तो उसके गिरने का शब्द सुनाई पड़े। आग धीरे २ नीचे सुलग रही है करुणावती सब स्त्रियों के बीच में इस प्रकार बैठी हुई है जैसे तारों के मध्य में चन्द्रमा। सब किसी विशेष समय की प्रतीक्षा (इन्तिज़ार) कर रही हैं। इतने में तड़ाके का शब्द सुनाई दिया। तेरह हज़ार देवियों के शरीरों से आग की लपटें निकलने लगीं। उनका धुआं आकाश पर किसी बड़े शक्तिशाली के दरबार में फ़िरयाद करने के लिए उठने लगा।

शेष राजपूतों ने जब यह दृश्य देखा उनकी आंखों में

खून उतर आया, बाघ जी डेवला जो केवल मरने के लिए राना बना था अपने बचे खुचे सिपाहियों को साथ लेकर दीवानावार बहादुर की फौज पर झपटा । जिस प्रकार समुद्र की लहरें वेग से आगे को बढ़ती हैं और किसी रुकावट की परवाह नहीं करती, वह सिंह पुरुष भी शत्रुओं की सेना को चीरते हुए समुद्र की लहरों की तरह शत्रुओं को डुबोने के लिए आगे बढ़े, परन्तु उनमें इतनी शक्ति और गहराई न थी। तिस पर भी उन्होंने हज़ारों को मारा और स्वयम् मर मिटे। एक राजपूत व एक राजपूतनी भी क़िले में जीवित न रही।

पापी बहादुर सुलतान नगर में दाखिल हुआ, परन्तु यहां क्या था या तो लोग मैदान में मर चुके थे अथवा चिता पर बैठकर भस्म होचुके थे। बचे खुचे लोग तलवार व ज़हर से आत्माघात कर रहे थे। क्योंकि भारतवर्ष में उस समय लज्याबान लोग बसते थे। जो मौत को अपमान के जीवन पर सदा उपेक्षा दिया करते थे।

हुमायूं करुणावती का राखीबन्द भाई देर से पहुंचा, रानी भस्म होचुकी थ, उसने बहादुर सुलतान से अपनी मुंह बोली बहिन का बदला लिया। लाखों के समूह को खाक व खून में सुला दिया। उसको गुजरात में भी चैन न लेने दिया उसने भागकर कठिनता से किसी टापू में प्राण बचाए, हुमायूं जब तक जीता रहा, तब तक इसका पश्चाताप करता रहा, कि वह करुणावती और उसके पुत्र की सहायता के लिए समय पर न पहुंच सका।

---

(६)

राना उदयसिंह

राना का तु फ़रज़न्द, इन आंखों का है तारा ।
इकलौते को हां मैंने, तेरे सदक़े में वारा ।
नज़रों में मेरे तुझ से, नहीं कोई है प्यारा ।
पहुंचाए ज़रर तुझ को, भला किसका है यारा ।
हक़ तेरी मुहब्बत का, अदा करती है पन्ना ।
दौलत है यही यक, सो फ़िदा करती है पन्ना ।

राना विक्रमा जीत (द्वित्य) ने मुसीबत से कुछ नहीं सीखा था। जिस असभ्यता से वह पहले अपने सरदारों से व्यवहार करता था। चित्तौड़ लौट आने पर भी उसने अपने वर्ताव में कई शुभ परिवर्तन आने न दिया। कुछ काल तक बेचारे धैर्य्य और सन्तोष के साथ उसके अनुचित व्यवहारों को सहते रहे, क्योंकि उसके सिवाय मेवाड़ की गद्दी का और कोई अच्छा अधिकारी दिखाई नहीं देता था। उदयसिंह इसका सौतेला भाई था। इसकी आयु केवल छः वर्ष की थी। बालक को गद्दी पर बैठना किसी को भी स्वीकार नहीं था। परन्तु एक दिन ऐसी घटना हुई कि भरे दरबार के समय जब सब सरदार उपस्थित थे विक्रमाजीत की क्रोधाग्नि भड़क उठी उसने अजमेर के सरदार पर हाथ छोड़ दिया।

राजपूत ऐसे नीच बरताव को कब सह सकते थे। परन्तु राना जाति का सरदार और हिन्दुओं का मुकुट था उसका अपमान कैसे किया जाता।

तथापि सब सरदार उठ खड़े हुए, यह अनुचित क्रिया राजपूतों के लिये असह्य थी। अजमेर का सरदार बूढ़ा और माननीय था, राना विक्रमाजीत का वृद्ध राजपूत पर हाथ चलाना एक ऐसी क्रिया थी जिसकी मूर्खता केवल वर्णन करने ही से विदित होती है। अजमेर का सरदार वही मीनगर का बांका राजपूत था जिसने आवश्यकता के समय राना संग्राम सिंह की सहायता की थी। संग्रामसिंह ने इस सहायता के बदले उसको अजमेर का इलाक़ा बतौर जागीर दे दिया था बहादुर राजपूत नवयुवक अज्ञान राजा को वहीं ख़ाक व ख़ून में मिला देते परन्तु धर्म्म का विचार उनके हाथों को थामे हुए था। चन्द्रावत सर्दार अपने क्रोध को थाम न सका। उसने चलते समय कहा, "मित्रो ! अभी तक केवल कच्ची कली की गन्ध से मस्तिष्क ख़राब हो रहा था अब उसका फल भोगना पड़ेगा"। अजमेर के सरदार ने कहा इस गन्ध की हक़ीक़त मालूम हो जायगी"।

क्या हठी राजपूत इस तिरस्कार को सह सकते थे। राजा वह मनुष्य है जिसके सिर पर जाति ने स्वयम सरदारी का मुकुट रक्खा है। उसको कैसे साहस हो सकता है कि वह जाति की मान हानि करे। सरदारों ने कहा जो होने को था हो लिया। अब हमको विक्रमाजीत व राना सांगा के किसी पुत्र से कोई वास्ता नहीं है। दो क्रोधवान युवकों ने मेवाड़

को तबाही की अवस्था तक पहुंचा दिया था। और यदि किसी गम्भीर चित्त, शान्त स्वभाव, वीर साहसी हाथ ने सहायता न की तो मेवाड़ की मर्य्यादा को फिर से प्राप्त करना प्रायः असम्भव होजायगा। सांगा के पुत्रों में कोई भी योग्य नहीं था। पृथ्वीराज के कारनामे अब भी राजिस्थान और उसके आस पास के प्रान्तों के जिह्वाग्र थे। उसका एक लड़का बनबीरसिंह था सरदारों ने सलाह करके उसको बुलवा भेजा और मेवाड़ का मन्त्री नियत किया वह राजा नहीं हो सकता था क्योंकि वह बान्दी के पेट से था। तथापि सरदारों को विश्वास था उसके मन्त्री होने से मेवाड़ को उभरने और खोई हुई शक्ति को फिर प्राप्त करने का अवसर मिलेगा। और इस काल में यह भी मालूम होजायगा कि उदयसिंह में "जङ्गी शेर" के गुण हैं वा नहीं।

बनबीर को पहिले तो कुछ सङ्कोच हुआ उसने इस सलाह को उचित नहीं समझा। उसको मेवाड़ की गद्दी पर बैठने का अधिकार नहीं था, राजसी मुकुट किसी दासी पुत्र के सिर पर कैसे विराजमान हो सकता था। परन्तु जब मेवाड़ राज्य के कर्म्मचारियों और सरदारों ने बहुत आग्रह के साथ कहला भेजा कि मेवाड़ को एक बलवान पुरुष की सहायता की आवश्यकता है और जब मेवाड़ स्वयम् उसको बुला रहा है तो उसका इस प्रकार इनकार करना राजपूती धर्म्म के विरुद्ध है। मेवाड़ को पूरी २ आशा है कि बनबीर उसको आन्तरिक और वाह्यक झगड़ों से छुटकारा प्रदान करेगा। और इसलिए बनबीर को कोई अधिकार नहीं कि वह उसकी प्रार्थना

को अस्वीकार करे। अब बनबीर के पास कोई उत्तर नहीं रहा था।

इस काल में उदयसिंह बालक सम्पूर्ण षडयंत्रों से (साजिसों से) अज्ञान रहकर महल के अन्दर खेल रहा था, वह वहीं खाता, पीता, सोता और खेलता रहता था, उसकी धाय (दाया) का नाम पन्ना था। पन्ना का इकलौता नन्हा पुत्र उसका अकेला साथी था।

सायंकाल का समय था, नाई कमरे में खाने का सामान लाया, उदयसिंह भोजन करके आराम से बेसुधि की नींद सो गया। और पास ही उसका साथी भी सोरहा। पन्ना दोनों निर्दोष बच्चों को प्यार से देख रही थी।

हठात अन्तःपुर (ज़नानखाना) से रोने चिल्लाने की आवाज़ सुनाई दी। पन्ना का सिर चकरा गया। वह घबराकर उठ खड़ी हुई स्त्रियों के रोदन से सारा महल गूंज उठा। चारों ओर उदासी छागई। और एक प्रकार की आपदा हृदयों पर छागई, यह साधारण रोदन नहीं था। इसके आरत शब्द में मौत की घटना प्रतीत होती थी। नाई भी विस्मित था। भय ने उसके पांव को धरती में गाढ़ दिया। क्या पन्ना इस भेद से अवगत नहीं थी? क्या महल के एक कोने में बैठी रहने से उसको इर्द गिर्द के समाचार नहीं पहुंचते रहते थे। सरदार बनबीर ने विक्रमाजीत को अपने हाथ से बधकर दिया था। यही कारण स्त्रियों के रोने पीटने और चिल्लाने का था।

पन्ना का दुर्बल हृदय कांपने लगा, वह निराशा से दोनों निर्दोष बच्चों की ओर टिकटिकी बांधकर देखने लगी उसको

भास गया कि जब तक सांगा का दूसरा पुत्र जीता है दुष्ट हत्यारे को कभी चैन न आवेगा। उसने उसी समय सोते हुए उदयसिंह के सुनहरे वस्त्र उतार दिये और उसको टोकरे में छिपाकर पत्तों से ढक दिया और नाई से कहा झटपट इसको नदी की ओर उठा लेजा मैं आती हूं।

नाई ने टोकरा उठा लिया, और पहरे चौकी वालों से सहज में बचकर निकल गया, सब उसको जानते थे किसी ने रोक टोक नहीं की, वह रोज भोजन लाता था उसके सिर पर टोकरी थी पहरे वालों ने समझा कि वह पकवान लाता होगा और राजा के महल की जूठन अपने घर ले जारहा होगा।

नाई तो इस प्रकार से नदी के किनारे पहुंच गया परन्तु पन्ना के हाथों से अभी कठिन बलिदान होना बाकी था। उसने उदयसिंह के वस्त्र अपने बेटे को पहना दिए, जलदी में उसने सब कुछ कर लिया और फिर उसके परिणाम के देखने की चिन्ता में मौन होकर एक कोने में बैठ रही।

उसको देर तक प्रतीक्षा (इन्तिज़ार) नहीं करना पड़ा। किसी आने वाले के पांव की आहट मालूम हुई। उसने कमरे के परदे को हाथ से उठाकर पूछा "राज कुमार कहां है? उदयसिंह को जलदी दिखादे"।

क्षणमात्र तक माता का कलेजा कांपता और धड़कता रहा उसके मुंह पर किसी ने मौनता की मुहर लगा दी थी, मुख से एक शब्द तक नहीं निकला था, हाथ से पलंग की ओर संकेत किया जिस पर उसका अपना बेटा लेटा हुआ था।

एक चमकती हुई कटार ने निर्दोष के कलेजे में धंस कर रुधिर पी लिया, बालक के मुख से नन्हीं सी चीख निकली और फिर उसने हमेशा के लिए अपनी आंखें बन्द करलीं। बनवीर ने समझा कि अब मैं और मेरी सन्तान मेवाड़ की गद्दी पर राज करेगी। यह सोचता हुआ उस कमरे से बाहर चला गया।

वह कैसी माता थी जिसने अपने पुत्र को इस प्रकार वध करा दिया? क्या उसका हृदय पत्थर का था, क्या मातृप्रेम उस से विदा हो गया था? कदापि नहीं उसने स्वामी भक्ति और मानुषी वफादारी की परीक्षा प्रशंसा के साथ उत्तीर्ण करली। अपने इकलौते पुत्र को मौत के पंजे में सौंपकर स्वामी के पुत्र को पूर्ण रूप से बचा लिया। क्या इस से भी बढ़कर कहीं निष्काम आत्मत्याग का दृष्टान्त मिल सकता है? पन्ना जाति की राजपूत थी राजपूत क्या नहीं दिखला सकते। अवतारों को मिलाकर देखो अनेक जातियों के महाशयों के गुणों की तुलना करके देखो। हर प्रकार के गरीब व अमीरों को अपने सामने खड़े करो। देखो राजपूती शोभा किस विशेषता के साथ चमकती हुई दिखाई देती है।

हे भारत के रत्न राजपूतो! तुम किस निद्रा में सोगए, तुम ऐसे समय में लोप हो जब कि देश को तुम्हारी नितान्त आवश्यकता है।

पन्ना ने इस दुर्घटना पर गरम २ आंसू बहाए :—

है विख्यात जगत में मित्रो, मां की ममता भारी।
घाव लगे बालक के तन में, प्राण तजै महतारी।

उदयसिंह तो इस समय कहीं का कहीं जा पहुंचा था। कृत्रिम उदयसिंह मृतक की अन्त्येष्टि क्रिया कीगई। पन्ना ने विदा मांगी अब उसका महल में क्या काम था? जिस बच्चे की वह धाय थी वह मर चुका था। कौन जाने वह उसी के अभागी पांव का फल रहा हो। उसको बिदा किया गया। और गरीब पन्ना ने अपना असबाब उठाकर शोक भवन को हमेशा के लिए परित्याग किया।

नगर से कुछ दूरी पर नदी के सूखे रेत पर उसने नाई को टोकरे के पास बैठा हुआ देखा, बालक नींद में अचेत था। संसार सागर के विचित्र षड़यंत्रों से बेसुध होकर वह विशेषता की नींद में सो रहा था सम्भव है कि पन्ना के मातृहाथ ने ममता के कारण उसको अफ़ीम अधिक मात्रा में खिला दी हो। इतिहास कुछ पता नहीं देता। उन कठिन पहाड़ी पगडण्डियों में से जहां पुरुषों का चलने का साहस नहीं होता था, पन्ना उदयसिंह को लिये हुए देवला पहुंची वहां बाघजी का लड़का रहता था, जो किसी समय चित्तौड़ की सहायता में काम आ चुका था, पन्ना ने राजकुमार को इस सरदार को सौंपना चाहा।

सरदार ने दोनों पर दया की खाने पीने की सामग्री मंगवा दी, और पश्चात् उसने साफ़ २ कह दिया कि मुझ में सामर्थ्य नहीं है कि मैं इस को शत्रुओं के पंजे से सुरक्षित रख सकूं, देवला चित्तौड़ से बहुत समीप है दूत सहज में जा सकते हैं और नन्हा राना इस जगह सुरक्षित नहीं रह सकता। पन्ना और नाई ने डोंगरपुर की राह ली। वहां का सरदार भी बड़े

आदर सन्मान से मिला परन्तु उसने भी अपने आप को राज-कुमार की रक्षा करने के अयोग्य बताया। पन्ना फिर और स्थान को सिधारी।

पन्ना का ईश्वर में विश्वास था जिसने अनजान को अब तक मौत के पंजे से बचाया वह अब भी बचावेगा। निर्भयता से वह पूरब की ओर जा निकली, कोमलमेर का क़िला पास था, जहां किसी समय में बनवीर का पिता पृथ्वीराज रहता था, अब उस किले पर आशाशाह नामी एक जैनी का अधिकार था।

वह राजपूत नहीं था वरंच बनिया जाति का था, किन्तु पन्ना उसके पास गई, और राजकुमार की रक्षा करने के लिये उससे प्रार्थना की।

जिन मनुष्यों को राजपूताना के दुर्गम पहाड़, उजाड़, मैदानें सुन्सान जंगलों के देखने का अवसर मिला है वह कहेंगे कि पन्ना ने स्त्री जाति होकर किस प्रकार ऐसे रास्ते तिरोहित किए होंगे। पन्ना विशेष गुण संयुक्त स्त्री थी वह हृदय की वीर थी उसका साहस असीम था उसमें सिंह पुरुषों की सी हिम्मत थी एक बालक को कन्धे पर बैठाये कभी वह ढालू चट्टानों पर चढ़ जाती, कभी तङ्ग और अन्धेरी घाटियों में मार्ग ढूंढती, पहाड़ों के शिखर गहरी नदियां रेगिस्तान के अन्धे करने वाले झोंके उसकी हिम्मत के आगे तुच्छ थे। हिंसक पशुओं और जंगली मनुष्यों तक का भय उसके पास नहीं फटकने पाता था सच्चे भील जिनको मानुषी अपस्वार्थता ने बनों में रहने पर विवश किया। वह भी उसका वृत्तान्त सुन कर उसकी सहायता

करते थे और मार्ग बनाते थे। बापा रावल को भीलों ने ही टीका दिया था। भीलों ही को राना के माथे पर तिलक लगाने का अधिकार प्राप्त था, भीलों ही ने इस अवसर पर भी उदय-सिंह की सहायता की।

आशाशाह कोमलमेर के किले में अपनी माता के पास बैठा था नौकर ने आकर कहा एक स्त्री आई है, और आप से कुछ कहना चाहती है। आशाशाह ने कहा उसे ले आओ पन्ना ने सामने पहुंच कर झुक कर प्रणाम किया। आशाशाह ने उसका वृत्तान्त पूछा। पन्ना ने बालक को अपनी गोद् से उतार कर उसके सन्मुख खड़ा कर दिया और यह शब्द उच्चारण किया, "आशाशाह! यह तेरा राजा है तू इसकी रक्षा कर। आशाशाह ने उदयसिंह को गोदी में उठा लिया और कुछ आवश्यक प्रश्नों के पश्चात् जब आशाशाह ने पन्ना के मुख से सारा वृत्तान्त सुन लिया उसने सोचा कि राजभक्ति सन्मान और प्रतिष्ठा आदि नियमों के अनुसार गोद में बैठाए हुए बालक की रक्षा हर प्रकार से आवश्यक है परन्तु साथ ही उस को बनवीर से शत्रुता मोल लेनी भी स्वीकार नहीं थी। जैनियों में राजपूतों की सी वीरता नहीं होती और वह सच्चा भी था, वह किस तरह जान जोखिम में पड़ना पसन्द करता, उसने तरसती हुई दृष्टि से पन्ना के कुम्हलाए हुए मुखारविन्द की ओर देखा, और वह अपनी आपदाओं का उत्तर गोचर करने ही को था कि उसकी माता ने कहा, "बेटा! कुशल तो है तू किस बात के लिए भय करता है। राजा के सेवक को दुःखों और कष्टों से डरना नहीं चाहिए। यह तेरा राजा है तेरे

धन और प्राण का स्वामी है। राना सांगा का पुत्र है ईश्वर की कृपा है कि आज वह तुझ से सहायता की प्रार्थना करता है। आज का दिन धन्य है। और तेरे लिये शुभ व कल्याण लावेगा जैनी खाँ के शब्दों में प्रभाव था, पन्ना का उदयसिंह विघ्नों से सुरक्षित हुआ। परन्तु अभी एक कठिन परीक्षा बाकी थी, अन्त में यह स्थिर हुआ कि लड़का आशाशाह का भतीजा प्रसिद्ध किया जाय। और राजपूत धाय को उसकी पालना की अब आवश्यकता नहीं पन्ना ने विदा होते समय उदयसिंह को छाती से लगा लिया, और उसको आशीर्वाद देकर अपने घर का मार्ग लिया। शोक ! अब दुखियारी आपदा की मारी माता के ढारस देने के लिए किसी बच्चे की भोली भाली बातों तक की आशा नहीं रही थी। संसार तू विचित्र है तेरे काम काज में कैसी कठोरता और निर्दयता है।

उदयसिंह की पहाड़ी किले में पालना हुई। उसके सम्बन्धियों ने चित्तोड़ में दुःख मनाया। बनवीर ने विचार किया कि वह और उसकी सन्तान चित्तोड़ की गद्दी पर अकंटक राज करेंगे। वह दिन प्रतिदिन ढीठ और अपस्वार्थी बनता गया, और इस बात को पूर्णतः भूल गया कि मेरी माता साधारण बांदी थी। और मेवाड़ में उसने यह पद किसी अस्वत्व से नहीं वरन् सरदारों की कृपा दृष्टि से प्राप्त किया था। मेवाड़ के सरदार अपनी भूल पर हाथ मल २ कर पछताते थे। वह दिन कैसा अशुभदायक था जब कि उन्होंने बनवार को रानाओं के सिंहासन पर आसन जमाने का अवसर दिया। परन्तु अब क्या हो सकता था, वह जानते थे कि सांगा का वंश विनष्ट हो

चुका है अब उस से राजाओं का सिलसिला प्रचलित होना बहुत ही कठिन है। सात वर्ष तक लगातार इन ग़रीबों ने सन्तोष किया।

एक समय किसी त्यौंहार के उपलक्ष में कोमल मेर के किले में उत्सव मनाया गया। आशाशाह के सम्पूर्ण धनाढ्य तालेदार महमान की दशा में वर्तमान थे। खान पान और आस स्वास का बहुत उत्तम प्रबन्ध था। राजपूत सरदार अपने २ पद के अनुसार बैठे हुए थे। आशाशाह के भतीजे ने दही का प्याला हाथ से उठा लिया। जो प्रतिष्ठित राजपूतों ही का अधिकार था। उसको बहुतेरा धमकाया गया। परन्तु वह खड़ा हुआ मुस्कराता रहा। खुशामद भी की गई, परन्तु उसने एक न सुनी। महमानों ने कहा आशाशाह इस हठी बालक को अपने काबू में रखना नहीं जानता। परन्तु उस भीड़ में कुछ मनुष्य चतुर और दूरदर्शी भी मौजूद थे। उन्होंने कहा, "और निश्चय जानो कि यह आशाशाह का भतीजा नहीं है"।

कुछ काल के पश्चात् एक शक्तिशालि सरदार ने कोमल मेर देखने की इच्छा प्रकट की यह सानी गौरा का सरदार था और मालदेव की सन्तान में से था। जिसने छल से हमीर के साथ अपनी विधवा कन्या का विवाह किया था फाटक पर तेरह वर्ष के नवयुवक बालक ने उसका स्वागत किया। उसके रङ्ग ढङ्ग और निडर व्यवहार को देखकर सरदार को आश्चर्य्य हुआ। जब उस से कहा गया कि यह किलेदार का भतीजा है तो सरदार को विश्वास न आया और उसने सभ्यता व चतुरता के साथ बात चीत में प्रगट कर दिया, कि यह कोई

और जन है। आशाशाह ने विचार किया कि अब इसकी असलियत को ज्यादह दिन छिपा रखना व्यर्थ है। प्रगट करने का समय आगया है। इसलिए उसने साफ़ २ कह दिया कि "यह उदयसिंह राना सांगा का पुत्र है"।

यह वृतान्त जङ्गल की अग्नि की भान्ति निकट व दूर फ़ैल गया। मेवाड़ और आस पास के सूबों के रईस व सरदार राजकुमार के देखने की इच्छा में कोमलमेर आए। चन्द्रावत का सरदार बनबीर से बहुत क्रोधित था, वह भी वहां चला आया। चित्तौड़ में यह नियम था कि राना अपनी रसोई से उत्तम भोजन प्रतिष्ठित सरदारों के यहां भेजवाया करता था। यह एक प्रकार का सन्मान समझा जाता था, जो लोग राजिस्थान के भद्र राजपूत समझे जाते थे और राना के भाई बन्द कहलाने वाले का दर्जा रखते थे, वह इस विशेषता के अधिकारी थे। जिनकी उत्पत्ति में कुछ सन्देह होता था उनके साथ ऐसा व्यवहार नहीं किया जाता था। पहले समयों में जब किसी राना ने सावधानी काम नहीं लिया तो बहुधा सरदार नाराज़ होकर दरबार से चले गये। बनबीर के समय में इस प्रकार की रीति का प्रचलित रखना कई कारणों से अनुचित था। जब उसने सरदारों को इस प्रकार के पदार्थ भेजवाए; तो वह अपनी घृणा को थाम न सके। सरदार चन्द्रावत ने उसके लेने से इनकार कर दिया, और कहा बापा रावल की सन्तान के हाथ से जिस वस्तु का लेना सन्मान है, उसके एक बांदी के पुत्र की ओर से भेंट किया जाना अपमान है।

किंचित जन विद्रोह के लिये तैयार थे। राना सांगा की

सन्तान के वर्तमान होने की ख़बर ने उनके साहस को और भी बढ़ा दिया। जब कोमलमेर में मेवाड़ के चुने हुए भद्र प्रतिष्ठित सरदारों का दरबार हुआ, तो पन्ना नाई को साथ लिए हुए वहां आई और उसने रो २ कर अपना वृतान्त वर्णन किया और शपथ खाई कि उदयसिंह राना सांगा का असली पुत्र है। मैं इसको चित्तौड़ से भगा लाई थी और जो बालक विक्रमाजीत के देहान्त के समय चिता पर भस्म किया गया था। वह स्वयम मेरा पुत्र था। आशाशाह ने उसी समय उदय-सिंह की रक्षा का काम चौहान जाति के मुखिया के सिपुर्द किया। जो सब सरदारों में माननीय समझा जाता था। और जिससे पन्ना ने यह भेद कह रक्खा था। वृद्ध सरदार ने उदय-सिंह को छाती से लगाकर गोद में बिठा लिया। और उसके साथ एक ही थाल में भोजन किया। इसके पश्चात् उदयसिंह के तिलक की रीति कीगई और सब सरदारों ने मत्था टेक कर नज़रें भेंट कीं।

राजपूत झुण्ड के झुण्ड चारों ओरसे आने लगे। रसद का सामान भी शीघ्र एकत्र होगया। सानी गौरा के रईस ने उदयसिंह के साथ अपनी बेटी ब्याहने की सम्मति गोचर की। और ऐसे अवसर पर ऐसे बड़े सरदार के सम्बन्ध की नितान्त आवश्यकता थी इसलिये यह प्रार्थना स्वीकार की गई।

पाठक जानते हैं कि जब हमीर को मालदेव ने धोखा देकर अपनी विधवा बेटी ब्याही थी तो उसने क्रोधित होकर कहा था, कि आज से मेरी सन्तान कभी मालदेव के लड़के लड़कियों से नाता न करेगी। कितने राजपूतों ने सम्मति दी

कि उदयसिंह की रानी गौरा से कदापि नाता नहीं करना चाहिए। परन्तु उसके साथ नाता करने के लाभ सम्मुख थे। रानी गौरा ने नाता करने के लिये परिश्रम करने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी थी इसलिये यही स्थिर किया गया कि हमीर की आत्मा इस नाते से प्रसन्न होगी। और अब इस घटना को बीते हुए दो सौ वर्ष से अधिक भी हो गए थे।

संसार में बनते बिगड़ते देर नहीं लगती। नये २ लड़ाके शूरमा इसकी सेना में भरती होने लगे। बनबीर की लड़की के उपढौकन (जहेज़) की सामग्री कहीं को जारही थी उसमें दसहज़ार वृषभ और पांच सौ घोड़े थे। यह सब लूट लिया गया। नए राना के विवाह में सब रईस आए थे। केवल दो रईस नहीं आए थे। जब उदयसिंह का विवाह हो चुका तो उन दोनों के ऊपर चढ़ाई कीगई। एक मारा गया दूसरा आधीन होगया, बनबीर उसकी सहायता के लिए बाहर निकला परन्तु जब उसकी सेना उदयसिंह से जाकर मिल गई तो वह चित्तौड़ की ओर भाग गया।

यदि चतुरता से काम लिया जाता तो सम्भव था कि चित्तौड़ का किला वर्षों में भी फ़तह न होता परन्तु बनबीर का मंत्री राना सांगा का शुभचिन्तक था उसने ऐसा प्रबन्ध किया कि एक दिन जब किले में सामग्री आरही थी और बहुत सी गाड़ियां किले में दाख़िल होगईं तो उनमें से एकहज़ार राजपूत निकल पड़े और जिन किले वालों ने उनका सामना किया उन्हें बध किया अथवा कैद कर लिया। और उदयसिंह

खुशी से अपने किले में प्रविष्ट हुआ। उसके नाम की सलामी सर होने लगी।

यदि बनबीर के साथ वही सलूक किया जाता जो उसने विक्रमाजीत के साथ किया था और उदयसिंह के साथ करना चाहता था, तो कदाचित अधिक उत्तम होता परन्तु राना के मंत्रियों ने निवेदन किया कि यह हमारे बुलाने पर मेवाड़ आया हुआ था इसलिए इसको क्षमा कर देना चाहिए। राना ने भी उसे क्षमा कर दिया। बनवीर अपने पारिवारिक जनों समेत बहुमूल्य रत्न जो उसके अधिकार में थे साथ लेकर दक्षिण की ओर चला गया। जहां उसकी सन्तान कई पीढ़ी तक सामान्य जीवन व्यतीत करती रही।

दोहा—अनुचित करणी जो करे, अन्त समय पछिताय।
ईशानदेव जो अधम नर, सो कैसे सुख पाय।

संख्या (१०)

चित्तौड़ का तीसरा साका

हर गोल में गलतां व तपां, थे सरो पैकर।
दस्ताने कहीं थे कहीं, ढालें कहीं खनजर।
राजपूतों की तलवारें जो, उठती थीं बराबर।
मुंह खौफ से ढालों में, छिपाते थे सितमगर।
रोके उन्हें ताक़त यह, न थी पीरो जवां की।
क्या शान थी तलवार की, और तीरो कमां की।

जिस साल उदयसिंह के आने से चित्तौड़ में उत्सव मनाया गया। और सर्व मेवाड़ निवासियों ने हर्ष प्रकाश किया उसी साल वह मनुष्य उत्पन्न हुआ जिसने चित्तौड़ को सदा के लिए बरबाद कर दिया।

उदयसिंह के पहाड़ी किले में रहने के दिनों में दिल्ली में बड़ी २ अदल बदल की घटनाएं हुईं। हुमायूं अपनी मेल मिलाप रखने वाली नीति पर स्थिर रहा। विद्रोहकारी भाइयों और प्रजा के साथ उसका व्यवहार अधिकतर दया का था। वह स्वभावतः बहादुर और साहसी थी। बहुधा अवसरों में उसका परिश्रम प्रशंसा के योग्य था। परन्तु कभी २ जब उस को भोग विलास की सूझती थी, तो वह तन मन से उसी में प्रवृत हो जाता था। उसकी अत्यन्त नम्र प्रकृति और घृणा के योग्य आलस्य ने वह दिन दिखाया कि उसको कुछ दिनों के लिए तख्त व ताज को परित्याग करना पड़ा। उसने मालवा पर विजय प्राप्त करली परन्तु उस पर अधिकार करने में विलम्ब किया। जिस समय वह आनन्द और उत्सव कर रहा था उसी समय उसको खबर मिली कि शेरखां अफगान ने विद्रोह का झण्डा खड़ा किया है और बंगाल देश को अपने लिए विजय कर रहा है। हुमायूं बङ्गाल में अपना काम अधूरा छोड़कर रानी करुणावती की सहायता के लिए इधर चला आया था। अब फिर उसने उधर का प्रस्थान किया। उसके मुंह मोड़ने की देर थी कि मालवा, गुजरात फिर बहादुरशाह के अधिकार में आगए। और उसने भाटी से निकलकर चारों ओर मार धाड़ आरम्भ करदी।

हुमायूं के जाते ही शेरखां ने दूसरी ओर का प्रस्थान

किया। हुमायूं ने बङ्गाल का मार्ग लिया। जहां उसके लिए पहले से सुख और आनन्द की सभा लगा रक्खी थी। शेरखां ने बङ्गाल की सब सड़कों पर असल दखल कर लिया। और हुमायूं की रसद तथा मनुष्यों के आने जाने में कठिनता हुई। हुमायूं के भाई उसकी किञ्चित् सहायता नहीं करते थे। एक भाई आगरा में रसद इकट्ठी करने गया था उसने अपने आप को आगरा का बादशाह प्रसिद्ध कर दिया। दूसरे ने तत्काल उस को गद्दी से उतार दिया परन्तु शेरखां के विरुद्ध कोई कार्य्यवाही नहीं की।

हुमायूं को विवश होकर अपने शत्रु से सुलह करनी पड़ी। जब सुलह की शर्तें नियत हो रही थीं और दोनों ओर के सिपाई अपनी २ वीरता दिखाने पर तुले हुए थे, जैसा कि प्रत्येक देश व प्रत्येक जाति तथा प्रत्येक समय के सिपाहियों का चलन है, तो शेरखाँ चुपके से आ पहुंचा और हुमायूं की सोती हुई सेना को कसाइयों की तरह काट डाला। हुमायूं घबरा कर भाग खड़ा हुआ। कोई साथी व सङ्गी सहायक न था, उसने घबराहट की दशा में अपना घोड़ा गङ्गा में डाल दिया। और यदि एक बिहशाती (भाशकी) उसको सहायता न करता और अपनी मशक पर बैठा कर नदी के पार न उतारता तो मुग़ल राज्य का सिलसिला सदा के लिये मिट जाता।

एक साल के पीछे उसने नई सेना एकत्र की। और क़न्नौज के निकट जो राजपूतों का प्राचीन नगर है शेरखां से मुठभेड़ की। यह सेना उस प्रकार की नहीं थी जैसी बाबर उसका पिता इबराहीम लोदी के मुक़ाबले के लिये लाया था।

संख्या में एक लाख मनुष्य थे परन्तु इन को केवल अपनी २ जान बचाने की चिन्ता थी। इधर शत्रु की तोपों से गोले सर हुए उधर यह सब एक २ करके भाग निकले। हुमायूं को प्राण बचाने मुशकिल हो गए। अपने भाग्य का भरोसा करके किञ्चित विश्वास के योग्य मनुष्यों को साथ लेकर जङ्गलों में विचरने लगा।

इन सब दोषों के होने पर भी हुमायूं में बाबर की सी दृढ़ता मौजूद थी। पन्द्रह वर्ष तक वह अपनी दुर्भाग्य के साथ संग्राम करता रहा, पहली बार राजपूताना व सिन्ध के रेगिस्तान में तरह २ के कष्ट सहता रहा। एक अवसर पर उसको खाने के लिए रोटियां तक नहीं मिलीं और उसकी जान का भय था। यदि राजपूत चाहते तो क्या कुछ नहीं कर सकते थे। साधारण सेना और थोड़े खर्च से वह तैमूर के वंश की सहायता करते हुए परस्पर की प्रीति को खूब दृढ़ कर सकते थे, क्योंकि हुमायूं विदेशी नहीं किन्तु इसी देश का मनुष्य था। उसने जैसलमेर के राजा से सहायता मांगी, राजा ने इनकार कर दिया। साथियों ने मारवाड़ के राव मालदेव से सहायता लेने की सलाह की जिसका लड़का सांगा के साथ लड़ता हुआ बियाना के युद्ध में काम आया था, उसने सहायता देने के बदले उसे कैद करना चाहा।

हुमायूं जान लेकर भाग निकला उन्हीं दिनों उसने हमीदह नामी एक शेख़ की पुत्री से विवाह किया था जो हुमायूं के दुःखों और कष्टों को देख कर भी उसके साथ रहने और उसको प्यार करने में राज़ी थी। हुमायूं की दशा इस समय

बहुत कृपापात्र थी। परमात्मा जाने ऐसे नेक मनुष्य क्यों दुःखों में ग्रस्त होते हैं। हमीदह गर्भवती थी। बच्चा के प्रसव होने का समय आ पहुंचा था। परन्तु क्या किया जाता। मौत चारों ओर से मुंह लगाए हुए घूर रही थी सिवाय इसके कि यह विपद् ग्रस्त मनुष्य उस निर्जल रेगिस्तान में तड़प २ कर प्राण त्यागते और क्या उपाय था, वायु के झोंके चल रहे थे। और रेत के टीले तीस से लेकर सौ फुट की ऊंचाई तक ऊंचे हो जाते थे कहीं २ बीच २ में पानी के कूए भी थे जो सत्तर फीट से पांच सौ फीट तक गहरे थे। अगर सावधानी से काम न लिया जाता तो उनके उस रेगिस्तान में समाप्त हो जाने में कोई सन्देह नहीं था। केवल घोड़ों की तेजी और होशियारी पर सब की आशा निर्भर थी। और जो घोड़े राह में गिरे वह वहीं मर कर रह गए। उन का पिंजर वहीं जङ्गल में पड़ा सूखता रहा।

हुमायूं का लेखक इस वृत्तान्त को जो राजिस्थान से विशेषतः और भारतवर्ष से साधारणतः गहरा सम्बन्ध रखता है अत्यन्त हृदय स्पर्शी शब्दों में वर्णन करता है।

"आधी रात के समय हुमायूं घोड़े पर सवार हुआ और अमरकोट की ओर भाग निकला उसका घोड़ा राह की मान्दगी से बेदम होकर गिर पड़ा, और वहीं मर कर रह गया, अतारदबेग अपने घोड़े पर सवार था, हुमायूं ने उससे कहा अपना घोड़ा मुझ को दे दो परन्तु वह इस प्रकार का कमीना और अपस्वार्थी था, और बादशाह का तेज भी कुछ घट गया था कि उसने देने से इनकार कर दिया। राजा

मालदेव की सेना पीछा किये हुए थी। हुमायूं विवश ऊंट पर चढ़ने लगा, निदान नदीम कोला नामी एक मनुष्य ने अपनी माता को घोड़े पर से उतार कर ऊंट पर बैठाया और बादशाह को उस पर सवार कराया। और आप अपनी माता के ऊंट के साथ पैदल चल पड़ा।

"जिस देश में वह इस घबराहट में भाग रहे थे वह पूर्णतः रेगिस्तान था। मुग़ल पानी के कष्ट से महा दुःखी थे। रोने के दुःखदाई शब्द के सिवा और कुछ सुनाई नहीं देता था, उस पर आपदा यह कि शत्रु के प्रतिक्षण निकट पहुंचने की खबर सुनाई देती थी। हुमायूं ने पुरुषों को आज्ञा दी कि ठहर जावो और शत्रुओं से युद्ध करो, स्त्रियां केवल आगे बढ़ें। परन्तु जब शत्रु दिखाई न दिये तो बादशाह भी अपने मनुष्यों समेत चल पड़ा।

"रात का समय था, काफले के कुछ मनुष्य मार्ग भूल गये और प्रभात के समय शत्रुओं ने उन पर आक्रमण कर दिया था। मुग़लों को प्राण भारी थे। निराशा ने उनको विशेष रूप से वीर बना रक्खा था। केवल बीस मुग़लों ने मिलकर राजपूत सरदार को अपने तीर व तेग़ का नशाना बनाया। सरदार के मरते ही राजपूत भाग गए। उनका असबाब ऊंट, घोड़े आदि इन के हाथ लगे।"

"तीन दिन तक लगातार पानी नहीं मिला चौथे दिन एक कूआं दिखाई पड़ा, वह इतना गहरा था कि जब ढोल बजाया जाता तब जाकर पानी खींचने वाले बैलों को खबर होती कि अब डोल कूए' के मुंह पर आया है। परन्तु क्या

किया जाता, आवश्यकता ने विवश कर रक्खा था कि पानी निकाला जावे"।

"लोग पानी के लिए व्याकुल थे प्रथम इस के कि डोल ऊपर आवे बारह मनुष्य उसकी ओर झुके रस्सी टूट गई, डोल का पता न लगा कि क्या हुआ कई मनुष्य मुंह के बल कूएं में गिरे, प्यास की अधिकता से कई मनुष्यों की जीभें बाहर निकल पड़ीं। वह रेत पर वहीं ढेर हो गए। बाज अपने आप कूएं में गिर पड़े और इस प्रकार आत्मघात कर लिया"।

"दूसरे दिन वह पानी तक पहुंचे परन्तु वह भी पहले दिन से कुछ कम कठिन नहीं था उन्होंने कई दिन से पानी नहीं पिया था वह इतना अधिक पानी पी गये, कि उनमें से बहुत से उसी जगह तड़प कर मर गये, मनुष्यों के पेट में भी पीड़ा आरम्भ हुई। आधे घंटे के पीछे बहुत से मनुष्यों का देहान्त हुआ केवल इने गिने मनुष्य बाकी बचे, जो बादशाह के साथ अमरकोट पहुंचे"।

"अमरकोट इस मृत्यु के जङ्गल में नौ किलों में से एक है। विपद् ग्रस्तों के लिये वह स्वर्ग की तरह दिखाई दिया। यद्यपि उसकी दशा यह थी कि वह साधारण ईंटों का एक छोटा सा किला था। कुछ पत्थर के बुर्ज थे और इर्द गिर्द मकानों और झोपड़ों से घिरा था, उत्तर की ओर एक नहर बहती थी। यहां हुमायूं के साथी दिन भर पानी के दर्शनों से अपने नेत्रों को सुख देते रहे। अमरकोट के राजा राना ने विपद् ग्रस्त बादशाह की सेवा और सहायता करने में किसी प्रकार की कोताही नहीं की।

अक्तूबर सन् १५२४ ई० में कोमलाङ्गी हमीदा के गर्भ से अकबर पैदा हुआ था, जो भारतवर्ष में सब से ज़बरदस्त बादशाह समझा गया है। इस बेचारी स्त्री ने सारे दुःख सह लिए। माता और नए उत्पन्न हुए २ बालक को राजा के संरक्षण में देकर हुमायूं ने फिर यात्रा स्वीकार की। शाह फ़ारस की सहायता से उसने कन्धार और काबुल को विजय कर लिया। पता नहीं काबुल की विजय के साथ उसके भाग्य ने कैसा पलटा खाया कि उस समय से वह लगातार कृतकार्य्य होता रहा। उसके विद्रोही भाई एक २ करके या तो मारे गए अथवा देश परित्याग कर गए। शेर खां जिसने दिल्ली में बड़ी चतुरता और बुद्धिमानी से राज्य किया था एक लड़ाई में मारा गया। उसके शुभ नाम प्रतिनिधियों का सिलसिला इतिहास में कोई प्रतिष्ठा नहीं रखता जब इन सब के ऐश्वर्य्य ने अधःपतन (ज़वाल) की अवस्था ग्रहण की तो हुमायूं नदी की बाढ़ की तरह पहाड़ों से नीचे उतरा और पहले पंजाब देश को हाथ में लिया फिर चारों ओर से शत्रुओं को बरबाद करते हुए दिल्ली पर अधिकार कर लिया। छैः मास के पश्चात् उसका पांव जीना से फिसल गया और वह इस संसार से सदा के लिये विदा हो गया।

एक फ़ारसी के कवि ने उसकी मृत्यु के सम्बन्ध में इस प्रकार कहा है:—

"हुमायुं बादशाह अज़बांम उफ़ताद"

यह उसकी मृत्यु की तिथि है। उसके पुत्र की आयु इस समय तेरह वर्ष की थी।

दिल्ली और पंजाब में अकबर के नाम का सिक्का प्रचलित हुआ। इसी काल में उदयसिंह ने भी कोमलमेर से आकर चित्तौड़पर अधिकार किया। यह दोनों नवयुवक शासक थे परन्तु दोनों के स्वभाव में बहुत बड़ा अन्तर था। उदयसिंह के समय में तीस वर्ष तक किसी संग्राम का अवसर नहीं हुआ यद्यपि वह सब से वीर माता पिता का पुत्र था किन्तु प्रत्येक अवसर पर उसने अपने आपको केवल नादान और मूर्ख ही नहीं वरन् कायर भी प्रमाणित किया। वह इतना कायर बन गया था कि लोग कभी २ सन्देह करते थे कि क्या आश्चर्य वह सच मुच पन्ना का ही पुत्र हो परन्तु उसके वीर्य्य से हिन्दू पत महाराना प्रताप जैसे अद्वैत योधा ने जन्म लेकर लोगों के भ्रम को निवारण कर दिया। क्योंकि प्रताप में बापा रावल के सम्पूर्ण गुण कूट २ कर भरे हुए थे।

चार वर्ष तक चतुर और कठोर स्वभाव बैरमखाँ के नैतृत्व (अतालीकी) में रहकर अकबर उसके अधिकार से निकल गया और उसी समय से स्पष्ट रूप से लोगों पर विदित होगया कि यद्यपि वह नवयुवक है किन्तु उसके साथ अनुचित व्यवहार करने वाले की कुशल नहीं है। माता की कठिनाइयों और परिश्रम ने उसके शारीरक बल पर मोहर लगादी थी। अकबर ने हमीदह के मुख से राजपूतों के छल और कपटता की बातें सुनी होंगी। उसने मारवाड़ पर चढ़ाई की और राव मालदेव का गर्व गंवा दिया केवल अम्बर के राजा के विरुद्ध उसने तलवार नहीं उठाई क्योंकि वह स्वयम्

उसके आधीन होगया था और उसको अपनी कन्या व्याह दी थी। यह पहला राजपूत राजा था जिसने राजपूती नाम को कलङ्कित किया था और मुसलमान के साथ इस प्रकार का सम्बन्ध स्थापन किया था।

दूसरे सरदारों की भी बारी २ से खबर लीगई। और उनमें से बहुत से उससे मिल गए, अकबर में मत का पक्ष-पात नहीं था। वह उनकी धार्म्मिक रीतों का सन्मान किया करता था।

जज़ियाः* की रीति बिल्कुल बन्द होगई और हिन्दू यात्री खुले बन्धन अपने तीर्थों को जाने लगे। परन्तु राजपूतों में ऐसे जन भी थे जो उससे मिलना नहीं चाहते थे। उदयसिंह उनमें से एक था जो चित्तौड़ में रहता था, उसका यह ढङ्ग किसी अभिमानी या शान के विचार से नहीं था वरंच वह स्वभावतः सुखमा शील आलसी और नादान था, वह अपने संरक्षकों के अधिकार से निकलकर एक स्त्री के वश में आ चुका था, और जब तक वह उसके साथ थी न वह किसी की परवाह किया करता था, और न राना मेवाड़ के कर्तव्यों की ओर ध्यान देना आवश्यक समझता था, अकबर ने बाज़ बहादुर नवाब मालवा का पीछा किया उदयसिंह ने नादानी से उसे अपने यहां आश्रय दिया, इसका बदला लेने के लिये अकबर मेवाड़ पर चढ़ आया। राना चित्तौड़ में घिर गया

* मुसलमान बादशाहों ने हिन्दुओं पर कर (महसूल) लगाया था कि या तो वह मुसलमान होजांए अथवा कर अदा करें इसी को जज़िया कहते थे।

परन्तु उसने इतना भी तो विचार नहीं किया कि अब क्या करना चाहिए ? उसे न अपने राज्य के बचाने की कोई चिन्ता थी न अपने पूर्वजों की मर्यादा को सुरक्षित रखने की फ़िकर थी।

उदयसिंह की शुल्का (रखैली) स्त्री ने इस बात की ओर ध्यान दिया, इसमें सन्देह नहीं कि वह निर्लज्ज और चञ्चल स्त्री थी परन्तु उसमें अपनी जाति की वीरता और धीरता वर्तमान थी। उसने राना की कायरता देखकर धीर वीर पुरुष की भान्ति कमर कसली, रानी जवाहर बाई की तरह इसने भी सन्नाह पहन ली और अकबर की सेना पर चढ़ दौड़ी। किसी विशेष कारण से अकबर की और जगह जाने की आवश्यकता हुई उसने अपनी फ़ौज़ चित्तौड़ से हटाली। क़िलेवालों ने देखा कि अकबरी दल अपना बोरिया बधना सम्भाले दिल्ली की ओर जारहा है तो उसके आनन्द की सीमा न रही कायर राना ने समझा कि मेरी रखैली स्त्री की वीरता के कारण चित्तौड़ शत्रु से सुरक्षित रहा है।

मेवाड़ के सरदार इस प्रकार की घृणित बातों से बहुत क्रोधित हुए कि क्या हम राजपूतों की तरह चित्तौड़ की इज़्ज़त बचाने के लिये नहीं लड़ते ? परन्तु फिर भी प्रशंसा एक स्त्री की कीजाती है। उनकी आज्ञा से वह साहसी स्त्री मारडाली गई, परन्तु राना ने न तो उस गरीब के बचाने की चेष्टा की न उसका बदला लिया। और यही एक स्त्री थी जो उसको प्यार करती थी या अपना प्रभाव उस पर डालती रहती थी।

मुग़ल इतिहासकार राना की इस छी का निश्चित वर्णन नहीं करते। वह लिखते हैं "सन १५६७ ई० में बादशाह ने चितौढ़ पर चढ़ाई की तीन या चार हज़ार सवार उसके साथ थे तोपखाना और इञ्जीनियर भी साथ थे, चित्तौड़ के किले में रसद का सामान खूब था वह समझते थे किला सर होने वाला नहीं है और इस ख़याल से आक्रमणकारी सेना पर हंसते थे। अकबर के मंत्रियों का भी प्रारम्भ में यही मत था। एक मुग़ल लेखक जो स्वयम् लड़ाई के समय वर्तमान था लिखता है :—

"चित्तौड़ का किला समतल धरती पर बना है उसके इर्द गिर्द बारह मील तक पहाड़ है पूरब और उत्तर दिशा की ओर कठिन पत्थरों से घिरा है। इन दिशाओं से भीतर वालों को किसी प्रकार का भय नहीं है वह केवल पत्थर लढ़काकर शत्रु दल का नाश कर सकते हैं। यात्री कहते हैं कि इस खूबी का किला सम्पूर्ण दुनिया में नहीं है। चोटी पर कई २ छतों के मकानात बने हुए हैं। दीवारें अत्यन्त दृढ़ और शस्त्रागार (असलह ख़ाना) शस्त्रों से परिपूर्ण है"।

अकबर का वासस्थान ऐसी जगह था जिसमें तीस २ फीट ऊंचाई के खम्भे लगे हुए थे। किले की चोटी पर एक अक़ासी दीपक (कुन्दील) बल रहा था। चित्तौड़ की फ़सील के पहरे वाले इस प्रकाश की सहायता से घूमते फिरते दिखाई दे रहे थे। राना का कर्तव्य था कि स्थान प्रतिस्थान में भ्रमण करता हुआ अपने मनुष्यों के साहस को बढ़ाता रहता। परन्तु वह वहां नहीं था। वह पर्वत की ओर भाग गया था, और

चित्तौड़ की रक्षा का काम दूसरों के हाथ में सौंप गया था। परन्तु आवश्यकता के समय मेवाड़ के सपूत योधा चारों ओर से उमंड आए, देश ममता उनको वेग के साथ शत्रु के मुकाबले के लिए ले आई। जयमल राठौर वालिए बदनोर मेवाड़ के राज्यवंश से था, यह महा शूरमा था, पुत्तू केवला का सरदार केवल सोलह वर्ष की आयु का लड़का था, यह चन्द्रावत के वंश से था। राना की अनुपस्थिति में चन्द्रावत का कर्तव्य था कि वह राजमहल व नगर की रक्षा करे। सरदार देवला को अपने पूर्वजों की धरती की विशेषीतः स्मरण थी उसने भी अपने बेटे को भेज दिया था। इनके सिवाय और कितने ही राजपूत रईस आये थे जिनके नाम मिस्टर टाड ने लिखे हैं। यह सब स्फुटिक पद और योग्यता के थे। सब के सब इसी बात पर तुले हुए थे कि किले को मुसलमानों के हाथ से सुरक्षित रक्खें। अपने प्राणों को खपा दें परन्तु चित्तौड़ को सर होने न दें। इन्होंने ऐसा ही किया। एक २ करके सब उसकी रक्षा में काम आए केवल एक मनुष्य जीवित बचा था जिसने पीछे भी कुछ करके दिखाया था।

अकबर अपने हथियार साफ़ कर रहा था और सोच रहा था कि क्या उपाय करूं जिस से शीघ्र किले पर अधिकार हो। उसकी सेना में भारतवर्ष के प्रत्येक प्रान्त के कारीगर, लोहार, बढ़ई, थवई शस्त्रनिर्म्मक आदि मौजूद थे, वह दिन प्रतिदिन किले के ऊपर से गोले बरसने पर भी नगर के समीप पहुंचता गया। कारीगर फुरती से काम कर रहे थे। सम्राट की बातों से अधिक उत्साहवान बनकर मरने मारने के लिए तैयार

थे। सुरङ्गें खोदी जारही थीं और ऐसे २ उपाय किए जारहे थे कि जिस से यवन सेना को जल्द किले पर चढ़ने का अवसर मिल सके। सैंकड़ों मनुष्य रोज़ मरते थे, बाकी लोग उनकी लाशों पर बैठकर काम करते थे। और किंचित् भी अपनी जगह से नहीं खिसकते थे।

किले में घिरे हुए मनुष्यों की दशा बहुत बुरी थी। विपद् के समय राना ने उनका साथ छोड़ दिया था, उसे उचित था कि वह वहां मौजूद रहता परन्तु कायर राना मरने से डरता था। तथापि राजपूतों ने वीरता का परिचय दिया, और चित्तौड़ के लिए रक्त बहाना अपना कर्तव्य समझ रहे थे। किले में एक जगह सुरंग उड़ाई गई राजपूत और मुग़ल गुत्थम गुत्था हुए। मैदान की सेना का दम घुटने लगा, ऊपर वालों ने पत्थर बरसाने आरम्भ किए। लोथों का ढेर लग गया। चन्दावत का सरदार सूर्य्य के फाटक पर लड़कर मर गया। पुत्तू ने उसकी जगह ली। उसकी माता किले में थी वह सोचने लगी, कहीं ऐसा न हो कि नवयुवक पुत्तू अपनी नई व्याहता स्त्री के प्रेम के कारण राजपूती धर्म्म से पतित होजाय। परन्तु यह विचार उसका मिथ्या था चित्तौड़ में छोटे से बड़े तक सब मरने के लिए तैयार बैठे थे। बूढ़े पुरुष अत्यन्त हर्ष के साथ धर्म्म के नाम पर बलि प्रदान होते थे। नवयुवक जिनके अभी दाढ़ी मोछ भी नहीं निकली थी उछल २ कर जान दे रहे थे। विधवा माता और नई दुलहिन ने सन्नाह पहिन लिया और हाथ में भाला लेकर अनेक शत्रुओं को बध किया। स्त्री, पुरुष, युवा, वृद्ध सब साथ २ कट २ कर मरते थे। जहां स्त्रियों में

इतनी वीरता हो कि वह सन्नाह पहन कर युद्ध करें वहां पुरुष कब पीछे रह सकते थे ? चित्तौड़ के इस आक्रमण का वृतान्त राजपूतों के इतिहास में सब से अधिक सराहनीय और सब से अधिक हृदय द्रावक है।

इस समय किले वालों का एक जत्था ऊपर जा पहुंचा अकबर अपने वासस्थान की छत पर बैठा हुआ युद्ध का तमाशा देख रहा था और जब कभी उसकी प्रसिद्ध बन्दूक "संग्राम" के दगने से रात के अन्धेरे में ज्वाला निकलती तो वह प्रसन्न हो जाता, रात की नमाज़ का समय था अकबर गम्भीर चिन्ता से चित्तौड़ की ओर इस तरह देख रहा था जैसे दुष्ट चीता हाथी पर झपट करने के समय ताक लगाकर देखा करता है। उसने बहादुर जयमल राठौर को किले की फसील पर खड़ा देखा और उसी वक्त बन्दूक उठाकर दाग दी। निशाना खाली न गया, वीर जयमल अचानक धोखे में बध हुआ।

अब किलेवालों की आशा निराशा में बदल गई सब लोग अन्तिम क्रिया के लिये तैयार हो बैठे। स्त्रियां मौन होगईं। पुरुषों ने केसरी वस्त्र धारणकर लिए, और सब ने मिलकर पान खाया जो ऐसे अवसर पर उचित समझा जाता है। अकबर ने ऊंचाई पर से देखा कि किले में आग की ज्वाला कभी उठती है और कभी दब जाती है। उसकी सेना समझ गई कि अब जौहर होरहा है जिस ओर से किले की दीवार कमज़ोर होगई थी उस ओर से यवन सेना ने धावा किया, परन्तु चित्तौड़ वालों में अब भी राजपूती साहस बाकी था। केसरी वस्त्र धारण किए हुए राजपूती दल नदी की बाढ़ की तरह उमंड़ता हुआ

शत्रुओं को ध्वन्स करने की इच्छा से आगे बढ़ा. यह उन नेक धार्मिक लज्यावान हिन्दू देवियों के पति बेटे तथा पोते थे जिनके पवित्र शरीर इस समय चिता में जल रहे थे और जिनका धुआं रह २ कर आकाश की ओर उठता था उन्हों ने मर्य्यादा की मृत्यु को मान हानि की जिन्दगी पर उपेक्षा दी। वह खुशी २ चिता में भस्म होरही थीं क्या मजाल उनके मुख से आह! या कोई और शोक शब्द निकल जाय। सब की सब जल कर भस्म होगईं, और दुनिया पर प्रमाणित कर गईं कि उनको मृत्यु का कुछ भी भय नहीं था। राजपूत आगे बढ़े। एक एक इंच धरती रक्त से लाल हुई। वह पेचदार गलियों से निकले और उनका प्रत्येक पग शत्रुओं की लाश पर बढ़ता गया आठ हज़ार राजपूत, नौ रानियां, पांच राजकुमारियां, और असंख्य स्त्रियां इस दिन असाधारण साहस व सच्ची वीरता का दृष्टान्त दिखलाती हुईं संसार से सुरलोक कोगईं :—

दोहा—राजा हो वा रङ्क हो, नर हो अथवा नार।
मुझको तो है वह प्रिया, देश पर हो बलिहार।

हम उनके लिए क्यों रोएं, क्यों आंसू बहाएं, क्यों शोक करें, धन्य है वह आत्मा जो इस प्रकार देश और धर्म्म पर प्राण देते हैं :—

उनके लिए क्या रोते हो, बेजा है यह१ज़ारी।
मां पर हो२तसद्दुक, जो तुम्हें माँ भी है प्यारी।

---

(१) रोना (२) न्योछावर।

मरजाने की हिम्मत दे, तुम्हें एज़्दे[1]बारी ।
तुम मुल्क के काम आओ, तुम्हारी है यह बारी ।
ज़ख़्मेतबर[2] व तीरो[3]सनाँ, सीना[4]परखाओ ।
माँ मुल्क तुम्हारी है, उसे ग़म से बचाओ ।

मई सन् १५६७ ई० अकबर नगर में प्रविष्ट हुआ, चित्तौड़ जो राजस्थान की विशेष भूमि थी अपनी अवस्था से गुज़र चुकी थी । उस दिन से लेकर आज तक फिर किसी राजा ने चित्तौड़ को राजधानी नहीं बनाया, और न फिर कभी मेवाड़ के सपूत योधा चित्तौड़ की रक्षा के लिए एकत्र हुए । राजस्थान के इतिहासिक वृत्तान्त के अवगत और उनके सर्व प्रिय लेखक टाड साहब ने जब उजाड़ और छविहीन राजधानी की धरती में अपना तम्बू खड़ा किया तो उनके धार्मिक हृदय से इन शब्दों की ध्वनि निकली "हा ! किसी समय यह कैसा बसा हुआ था आज उसकी दशा उजड़े हुए वन के समान होगई" ।

प्यारे पाठको ! क्या तुम्हारी मूर्खता, क्या तुम्हारी रीति भ्रान्ति, और क्या तुम्हारी पाशविक दशा ने मातृभूमि को शोभा रहित करने में कोई कसर बाकी छोड़ी है ? कदापि नहीं, फिर तुम किस निद्रा में पड़े हुए हो उठो ! विद्या और ज्ञान लाभ करो । अपने तथा अपने देश के सुधारने का यत्न करो ।

उठ बैठो कहा मान लो इतना नहीं सोते,
इस तरह की गफ़लत से तो दाना नहीं सोते ।

---

(१) परमेश्वर (२) परशा (३) नोक (४) छाती ।

सोते हो तो यह याद रहे हाथ मलोगे,
हम से न हुआ कुछ यही*हसरतसे कहोगे ।
ग़फ़लत न करो देखो खबरदार खबरदार,
यह क़ाम का है वक़ उठो भाइयो हुशियार ।
ख़ाक उड़ती है लू चलती है मैदाने बला में,
क्योंकर तुम्हें नींद आती है इस गर्म हवा में ।

हल्दीघाट का संग्राम ।

वह शेर से जाते थे जो, शमशेर ज़नों पर ।
घोड़े को जो दौड़ाते थे, नावक फ़िगनों पर ।
होती थी फ़िदा रुह कवाँ, सफ़ शिकनों पर ।
ने वां नज़र आते थे, न यां सिर बदनों पर ।
उन तेग़ों से सब फौज ने, मुंह फेर लिया था ।
दो लाख को जांबाज़ों ने, हां घेर लिया था ।

जब अकबर ने चित्तौड़ को परित्याग किया तो चारों ओर तबाही और बरबादी का दृश्य दिखाई देता था मनुष्यों के मन उदास थे । नगर की शोभा जाती रही थी । मन्दिरों व देवालय गिरवा दिए थे । राजपूतों के मन्दिरों की सुन्दरता को

* पश्चाताप ।

जुल्मकर्ता के हाथमें मिटा दिया था। धन सम्पदा को मुसलमान लूटकर लेगए थे जोभाट राजपूत शूरमाओंको युद्ध के लिए तैय्यार होनेकी खुश खबरी सुनाया करते थे मौन होगए थे। देवी के मन्दिरमें कपूर दीपकका जलना बन्द होगया था। विजयी पक्ष ने यहां तक जुल्म किया कि नगर का फाटक भी उतार लेगया और उसको उस नगर के लिए रख छोड़ा जो अकबर के नाम से बसने वाला था।

विजय की बाढ़ चित्तौड़ ही तक नहीं रही रतनम्भूर का किला जिसकी रक्षा के लिए हुमायूं ने करुणावती से इकरार किया था दो लड़ाके राजपूतों के हाथ आगया। इनमें से एक बून्दी का राजकुमार और दूसरा चौहान जाति से था। राव सुरजन वालिए बून्दी इस पर मेवाड़ की ओर से जागीरदार की भान्ति अधिकार किए हुए था। सुरजन अर्जुन का लड़का था जो चित्तौड़ की सहायता में बहादुरशाह के साथ लड़ता हुआ मारा गया था।

अकबर ने कुछ काल तक उसको घेरे रखा परन्तु निष्फल। निदान उसकी और तरफ ध्यान देने की आवश्यकता हो पड़ी। और यदि भगवानदास वालिए अम्बर और उसका भतीजा मानसिंह दोनों धर्म्म से पतित होकर अकबर से न मिल गए होते तो अब भी राना का सूर्य्यमुखी झण्डा उस पर फहराता रहता।

राजा मानसिंह ने समझा सुरजन के साथ सुलह सम्बन्धी बात चीत करने से अकबर का काम सिद्ध होगा उसने लड़ाई बन्द रक्खी और किले में सुर्जुनसिंह से मिलने की प्रार्थना की।

जो खुशी से स्वीकार की गई। मानसिंह थोड़े से मनुष्यों को साथ लेकर किले में गया। सुर्जनसिंह ने बड़े आदर और सन्मानसे उसका स्वागत किया। जिस समय यह दोनों सरदार परस्पर बात चीत कर रहे थे सुर्जन का चचा यकायक अपनी जगह से उठकर उस आशा बरदार की ओर बढ़ा जो मानसिंह के पीछे खड़ा था, और सन्मान पूर्वक आसा उसके हाथ से लेलिया और उसको ऐसे स्थान पर रक्खा जहां किलेदार बैठा करता था सब लोग देर तक आश्चर्य से देखते रहे। बाज़ों ने उन स्याह आंखों और पीले मुख को पहले से देख रक्खा था, और उसकी नाक के बाईं ओर के मसे को भी ताड़ा जो अकबरकी सौभाग्यता का लक्षण समझा जाता था। सबों ने सहज में पहचान लिया कि यह भेष बदले हुए कौन है? उसको पहचानकर सब चिन्ता में पड़ गए। राजपूत महमान पर कभी जुल्म नहीं करते, परन्तु प्रश्न यह था कि इस भयानक शत्रु के साथ किस प्रकार सलूक करें। वह स्वयम् शेर की मांद में चला आया है और उनकी युद्ध की सामग्री और किले की तैयारी की दशा अपनी आंखों से देख चुका है। राजा मानसिंह को क्या कहा जाय जिसने इस प्रकार अपनी जाति को धोखा दिया?

राजपूत यह सोच रहे थे, परन्तु अकबर उसी निश्चिन्ताई से बैठा रहा, उसमें यह एक बड़ी विशेषता थी जिसको प्रत्येक जन प्रशंसा किया करता था। उसने निर्भीकता से पूछा "राजा सुर्जनसिंह अब क्या करना चाहिए"।

राव सुर्जनसिंह उत्तर देने के लिए तैय्यार नहीं था, परन्तु

राजा मानसिंह ने साहस के साथ उत्तर दिया "राना का साथ छोड़ दो रनतम्भूर का किला हवाले करदो और शाही आधीनता की प्रतिष्ठा लाभ करो"।

राजपूत लोग कहते हैं कि इस प्रकार रनतम्भूर का किला अकबर के हाथ आ गया, यह बात समझ में नहीं आती कि राजपूत जैसी उत्कट जाति के मनुष्य किस प्रकार गुलामी के जाल में फंस गए। सच्ची बात यह है कि राजपूताना में अनमेल की आग भड़क उठी थी, प्रत्येक रियासत अपने अपने लाभ की चेष्टा कर रही थी। सम्मिलित लाभ अथवा सम्मिलित मेल का बल दूर हो गया। वह दिन बीत गए थे जब राना सांगा ने सब को अपने झण्डे के तले एकत्र कर लिया था। और जिसका प्रत्येक को शुभदर्प था, परन्तु उदय-सिंह इस योग्य नहीं समझा जाता था कि उसके लिए एक जन भी बलि हो। अकबर की वीरता और धीरता ने राजपूतों के वीरता प्रिय मन को मुग्ध कर लिया था, और साधारण रूप से उनकी आधीनता का यही कारण हो सकता है। इस के सिवाय उसने एक राजकुल कन्या से विवाह भी कर लिया था, और उसको अपने पैतृ धर्म्म के अनुसार उपासना करने की आज्ञा थी। बून्दी ने पूर्ण रूप से मेवाड़ का साथ दिया था, और जिन शर्तों पर अकबर के साथ सन्धी को जा रही थी उनमें कोई बात प्रतिवाद (एतराज़) के योग्य नहीं थी। राव को बावन जिलों पर हकूमत करने का अधिकार दिया जाता था, किसी को उसके काम में मीन मेप करने का अधिकार नहीं था। केवल आवश्यकता के समय उसको शाही सहायता के लिए सेना

भेजने की शर्त स्वीकार करनी थी। बून्दी के किसी सरदार से न भूमि कर (ख़िराज) लिया जाता था न सिन्ध पार लड़ने की आवश्यकता थी। और न बून्दी की किसी राजकुमारी से विवाह की प्रार्थना की गई थी। बून्दी का डङ्का हमेशा दिल्ली के फाटकों पर बजता रहेगा, सरदार को अपने हथियारों समेत दरबार में जाने की आज्ञा थी। और उसको बादशाह के सन्मुख झुकने की कोई आवश्यकता नहीं।

यदि बून्दी के राव ने इन शर्तों को स्वीकार कर लिया तो आश्चर्य की कौन सी बात है परन्तु सावन्तहर ने प्रतिवाद किया। उसने कहा, मैंने रनतम्भूर अफ़ग़ानों से लिया था और बून्दी को इस शर्त पर दिया था कि वह मेवाड़ की जागीर समझा जावे। मैं इस नमकहरामी और साज़िश में शामिल नहीं हूं, और न इन से कुछ लाभ उठाना चाहता हूं। माना मैं दुर्बल हूँ, मेरे पास मनुष्यों की इतनी जथा नहीं है कि जिसके द्वारा मैं बादशाह को हरा कर उसे बचा सकूं। परन्तु मैं राजपूत जाति के नाम पर धब्बा न आने दूंगा, मैं उसकी खाल पर लिख जाऊंगा, कि हरा जाति के राजपूतों के जीते जी रनतम्भूर के किले पर किसी का अधिकार न होने पावे"। यह कह कर उसने केसरी बाना पहन लिया और अपने साथियों समेत अन्तिम पान खाकर किले के फाटक पर आया और असंख्य शत्रु दल को ख़ाक व खून में मिला कर आप भी मर मिटा। उस रोज़ से आज तक जब बर हरा उधर से गुज़रते हैं तो लज्जा से गर्दन नीची कर लेते हैं।

अकबर चित्तौड़ की लूट का माल लिए हुए दिल्ली पहुंचा।

धार्मिक पक्षपात रखने पर भी वह मन का अच्छा था। दिल्ली में महल के फाटक पर उसने जयमल और पुत्तू की अद्वैत वीरता की स्मृति में दो हाथी बनवाए। वह वीरता प्रिय था, और उस समय से लेकर अन्त समय तक बुद्धिमान और चतुर जनरल सलाहकारों में राजपूतों की यथेष्ट संख्या वर्तमान थी।

इस काल में उदयसिंह निर्लज्यता का जीवन व्यतीत कर रहा था। कोई मनुष्य भी उसको सन्मान के योग्य नहीं समझता था। बादशाह के आक्रमण के समय जङ्गलों और पर्वतों में जा छिपा, जब अकबर लौट गया तो वह भी निकल कर बाहर आया। और एक झील के किनारे अपने नाम से नगर बसाया जो अब तक उदयपुर कहलाता है। यद्यपि मेवाड़ के रानाओं में वह सब से अधिक निकम्मा और कायर हुआ है किन्तु मेवाड़ का इलाक़ा अब तक उसके नगर के नाम से प्रसिद्ध है।

उदयसिंह के जीवन की इसके सिवाय और कोई विशेषता नहीं कि उसके २५ पुत्र थे। उसका सब से प्यारा पुत्र जगमल था जिसको वह अपना प्रतिनिधि बनाना चाहता था। न्याय के अनुसार यह अधिकार प्रताप का था जो उसकी पहली हतभाग्य रानी का पुत्र था परन्तु उदयसिंह को इसकी बातें प्रिय नहीं थीं। दूसरा पुत्र सकतसिंह था जो उसकी आंखों में कांटे की तरह खटकता था। एक बार वह उसके प्राण लेते २ रह गया परन्तु उसको सदा के लिए देशत्यागी बना ही दिया।

जब सकतसिंह उत्पन्न हुआ था तो ज्योतिषी ब्राह्मणों ने जन्मपत्री बनाते समय कहा था कि "यह बालक मेवाड़ का

शत्रु होगा और मेवाड़ पर उसके कारण से खराबी आवेगी अस्तु बाल्यकाल से ही सकतसिंह की क्रियाओं की देख भाल आरम्भ हुई। जब वह पांच वर्ष का था और खेल रहा था, तो एक कारीगर ने राना को फौलादी तलवार भेंट की। राना ने उस को रूई के गट्ठे पर आज़माकर पसन्द किया, किन्तु सकतसिंह ने उसी समय निर्भीकता से तलवार हाथ में लेली और यह कह उठा कि "तलवार की परीक्षा रुई पर नहीं वरंच शरीर पर की जाती है"। और उसने अपने हाथ को तलवार से जख्मी कर लिया। तलवार की तीक्ष्ण धारा मांस को काटती हुई हड्डी तक पहुंचगई, परन्तु सकतसिंह न तो रोया और न चिल्लाया बहते हुए खून को बेपरवाही से देखता रहा, फ़र्श थोड़ी देर में रुधिर से लाल होगया। कायर पिता के लिए एक छोटे से बच्चे का असाधारण साहस आश्चर्य्यजनक था, उसने सोचा यह पुत्र अवश्य मेवाड़ की बरबादी का कारण होगा, उसने जल्लादों को आज्ञादी कि सकतसिंह को अभी मार डालो।

जल्लाद उसको मारने के निमित्य लिए हुए जा रहे थे, कि मार्ग में सरदार चन्दावत ने उसे देख लिया, और जब उसको सारा वृतान्त मालूम होगया। उसने जल्लादों से कहा "लड़के को मुझे देदो मैं राना से इसको मांग लूंगा"। जल्लाद उसके पास लड़के को छोड़ गए। उसने राना के पास जाकर निर्भीकता से प्रार्थना की "मैं निस्सन्तान हूं, सकतसिंह मुझे दिया जाय, मेरे पीछे वह चन्दावतवंश का अगुआ होगा"।

उदयसिंह मेवाड़ के सब से ज़बरदस्त रईस की प्रार्थना को अस्वीकार न कर सका, वह वृद्ध राजपूत लड़के को अपनी

गोद में उठा लेगया। और सलोम्बरा में लेजाकर उसका पुत्रवत् लालन पालन किया।

चित्तौड़ के शाका के ४ वर्ष पश्चात् उदयसिंह ने संसार से कूच किया। देश में उसके मरने पर कुछ बहुत शोक नहीं किया गया। बसन्त ऋतु के शिकार का समय आगया था, इस ऋतु में मेवाड़ के सरदार शूकर का शिकार खेलते हैं और राना रङ्ग २ के वस्त्र उन्हें वितरण करके आप भी उनके साथ शिकार खेलता है परन्तु उदयसिंह मरणकाल की दशा में पहुंचा था, सरदार उसके पलङ्ग के इर्द गिर्द जमा थे। उसने मरने से प्रथम जगमल को राना नियत किया। और प्रताप का कुछ भी ख्याल नहीं किया। रीति के अनुसार उसकी लाश पुरोहित के घर पहुंचा दीगई। जब पुरोहित लाश को अपने घर लेजाकर अन्तेष्ठि क्रिया करता है तो महल में नए राना का राजतिलक किया जाता है।

उदयसिंह की मृत्यु के समय जो जन उनके पलङ्ग के इर्द गिर्द खड़े थे उनमें उसका साला सानी गौरा का सरदार भी मौजूद था जिसकी बहिन प्रताप की माता थी। जब उसने राना के बचन सुने तो उसकी आंखों में खून उतर आया। उसने चन्दावत के सरदार को सम्बोधन करके कहा "क्या आप लोग इस प्रकार के अन्याय को होने देंगे" ? चन्दावत ने दूसरे सरदार से कहा, जब मरने के समय मनुष्य दूध मांगता हो तो उसकी इच्छा क्यों न पूरी की जाय मैं सानी गौरा के भानजे प्रताप का सहायक बनता हूं"।

तथापि राजगद्दी पर बैठने की तैयारी जगमल ही के

लिए होती रही। सब सरदार जगमल के राजगद्दी पर बैठाने के उत्सव के देखने के इच्छुक थे। प्रताप ने देखा कि जगमल की आधीनता में उसका जीवन व्यतीत करना कठिन होगा इसलिए उसने अपने साथियों समेत कूच करने की तयारी की वह समय निकट था कि सूर्य्यमुखी झण्डे के तले जगमल विराजमान हो और सरदार चन्दावत उसकी कमर से तलवार बांधे। एक ओर सरदार चन्दावत और दूसरी ओर तीवर जाति का सरदार खड़ा था, यह वह योधा था जो चित्तौड़ के संग्राम में अकेला बचा था।

चन्दावत ने जगमल का हाथ पकड़कर कहा "राजकुमार आप अनुचित करते हैं यह अधिकार आपका नहीं वरंच आपके भाई प्रताप का है"!

प्रथम इसके कि जगमल इस विषय में अपना क्रोध या हर्ष प्रगट करता उसे बल पूर्वक तखत के समीप एक जगह बिठा दिया गया और राना प्रताप को बुला भेजा। उसके आने पर चन्दावत ने आनन्द पूर्वक उसकी कमर से तलवार बांधी और तीन मर्तबा झुककर दण्ड प्रणाम किया। उपस्थित जनों ने जयकार का शब्द उच्चारण किया।

प्रताप ने इस प्रकार राजकुमारकी पदवी से निकलने और "हिन्दुओं के सूर्य्य बनने" और राना मेवाड़की गद्दी पर विराजमान होने का कुछ भी आश्चर्य्य अथवा अभिमान प्रगट नहीं किया। ज्यों ही कि राज्यगद्दी पर बैठने की रीति पूरी होगई त्यों ही राना प्रताप ने दरबारियों और मंत्रियों को सम्बोधन करके कहा "यह वसन्त ऋतु है घोड़ों की ज़ीन कसआ दो

जाय, और देवी के नाम पर शूकर का बलिदान किया जाय ताकि इस वर्ष के लिये अच्छा शकुन उत्पन्न हो"। राना और उसके साथी घोड़ों पर सवार हुए उनके सिरों पर हरे दुपट्टे बंधे थे। उस दिन राजपूतों ने इतना अधिक शिकार किया कि उनके हृदय आनन्द से भर गए।

राना प्रताप कहा करता था "हां! मैं राना सांगा का लड़का होता और उदयसिंह हमारे मध्य में न आया होता तो तुर्कों को राजिस्थान की ओर मुंह करने का साहस न होता"। वह मेवाड़ को स्वतंत्र करने की चिन्ता में प्रवृत हुआ परन्तु प्रगट रूप से इस इच्छा के पूर्ण होने का कोसों पता नहीं था। उसके विरुद्ध केवल शाही सेना ही काम नहीं करती थी प्रत्युत दूसरी राजपूत रियास्तें भी शत्रुता पर कमर बांधे हुए थीं। मारवाड़, बून्दी, अम्बर, बीकानेर के राजे दिल्ली के गुलाम होचुके थे। और उनमें से जातीय मान और मर्य्यादा इतनी घट गई थी कि बून्दी के सिवाय सब ने अपनी २ लड़कियां तुर्कों को व्याह दी थीं। स्वयम प्रताप का भाई सुगर अकबर से जाकर मिल गया था। अकबर ने उसे गांव धरती और जागीर दी थी। और सुगरावत तथा उसकी सन्तान का दरबार में बड़ा सन्मान किया जाता था। अन्तिम शाका के कारण मेवाड़ धन और मनुष्यों से ख़ाली होगया था। केवल प्रताप ही का साहस था कि इस कङ्गाली पर भी अपनी मर्य्यादा को स्थिर रक्खा। यदि और मनुष्य होता तो खुशी से बादशाह के आधीन बनकर संसारिक सुख और आनन्द को लाभ करने की इच्छा करता।

प्रताप मेवाड़ के निवासियों को स्वतंत्र रखना चाहता था। चाहे शत्रु पर प्रबल न आयें, परन्तु वह लूट मार मचाते रहें। और दिल्ली वालों का नाक में दम किए रहें। उसने सौगन्द खाई कि जबतक तुर्कों को मेवाड़ से नहीं भगा दूंगा और चित्तौड़ की पिछली महानता को लौटा नहीं लाऊंगा तबतक मैं कभी चैन न लूंगा।

उस समय से जङ्गी डङ्का जो हमेशा राना की फौज के आगे बजा करता था पीछे रहने लगा। जब तक राना इस अपिमान के कलंक को दूर न कर लेगा, और विजय उसके पांव चुम्बन न करेगी यह ठाट बाट के समान कदापि न रक्खे जांयगे। चांदी सोने के बरतन राना के भोजन भण्डार से पृथक कर दिये गये, प्रताप और उसके साथी उस समय तक बराबर पत्तों पर खाते रहेंगे, जब तक चित्तौड़ के माल को वापस न लावेंगे उसने सुन्दर नरम बिछौना त्याग दिया। और पयाल पर सोने लगा, और जब तक उसका घोड़ा शत्रु के हयशाला में न बंधेगा वह इसी प्रकार पुराल पर सोया करेगा उसके और उसके साथियों की दाढ़ी मोंछ में उस समय तक कैंची न लगेगी न वह बाल बनवाएगा जब तक चित्तौड़ फिर राजिस्थान की रानी न बन लेगी। उसने उदयपुर छोड़ दिया और कोमलमेर को राजधानी बनाया। आज से उसका और उसके साथियों का घर या तो किले में अथवा खुले मैदान और ख़ीमे में होगा। महलों में निवास करने का सौगन्द है।

सब से पहला काम उसका यह था कि उसने अपने भाई सकतसिंह को बुला भेजा, जिस सरदार ने सकतसिंह को अपना

धर्म्म पुत्र बनया था बुढ़ापे में उसके कई पुत्र हुए । सकतसिंह सलोम्बरा में रहने में प्रसन्न नहीं था। वह आनन्द पूर्वक प्रताप के पास चला आया, भाई ने भाई को गले से लगा लिया। पहिले पहल यह दोनों बड़ी प्रीति से रहते थे परन्तु कुछ काल में पुराना रोग फिर उभरने लगा और सांगा व पृथ्वीराज की तरह इनमें भी छोटा भाई बड़े भाई से ईर्षा करने लगा और अपने आप को मेवाड़ की हकूमत के योग्य समझने लगा। क्रोध की दशा में अनुचित शब्द मुख से निकालने लगा। हृदयों में दिन प्रतिदिन अन्मेल बढ़ता गया। अन्त में एक दिन सकत ने कहा, "आओ आज घोड़ों पर चढ़कर तलवारों के द्वारा इस झगड़े को निबेड़लें"।

प्रताप तैयार होगया। कदाचित् इस कारण से कि उसका दादा अभयसिंह पर्वत पर इसी प्रकार गया था। राजपूती धर्म्म के अनुसार दोनों देर तक इस बात पर अड़े रहे कि पहले कौन वार करे। दोनों एक दूसरे से वार करने के लिए अनुरोध करते थे निदान यह स्थिर हुआ कि दोनों एक साथ अपना २ वार करें। वह तैयार ही थे कि इतने में राज पुरोहित दौड़ता हुआ आया और दोनों से इस अनुचित युद्ध के बन्द करने की प्रार्थना की।

दोनों के नेत्र क्रोध से लाल थे अब हटने या मिलाप करने का समय कहां रहा था? भाले हाथ में लेकर वह एक दूसरे पर झपटे। पुरोहित रोकना चाहता था उसने बीच में खड़ा होकर अपनी छाती में छुरा घुसेड़ लिया और उसी जगह अपने राजकुमारों पर न्योछावर होगया।

यह हृदय कम्पित बलिदान ऐसा नहीं था कि इसके प्रभाव उनके हृदयों पर न पड़ते। वृद्ध ब्राह्मण के आत्मत्याग ने उन दोनों के हृदयों को कम्पा दिया। दोनों ने अपने घोड़े थाम लिए और पृथिवी पर कूद पड़े। उसके प्राण बचाने की चेष्टा करने लगे परन्तु उसके प्राण पखेरू उड़ चुके थे। सूना पिंजरा रह गया था जो दोनों को जिह्वा दशा (ज़बाने हाल) से कह रहा था कि मुझ में वास करनेवाला पक्षी तुम दोनों पर न्योछावर होगया।

उसने अपने रुधिर की एक ऐसी नदी बहादी कि दोनों में से किसी को भी उसके लांघने का साहस नहीं हुआ। जब प्रताप का चित्त स्थिर हुआ तो उसने सकत को कहा, "मेरे सामने से हमेशा के लिये चले जावो" सकत ने ठट्ठा पूर्वक स्वीकार करके दिल्ली की ओर घोड़ा दौड़ाया। उस दिन से प्रताप ने एक भाई को खोदिया और बादशाह ने एक और मित्र पाया।

यद्यपि रिश्तेदारों ने उसका साथ छोड़ दिया था परन्तु उसके सरदारों में से बहुत से जन अन्त समय तक उसकी मित्रता का दम भरते रहे। सरदार चन्द्रावत ने राजगद्दी पर बैठने के दिन से लेकर अन्त समय तक उसका साथ दिया। जयमल और पुत्तू के लड़के भी अपने पिता के पद चिन्ह पर चले। अकबर ने उन्हें अनुचित प्रलोभन भी दिया परन्तु सिंह पुरुषों ने भूलकर भी उस तरफ को मुंह नहीं किया। और अपने स्वामी की सेवा में ज्यों के त्यों लगे रहे।

दूसरी बार फिर उसी विधि से काम लेना आरम्भ किया

गया जिसने राना हमीर को अलाउद्दीन की सेना पर विजय दिलाई थी, सम्पूर्ण मेवाड़ में घोषणा की गई कि राना प्रताप पहाड़ों पर निवास करेगा जो उसके शत्रुओं में शामिल होना नहीं चाहते वह उसके साथ चलकर रहें। खेत बनजर होगए, धरती बिना जोती पड़ी रही। पशुओं को अरवली पहाड़ की उपत्तिकाओं में हांक लेगए जहां किसी को पीछा करने का साहस नहीं हो सकता था। नगर गांव कसबे निर्जनता से उजाड़ होगए। घर एक २ करके सब गिर पड़े। और बन के हिंसक पशुओं ने उन घरों में अपनी मांदें बनाईं जिनमें पहले राजपूत सरदार रहा करते थे। मार्ग साधारण मनुष्यों के चलने योग्य न थे, जहां पहले सड़कें बनी हुईं थीं वहां अब कांटे उगे हुए थे। बादशाह के नौकरों को ऐसी जगह न तो कहीं खाने पीने का सामान मिलता था और न उनके घोड़ों के लिये चारा मिलता था। समय पाकर राना कोमल मेर और दूसरे किलों से बाढ़ की तरह उतर आता था और उन काफिलों को लूट लेता था जो सूरत से अकबर के लिए बहुमूल्य नज़र भेंटें और सौदागरी का माल व असबाब लाते थे, कभी २ वह मैदान में आकर देखता रहता था कि कहीं किसी को पशु चराने या खेती बारी करने का साहस तो नहीं हुआ जिन के उजाड़ रहने की वह आज्ञा देचुका है।

एक समय का वर्णन है कि एक ग़रीब गडरिया अपनी भेड़ बकरियों की डार (गल्ला) चरा रहा था, उसने सोचा था कि यहां आकर कौन देखेगा, परन्तु राना वहां पहुंच गया उससे कुछ प्रश्न करने के पश्चात् उसकी लाश वृक्ष में

लटका दी गई ताकि दूसरों को भय हो और वह राजा की आज्ञा भङ्ग करने का साहस न कर सकें।

अकबर इन सब बातों को घृणा की दृष्टि से देखता था। वह राना के साथ सदा के लिए शत्रुता नहीं रखना चाहता था उसकी इच्छा यह थी कि प्रत्येक जाति और मत के मनुष्य उसके आधीन रहें और राजपूत विशेष कर उसकी प्रजा में सब से अधिक सन्मान के पात्र समझे जाते थे। टोडरमल वज़ीर माल राजपूत था। भगवानदास और मान-सिंह आदि कई सेनापति राजपूत थे। उसने हिन्दुओं के धार्म्मिक नियमों के विरुद्ध आज्ञा देना बन्द कर दिया था। बाल्यविवाह पशुओं की बलि और ज़बरदस्ती स्त्रियों का भस्म करना उसके समय में बन्द था। उसके ख़ास महल के भीतर हिन्दू बेगमों को अपनी धार्म्मिक पूजा करने की आज्ञा थी। और उसकी प्रजा में से किसी को गऊ बध करने की आज्ञा नहीं थी। रजवाड़े उसका सन्मान करते थे। हिन्दुओं के साथ नम्रता का बरताव करने से उसने कट्टर मुसलमानों को अप्रसन्न कर लिया था, परन्तु इन सब बातों के होने पर भी राना को अपने देश की स्वतंत्रता और स्वाधीनता प्यारी थी। और चित्तौड़ के आक्रमण में अकबर ने उन पर जो ज़ुल्म किए थे मेवाड़ के राजपूत उनको कुछ भी नहीं समझते थे।

जिस घटना ने प्रताप के विरुद्ध अकबर को इस दृढ़ता से तयार किया उसकी व्याख्या राजपूत लेखक इस प्रकार करते हैं:—

"मानसिंह अम्बर का राजा अकबर की ओर से काबुल

को विजय किए हुए आरहा था, जब वह मेवाड़ की सीमा से गुज़रा तो महाराना प्रतापसिंह को कहला भेजा कि आज्ञा हो तो मैं प्रणाम करता जाऊं। इसमें सन्देह नहीं कि राना प्रताप उस समय निर्धन और कङ्गाल था परन्तु फिर भी वह राजपूत जाति के छत्तीस कुलों में सब से श्रेष्ठ समझा जाता था। उन दिनों वह कोमलमेर में रहा करता था उसने उत्तर दिया मैं उदयपुर की झील के समीप आप से मिलूंगा। जब मानसिंह अपने साथियों समेत वहां पहुंचा तो मेवाड़ के सरदारों और राना के पुत्र अमरसिंह ने उसका स्वागत किया। भोजन के समय भी राना न आया अमरसिंह ने कहा उनके सिर में दर्द है उनकी ओर से मैं ही आपका सन्मान करूंगा।

अमरसिंह और अन्य उपस्थित सरदार जानते थे कि मान सिंह ने अपनी बहिन अकबर को व्याह दी है इसलिए राना उसके साथ बैठकर नहीं खा सकता। मानसिंह ने कहा राना से कहो मैं उसके सिर के दर्द का कारण जानता हूं मैं और किसी के साथ खा नहीं सकता। जब तक राना न आवेगा मैं कदापि अन्न ग्रहण न करूंगा"।

इसके उत्तर में राना ने यह कहला भेजा "उसने तुर्कों को अपनी बहिन व्याह दी और जो तुर्कों के साथ मिलकर खाता है मैं उसके साथ खाना उचित नहीं समझता"।

क्रोध के मारे मानसिंह ने भोजन त्याग दिया और अपने साथियों समेत वहां से उठकर क्रोध के साथ कहा "तुम्हारे हाथ से सिवाय उन चावलों के जो अक्षतरूप देवताओं पर चढ़ाए जाते हैं और कुछ न लूँगा। हमने तुम्हारी मर्य्यादा बचाने के

लिए अपनी मर्य्यादा निवछावर कर दी और अपना बांह तथा लड़कियां तुर्कों को दे दीं यदि तुम विपद में रहना चाहते हो तो तुम्हारी इच्छा, यह देश तुम्हारी रक्षा ख़ाक करेगा"।

उसका इशारा पाते ही अस्तबलवालों ने घोड़ों पर जीन बांधी और जब चलने को उद्यत हुए तो स्वयम महाराना प्रताप आया। उसके शरीर पर निछोर (खराश) लगे हुए थे वस्त्र फटे और पुराने थे परन्तु फिर भी उसके तेजोमयमुख और चमकते हुए ललाट से प्रगट होता था कि प्रताप हिन्दुओं का सूर्य्य और राजाओं का राजा है। उसके देखते ही मानसिंह का क्रोध भड़क उठा उसने कहा 'मेरा नाम मानसिंह है तो मैं तुम्हारे मान को भङ्ग करके छोड़ूंगा।

सिंह पुरुष ने शान्ति से उत्तर दिया जब इच्छा हो आओ मुझे हरदम तय्यार पाओगे" । जत्थे में प्रत्येक स्वभाव के मनुष्य होते हैं राना के साथियों में से एक ने उच्च स्वर के साथ मानसिंह को सुनाकर कहा अब की आना तो अपने बहनोई को भी लेते आना"।

ज्यों ही मानसिंह और उसके साथी चले गए। उस धरती पर जहां वह बैठे थे गङ्गाजल छिड़का गया ताकि छूत और अपवित्रता दूर होजाय। मेवाड़ के सरदारों ने स्नान किया नवीन वस्त्र धारण किए । तब वह कोमलमेर की ओर गए। इसकाल में अपमानित राजा ने अकबर से जाकर अपने दुःखों का वर्णन किया । और जो २ बातें कही गई थीं वह एक २ करके सारी सुनाईं । परिणाम यह हुआ कि अकबरी सेना

प्रताप को दण्ड देने के लिए आई । और एक अर्थ में मानसिंह अकबर को भी साथ लाया, दिल्ली की सेना शहज़ादा सलीम की अध्यक्षता में राना प्रताप के सन्मुख आई । मानसिंह भी मन्त्री और सहायक बना हुआ साथ था । धीरे २ मुसलमानी सेना ने चारों ओर से वीर राना को घेर लिया और वह उदयपुर के ज़िले में अस्सी मुरब्बा मील के घने जङ्गल में जहां जगह २ पर पहाड़ी झरने बहते थे बन्द होगया । धरती ऊंची नीची थी वहां सेना किसी प्रकार विश्राम नहीं कर सकती थी । एक जगह पहाड़ी की उपत्यिका में कुछ धरती समतल होगई थी इसी में से एक राह पहाड़ की वादी की ओर गई थी, इसका नाम हलदीघाट प्रसिद्ध है । यह प्रताप का सब में अन्तिम आश्रय स्थान था । इसी जगह दोनों सेनाएं आमने सामने हुईं । यह जौलाई सन् १५७६ की घटना है ।

प्रताप अपने प्यारे घोड़े चेटक पर सवार हुआ । उसके सिर पर राजसी छत्र लगा हुआ था । और सूरज का निशान पीछे २ रहता था । उसके बंश की रीति के अनुसार भेष बदल कर मैदान युद्ध में लड़ने की आज्ञा नहीं थी । जो कोई ऐसा करता वह कायर समझा जाता था । और उसकी क्रिया राजपूती धर्म्म प्रतिकूल समझी जाती थी । तोपखाना, बन्दूक और लड़ाई के अन्य सामान जो शहज़ादा अपने साथ लाया था, बहादुर राजपूतों की दृष्टि में कोई चीज़ नहीं थे उसका भरोसा अपने बाहूबल पर था । परन्तु इस युद्ध में भाई के विरुद्ध भाई और रिश्तेदार के विरुद्ध नातेदार खड़े किए गए थे । गृह त्यागी सकलसिंह भी मुसलमानी सेनामें शामिल था ।

महाबत खां प्रताप का भतीजा और उसके सगे भाई सुगर का लड़का सब लड़ने को आये हुए थे। सलीम स्वयम् राजपूतनी माता के पेट से था। उसकी बगल में मानसिंह अम्बर का राजा था। प्रताप ने कहा, "चाहे कुछ ही परिणाम क्यों न हो मानसिंह को जाति द्रोह (क़ौमी नमक हरामी) का स्वाद चखाना चाहिए"।

महाराना प्रताप की ओर केवल बाइस हज़ार राजपूत थे, परन्तु असली और बांके राजपूत थे। तलवार को उनसे और उनको तलवार से शोभा थी। इनमें थोड़े से हमेशा के वफ़ादार भील भी शामिल थे। किन्तु अकबरी सेना के आगे यह किस गिन्ती में थे? हाथी और मच्छर की लड़ाई थी। कई लाख का दल एक ओर और बाइस हज़ार एक ओर! इस पर भी यह आफ़त की जङ्गली भील मैदान में लड़नेसे झिझकते थे। इस प्रकार की लड़ाई उनके वंश के नियम के विरुद्ध थी। वह ऊपर पहाड़ों के दर्रों में वृक्षों की ओट में पीछे छिपे बैठे थे और वहां ही से शत्रुओं पर तीरों की वर्षा कर सकते थे अथवा पत्थर फेंक कर उनका सिर तोड़ना जानते थे। उनमें फ़ौजी शिक्षा व कवायद दानी कहां थी?

जहां तक कहावतों से पता लगता है पहले दिन दोनों ओर से किसी ने भी अच्छे फौजी कर्तब नहीं दिखलाए। मुसलमान पहाड़ी पर अधिकार करना चाहते थे क्योंकि वह सरे पहाड़ की कुञ्जी थी राजपूत उसकी रक्षा पर तुले बैठे थे। लड़ाई अवश्य कठोर हुई झण्डा स्वयम रुधिरके फव्वारों से

लाल होगया था। राना का छत्र दिखाई देता था प्रताप चारों ओर बरबादी मचा रहा था उसको अपने प्राणों का कुछ भी भय न था उसकी इच्छा यह थी कि मानसिंह कहीं मिल जाय तो उसको अपनी तलवार के जौहर दिखाए। जब वह इस प्रकार निर्भीकता से तलवार चलाते हुए मैदान में लड़ रहा था तो उसने सुनहरे हौदे वाले हाथी को देखा। शहज़ादा सलीम इस हौदे में बैठा हुआ था, बस फिर क्या था सिंह के समान गर्जकर उसकी ओर झपटा। उसके साथी राजपूत सरदारों ने भी उसका साथ दिया। एक क्षणमात्र में राजपूतों की तलवारों ने शाही सिपाहियों को काटकर गिरा दिया प्रताप का घोड़ा बहादुर चेटक हाथी के सन्मुख पहुंचा, महावत मारा गया और सलीम यदि फौलादी हौदे के भीतर न छुपा होता तो प्रताप की तलवार ने आज अकबर के बंश का दीपक बुझा दिया होता। लड़ाई प्रति क्षण भयानक होती गई दिल्ली की सेना सलीम को बचाने के लिए हाथी के गिर्द आगई। मेवाड़ के सपूत शूरमा राना के इधर उधर थे प्रताप के शरीर में तीन घाव भाला के, तीन घाव तलवार के और एक घाव गोला का लगा था। इस पर भी अद्वैत वीर घोड़ा उड़ाता हुआ हाथी के पास पहुंचा महावत का हाथ कट चुका था आंकुश धरती पर गिर पड़ी थी। हाथी घबरा कर भाग निकला और शहजादा को बचा लेगया।

सलीम के सकुशल निकल जाने के पश्चात् मुसलमानी सेना राना प्रताप पर आकर गिरी। शत्रुओं की संख्या बहुत अधिक थी। राना तीन बार घिर गया। और धरती पर

गिरते २ बच गया। सरदार झालावाड़ ने जो उसके पास लड़ रहा था सूर्यमुखी निशान ज़बरदस्ती अपने हाथ में ले लिया शत्रुओं का ज़ोर उसकी तरफ होगया उन्होंने समझा झण्डा राना के साथ रहता है इसलिए यही राना है प्रताप रणक्षेत्र में आज ही स्वाहा होजाना चाहता था, किन्तु साथियों ने उसके घोड़े की लगाम पकड़ ली और ज़बरदस्ती रणक्षेत्र से बाहर खींच लेगए। झाला नरेश बराबर शत्रुओं से लड़ता रहा। बापा रावल की सन्तान में कदाचित ही किसी ने इस प्रकार शत्रुओं के दान्त खट्टे किए होंगे। वह निर्भीकता से सिंह की भान्ति लड़ता रहा, मरते २ उसने हाथ से पांव से और तलवार के घाव से अनेक शत्रुओं का नाश किया। अन्त में उस अकेले शूरमा को अनेक यवनों ने मिलकर इस प्रकार वध किया जैसे घायल सिंह को चींटियों का समूह लपट जाता है। उसके १५० साथी भी वीरता से लड़ते हुए सुरलोक को सिधारे और अपने प्यारे स्वामी का मरते समय तक साथ दिया। सरदार तोंवर जो चित्तौड़ संग्राम में अकेला बचा था इस युद्ध में काम आया। उसका पुत्र उसके नातेदार और प्रताप के ५०० प्यारे सम्बन्धी सब रणक्षेत्र में जूझ गए बाइस हज़ार राजपूतों में से केवल आठ हजार जीवित बचे।

रणक्षेत्र से दूर बिना किसी साथी वा सहायक के प्रताप घोड़ा उड़ाए हुए जा रहा था ताकि किसी जगह पहुंच कर विश्राम करे। राजपूत लड़ते हुए आते थे ताकि शत्रुओं को राना का पता न लगे। यह वफ़ादारी यह स्वामी भक्ति, यह नमक हलाली कहां देखी गई है। प्रताप मन ही मन में

पछताता था "मैं क्यों न आज मेवाड़ के काम आगया, इससे अच्छा मरने का दिन अब कौनसा आवेगा" फिर उसने सोचा नहीं अमर सिंह किसी काम का नहीं, मेरा कुछ दिनों के लिए जीवित रहना नितान्त आवश्यक है। ताकि मेवाड़ राज्य को हानि न पहुंच सके। चेटक वायु से बातें करता हुआ चलाजा रहा था राह में घोड़ों के टापों का शब्द सुनाई दिया। राना ने मुंह फेर कर देखा दो सवार पीछा किए चले आरहे थे और तीसरा उनसे थोड़े फ़ासले पर था।

चेटक बहुत घायल और बलहीन होगया था परन्तु राना ने उसकी अयाल पर हाथ रक्खा और वह उसी समय हवा होगया। वह बराबर घोड़ा दौड़ाए हुए जा रहा था, रास्ता पग २ पर कठिन था निदान वह एक नाले के समीप पहुंचा जो पहाड़ के किसी झरने से बह रहा था। चेटक ने अपने पांव झाड़कर ऐसी छलांग मारी कि अपने सवार समेत पार होगया, पीछे आने वाले सवारों के घोड़े रुक गए, वह नाले को छलांग मारकर लांघ न सके, पत्थर चिकने थे सवार भी गिर जाने से डरते थे। इसके भिन्न उन्हें इस बात का भी भय था कि वह एक प्रसिद्ध असाधारण शूरका का सामना करने जारहे थे, उन्होंने सोचा जब तक और मनुष्य न आ लेवें तब तक ठहर जाना चाहिये।

प्रताप घोड़ा बढ़ाए हुए चला गया, उसका शरीर घायल था, घाव बहुत बेढब लगे थे। शोक! कि चेटक की शक्ति क्षण-प्रतिक्षण घटती जाती थी। निकट था कि वह वहीं गिरकर मरजाय, इतने में एक मनुष्य का शब्द सुनाई दिया अब आगे

जाना कठिन था वह आप भी बहुत घायल था, राना ने गर्दन मोड़ कर देखा।

एक परिचित शब्द की भनक मेवाड़ी लहजे की कान में पड़ी "ओ नीले घोड़े के सवार! क्या तू नहीं बतावेगा कि प्राण बचाने के लिए भागते समय मनुष्य किस प्रकार घबरा जाता है"।

प्रताप का कंठ रुक गया क्योंकि यह शब्द उच्चारण करने वाला स्वयम् सकत उसका भाई था जो शत्रुओं से मिल गया था उसके सामने आकर खड़ा होगया। पर किस लिए? क्या आज उस झगड़े के भी निपटने का दिन था जिसके रोकने के लिए बेचारे ब्राह्मण ने अपने प्राण दिये थे। ज्यों ही प्रताप ने लाश को रोका चेतक के प्राण उसकी रानों के नीचे निकल गए। मुर्दह लाश पृथ्वी पर गिर पड़ी। वफ़ादार पशु! तेरी मौत कैसी मुबारक थी।

सकत ने खुशी से कहा भाई! तुझ को पीछे देखने की आवश्यकता नहीं है। खुरासान और मुलतान के दोनों सरदार नहर पर मुर्दह पड़े हैं अब उनसे तुझ को कोई भय नहीं है।

ज्योंही यह शब्द असाधारण भ्रातृ भाव के साथ उसके मुख से निकले। त्योंही पिछली शत्रुता आप ही आप पिघल कर बह गई। दोनों भाई एक दूसरे के गले से चिमट गए। "सकत ने कहा मैंने आप को अकेले भागते हुए देखा और मेरा खून जोश में आया, सहायता की इच्छा से मैं यहां तक चला आया मैंने खुरासान और मुलतान के सरदारों को नहर

पर मार डाला, मेरा घोड़ा ले लो कुशल पूर्वक प्राण बचा ले जाओ। मैं कुछ काल के लिए यवन सेना में जाता हूं परन्तु शीघ्र ही तुम से आकर मिलूंगा।

प्रताप को कठिनता से निश्चय आया कि यह सकत के शब्द हैं उसने जीन खोल कर फिर से बांधी, घोड़े की मृत्यु अथवा बिछुड़े हुए भाई पर अधिक बात चीत का अवसर ही नहीं था।

सकत के घोड़े पर चढ़कर वह और आगे को फिर चल पड़ा। सकत पैदल अकबरी सेना की ओर लौटा।

सेना में पहुंचकर उसको सलीम के सामने बहुत सी बातें बनानी पड़ीं। उसने उत्तर दिया मैंने बादशाह के द्रोही को भागते हुए देखा खुरासानी और मुलतानी सरदार उसके पीछे दौड़े ताकि उसे कैद करके लशकर में ले आवें। दुर्भाग्य से शत्रु ने दोनों को मार डाला और मैं भी मरते २ बच गया। मेरा घोड़ा मारा गया। इसी लिए पैदल आने में देर हुई। यह देखिए! पाव में छाले पड़े हुए हैं"।

सलीम का स्वभाव चञ्चल और निर्दई था, परन्तु उसमें अपने पिता की उदारता और स्वतन्त्र प्रियता भी थी। और वह मनुष्य की बातों को सुनकर उसके असली भेद तक पहुंचने की शक्ति रखता था, उसको सकत की बात पर विश्वास नहीं आया उसने उसे धैर्य देकर पूछा।

"मैं सौगन्द खाता हूं तेरा अपराध क्षमा कर दूंगा परन्तु सच २ बतादे असलियत क्या है।

राजपूत पूर्वजों और पित्रों का खून सकत के हृदय में

उमगड़ आया. और उसने उत्तर दिया, "राज्य का भार मेरे भाई के कन्धों पर भारी है कैसे सम्भव था मैं उसको विपद् में देखता और उसकी सहायता न करता"।

इसका परिणाम यह हुआ कि सलीम ने सकत को अपनी सेना से निकाल दिया और वह जिन दिनों प्रताप उदयपुर की झील के निकट बांस की झोपड़ी में रहता था आनन्द पूर्वक अपने भाई से आकर मिला, दिल्ली से उसका सम्बन्ध कट गया, उसकी इच्छा हुई कि वह मेवाड़ राज्य की सेवा करे। खाली हाथ आना उचित न समझकर मार्ग में भैंसरूर के किले को मुसलमानों के हाथ से छीन लिया और उसको प्रताप के भेंट में अर्पण किया।

प्रताप ने वह किला सकत और उसकी सन्तान को जागीर में प्रदान किया। और जिस प्रकार सलोम्बरा चन्दावत का मुख्य स्थान है इसी प्रकार भैंसरूर सकताव जाति का मुख्य स्थान है। सकतावत समय पाकर बहुत बलवान् होगए। और उनको हमेशा इस बात की धुन रही कि मेवाड़ मुसलमानों के हाथ न पड़े। खुरासान व मुल्तान की बरबादी का शब्द उनके जिह्वाग्र था।

हलदीघाट युद्ध के विषय में झाला सरदार की सन्तान का वर्णन भी नितान्त आवश्यक है। उनके पिता के वीरता से प्राण देने के सन्मान में उनको राजा की पदवी दी गई। उनके फाटक पर डङ्का बजता था और इस जाति का सरदार राना की बाईं ओर चलता था और राजसी मोहर उसके हाथ में रहती थी।

धन्य है वह जिनमें इस प्रकार के पवित्र भाव हैं। सेल्फ रिस्पैक्ट (Self Respect) की शान, मर्य्यादा का विचार, अपने पूर्वजों का सम्मान और उनके कारनामों के जीवित रखने की चिन्ता, और बड़ों के पद चिन्ह पर चलने की इच्छा जिन लोगों में होगी वह मुर्दह नहीं हैं प्रत्युत उनमें जीवन है। निर्धनता, अयोग्यता, दुनिया की आपदा, नमक हराम, बेईमान, दुष्ट मनुष्यों की विश्वास घातता उनको विनष्ट न कर सकेगी। वह एक न एक दिन उठ खड़े होंगे, और संसार देखेगा कि उनकी नसों में असली ज़िन्दगी छिपी हुई थी। और जब कभी उनके बिखरे हुए मनुष्य परस्पर एक वेदी पर एकत्र होंगे तो जीवन का दुगना सौन्दर्य्य देखने में आवेगा।

भारतवासी भाइयो! क्या तुम इस एकता के प्रेमक व इच्छुक नहीं हो?

आ जावो मेरे भाइयो, आओ गले मिलो।
सीना १ जिगर से अब तो, लगाओ गले मिलो॥
बिछड़े हैं देर से न रुलाओ गले मिलो,
लो तुम भी दस्ते २ शौक बढ़ाओ गले मिलो।
आंखों से आंखें मुंह से मुंह ३ लब से लब मिले,
गर अब नहीं मिलोगे ईश जाने कब मिले।

---

१ छाती २हाथ, ३ होंठ।

१२

राना प्रताप ।

अब है बयान उसका जो लाखों में फ़र्द १ था ।
शेरों का शेर शेरदिल, अहले निबर्द २ था ।
दहशत ३ से उसके शमस,४ का चेहरा भी ज़र्द था ।
क्या रोकता कोई उसे मर्दों में मर्द था ।
अशराफ़ का बनाव रईसों की शान था ।
शाहों की आबरू था, सिपाही की जान था ।

हलदीघाट के युद्ध के पश्चात् फिर शाहज़ादा सलीम ने लड़ने भिड़ने का उद्योग नहीं किया। कदाचित इस विचार से कि अब प्रताप में कभी सिर उठाने का साहस न होगा, और वह हमेशा के लिए कुचल दिया गया, अथवा इस लिए कि युद्ध के पश्चात ही वर्षा ऋतु आगई, रेगिस्तान में खेमों के भीतर रहना असम्भव न सही परन्तु कठिन अवश्य था।

दिल्ली की बहुत सी सेना लौट गई राना को स्वांस लेने का अवसर मिला, और वह अपनी बची खुची सेना को एकत्र करने लगा।

दूसरे साल के बसन्त ऋतु में जब राजा लोग युद्ध के लिए बाहर निकलते हैं। शाहज़ादा सलीम अपनी विजय की पूर्ति के लिए फिर बाहर निकला, प्रताप ने मैदान में आकर सामना

---

१ अकेला, २ शूरमा, ४ भय, ४ सूर्य्य।

किया। राजपूतों की फिर हार हुई । थोड़े से राजपूतों के साथ प्रताप ने कोमलमेर के किले में आश्रय लिया । यहां उसे आशा थी कि शत्रुओं से बचा रहेगा, क्योंकि पृथ्वीराज इस किले में रहकर निर्भीकता से अपने दिन व्यतीत करता था।

परन्तु उसके बीच में एक अधर्म्मी शत्रु छिपा हुआ था जो अकबर की सम्पूर्ण सेना से अधिक भयानक था आबू पर्वत के देवरावाले रईस के मन में चिरकाल से शत्रुता की आग जल रही थी, क्या जाने उसकी उत्पत्ति उस समय से हो जब पृथ्वीराज को विष मिली हुई मिठाई दी गई थी । जिस कुएं से क़िलेवाले पानी भरा करते थे, एकदम गन्दा और खराब कर दिया गया और आबू के पहाड़ के रईस के विषय में ज्ञात हुआ कि उसी ने खराब किया है । एकबार और प्रताप के बहादुर साथी इस प्रकार मुफ़्त मारे गए। और उसने वहां से चुपके से कूच कर दिया। उसका नातेदार वालिए सोनी गोरा तलवार हाथ में लिए हुए वीरता से लड़ता हुआ काम आया। उसके साथ मेवाड़ का राज्य सम्बन्धी भाट भी मारा गया जिसकी कविता को सुन कर प्रताप के साथियों का हृदय बल्लियों उछलने लगता था।

मेवाड़ के सब क़िले एक २ करके राजा मानसिंह और शाही सेना के हाथ में आगए । दिल्ली वालों ने चारों ओर से प्रताप को घेर लिया। उदयपुर में महाबत खां का अधिकार हो गया। प्रताप के लिए भेड़िए की मांदें और उक़ाब के घोंसले के सिवाय अब और कोई स्थान आश्रय लेने के लिए दिखाई नहीं देता था। जङ्गली पशुओं के बीच में आश्रय लेने के लिए विवश

होकर उनके साथ खुब उनके स्वभाव सीख लिए थे। वह भयानक स्थानों में छुपा रहना और अवसर की ताक में बैठा रहता था। जहां अवसर मिला शेर की तरह पीछा करने वालों की खबर ली। शाही सेना ने उसके पकड़ने के लिए कोई परिश्रम उठा न छोड़ा। जिस प्रकार शशा अथवा लोमड़ी का शिकार किया जाता है वह प्रत्येक दर्रा और खड्ड में उसका खोज करते थे। वह एक जगह उसको ढूंड रहे हैं, इतने में लोग आते और कहते हैं यह यहां कहां? वह तो उस तरफ शत्रुओं को चीर फाड़ रहा है।

जब वह यह समझे हुए होते कि प्रताप कहीं बहुत दूर के स्थान पर है, उसी समय एक ओर से सीटी का शब्द सुनाई देता फिर वही शब्द सम्पूर्ण जङ्गल में गूँजते हुए चारों ओर सुनाई देता और हथियार बन्द लड़ाके झाड़ी और वृक्षों के पीछे से निकल कर शत्रुओं पर झपटते और राना प्रताप अपनी बातों से उनके साहस को उभारता हुआ दिखाई देता। एकबार प्रताप ने इसी प्रकार एक रिसाले को घेर लिया और उसमें से एक मनुष्य को जीता न छोड़ा। भील जङ्गल के निवासी उसके मित्र थे, और उसके साथियों के आंख और कान बने हुए थे, जिस समय उन पर कोई आपदा आने को होती, आकाश स्वयम उनकी सहायता करता हुआ दिखाई देता। मूसलाधार वर्षा होने लगती। दरिया बाढ़ पर आजाते। सड़कें आदि सब बेकाम होजातीं, अकबरी सेना का स्वास्थ्य बिगड़ जाता, और विवश होकर वहां से डेरा डण्डा उठाना पड़ता।

"जहां बादशाह होता है वहीं उसका दरबार रहता है"

प्रताप इस विपदकाल में भी बादशाह था, पहाड़ हो, या मैदान, गुफा हो या टीला, जङ्गल हो या महल जहां वह होता वहीं राजगद्दी समझी जाती। उसके साथी वफादार थे। वह इस विपद्‌काल में वृक्षों के झुण्ड के बीच में उसका वैसाही सन्मान करते थे जैसा कि चित्तौड़ की राजगद्दी पर सुशोभित होने के दिनों में करते थे। उनका आहार फल फूल अथवा घास के बीजों की रोटियां होतीं। परन्तु राना जो चीज़ अपने हाथ से उठाकर सरदारों को देता वह महा सन्मान की वस्तु समझी जाती। और मेवाड़ के महा उन्नति के दिनों के पुरस्कार की भांति उसका सन्मान किया जाता था। शिष्टाचारता, वीरता, सभ्यता की श्रेष्ठ पाठशाला और कहां थी। भूखे, प्यासे राजपूत सरदारों के आश्रय के लिए न कहीं खीमा वा छत का सहारा था, न उनका जीवन संकट से सुरक्षित था। सब अपने प्राणों को हथेली पर लिए हुए बन में फिरा करते थे। थोड़ी सी नम्रता करने पर उनकी धन सम्पदा मिल सकती थी, अच्छे से अच्छे नरम पलंग प्रस्तुत कर दिए जा सकते थे, सेना की सरदारी प्रदान की जा सकती थी, वह विवाह करके लड़के बाले पैदा कर सकते थे, जो उसके नाम को स्थित रखते। अकबर उनकी प्रार्थना का इच्छुक था, केवल जिह्वा हिलाने की देर थी। परन्तु क्या किसी ने ऐसा किया? वह शब्द वीरों के कभी मुख पर नहीं आया जब तक राना की रानाई का ध्यान रहा, तब तक वह अपनी क्रिया और वचन का सच्चा रहा, जब तक उसने अपनी लज्जा और मर्य्यादा को सुरक्षित रखना चाहा तब तक राज-

पूत भी उसके ऊपर मोहित और बलिहार रहे, अपने प्राण देने तक को तैयार रहे।

इस आपद के जीवन और दुःख के समय प्रताप की स्त्री और बच्चे भी साथ २ थे जिससे उसका दुःख और भी बढ़ जाता था, प्रताप के पुत्र पुत्रियों ने बहुत छोटी आयु में विपद का सामना करने की शिक्षा लाभ की थी। ढाल उनकी थाल और तलवार की धार उनका चमचा थी। वह टोकरों में रख कर वृक्षों की डालियों में लटका दिए जाते थे। उनके रक्षक केवल इने गिने लोग हुआ करते थे ताकि शेर या भेड़िए उनको उठा न लेजांय। ढाई सौ वर्ष बीत जाने के पश्चात पहाड़ी मनुष्य फिर भी बता सकते हैं कि प्रताप ने यहां आकर आश्रय लिया था, और वह यह वृक्ष हैं जिनमें उसके बच्चे लटकते थे। जङ्गली जानवरों के भय के भिन्न शत्रुओं के हाथ बन्दी होने का भी भय था। और स्त्री व बच्चे भाग कर प्राण बचाया करते थे। एक बार नन्हें २ बालक अकबर के हाथ में पड़ते २ बच गए। स्वामी भक्त भीलों ने अवसर देखकर उनको टोकरों और बोरों में कस दिया और गुफा में ले जाकर छिपा रक्खा, वहीं उनको आहार मिलता रहा। और जब तक लड़ाई का शब्द बन्द नहीं हुआ वह उसी प्रकार पड़े रहे।

इस काल में जो निकम्मे जाति के बैरी राजपूत अकबर से मिल गए थे, आराम से जीवन व्यतीत करते थे। दरबार में उनका सन्मान था, उनके रहने के लिए नगर में एक विशेष महल्ला बसाया गया था। अकबर उनके साथ श्रद्धा और

सन्मान का व्यवहार किया करता था, जिस से उसकी आधी नता बुरी नहीं मालूम होती थी। परन्तु कट्टर व पक्षपाती मुसलमान उसके इस प्रकार के बरताव से बहुत क्रोधित थे। बीकानेर के सरदारों में से जो दो भाई राजा के पुत्रों में से मुगलिया दरबार में आए उनके नाम रामसिंह और पृथ्वी राज था। दोनों को उच्च और सन्मान का पद दिया गया। और रामसिंह की बेटी से शहज़ादा सलीम का विवाह कर दिया गया, पृथ्वीराज सिपाही और कवि दोनों था। वह सब राजपूतों में जो अकबर की आधीनता में आए थे श्रेष्ठ समझा जाता था। और उसको प्रताप की भतीजी अर्थात सकता की लड़की व्याही थी। इस रानी में रानाओं का खून वर्तमान था। यह रूपवती, साहसवती, उन्नतचेता और लज्जा वान थी।

अपने सुख व आनन्द के लिए अकबर ने मीना बाजार स्थापन करने की विधी निकाली थी: वह बजार प्रतिमास महल के हाता में लगा करता था, । उसकी बेगमें शहज़ादियां दरबारियों तक की बहू बेटियां विवश वहां जाया करती थीं और अपनी बनाई हुई चीज़े विक्रय करती थीं। चीज़ के दाम दुगने दिए जाते थे। सौदागरों की स्त्रियों को भी देश २ की चीज़ों के लाने की आज्ञा थी। इस बाज़ार में केवल स्त्रियों को सौदा आदि खरीदने की आज्ञा थी, परन्तु अकबर स्त्रियों का भेष धर कर उनमें मिल जाता था। मुगल लेखक कहते हैं कि इस प्रकार वह देश दशा जानने की चेष्टा करता था, परन्तु राजपूतों का विश्वास था कि वह नीच इच्छा से

वहां जाया करता था ताकि अपनी आंखों से दरबारियों की स्त्रियों को देखकर जिसको अच्छी समझे अपनी वासना तृप्त करे। यह विश्वास इतना पक्का होगया था, कि जब बून्दी नरेश ने रनतम्भूर के किले को हवाले किया तो यह शर्त कराली कि बून्दी की बहू बेटियां मीना बाज़ार में नहीं जांयगी।

रायसिंह बीकानेरी की स्त्री रूपवान थी अकबर ने उसे देख लिया, परिणाम बुरा निकला, वह सिर से पांव तक जवाहिरात से लद कर घर आई, और पृथ्वीराज ने एक कविता में अपने भाई की बेइज्जती पर बहुत शोक का प्रकाश किया, परन्तु नियम के अनुसार पृथ्वीराज की स्त्री को भी बाज़ार जाना पड़ता था। एक दिन ऐसी घटना हुई कि बादशाह की दृष्टि उस पर भी पड़ी और उसके रूप को देख कर वह अपने आपे मे जाता रहा।

रानी ने सौदा खरीद लिया था, बाज़ार छोड़ चुकी थी छोटी और सकरी गलियों से जल्दी २ घर की ओर जारही थी। बेचारी अकेली थी मार्ग के प्रकोष्ट बन्द और खाली थे, चारों ओर सन्नाटा था। रास्ते जान बूझकर पेचदार और तङ्ग बनाए गए थे और जिसको पसन्द कर लिया जाता था ऐसे स्थान में उसका सतीत्व नाश किया जाता था। अन्धेरे और सुनसान में कुछ शब्द सुनाई देने लगा फिर एकबारगी अन्धेरे में एक मनुष्य दिखाई पड़ा, और वह रास्ता रोक कर उसके सामने आकर खड़ा होगया।

वह समझ गई यह कौन मनुष्य है और उसका क्या अभि-

प्राय है ? वह अकेला था और हाथ में कोई हथियार नहीं था, बेचारी ग़रीब स्त्री पुरुषके मुकाबले में क्या कर सकती थी ?

परन्तु यह स्त्री बापा रावल के वंश की थी और अपनी जिठानी की प्रकृति से पूर्णतः पृथक थी । उसने हाथ जोड़ कर सती देवी की स्तुति की "माता ! इस दुष्ट से बचा यह पापी मृत्यु से भी बढ़कर है " राजपूत लेखक इस घटना को मज़हबी रङ्गत देते हैं, परन्तु सच्ची बात यह है कि उस प्रार्थना के बाद रानी ने अपनी कमर से कटार खींच ली और प्रथम इसके कि बादशाह अपने बचाने का प्रबन्ध करे अथवा उस पर आक्रमण करे वीर स्त्री शेरनी की तरह झपटी और उसकी गर्दन पर कटार रख दिया और उस से कहा " यदि जान प्यारी है तो सौगन्द खा कि आज से किसी राजपूत स्त्री पर अत्याचार करने का साहस नहीं करूंगा" । बादशाह ने सौगन्द खाई और लज्जित होकर वहां से दूसरी ओर खसक गया । रानी खुशी २ अपने पति के पास चली आई ।

इस घटना के कुछ दिन पीछे अकबर ने पृथ्वीराज को सामने बुलाया वह हद से ज्यादह प्रसन्न था और पृथ्वीराज के हाथ में एक पत्र देकर पढ़ने की आज्ञा दी "यह पत्र प्रताप का है अभी आया है अब वह प्रार्थना करता है कि शाही आधीनता मुझे स्वीकार है ।

यद्यपि समय के हेर फेर से पृथ्वीराज को अकबर के दरबार में आना पड़ता था परन्तु राना प्रताप उसकी दृष्टि में कुछ और पदवी रखता था । दिल्ली दरबार में भी कवि और लड़ाके बहादुर उसके नाम का सम्मान करते थे । जो बातों

और उदासीनों (फाकाकशी) को धन और सम्पद् पर उपेक्षा देता था।

" धन सम्पद् का नाश हो जाता है परन्तु नाम और यश सदा स्थिर रहते हैं. पृथ्वीराज में राजपूत के गुण थे उसने कभी अपना सिर अकबर के सन्मान में नहीं झुकाया। वह कहा करता था कि प्रताप हारा नहीं कि दुनिया की क्षति भी हो जायगी।

अकबर ने पूछा " तुम इस पत्र के विषय में क्या सम्मति रखते हो " ?

पृथ्वीराज ने दुःख और शोक से पत्र फेंककर उत्तर दिया, यह उसके किसी शत्रु की कार्य्यवाही है। मैं जानता हूं तुम अपना चाहे सारा राज पाट देदो परन्तु वह कभी आधीनता पर उद्यत न होगा मैं स्वयम उसको पत्र भेजकर दरयाफ़्त करता हूं।

सचमुच प्रताप ही ने चारों ओर से घबराकर दुर्बलता की अवस्था में यह पत्र लिखा था, वर्षों के वर्ष बीत गए थे। प्रतिवर्ष उसके दुःख बढ़ते गए, उसके साथी घायल होकर कम होते गए और शत्रुओं ने कभी पीछा नहीं छोड़ा। एक दिन पांच बार रोटी बनाई गई और पांचों बार उसे छोड़कर भागना पड़ा क्योंकि मुसलमान शिकारी हर समय उसकी ताक में लगे रहते थे।

एक दिन प्रताप जङ्गल में लेटा हुआ था, उसकी छोटी कन्या रोने लगी। माता ने एक रोटी का टुकड़ा पकड़ा दिया था, कन्या भूखी थी आधा टुकड़ा खाया और आधा जङ्गली

बिल्ली छीन कर लेगई कन्या फिर रोने लगी, उसका रोदन शब्द सुनकर प्रताप का हृदय भर आया । वह सब कुछ बलि कर चुका था, अपने आपको बलि देने के लिए हर समय तैयार था, परन्तु अब स्त्री पुत्रों की दशा देखकर बहुत व्याकुल था। इन बेचारों ने उसके लिए घर बार सुख स्वाद सब कुछ त्याग दिया था। यह सब कुलीनी मान व मर्य्यादा के विचार से की गई थी। सब कुछ हो चुका था यदि वह अकबर के आधीन होवे तो लज्या की कौन सी बात है? ऐसी दुर्बलता की दशा में उसने अकबर को पत्र लिखा था।

दूत दिल्ली से लौटा और प्रताप के नाम पत्र भी लाया, परन्तु उसका लेख यह नहीं था, कि तुम लड़के वालों को दिल्ली लाओ और शाही आधीनता स्वीकार करो पत्र का लिखने वाला पृथ्वीराज था। शोक और दुःख की दशा में उसने पृथ्वीराज के भाव पढ़े ।

"हिन्दुओं की आशा हिन्दू के साथ है प्रताप उनको निराश करता है । यदि प्रताप आधीन बन गया तो सब हिन्दू अकबर की दृष्टि में समान होजायगे । क्योंकि हमारे मर्दों से बीरता और हमारी स्त्रियों से सतीत्व चला गया है । अकबर हमारी जाति को नष्ट करने वाला है । उसने सब को मोल लेलिया परन्तु उदयसिंह के पुत्र का मोल वह बेचारा क्या देगा राजपूत कब अपने मर्य्यादा को बेचते हैं" परन्तु देखो सब गिर गए और अपने मान व मर्य्यादा को बेच डाला क्या चित्तौड़ भी इस बाज़ार में आना चाहता है? यद्यपि प्रताप ने धन सम्पद खोदी तथापि राजपूती मर्य्यादा का

खजाना उसके पास है । आशा और निराशा ने कितने ही राजपूतों को इस बाज़ार में आने के लिए विवश किया । वह अपनी बेइज्जती देखते हैं केवल हमीर की सन्तान ने उसको अब तक बचा रक्खा है । दुनिया पूछती है किस किस गुप्त और दैवी शक्ति से प्रताप को सहायता मिलती है ? उसके पास सिवाय वीरता और तलवार के और कोई सहायता का सामान नहीं है । राजपूत का गर्व उसके साथ है । बाज़ार के सौदागर का एक दिन देहान्त होजायगा । वह सदा जीवित नहीं रह सकता, उसके मरने पर हमारी नसल प्रताप के पास आवेगी ताकि वह उजाड़ धरती में राजपूती बीज को बोवें । उसकी रक्षा के लिए सब के नेत्र प्रताप की ओर लगे हैं और वह ज्योति फिर अपने पवित्र तेज के साथ प्रकाशित होगी ।

इस पत्र के पढ़ने के पश्चात् प्रताप ने बादशाह के साथ मेल करने की इच्छा त्याग दी । उसने देखा कि सब की दृष्टि उसी की ओर है वही जाति मर्य्यादा का रक्षक समझा जा रहा है । इसलिए चाहे जो कुछ हो वह अपनी प्रतिज्ञा में कभी विघ्न न आने देगा ।

परन्तु यह बात प्रकट थी राना अब वर्तमान दशा में नहीं रह सकता था । उसने विवश मेवाड़ छोड़ने की इच्छा करली । चित्तौड़ के प्राप्त करने का विचार मन से निकाल डाला । और किसी नए राज्य पर अधिकार करने और वहां अपने साथियों को लेजाकर बसाने का उपाय सोचने लगा, बाबर राजपूतों के जबरदस्त शत्रु ने इस प्रकार का उदाहरण अपने

जीवन से दिखाया था, समरकन्द से निकाले जाने पर उसने काबुल और दिल्ली में दो राजधानियां स्थापन की थीं।

मेवाड़ में प्रसिद्ध होगया कि राना सिन्ध देश को सिधारेगा, जाने की तैयारियां की गईं, जो उसके भाग्य में साझी होना चाहते थे एकत्र हो गए, लोग पहाड़ी जङ्गल मैदान से निकल कर उस के गिर्द घेरा बान्धकर खड़े हो गए। इतने में धामाशाह मेवाड़ के पुराने मंत्री का दूत आगया, जिन दिनों वह मंत्री का काम करता था उसने और उसके बाप दादों ने इतना धन एकत्र कर लिया था कि जिससे बारह वर्ष के लिए पच्चीस हज़ार सिपाही नौकर रक्खे जा सकते थे। वह सब प्रताप के चरनों पर न्योछावर होने के लिए मौजूद है। उसने लिखा मेवाड़ की आप से अन्तिम प्रार्थना है कि एक बार और गरीब और प्यारे मेवाड़ के लिए परिश्रम करके देख लेवें"।

शाही सेना नगर व किले में रङ्गरलियां मना रही थी सब को विश्वास था, कि प्रताप जङ्गल में भटकता फिरता होगा, और क्या आश्चर्य कि वह औरों की तरह मर मिटा हो अथवा जङ्गल में कुए के पट जाने और पानी न मिलने के कारण मर गया हो। यकबारगी बिना किसी खबर के प्रताप के शूरमा, उन पर आटूटे और महल, किला, खोसा में और नगर में प्रत्येक स्थान में लाश ही लाश दिखाई देने लगी।

प्रताप ने मेवाड़ को जङ्गल बना दिया, जो सामने आया वही उसकी तलवार की भेंट हुआ। एक ही वर्ष के भीतर २ सम्पूर्ण मेवाड़ उसका अपना होगया, केवल चित्तौड़ अजमेर और एक और जागीर अकबर के अधिकार में रहा। और तब उसने

मानसिंह ने बदला लेने का पक्का इरादा कर लिया। बहादुरों ने अम्बर को जाकर लूट लिया ईंट से ईंट को बजा दिया। सारा नगर उजड़ गया। बहुत कुछ धन सम्पद् उसके हाथ आई।

अकबर को राना को रोकना मुश्किल होगया। सिवाय मानसिंह के बाकी और सब राजपूतों की सहानुभूति राना प्रताप के साथ थी। मुग़लिया राजा के सरहद्दी सूबों में विद्रोह आरम्भ होगया। उत्तर में लोग बिगड़ बैठे दक्षिण देश के विजय करने को अकबर के मन में प्रबल कामना थी, परन्तु अब वह बूढ़ा और दुर्बल होगया था। उसका जीवन परिश्रम और संग्राम का जीवन था। उसकी सन्तान इस योग्य नहीं थी कि बुढ़ापे में उसको आराम लेने देती। दो पुत्रों ने मदिरा पी पीकर जान दी थी, सलीम पिता की आज्ञा में नहीं था, उसने अकबर के सच्चे मित्र और महामंत्री विद्वान् अबुलफ़ज़ल को बध करा दिया था। अपनी आयु के अन्तिम भाग में अकबर ने राजिस्थान की ओर से अपना ध्यान विवश होकर हटा लिया था।

परन्तु उसका शत्रु प्रताप उसके मरने से पहले मर चुका था, राना प्रताप निर्धनता और दुःखों का सताया हुआ था समय से पहले वृद्ध होगया था, निराशा और आपदाएँ सच-मुच ऐसी हृदय विदारक अवस्थाएँ हैं। जब वह एक साधारण झोपड़े में उदयपुर के निकट की झील के किनारे लेटा हुआ था। वह चित्तौड़ और अपने बेटे अमरसिंह की दुर्बलता पर महा शोक कर रहा था (यह स्मरण रहे कि उसने महलों में

न रहने की सौगन्द खाई थी) एक बार जब अमरसिंह अपने पिता से विदा होकर जा रहा था वह जल्दी में झुक न सका उसकी पगड़ी बांस से अटककर गिर पड़ी। इस पर अमरसिंह ने उस फूस के गृह को घृणा की दृष्टि से देखा। इस से राना ने अपने मन में समझ लिया कि मेरे पुत्र में परिश्रम और धीरता का गुण नहीं है।

प्रताप बिना किसी भय और सोच विचार के लड़ाई के दुःखों को सहन करता रहा था। परन्तु अब उसका बल क्षीण हो चुका था, सहन शक्ति बाकी नहीं रही थी, सरदार उसकी अन्तिम आज्ञा सुनने के लिए बुलाए गए। मरते हुए राना के मुख से "आह" का शब्द सुनकर सरदार चन्दावत ने पूछा आपको किस बात का दुःख है जिसके कारण आप का आत्मा शान्ति के साथ कूच नहीं करता ?

प्रताप ने आंखें खोल दीं और कहा 'मैं शायद अभी न मरूं" मैं चाहता हूं आप सब लोग प्रतिज्ञा करें कि मेवाड़ के साथ आप प्रेम रक्खेंगे और हमारा देश तुर्कों के अधिकार में न जायगा. आप प्रण करें इस से मुझ को आराम मिलेगा"।

इसके पश्चात फिर कहा अमरसिंह से मुझे आशा नहीं है कि वह जाति मर्य्यादा को सुरक्षित रख सकेगा। वह इस तुच्छ झोपड़े में रहना पसन्द न करेगा, वह झोपड़े गिरवा दिए जांयगे। इनकी जगह महल बनाए जांयगे तुम लोग सुखों के दास बन जाओगे, और भोग विलास के पीछे मेवाड़ की स्वतंत्रता को नष्ट कर दोगे। जिसके लिए हम सबने इतने रक्त बहाए हैं।

सब सरदारों ने एक स्वर से सौगन्दें खाईं "हम कभी

गुलामी को स्वीकार न करेंगे, और जब तक चित्तौड़ पर अधिकार प्राप्त न होगा हम में से कोई घर न बनाएगा, हम बापा रावल के तख़्त की सौगन्द खाते हैं कि हम अमरसिंह को उसके कर्तव्यों की ओर ध्यान दिलाते रहेंगे और जब तक हमारे शरीरों में प्राण हैं हमारे शरीर का एक २ बून्द मेवाड़ की रक्षा में गिरता रहेगा"।

अभी सरदारों के यह शब्द समाप्त नहीं हुए थे कि अद्वैत वीर राना प्रताप के चेहरे पर आनन्द और प्रसन्न के चिन्ह झलकने लगे और राजिस्थान का शेर इस प्रकार शान्ति पूर्वक अन्त समय तक मेवाड़ की सेवा करता हुआ उस से विदा हुआ। २६ वर्ष तक मेवाड़ का राना कहलाता रहा। उसकी सारी आयु युद्ध और संग्राम में व्यतीत हुई। परन्तु यह जीवन धन्य था। आर्य्य सन्तान इस से बहुत हितकर शिक्षा लाभ कर सकती है। देश भक्ति, सच्ची सेवा, जातीय मर्य्यादा, आत्म सम्मान, दृढ़ प्रतिज्ञा, मनुष्यत्व, का सच्चा आदर्श उसके नेक पवित्र और धार्म्मिक अस्तित्व में प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता था। जिन हिन्दू नव युवकों को ऐसे हिन्दू के जीवन से अब भी जाति का प्यार, देश की भक्ति, आत्म सन्मान, और मर्य्यादा की शिक्षा प्राप्त नहीं हुई उनके लिए हम केवल इतना कहेंगे कि उन में प्रताप जैसे महात्मा का रुधिर बाकी नहीं रहा है और वह मनुष्यत्व से गिर गए हैं।

हम चाहते हैं हिन्दुओं में कौम का हो पास।
हम चाहते हैं हिन्दू रक्खें हिन्दुओं से आश।

हम चाहते हैं हिन्दू हों बे ख़ौफ़ बे हिरास।
हम चाहते हैं हिन्दू न हों रंज से उदास॥
हमको वतन की क़ौम की उल्फ़त नसीब हो।
मरना ही है तो ऐसी शहादत नसीब हो॥
हम चाहते हैं क़ौम के शैदा हों जवान।
हम चाहते हैं क़ौम पर करदें निसार जान॥
हम चाहते हैं हममें फिर आवे वह अगलीशान।
हम चाहते हैं दुनिया बने अपनी मदहख़्वान॥
मौत आने की हो आए नहीं कुछ भी ख़ौफ़ोयास।
पर ज़ाफ़रानी जिस्म पर अपने रहे लिबास॥
हरएक फ़र्ज़ अपने को दिल से करे अदा।
हर एक हम में क़ौम का आशिक रहे सदा॥
हर एक दूसरे पर हो दिल जान से फ़िदा।
परवाह नहीं है हम जो बनें मुफ़लिसो गदा॥
मुशकिल में एक दूसरे का हाथ थाम ले।
दिल से ज़बां से हाथ से हर शख़्स काम ले॥

---

(१३)

सकतसिंह के सोलह लड़के ।

वीरों की गणना में अपना, नाम है सब से पहले ।
चारों ओर धूम है इसकी, लड़ें लाख से इकले ।
अर्जुन के सम वीर वली हैं, सकल जगत यह जाने ।
उतरें जब मैदान युद्ध में, करें महा घमसाने ।
रन में खड़े गर्जते हैं हम, कहां हैं शत्रु मेरे ।
आकर मुख दिखलावें अपना, मिलते क्यों नहिं हेरे ।

राना प्रताप का कहना, सत्य निकला मुशकिल से उसने प्राण तजे थे, कि उसका लड़का और मेवाड़ के सरदार अपनी प्रतिज्ञा भूल गए। अमरसिंह में राजपूती बीरता व धीरता अवश्य वर्तमान थी, परन्तु उसने सारी आयु लड़ाई भिड़ाई दुःखों और कष्टों में व्यतीत की थी। अधिक बलबान बैरी से लड़ते २ उकता गया था। वह अभी युवा था, युवा मनुष्यों में स्वाभाविक सुख और स्वाद की इच्छा होती है। किन्तु पिता ने कभी उसको ऐसा अवसर नहीं दिया। अब प्रताप का वर्जित करने वाला शब्द संसार से उठ चुका था, अमरसिंह की क्रियाओं को देख भाल करने वाला कोई नहीं रहा था, वह सुखमी बन गया था और अपने बाल्यकाल के दुःखों के बदले अब तरह २ के सुखों का भोग करने लगा था।

थोड़े वर्षों तक वह बे खटके उदयपुर के संगमरमर वाले

महल में जो झील के किनारे है और जो स्वयम उसने अपनी इच्छा तृप्त करने के लिए बनाया था, नरम पलङ्ग पर लेटा हुआ नाचने वालों का नाच देखता रहा, और अपनी अन्य वासनाओं व प्रवृत्तियों को तृप्त करता रहा, उसका मकान शीशों से सजा था, और वह उनको देख कर बहुत प्रसन्न होता था।

अकबर उपराम चित्त होकर मरने के योग्य हो चुका था, अब उसका ध्यान राजिस्थान की ओर नहीं रहा था, सन् १६०५ में मौत के दूत को समीप आते देख उसने सलीम के सिर पर ताज रख दिया और शाही तख्त पर बैठा दिया यही एक उसका पुत्र था जो मदिरा पीने या वध किए जाने से जीवित बचा था, सलीम ने तखत पर बैठते ही अपना नाम जहांगीर रक्खा। यद्यपि वह मद्यपान के कारण बहुत बदनाम था तथापि उसने अपने आपको अकबर का बहुत अयोग्य पुत्र प्रमाणित नहीं किया, राजपूतनी के पेट से उत्पन्न होने के कारण वह हिन्दुओं के मत से बहुत अधिक विरोध नहीं रखता था। परन्तु राजपूतों को धार्म्मिक स्वतंत्रता प्रदान करनी और बात है, और उनको इस कदर साहस देना कि वह सरकशी कर सकें दूसरी बात है। उसने अपने राज्य के प्रारम्भिक समय में सेना एकत्र की और उसको मेवाड़ के ऊपर भेज दिया।

इस सेना की चढ़ाई ने फिर राजपूतों को सामना करने के लिए उद्दित किया, अब वह फिर सुख व स्वाद के जीवन से घृणा करने लगे और सब ने सौगन्द खाई कि या तो दुश्मन पर फ़तह पाएंगे या अपने बाप दादा की तरह मैदान में

लड़कर प्राण देंगे। जल्दी घोड़ों पर सवार होकर वह उदयपुर आए और अमरसिंह के गिर्द खड़े होकर प्रार्थना की कि "हमको मुसलमानों से लड़ाने के लिए ले चलो" चन्द्रावत का सरदार सब का अगुआ होकर साथ था।

अमरसिंह पलंग पर लेटा था, उसने उनके प्रणाम तक का उत्तर नहीं दिया था। युवा होने से पहले उसको हमेशा लड़ाई भिड़ाई से काम था, परन्तु अब वह चाहता था कि किसी तरह यह लड़ाई बन्द हो क्योंकि दिल्ली से लड़ने में उनकी सख्त बरबादी थी।

सरदार यह दशा देखकर सुन्न रह गए, एक दूसरे की ओर विस्मय से देखने लगे। सलोम्बरा ने व्यर्थ की बात चीत में समय नष्ट करना उचित नहीं समझा, दरी जो कमरे में बिछी हुई थी वह बहुत भारी थी और उसके चारों कोनों पर पीतल की चार भारी ईंटें रक्खी हुई थीं। उनमें से सलोम्बरा ने एक ईंटको उठाकर शीशे की ओर इस जोर से फेंका कि वह टुकड़े २ हो गया। यह शीशा यूरुप के किसी देश से आया हुआ था और राना को बहुत प्रिय था, शीशे के टुकड़े सम्पूर्ण कमरे में बिखर गए, सलोम्बरा ने राना का हाथ पकड़ कर उठा लिया और राजपूत सरदारों से कहा "मित्रो! घोड़ों पर सवार हो और प्रताप के पुत्र को कलङ्क से बचालो"।

राना झुंझला उठा, उसकी क्रोधाग्नि भड़क उठी, वह सलोम्बरा को नमकहराम और बागी कहता रहा। परन्तु सलोम्बरा ने एक नहीं सुनी, न किसी धमकी की परवाह की। मेवाड़ के सारे सरदार उसके सहायक थे। सब ने राना को

ज़बरदस्ती घोड़े पर सवार कराया, वह क्रोध से रोता हुआ महल से निकला । परन्तु किसी ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया ।

जब वह उदयपुर से बाहर आए, तो अमरसिंह ने अपनी भूल पर विचार करना आरम्भ किया, और उसकी दशा थोड़ी देर में कुछ की कुछ होगई, अब उसने सब के प्रणाम का उत्तर दिया और उनसे अपने अनुचित वर्ताव के लिए क्षमा प्रार्थना की । सलोम्बरा को धन्यवाद दिया । कि आपने मुझको अधर्म्म से बचा लिया । फिर उसने राजपूतों को सम्बोधित करके कहा "मित्रो ! कदम बढ़ाए हुए चले चलो अब तुमको प्रताप के पुत्र के सम्बन्ध में शोक करने का अवसर न मिलेगा" ।

राना के वचन सुनकर उसके साथी प्रसन्न होगए । दिल्ली की सेना की वह दुर्दशा हुई कि वर्णन करने से बाहर है । प्रायः सारे मनुष्य मारे गए । और मेवाड़ के सरदार अपने राजा के साथ खुशी २ घर लौट गए । दो वर्ष के पीछे फिर जहांगीर ने चढ़ाई आरम्भ की और इस दफ़े भी उसको हार प्राप्त हुई । उसने अब मेवाड़ को चालबाजी से लेना चाहा, वह जानता था कि उजड़ा हुआ चित्तौड़ भी राजपूतों की दृष्टि में बड़े सन्मान का स्थान है । कितने ही मनुष्य उस की रक्षा के लिए प्राण गंवा चुके हैं । कितनी बार राजपूतों ने उसके छुड़ा लेने की सौगन्दें खाई थीं उसने प्रताप के नीच और पतित भाई सुगरसिंह को बुलाया और उसको मेवाड़ का राना बनाकर चित्तौड़ के खण्डरात में दरबार करने की आज्ञा दी यह वह दुष्ट था जिसने जातीय तथा भ्रातृभाव को तिलाञ्जलि देकर दिल्ली की गुलामी स्वीकार करली थी ।

नाशवान् संसारिक पदार्थों पर धर्म्म कुर्बान करने वाले किञ्चित विचार करें, जो अनिस्थिर सुखों के लिए अपने देश व जाति का खयाल नहीं करते इस घटना पर ध्यान दें। सुगर चित्तौड़ में आया, चारों ओर उदासी बरसती थी। मकानों के खण्डरों में उल्लू और चमगादुर रहते थे। यह वह जगह थी जहां राजिस्थान के भद्र राजपूतों ने चप्पा २ धरती को अपने खून से रङ्ग दिया था, इसमें बापा रावल का खून मौजूद था। चित्तौड़ की बरबादी की घटनाओं ने कल्पित रूप धारण करके उसके हृदय पर आक्रमण करना आरम्भ किया। "राजपूत! तू मुसलमानों की सहायता से चित्तौड़ में राज करने आया है। क्या तू नहीं जानता कि जातीय मर्य्यादा, स्वदेशभक्ति, और स्वदेश अनुराग में स्त्री पुरुष, बूढ़े, बच्चे सब ने इस पर अपने प्राण न्योछावर कर दिए थे। उन की आत्माएं अब भी बदला लेने के लिए चिल्ला रही हैं। जिन्होंने इसको नापाक किया, जिनके जुल्म से जौहर हुए, जिनके अत्याचारों के कारण पुरुषों ने, स्त्रियों ने, छोटे २ बच्चों ने प्राण दिए आज तू उनको सहायक बना रहा है। तू इतना लज्या विहीन हो गया कि उनकी सहायता से चित्तौड़ पर राज करने आया है। देखें तो सही तेरा पांव यहां किस तरह जमता है"। पूरे सात वर्ष तक सुगर ने संग्राम किया कि इस प्रकार के विचार उसके मन में उत्पन्न न हों, परन्तु शहीदों के आकार उसकी आंखों के आगे नाचते हुए दिखाई देते थे। उसके पूर्वजों की आत्माएं धमकाती और क्रोध से लाल पीली आंखें करती हुई दिखाई देती थीं। सुगर का

साहस जाता रहा. उसने उमराको एक मित्र के द्वारा कहला भेजा '–भतीजे ! आ, मैं किले की कुञ्जी तुझको सौंप दूंगा" और वह अपनी भीरुता व दुष्टता अनुभव करता हुआ चित्तौड़ के अगणित खण्डों में अपने प्राण बचाकर भाग गया। उस का पुत्र महाबतखां मुगलों के इतिहास में महावर्णी और प्रतिष्ठित सेनापति हुआ है। परन्तु सुगर उस का पिता चित्तौड़ में आने के पश्चात अपने आपको धर्म से पतित समझता रहा और उसने लज्जा और शोक से जान दी। जब चित्तौड़ उमरा के हाथ आगया। सुगर दिल्ली चला गया और दरबार आम में हाजिर हुआ, जहांगीर ने सब के सम्मुख उसको बहुत लानत मलामत की "राजपूत कभी इस प्रकार की नमकहरामी नहीं करते। यदि जाति का पास नहीं था, तो नमक का पास जरूर ही होना चाहिए था"। यह शब्द सुगर के कलेजे में तीर की तरह लगे उसने कुछ उत्तर नहीं दिया। खंजर निकाल कर पेट में भोंक लिया और बादशाह के सामने वहीं गिर कर मर गया। मुसलमान व राजपूत दोनों को इस से घृणा होगई थी।

चित्तौड़ के हाथ से निकल जाने के पश्चात फिर शाही सेना की चढ़ाई की शङ्का होने लगी। चित्तौड़ अब पहला चित्तौड़ नहीं रहा था, खण्ड रात के सम्भालने का परिश्रम व्यर्थ समझकर उमरा ने उसको फिर जङ्गली पशुओं को सौंप दिया, और दूसरे नगरों और किलों के लेने के उपाय सोचने लगा जो मुगलों के अधिकार में थे। उसने वीरता और साहस पूर्वक उन पर चढ़ाई की।

अब उसकी सेना में नये २ रंगरूट भरती होने लगे। यदि वह जानता कि सोलह भाइयों के कारण से मेवाड़ पर क्या आफ़त आजायगी जो उसके साथ होकर शत्रुओं के लड़ने की इच्छा से आए थे तो वह सावधान रहता परन्तु उस समय उसको एक २ मनुष्य की आवश्यकता थी। वह समझता था वह ऐसे सरदार के लड़के हैं जिसने उसके पिता को राज प्राप्त करने और प्राण सकुशल बचा ले जाने में सहायता दी थी।

सकलसिंह हलदीघाट के युद्ध के पश्चात भैंसरूर में रहने लगा था जो उस ने मुगलों के हाथ से छीन लिया था यहां उसके कई बहादुर पुत्र उत्पन्न हुए। मरने के समय सत्तरह लड़के उसके पलंग के इर्द गिर्द खड़े थे, बहादुर सुकत का उस महल में देहान्त हुआ जो चम्बल और एक नदी के सङ्गम में बना है। जब वह मर गया, तो भानजी बड़े लड़के ने सलाह की, कि सोलह भाई क्रिया कर्म करने के निमित्त लाश के साथ जांय और वह अकेला किले की रक्षा करे।

सोलहों भाइयों ने उसका कहना मान लिया। परन्तु जब वह लाश जलाने के पश्चात किले के द्वार पर लौट कर आए तो उसका द्वार बन्द पाया, बड़े भाई ने खिड़की से सिर निकाल कर कहा; भैंसरूर इतने मनुष्यों को पालना नहीं कर सकता उचित है कि तुम और जगह जाकर अपना २ प्रबन्ध करोः—

दोहा—नहि धरती कुछ तंग है, नहि तुम पौरुष हीन।
जाकर कुछ साहस करो, प्यारे बन्धु, प्रवीन॥

सोलहों भाइयों ने चूं तक नहीं किया उन्होंने भानजी से

कहा, बहुत अच्छा हमारे हथियार और घोड़े दे दो और हम फिर तुमको कष्ट न देंगे," फिर दल के सब अपने बाल बच्चों को साथ लेकर एक ओर को व्यवसाय के खोज में भाग पड़े। अचल सिंह उनका मुखिया बना और बल्लूसिंह जो सबसे बलवान और बहादुर था उसका दहन हाथ नियत किया गया॥

वह ईडर की ओर चल पड़े जो मेवाड़ के दक्षिण में बसा है और जिस पर मारवाड़ के राठोरों का अधिकार था, प्रथम इसको कि वह नियत स्थान पर पहुंचे अचल की स्त्री बीमार हो गई और आगे चलना कठिन होगया। अचलसिंह ने बहुत उपाय किया कि उसके वास्ते कोई आराम की जगह मिल जाय परन्तु सब निष्फल हुआ, एक सरदार से प्रार्थना की गई कि थोड़े देर के लिए गरीब अबला को आश्रय लेने की आज्ञा दे, परन्तु उस कठोर हृदय ने साफ इनकार कर दिया, पानी मूसलाधार बरस रहा था, उसने और भी इनको अवस्था को कृपा पात्र बना दिया था, निदान एक टूटे फूटे मन्दिर में उसको ले गए और जहां तक हो सका पानी सर्दी से बचाने के उपाय किए गए, सौभाग्य से उस कठिन समय में बल्लू की दृष्टि छत की ओर गई पानी के भार से ऊपर का एक पत्थर खुल गया और निकट था कि वह गिर कर स्त्री का प्राणान्त कर दे। बहादुर बल्लूसिंह पत्थर के शहतीर के नीचे खड़ा होगया और उसको अपने सिरपर थाम रक्खा, और जब तक उसके दूसरे भाई वृक्ष की एक शाखा काट नहीं लाए और पत्थर के थामने के लिए उसके नीचे अड़ा नहीं दिया, तब तक वह उसी तरह बराबर अपने सिर पर थामे हुए खड़ा रहा।

यह देवी का मन्दिर था, यहां अंचलसिंह की स्त्री के गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न हुआ और माता पिता ने आनन्द के साथ उसका नाम आशासिंह रक्खा, इसके पश्चात् वह ईडर गए ईडर के सरदार ने उनका अत्यन्त आदर के साथ स्वागत किया, वहां उनको जागीरें दी गईं। और जब तक मेवाड़ का प्रधान मन्त्री तीर्थ यात्रा कर के उधर से नहीं गुजरा था वह ईडर में आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करते रहे। इस मन्त्री ने तीर्थ यात्रा से लौटते समय सोनिंद भाइयों के घर के समीप अपना तम्बू खड़ा किया था, उस दिन वहां बड़ा तूफान हुआ और जब पानी की धारा में उसका तम्बू बह चला तो अचलसिंह की स्त्री अपनी सखियों सहित दौड़ती हुई घर से बाहर आई और मन्त्री की स्त्री को दुःख से बचाने गई और अपने घर में आश्रय दिया क्योंकि उसको अपनी तकलीफ़ का वृतान्त अब तक अच्छी तरह याद था, उसके हृदय ने गवारा नहीं किया कि एक भद्र स्त्री आंधी पानी के समय दुःख उठावे।

मेवाड़ राज्यका महामन्त्री इस वर्ताव से बड़ा प्रसन्न हुआ, उसने उनको हृदय से धन्यवाद दिया और कहा कि आप लोग उदयपुर चलें मैं भानजी से आप लोगों का मेल करा दूंगा। परन्तु उन्होंने नम्रता पूर्वक उत्तर दिया "जब तक हमारा भाई राना हमारी सेवा की आवश्यकता न समझेगा और वह हमको स्वयम न बुला भेजेगा, हम कभी यहां से न जायंगे।

इस घटना को हुए कुछ समय बीत गया। जब राना उमरा दिल्ली से लड़ने के लिए रंगरूट भरती करने लगा था, वज़ीर ने सुकतसिंह के पुत्रों की याद दिलाई। परिणाम यह हुआ

कि सोलहों भाई सन्देसे के पहुंचते ही मेवाड़ चले आए और पहाड़ी की चोटी पर अपना तम्बू खड़ा किया, भानजी भंसरूर का सरदार वहां मौजूद था परन्तु उन लोगों ने उस की ओर किंचित ध्यान नहीं दिया। राना ने छोटे भाइयों को हर प्रकार से सुयोग्य पाया। और उनपर बहुत कृपा करने लगा, यह सब बड़े परिश्रमी थे । बल्लूसिंह विशेष कर महा बलवान था। और अति काय होने के विचार से देव समझा जाता था, जब राना सरदी के दिनों में बाहर तम्बू में होता तो वह वृक्षों को काट कर ढेर लगा देता और आग जला कर सरदी का दुःख दूर कर देता । जब दुश्मनों के साथ युद्ध का समय आया, तो बल्लूसिंह का घोड़ा सब में आगे देखा गया, और उसने इस प्रकार तलवार चलानी आरम्भ की कि दिल्ली के सिपाही उसके सन्मुख ठहर न सके । सबके पांव उखड़ गए। राना इस बात को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ, और हर्ष के मारे उसके मुह से यह शब्द निकल गए, कि "आगामी जब कभी चढ़ाई का अवसर आवेगा तो सेना के संचालन का काम बल्लूसिंह और उसके भाइयों को दिया जायगा "।

मेवाड़ में सलोम्बरा के चन्दावत का पद राना से उतर कर समझा जाता था, और राजकुमार चन्दासिंह के समय से यह उसका बपौती अधिकार हो गया था, परन्तु सलोम्बर मर चुका था, और उस समय से फिर किसी को राना को उत्तर देने अथवा उसकी बात के खण्डन करने का साहस नहीं होता था ।

निदान एक ऐसा अवसर आया, कि चन्दावत का अगुआ शत्रुओं का सामना करने से पहले खुले मैदान में तम्बू के नीचे

सुख से लेटा हुआ था, उसी समय उनका भाट चन्द्रावत के कार नामे वर्णन करने लगा, जिसको सुनकर सब की निद्रा जाती रही। सरदार ने उसको बुलाकर कहा, "इस समय क्या आवश्यकता है कि तुम हमारे वीर भावों का सतेज कर रहे हो, शत्रु समीप नहीं हैं और न उनका भय है फिर तुम क्यों वृथा हमें उत्तेजित कर रहे हो?"

भाटने उत्तर दिया राजकुमार! मेरे विचार में आज अन्तिम दिन है कि तुम राना के पश्चात् मेवाड़ के उच्च सरदार समझे जा रहे हो, और पिछले रिसाला के संचालन का अधिकार तुमको प्राप्त है, परन्तु कल सकतावत तुमसे यह पद छीन लेंगे। इस लिए आज मैं तुम्हारी पिछली उन्नति के कारनामों को स्मरण कर रहा हूं सम्भव है फिर मुझे ऐसा अवसर न मिले"।

लाज नहीं जिस पुरुष में उसको, मनुष कभी नहीं मानो।
केवल है आकार मनुज का, असल पशू उसे जानो।
इज्ज़त का नहि ध्यान है जिसको, वह निर्लज्य कहावे।
राजपूत कोइ भूले से भी, इस मारग नहि जावे।
भला तुम्हारा मैं चाहता हूं, समझाता हूं इस से।
यत्न तुम्हें सो बतलाता हूं, काम सिद्ध हो जिस से।

(ईशानदेव)

इस तेज पूर्ण वाणी को सुनकर सलोम्बरा की आंखों में खून भर आया, क्रोध से तेवर बदल गए, आंखें अंगारे की तरह लाल हो गईं, उसी समय वह उमरा के पास पहुंचा और उसके सन्मुख यह सौगन्द खाई कि जब तक जान में जान है

चन्दावत का पद किसी दूसरे को नहीं दिया जा सकता, चाहे सकतावत आप के अधिक समीपी भाई बन्धु ही क्यों न हों।"

सकतावत लोगों ने जब यह वृतान्त सुना तो वह अलग अपने आपे से बाहर हो गए, उनको किसी प्रकार स्वीकार नहीं था, कि यह स्वत्व नष्ट हो। राना वचन दे चुका था, उनका पिता मेवाड़ के राज का वफादार सरदार था और वह स्वयम अपना सिर कटाने को हर समय तैयार थे, इसके सिवाय राजकुमार चन्दा सिंह की मृत्यु के पीछे समय के हेर फेर से चन्दावत की सेवाएं भूल गई थीं।

सम्भव था कि इन बातों से दोनों पक्ष के योधा परस्पर लड़ पड़ते, उनकी शत्रुता की आग बुरी तरह दहक चुकी थी, उनको न तो राना का ध्यान था न शत्रू का विचार था, वह केवल मरने मारने पर उतारू थे, निदान राना ने हाथ उठाकर कहा, "लड़ने झगड़ने से थम जावो मेरी आज्ञा सुनो तुम में से जो मनुष्य उटाला के किले में सब से पहले दाखिल होगा राना के पश्चात उसको सेना के संचालन का अधिकार होगा।" दोनों पक्षवालों ने इस बात को स्वीकार कर लिया।

यहां पर यह बता देना आवश्यक प्रतीत होता है कि उटाला राजिस्थान में सब से अधिक मज़बूत किला था और उस पर मुसलमानों का अधिकार था, यह उदयपुर से अठारह मील के फासले पर चित्तौड़ की सड़क पर था, किले के नीचे दरिया बहता था, किलेदार का मकान किले के बीच में था, उस किले में दाखिल होने का रास्ता केवल एक ही था।

पौ फटने से पहले दोनों पक्ष के मनुष्य युद्ध के लिए रवाना

हुए, सोलहों भाई पहले पहुंचे और उटाला पर धावा करने के उपाय सोचने लगे। जब उन्होंने देखा कि चन्दावत का कोसों पता नहीं है तो वह अपने मन में यह सोच कर बहुत प्रसन्न हुए कि हमने मैदान जीत लिया, परन्तु जब वह किले की दीवार पर चढ़ने का इरादा करने लगे तो उनको महा शोक हुआ, क्योंकि जल्दी और घबराहट में वह रस्से और सीढ़ियां जो इस काम में उपयोगी होते हैं अपने साथ लाना भूल गए थे।

अब किले में घुसने की राह केवल फाटक से था। अधिक विचार करने का समय नहीं था, सकतावत फाटक पर जा गिरे और उसके चीरने फाड़ने का यत्न करने लगे। किले वालों को इनका पता लगा तो वह भी फाटक पर आ पहुंचे, गुत्थम गुत्था आरम्भ हुआ। अचल सिंह ने देखा कि फाटक कमजोर होचुका है यदि उस पर हाथी हूल दिया जाय तो सम्भव है कि वह बिलकुल टूट जाय, इस विचार से उसने महावत को फाटक पर हाथी हूलने की आज्ञा दी, उसने ऐसा ही किया, हाथी आगे बढ़ा।

परन्तु जब वह फाटक के समीप पहुंचा तो घबरा कर पीछे हटा। महावत ने पुचकार कर और आंकुश मार कर बहुतेरा जोर लगाया कि हाथी फाटक पर टक्कर मारे, परन्तु हाथी टक्कर न मार सका, क्योंकि फाटक में मजबूत और नुकीली लम्बी २ सलाखें लगी हुई थीं, और हाथी जान्ता था कि टक्कर मारने में उसके सिर की कुशल नहीं है, महावत जोर लगा कर थक गया परन्तु हाथी ज़रा भी आगे नहीं बढ़ा।

इतने में चन्दावत के दल के आने की आवाज़ सुनाई दी।

इस से अधिक भय की बात और क्या हो सकती थी कि उनके सहयोगी चन्द्रावत भी वहां पहुंच गए, निराशा की दशा और आतुरता में अचल सिंह ने अपनी पीठ फाटक की सलाखों में अड़ादी और महावत से चिल्ला कर कहा "हाथी को मेरे ऊपर हूल दे नहीं तो तू मार डाला जायगा।"

महावत जानता था कि युद्ध के समय राजपूत प्राणों की परवाह नहीं करते, उसने आंकुश लगा दी, हाथी झपट कर आगे बढ़ा उसकी टक्कर से लोहे की नुकीली सलाखें अचल सिंह के शरीर के आर पार हो गईं, हाथी ने उसका सहारा पाकर फाटक तोड़ डाला और सकतावत उसकी लाश पर चढ़ कर आगे बढ़े।

चन्द्रावत पहले पहल अधिक दिक्कत में पड़ गए थे, रात के अन्धेरे में वह मार्ग भूल गए थे और दल २ में फंस गए थे प्रभात होते २ उनको वहां से छुटकारा मिला, आशा थी कि सकतावत ने उटाला पर अधिकार कर लिया होगा, निदान एक गडरिए ने उनको मार्ग बताया और वह गिरते पड़ते किले तक पहुंच गए, सलोम्बरा सीढ़ियां अपने साथ ले आया था और वह पहुंचते ही किले की दीवार पर चढ़ने लगा।

इस काल में किले के मनुष्य और होशियार हो गए थे, और सकतावत के रोकने के लिए फसील पर चढ़कर लड़ रहे थे, जब इन्हें ऊपर चढ़ते देखा तो इनकी ओर दौड़ कर इन्हें रोकने लगे। जिस पोड़ी से सलोम्बरा चढ़ रहा था वह उलट गई और सलोम्बरा धरती पर गिर पड़ा, उसको गिरते देख सकतावत ने अपना वंश गत विजय शब्द उच्चारण किया।

चन्दावत के जत्थे में एक महा शूरमा देवगढ़ का सरदार था शिकार में या लड़ाई में उसका हाथ कभी नहीं चूकता था, वह इस प्रकार का मनुष्य था कि क्षण भर में लोथों के ढेर लगा देता था, जब उसने अपने सरदार को गिरते हुए देखा, तो वह उसकी लाश की ओर झुका और उसको अपने शाल से बांधकर कांधे पर रख लिया और सीढ़ी पर चढ़ गया ऊपर से गोलियों की वर्षा हो रही थी और तलवारें पड़ रही थीं परन्तु उसने कुछ भी परवाह न की, उसने दीवार पर चढ़ कर लाश किले में डाल दी और ज़ोर से गर्जा कि "राना के पश्चात् चन्दावत की आज्ञा हो, हमने उटाला को पहले विजय किया।"

चन्दावत मौत या जिन्दगी में अपने सरदार का साथ नहीं छोड़ते थे, वह फसील पर चढ़ गए, किले वाले भागने लगे, ठीक उसी समय धावा की प्रचण्ड लहर फाटक की ओर से आई अचल सिंह की बलि ने अन्त में सकतावत को दाखिल होने का अवसर दे ही दिया। दोनों पक्षों ने भागते हुए मुगलों का पीछा किया, और फिर एक बार मेवाड़ के लहराते हुए सूरज मुखी झण्डे को किले के अन्दर गाड़ दिया।

धावा करने वाले राजपूत मारते काटते हुए किलेदार के मकान में घुस गए जो किले के बीच में था, वहां दो मुगल सरदार निश्चिन्तरूप से बैठे हुए शतरंज खेल रहे थे, उन्हों ने लड़ाई का शब्द सुना था, परन्तु उटाला बड़ा मज़बूत किला था, वह समझते थे कि इसका सर करना कठिन काम है। किन्तु यह उनकी भूल थी। शतरंज का खेल विचित्र होता है, उन्हों ने राजपूतों से प्रार्थना की "जरा आप हम को यह बाजी खेल लेने दें फिर जो कुछ कहना सुनना है हम तैयार हैं।" राजपूत

राजी होगए और अपने हथियारों को टेक कर उस समय तक खड़े रहे जब तक मुगलों ने अपना खेल पूरा नहीं कर लिया, जब उनको खेल से छुट्टी मिली तो राजपूतों ने उन्हें पकड़ लिया और शत्रुओं के साथ जो सलूक करना चाहिए, वह किया गया।

राना के पास दूत भेजा गया कि उटाला फतह होगया, और थोड़े घण्टों में ही उमरा सिंह स्वयम वहां जा पहुंचा, दीवार के इर्द गिर्द और फसील पर राजपूतों की लाशें पड़ी हुई दिखाई दीं। सलोम्बरा जो किले में सब से पहले दाखिल हुआ था, शत्रुओं के बीच में मुरदा पड़ा था, अचलसिंह की लाश सलाखों में छिदी हुई थी, पास ही उसके चारों भाई मरे हुए पड़े थे, इनमें केवल बल्लूसिंह को श्वास आ रही थी, दुःख और शोक से राना उसकी लाश पर झुका, जो राना ही के काम में बलि हुआ था, मरते हुए बल्लू का हाथ प्रणाम के लिए मस्तक तक उठा और मरते हुए उसके मुंह से यह शब्द निकले "दुगनी मेहरबानी और चौगुनी कुरबानी" सकतावत के भाट ने यह सुन लिए और उस समय यह शब्द उनके वंश का जैकारा बन गया। केवल यही सकतावत को पुरस्कार में मिला, चन्दावत अपने पिछले पद पर स्थिर रहे। यद्यपि यह शत्रुता मनुष्य की असली भद्रता और सच्ची कुरबानी की उच्च दृष्टान्त है परन्तु इस में ऐसे २ यह सुभट काम आए जो दिल्ली के मुकाबले में भी काम नहीं आए थे।

जो कुछ हो हम फिर भी कहेंगेः—

जिस काम के थे वह, यह उसी काम का दिन था,
किस तरह रकाबत* न करें, नाम का दिन था,

---

* शत्रुता।

यह सचमुच कैसे वीर और शूरमा थे और किस प्रकार अपने अधिकारों को लेना और उनकी रक्षा करना जानते थे

यह शेर से तीरों के नयस्तां में दर आए,
यह बरछीयों वालों के परे ख़ून में दर आए।
जिस शख़्स पै तलवार पड़ी दो नज़र आए,
लड़ता हुआ इक जाय उधर इक इधर आए।
लोग ऐसेही जांबाज़ों को रोते हैं जहां में,
शेरों के पिसर शेर ही होते हैं जहां में।

(१४)

दिल्ली और मेवाड़ का मिलाप।

आज़ादी से अच्छी नहीं दुनिया में कोई शै,
आज़ादी नहीं जीने का फिर लुत्फ़ कहां है।
शेरों को गिरिफ़्तार कफ़स कर दिया है,
दौलत कोई क्या देवेगा आज़ादी के बदले।
जागीर की इच्छा है न आबादी की इच्छा,
मरदों को तो बस रहती है आजादी की इच्छा।

एक बार अपने कर्तव्य की ओर ध्यान देने से राना उमरा ने अपने पिता के पद चिन्ह पर चलने की चेष्टा की। शाहनशाह दिल्ली के साथ उसने सत्तरह लड़ाइयां लड़ीं और सत्तरहों में

उसने विजय प्राप्त की, परवेज जहांगीर का तीसरा बेटा जो इस युद्ध पर आया था विवश होकर दिल्ली लौट गया।

परन्तु यह दशा बहुत दिनों तक स्थिर नहीं रही। दिल्ली के पास सेनाओं की संख्या की अधिकता थी। मेवाड़ के सामने जीवन और मरण का प्रश्न था। राना उदय सिंह के समय से लेकर राना उमरा सिंह के समय तक मेवाड़ को सांस लेने का अवसर न दिया गया था, यह लड़ाई कब तक स्थिर रहती? यदि जहांगीर के एक मर्तबा दस बीस हजार मनुष्य काम आए तो वह दूसरी मर्तबा फिर एक लाख सेना सहज भेज सकता था, उमरा बेचारा क्या करता? राजपूतों की संख्या इतनी कहां थी? जब सन् १६१३ ई० में जहांगीर ने अजमेर की ओर चढ़ाई की और शाहजहां को आगे बढ़ कर मार्ग साफ करने की आज्ञा दी तो उमरा ने समझा अब अन्तिम समय आ गया है। उसके बुलाने पर केवल थोड़े से मनुष्य एकत्र हुए बाकी मेवाड़ इस सिरे से उस सिरे तक अब रण क्षेत्र में मारे जा चुके थे!

थोड़े महीनों तक वह धैर्य के साथ जहांगीर के साथ लड़ता रहा, जहांगीर अपने रोजनामचा (तोज़क जहांगीरी) में लिखता है "सन् जलूसके नवें साल (सन् १६१४ ई०) में जब मैं तख्त पर बैठा था तो अच्छी सायत पर रानाका खास जङ्गी हाथी सत्तरह हाथियों समेत जो मेरे पुत्र ने कैद करके भेजे थे मेरे सामने पेश किया गया। दूसरे दिन मैं उसपर सवार हुआ, उसको देख कर मुझे बड़ा आनन्द हुआ और उस दिन मैं ने बहुत सा सोना दान में वितरण किया।"

शाही सेना की आए दिनों की चढ़ाई, मेवाड़ी सरदारों के पुत्रों और स्त्रियों की गिरिफ्तारी, और उनके एक दूसरे के पश्चात् देहान्त होने से राना के हठ को नीचा देखना पड़ा, उसके जंगी हाथी का छिन जाना अन्तिम आघात था निदान प्रताप के पुत्र ने विवश होकर जहांगीर के मंत्री के पास सन्देसा भेजा कि 'यदि क्षमा किया जाय और बादशाह के हृदय में उसके लिए सन्मान का भाव हो तो वह आधीनता के लिए तैयार है और दूसरे हिन्दू राजकुमारों की तरह उस का राजकुमार भी दरबार में हाजिर होगा।"

जहांगीर लिखता है:—

मैं इस प्रार्थना से बहुत प्रसन्न हुआ क्योंकि यह शुभ अवसर जिसके लिए मेरा पिता लड़ता रहा था मेरे समय में पूरा हुआ। मैंने अपने पुत्र को आज्ञा दी कि मुल्क के प्राचीन निवासियों को मुल्क से निकाल देना अच्छा नहीं है। इसका यह कारण था कि राना उमरा सिंह और उसके पूर्वज बड़े स्वाभिमानी थे, उनको अपने बलबाहू और पहाड़ी किलों की दृढ़ता पर विश्वास था, उन लोगों ने दिल्ली के बादशाह को कभी नहीं देखा था, न किसी की आधीनता में आए थे, अपने शासन काल में मैं इस बात का इच्छुक था कि यह अवसर हाथ से न जाने पावे, इसी लिए मैंने अपने बेटे को लिखा, कि राना से कहो मैंने उसको क्षमा कर दिया, और दोस्ताना फरमान भेजकर अपनी कृपा का विश्वास दिलाया और उसकी सही के लिए अपना पंजा अंकित कर दिया, मैंने अपने पुत्र को यह भी लिखा, कि वह राजा जिस प्रकार कहे उसके अनुसार उसके साथ बर्ताव करो।"

राना सहज में आधीन होगया। यद्यपि जहांगीर निर्दई और आतुर प्रसिद्ध था, और प्रायः मदिरा के नशे में चूर रहने से उन्मत्त भी हो जाता था, परन्तु फिर भी वह बहुत अच्छा था। उसको खयाल था कि भद्र शत्रु के साथ उसकी दुर्दशा के समय प्रीति और सन्मान से पेश आना चाहिए। राना के साथ यह इकरार किया गया कि किसी समय राना को शहनसाह के दरबार में हाजिर होने की आवश्यकता नहीं है। राजगद्दी पर बैठने के पश्चात् वह किले के भीतर ही शाही आज्ञा स्वीकार करे। और आवश्यकता के समय एक हजार सवार शाही सेना की सहायता के लिए भेजते रहें, उमरा से केवल इतनी ही पाबन्दी की प्रार्थना की गई। उसने यह भी कहला भेजा कि बुढ़ापे की दुर्बलता के कारण वह शाही दरबार में नहीं आ सकेगा। बादशाह ने इसको भी स्वीकार कर लिया।

परन्तु शाहजहां के सम्मिलन से बचना सम्भव नहीं था, उमरा उस से मिला और क्षमा प्रार्थना की उसका बड़े आदर और सन्मान के साथ स्वागत किया गया, और विदा होने के समय बहुत सी नजर भेंट यथाः-घोड़े, सुनहरी कलगी आदि दी गई। शाहजहां में चौथाई खून राजपूत का था, उसकी माता अम्बर की कछवाही राजकुमारी थी, वह उमरा के तेज को देख कर विस्मित हुआ। गम्भीर और थोड़ा बोलने वाला नव युवक जो कभी मुस्कराते नहीं देखा गया था, इस वृद्ध के सामने सन्मान करने पर विवश हुआ, यद्यपि उसने लड़ाई में उसको हरा दिया था। उसने हठ पूर्वक उमरा से प्रार्थना की कि आप किले से बाहर आकर सन्मान स्वरूप शाही फरमान को स्वीकार कीजिए और केवल इतना ही स्वीकार करने पर मेवाड़ से

मुसलमानों की सेना हटा ली जायगी। परन्तु राना ने साफ इनकार कर दिया और कहा आप के पास में केवल दोस्ताना मुलाकात करने आया हूं इस के सिवाय में कुछ नहीं कर सकता।"

इस घटना के थोड़े दिनों के पश्चात् उमरा का पुत्र कर्ण सिंह अजमेर में बादशाह के पास सलाम और मुजरा के लिए हाज़िर हुआ, और शाहजहां के विशेषरूप से कहने पर उसको जहांगीर के दाहनी ओर बैठने को जगह दी गई। जहांगीर कृपा के लहजे में कहता है "कर्ण बहुत शरमीला था, और दरबार के आचार व्यवहार से पूर्णतः अनभिज्ञ था।" सम्भव है कि यह शरमिलेपन ही का कारण होगा कि हास्य प्रिय बादशाह के सामने भी कर्ण की झिझक दूर नहीं हुई। बादशाह राजपूतों की तरह अफ़ीम खूब खाता था, और सायंकाल को अंग्रेजों के साथ मदिरा पिया करता था। शाहजहां ने इस राजकुमार को प्रति दिन मूल्यवान तुहफे प्रदान किए, और उसको अपनी बेगम नूरजहां के पास ले गया जो स्वयम बादशाह पर आज्ञा करती थी। सुनहरा खंजर, अंगूठियां, ईराकी घोड़े, मोतियों के माले बाज़ गलीचे अतर और सुनहरे बर्तन दिए गए।

जहांगीर लिखता है " उस रोज से लेकर लौटने के दिन तक कर्ण को दस लाख रुपए की चीजें दी गईं। इस में एकसौ दस घोड़े, पांच हाथी, और मेरे पुत्र की दी हुई चीजें शामिल नहीं।"

क्या यह सब वस्तुएं मेवाड़ की स्वाधीनता के सन्मुख कोई हकीकत रखती हैं? राजकुमार कर्ण ने स्वयम इसको अनुभव किया, और उमरा की तो दशा न पूछिए।

तुलसी पेड़ न छोड़िए, जंह तंह पेड़ बिकाय।
बिना पेड़ का चाम्हा महंगी मोल बिकाय।

मेवाड़ राना को मिल गया, वह देश पठानों और सेना के अत्याचारों से बच गया, परन्तु राना आज से दिल्ली का आज्ञाकारी बन गया। उन हाथी घोड़ों का क्या मूल्य था जब वह मेवाड़ के लिए नहीं वरंच दिल्ली की सेना के लिए काम में लाए जाने लगे। उमरा की दृष्टि में उन सोने की मूर्तियों की क्या हकीकत थी जो उसकी प्रसन्नता के लिए दिल्ली से जगत सिंह उसका पोता बादशाह की ओर से लाया था। जहांगीर ने उत्तम २ पदार्थ देकर उसके लड़के को आकृष्ट कर लिया था, उमरा जानता था कि उसके अपने खास के लड़के की मूर्ति आगरा के आराम बाग के एक कोने में स्थापन कर दी गई है जो प्रत्यक्षरूप में मेवाड़ की बेइज्जती का चिन्ह समझी जाती होगी। इन सब बातों के होते हुए कब सम्भव था, कि उसको दिल्ली की आधीनता में आराम मिलता!

उमरा इसको कैसे सह सकता था, सारी आयु वह लड़ता भिड़ता रहा, पहले अपने पिता के साथ, और फिर स्वयम मेवाड़ का राना होकर ताकि उस देश पर धब्बा न आवे। परन्तु परिणाम क्या हुआ? जब कर्णसिंह दिल्ली दरबार से लौट आया, तो उमरा ने मेवाड़ के सब सरदारों को बुला भेजा, और उनको सम्बोधन करके कहा "भाइयो! अब आधीन होकर राज्य करना होगा इसलिए मैं राज्य के काम से हाथ उठाता हूं"। यह कहकर उसने अपने हाथ से बेटे के माथे पर तिलक लगा दिया और उस से कहा "मैं आज से मेवाड़ की

मान मर्य्यादा तुम्हारे हाथ में सौंपता हूं "। यह कहकर उस ने राज मन्दिर को त्याग दिया और फिर जीते जी वहां नहीं आया। किले से आधे मील की दूरी पर उदयसिंह का महल झील के किनारे बना हुआ था, जो चित्तौड़ के विध्वंस होने के पश्चात् बनाया गया था, उमरा ने अपने आप को उस में बन्द कर दिया। राज्य के प्रबन्ध में कोई सम्बन्ध नहीं रक्खा, और न इस महल के फाटक के बाहिर कभी वह देखा गया। पांच वर्ष के पश्चात् उसकी लाश चिता पर जलाने के लिए बाहर निकाली गई!

आज़ादी से अच्छी है कहां कोई भी दौलत,
आज़ादी ही है दहर* में बस शानो शराफ़त।
आज़ादी गई फिर कहां इज्ज़त कहां हुरमत,
आज़ादी से इफ़लास भी है सरवतो शौकत।
जब शेर पड़ा कैद में वह शेर नहीं है,
गो ज़िन्दह हो पर मरने में कुछ देर नहीं है।

उस समय से मेवाड़ की दशा बदल गई, उसके इतिहास के पृष्ठ उलट गए। अभी तक वह दिल्ली की अधीनता के घेरे से बाहर था, अब वह उसके देशीय मामलों में भाग लेने लगा। यह सौभाग्य का विषय है कि मेवाड़ इस समय अच्छे राना के हाथों में था। इतिहास में और वीर पुरुषों का जहां वर्णन है वहां इस राना के सम्बन्ध में केवल इतना लिखा है, कि वह प्रतिष्ठित, अपने वचन को पालन करने वाला,

*दुनिया।

उन्नत चेता और बुद्धिमान था। और उसके आठवर्ष के राज्य में मेवाड़ सुख शान्ति के साथ उन्नत करता गया।

मेवाड़ पर बादशाह की बड़ी कृपा दृष्टि रहती थी, उस का राजकुमार शाही तख्त के दाहनी ओर बैठाया जाता था। और रजवाड़े उस से दूसरे दर्जे के समझे जाते थे। शाहजहां और भीम दोनों सच्चे मित्र थे। वह कर्ण का छोटा भाई था, और जो सेना मेवाड़ की ओर से शाही कुमक के लिए आती थी वह उसी के आधीन रहती थी। शाहजहां की प्रार्थना पर जहांगीर ने उसको राना की पदवी दी और थोड़ा को जागीर के तौर पर प्रदान किया, परन्तु थोड़े ही दिनों के पीछे बादशाह को अपनी इस दातव्यता पर पछताना पड़ा।

जहांगीर ने परवेज़ को अपना प्रतिनिधि— बनाया था, नूरजहां किसी और बेटे को तख्त पर बैठाना चाहती थी। यह शाहजहां से बड़ा द्वेष रखती थी। शाहजहां उन दोनों की नीयत से अवगत था इसलिए उसने भीम और उसके साथी मानसिंह सकतावत के साथ मिल कर यत्न करना आरम्भ किया, जहांगीर को सन्देह हुआ कि दाल में कुछ न कुछ काला अवश्य है। इसने दोनों मित्रों को प्रथक कर देना उचित समझा। सोच विचार कर उसने भीम को गुजरात का सूबेदार नियत करके सन्मान के साथ दूर देश में भेजना चाहा, परन्तु भीम ने साफ़ इनकार कार दिया, और शाहजहां व उसके साथ खुल्लम खुल्ला बाग़ी बन गए। परवेज़ ने एक लड़ाई में उमरा के साथ बड़ी बदसलूकी की थी, राजपूत उस से महा

घृणा करते थे, वह बधकर दिया गया, और शाहजहां ने अपने अस्त्वत्व की रक्षा के लिए हथियार उठा लिए। भीम सकतावत और महाबत खां जो स्वयम राजपूत था उसके सहायक बन गए।

जहांगीर ने सेना एकत्र की, और अपने पुत्र को दण्ड देने की इच्छा से कूच किया। राजपूतों की सहानुभूति विशेष कर शाहजहां के साथ थी क्योंकि मुसलमान होने पर भी वह उदारचित्त और अच्छा था, मारवाड़ का राजा गज सिंह शाहजहां का मामा था, उसके विषय में लोगों को सन्देह था कि वह किसकी सहायता करेगा?

जब राजा गज सिंह अपने राठौरों को साथ लिए हुए जहांगीर के खेमे में दाखिल हुआ तो बादशाह बहुत ही प्रसन्न हुआ और अपने दरबारियों के सामने गज सिंह के हाथों को चुम्बन किया। तथापि जब बनारस के समीप दोनों ओर की सेनाएं युद्ध के लिए खड़ी हुईं तो जहांगीर ने किसी मंत्री की सलाह से अम्बर के दूसरा राजा को सेना के संचालन का कार्य्य प्रदान किया। राठौरों को यह बात बुरी लगी और गज सिंह अपनी सेना को हटाने लगा, ताकि राठौर जहांगीर के लिए लड़ने से पृथक रहें।

उसी समय भीम ने राजा गज सिंह को कहला भेजा, "राठौर अलग क्यों खड़े हैं या तो मेरे साथ मिल जावो या मुझसे लड़ने के लिए तैयार होजावो"। परिणाम यह हुआ कि नादान नौजवानों के ताने से नाराज़ होकर राठौरों ने

तलवारें खींच लीं और ऐसा लड़े कि उसी दिन शाहजहां की हार हो गई, भीम सिंह मारा गया, मान सिंह घायल हुआ, शाहजहां और महाबत खां अपने २ प्राण बचा कर उदय पुर की ओर भाग निकले।

राना कर्ण सिंह चतुर मनुष्य था उसने विद्रोह में भाग नहीं लिया, यद्यपि वह अपने भाई को अपने वश में न रख सका, तथापि वह फिर भी बादशाह का सहायक रहा. जब शाहजहां भाग कर उसके पास आया तो उसने बड़े आदर व सन्मान से उसका स्वागत किया, उसकी महमान दारी की कोई बात बाकी उठा नहीं रक्खी, झील के बीच में एक सुन्दर मकान बनवा दिया गया ताकि शाहजहां और उसके साथी जिस प्रकार चाहें आनन्द पूर्वक दिन व्यतीत करें। सब प्रकार की सामग्री वहां मौजूद थी एक संग मर २ का तख्त भी वहां तैय्यार करवा दिया गया था और ऊपर छत्र ताना गया था, आंगन में एक मुसलमान फकीर के सन्मानार्थ रौजा बनवा दिया गया था, राना कर्ण स्वयम उसका बड़ा विश्वासी था।

इन सब बातों के होने पर भी शाह जहां का चित्त उदय पुर में प्रसन्न नहीं था, उसका मन रह २ कर भीम की प्रीति में व्याकुल हो जाता था जिसने इसके लिए प्राण दिए थे। मान सिंह भी थोड़े ही दिनों के पीछे घावों के कारण परलोक को सिधार गया, मान सिंह और भीम में अत्यन्त गाढ़ी प्रीति थी दोनों एक तन और जान समझे जाते थे। प्रायः भीम की ओर से उसके पास खाने पीने के पदार्थ और उपहार भेजे जाते थे, परन्तु किसी न किसी भान्त एक दिन मान सिंह को

भीम के मरने का पता लग गया। उसके भी राना सांगा की तरह अस्सी से अधिक घाव लगे थे और सब पर टांके दिए गए थे, शोक और निराशा की दशा में उसने तुरन्त ही सब टांके खोल दिए और भीम का नाम लेते हुए इस दुनियां से चल बसा।

ऐसा सच्चा मित्र था, प्रेम प्रीति के मांहि।
मित्र मरण को श्रवण करि, जिया एक क्षण नांहि।
(ईशानदेव)

दो वर्ष तक शाहजहां इधर से उधर मारा २ फिरता रहा, परन्तु उसका हैडक्वार्टर (Head Quarter) उदय पुर ही था, पिता से क्षमा प्रार्थना करने में उसने अपने उद्देश्य की सिद्धि देख कर अपने दो लड़के अर्थात् दारा और औरंगजेब को बादशाह के दरबारमें भेज दिया, महाबत खां को इस बात पर विश्वास नहीं था उसने सकतावत और मेवाड़ के सरदारों से मिल मिला कर ऐसे यत्न से अपना काम निकाला जो कदाचित आज तक किसी राजपूत से नहीं हुआ।

जहांगीर ने महाबत खां को दरबार में बुला भेजा ताकि वह अपने दोषों का उत्तर दे। जनरल जानता था कि बादशाह की क्या इच्छा है। चिरकाल तक वह दरबार में जाने से इनकार करता रहा, बादशाह की ओर से बराबर बुलावे पर बुलावा होते रहे, थोड़े दिनों के पश्चात् उसे मालूम हुआ। कि महाबत खां पांच हजार राजपूतों को साथ लिए हुए शाही खीमे में दाखिल हो गया।

जहांगीर उस समय विद्रोह दमन करने की इच्छा से जा

रहा था, और नावों के पुल के द्वारा व्यास नदी के पार जाने को था, सब सेना नदी के पार जा चुकी थी, केवल बादशाह, नूरजहां और थोड़े से मनुष्य नदी के इस पार रह गए थे ताकि धूल मिट्टी कम हो जावे तो उस पार जावें।

मार्च का महीना प्रातःकाल का समय था, नूरजहां अपनी सहेलियों के पास थी, जहांगीर तख्त पर बैठा हुआ था पांव की आहट पाकर वह उठ खड़ा हुआ और देखा कि राजपूत खीमे में भर गए हैं उसने तलवार म्यान से खींच ली। तत्काल महाबत खां दिखाई दिया, जो दरबार में आने से इनकार करता था! उसने जोर से चिल्ला कर कहा "नमक हराम महाबत खां यह क्या है"?

महाबत खां ने सलाम करके दीनता और सन्मान पूर्वक बिन्ती की 'जहां पनाह दुश्मनों की चालाकी मुझ को हजूर तक पहुंचने नहीं देती थी'। जहांगीर को क्रोध तो अवश्य था उसने शपथ खाई कि इस बागी को अवश्य इस धृष्टता का दण्ड दूंगा परन्तु समयानुसार देखकर उसने अपने क्रोध को थाम लिया, और दोस्ताना लहजे में बात चीत आरम्भ की।

सबसे पहले महाबत खां ने बादशाह को सलाह दी कि आप हाथी पर सवार होलें ताकि सब को जहां पनाह की कुशलता का विश्वास हो जाय, और दुष्ट मनुष्यों की किम्बदन्ति का प्रभाव न पड़ने पावे"। जहांगीर न स्वीकार करके कहा मैं दूसरे खीमे में जाकर वस्त्र बदल लूं। परन्तु महाबत खां समझ गया कि वह नूरजहां से सलाह करना चाहता है। महाबत खां जितना नूरजहां से डरता था उतना जहांगीर से भी नहीं

डरता था उसने कहा "आप यहां ही कपड़े पहनिए", जहांगीर ने ऐसा ही किया। मगर जब उसने घोड़े पर सवार होने की इच्छा प्रगट की तो महाबत खां ने विनय की कि "हाथी से बढ़ कर अच्छी और शानदार दूसरी सवारी नहीं होती"। बादशाह हाथी पर सवार हुआ। और जब महाबत ने चाहा कि बादशाह को राजपूतों के बीच से निकाल ले जाय, तो एक तलवार के हाथ से उसका सिर उड़ा दिया गया और जहांगीर को महाबतखां के हाथी पर बैठाया गया। दो हथियार बन्द राजपूत इधर उधर पहरे पर नियत किए गए तीन पांच करना व्यर्थ था दो हज़ार राजपूतों ने शाही खीमे को घेर रक्खा था, जहांगीर समय के अनुसार अपने भाग्य के भरोसे पर चुप रहा, महाबतखां के नौकर सेवा के लिए हाज़िर हुए। बोतल गिलास जो विशेष कर उसके पास बहुत रहा करते थे प्रस्तुत किए गए।

नूर जहां बड़ी चतुर स्त्री थी जब उस को मालूम हुआ कि बादशाह को महाबतखां ने पकड़ लिया है तो उसने मर्दों के वस्त्र धारण किए, और भेष बदल कर पालकी पर बैठ गई और पुल के उस पार पहुंच गई। गार्द ने समझा कोई अपना आदमी है, इसलिए रोक टोक नहीं हुई। जब वह शाही सेना में पहुंची तो सेनापति को डांट बतानी आरम्भ की और कहा "देखो कैसे शर्म की बात है कि तुम्हारे होते हुए एक साधारण मनुष्य बादशाह के साथ इस प्रकार का सलूक करता है"।

एक बहादुर सेना पति फिदवी खां रात के समय जहां-

गीर के छुड़ा लाने की इच्छा से राजपूतों के खीमे में गया, परन्तु उसको अकृतकार्य्यता हुई और कठिनता से वह अपने प्राण बचाकर भाग आया। और शेष उसके साथी मारे गए अथवा नदी में डूब गए। दूसरे दिन नूरजहां ने स्वयम हाथी पर सवार होकर तीर कमान हाथ में लेकर धावा किया। राजपूतों ने पुल जला दिया था, इसलिए शाही सेना ने पानी में से गुजरना चाहा कितनों को नदी की धार बहा ले गई कितने तैरने लगे और सब तर बतर हो गए। राजपूतों को इस ओर से बचाव का पूरा २ अवसर प्राप्त था और जब गोला बारी आरम्भ हुई तो सेना पानी की ओर झुकी और बहुत से मनुष्य मारे गए।

महाबत खां को जय प्राप्त हुई। परन्तु यह विजय चिरस्थाई नहीं थी। नूर जहां ने देखा कि मुझे जय लाभ करना असम्भव है वह साहस और वीरता से महाबत खां के खीमे में चली आई और कहने लगी "मैं अपने पति के साथ कैद के दुःखों में शामिल रहूंगी"। उसने अज्ञानता से उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और नूर जहां को अवसर मिल गया कि वह महाबत खां को परास्त करे। महावत खां की कठोर क्रियाओं ने उसके मुसलमान साथियों को भी नाराज कर रक्खा था, वह राजपूतों को किसी बात में बढ़ने देना नहीं चाहते थे, महाबत खां को उनकी तरफ़दारी स्वीकार थी परिणाम यह हुआ कि एक दिन बादशाह कैद से छूट गया, और महाबत खां को फिर पहले की तरह भागना पड़ा।

इस घटना के थोड़े दिन पीछे मेवाड़ के राना का देहान्त

हुआ। एक भाट हंसी के तौर पर लिखता है कि 'कर्ण का प्रशंसा की माला कुम्हला रही है' क्योंकि उस को सुख शान्ति का राज्य प्रिय नहीं था। जगतसिंह उसकी जगह गद्दी पर बैठा और अपने पिता की तरह शाहजहां की प्रीति का दम भरता रहा।

अभी शाहज़ादा शाहजहां उदयपुर में था सहसा उसके पास सन्देशा पहुंचा कि जहांगीर मुक्त होने के पश्चात् कश्मीर की घाटी में दमः के रोग में ग्रस्त हो गया। और उसी समय राना और अन्य आधीन रियासतों ने उसे नज़रें गुज़ारीं। विदा होते समय नये बादशाह ने मेवाड़ के पांच इलाके वापस कर दिए जो मुगलों के साथ आ गए थे। और एक मूल्यवान हीरा दिया और आज्ञा दी कि अब चित्तौड़ के किले की मरम्मत करवा लो।

उदयपुर में शाहजहां के आश्रय लेने की दूसरी यादगार उसकी केसरी पगड़ी और ढाल है जो फकीर के रोजा में अब तक वर्तमान है। यह पगड़ी शाहजहां ने राना को दी थी और राना की पगड़ी अपने सिर पर रख ली थी।

छब्बीस वर्ष तक जगतसिंह ने सुख व शान्ति के साथ राज्य किया। शाहजहां को उसके और उसकी प्रजा के साथ विशेष प्यार था और राना को अब अवसर प्राप्त था कि जिस तरह चाहे मेवाड़ को सुन्दर बनावे, मेवाड़ियों की तलवारों को मूर्चा लगने लगा, परन्तु शाहजहां के पीछे ही एक ऐसा समय आ रहा था कि जब कि राजपूतों और मुगलों से ऐसी गुत्थम-गुत्था कुश्ती हुई कि राना प्रताप के सिवा और ऐसा युद्ध सुना नहीं गया।

(१५)

मारवाड़ के विशेष शूरमा

(१)

उमरावसिंह

इस तरह पै मरने को मुसाफ़िर हुए तैयार,
तलवारें मियानों से निकलने लगीं यकबार।
ढालों का सरे बज्म उठा अब्र धूआं धार,
हर सू थी चमक नेज़ों की और तीरों की बोछार।
सरता बक़दम ख़ून में तर होते थे रजपूत,
तलवारों में आका के फिदा होने थे रजपूत।

५ एडवार्ड केनिंग—इङ्गलैण्ड का प्रसिद्ध व उदारचित्त कवि लिखता है कि "यदि संसार में कोई ऐसा स्थान है कि जहां वीरों की हड्डियां मार्ग की धूलि बनी हैं तो वह भारत वर्ष का राजस्थान ही कहा जा सकता है। यह गौरव और किसी को कठिनता से प्राप्त हुआ है"। और यह सत्य भी है। बांका राजपूत सचमुच वीरता और साहस का रूप बन कर आया था। जिस के रगोरेशा में मरदानगी स्वामी भक्ति शूरता वीरता, कूट २ कर भरी हुई थी। क्या मजाल शेर उस के साथ आंख मिला सके। यदि संसार के इतिहास में कोई जाति ऐसी हुई है जो अपने सरदार के झण्डे की कदर करती थी, जो असली वाध्यता के नियम से अवगत थी, जो स्वामी के पसीना गिरने के समय अपना खून बहाने को

तैयार हो जाती थी तो वह केवल आर्य्यावर्त्त की राजपूत जाति है।

उमरावसिंह जिस का हम आप को आज वृत्तान्त सुनाना चाहते हैं। राजपूती वीरता का उदाहरण था। राजपूतों की अद्वितीय वीरता को देख कर दिल्ली के मुगल बादशाहों ने उन को अपना सहायक बना लिया। और दरबार में उन के साथ बहुत अच्छा बर्ताव किया जाता था इसलिये बहुत से राजपूतों ने राजस्थान छोड़ कर दिल्ली में रहना स्वीकार किया था। अकबर के समय से ले कर शाहजहाँ के समय तक यह दिल्ली की दहिनी बांह बने रहे। और कभी नहीं सुना गया कि रणक्षेत्र में उन्हों ने शत्रु के सामने पीठ दिखलाई हो, किसी २ अवसर पर हजारों के दल को परास्त करने के लिये इने गिने सौ दो सौ राजपूत गये तो वह या तो उन को परास्त कर के आए अथवा एक २ कर के सब मर मिटे, परन्तु उन्हों ने यह कभी नहीं कहा कि हम क्यों इतने अधिक बहु संख्यदल से लड़ने के लिये भेजे जाते हैं। नगर की चार दीवारी के अन्दर भी उन के लड़ाके स्वभाव वाले किसी न किसी प्रकार का युद्ध बरपा रखते थे। और बादशाह को अत्यन्त बुद्धिमानी और दूरदर्शिता से काम लेना पड़ता था। इस में कोई सन्देह नहीं कि बादशाह को महान समझ कर वह हर प्रकार से उस की सेवा व सन्मान करते थे, तथापि राजपूत प्रकृति ने कभी इस बात का आज्ञा नहीं दी कि वह चापलूसी और खुशामदी दरबारियों के अनुचित सलूकों को सहते, वह उन को अपने सामने कुछ नहीं समझते थे। परिणाम यह होता था, कि जब कभी रंज, तकरार की नौबत आई तो राजपूतों की चमकती

हुई खड्ग ने उसी समय म्यान से निकल कर हमेशा के लिये उस झगड़े को समाप्त कर दिया। शोक है राजपूतों में अफीम खाने की आदत बहुत दिनों से पैदा हो चुकी थी, और जब वह नशा की अवस्था में बादशाह को किसी का अनुचित पक्ष-पात करते देखते, तो बस अपने आपे से बाहर हो जाते थे। बादशाहों ने उन के रहने के लिये शहर के भीतर विशेष जगह दे रक्खी थी और यथा सम्भव इस बात का ध्यान रखते थे कि वह सुख और शान्ति के साथ रहें। परन्तु कभी २ दरबार वालों के बर्ताव से अप्रिय दशा पैदा हो ही जाया करती थी।

उन राजपूत सरदारों में से जो शाहाजहां के दरबार में हाजिर रहा करते थे उमरावसिंह राजा गज का बड़ा लड़का भी था और इसलिए राजगद्दी का अधिकारी था, मारवाड़ की प्रजा शान्ति प्रिय थी। गज नेक था, परन्तु राजकुमार बाल्य काल से ही महा लड़ाका और मनचला था, अभी उसकी आयु मुश्किल से दस वर्ष से ऊपर हुई होगी कि उसने अपनी आधीनता में सैंकड़ों बहादुर राजपूतों की जथा स्थापन करली। जो देश के विविध स्थानों में जाकर तरह २ के उपद्रव करते थे। प्रजा ने देखा कि उमराव सिंह का सुधारना कठिन है तो वह राजा के पास प्रार्थनापत्र पर प्रार्थनापत्र भेजने लगे कि राजकुमार को देश निकाला का दण्ड दिया जाय। जो लोग आज कल व्यक्ति गत राज (शख्सी हकूमत) की अनुचित दशाओं को देखकर उससे घृणा करते हैं, उनको स्मरण रहे कि राजपूतों की व्यक्तिगत हकूमत में प्रजा की सम्मति व इच्छा का आदर वैसा ही किया जाता था, जैसा कि लोग राजा को

सेवा के लिए हर समय अपना तन मन धन अर्पण करने के लिए तैयार रहते थे। मारवाड़ निवासियों ने कहा उमराव सिंह अत्यन्त शूरमा और योधा है कोई शत्रु उसके सामने ठहर न सकेगा। परन्तु ऐसे समय में जब कि न तो किसी शत्रु का भय है और न किसी युद्ध की शंका है वह अपने लड़ाके स्वभाव के अनुसार नाहक प्रजा की शान्ति में विघ्न डालता रहेगा" !

राजा गज अपने पुत्र को आधीन नहीं रख सकता था इसलिए विवश होकर उसको पीड़ित प्रजा की पुकार माननी पड़ी। एक दिन दरबार में सब बड़े २ सरदार और अमीर बुलाए गए और उनके सामने आज्ञा दी गई कि उमराव सिंह को आज से मारवाड़ की गद्दी का कोई अधिकार नहीं है और न उसको देश में रहने की आज्ञा है। मारवाड़ का राजा अपनी प्रजा की प्रार्थना पर उमराव सिंह को हमेशा के लिए देश त्यागने की आज्ञा देता है"।

उमराव सिंह जिस का नाम सुन कर शेर कांप जाते थे दरबार में आया और जब उसको राजा की आज्ञा सुनाई गई तो उसने गर्दन झुका ली और खुशी २ स्याह वस्त्र धारण किए, कमर से काली कटार लटका ली, और काली ढाल पीठ पर डाल कर अपने पिता और अन्य दरबारियों को अन्तिम प्रणाम करके बाहर आया, यहां एक स्याह रंग का घोड़ा कसा कसाया खड़ा था वह उस पर सवार होकर देश त्यागने ही को था कि सैंकड़ों नौजवान राजपूत उसके इर्द गिर्द मण्डल बांध कर खड़े हो गए और कहने लगे, जैसे हम खुशी

के समय तुझ को अपना सरदार समझते थे वैसे ही अब विपद् काल में भी तेरा साथ देंगे। उमराव सिंह ने नम्रता से उत्तर दिया। मित्रो! तुम्हारी प्रीति का मैं कृतज्ञ हूं, परन्तु मुझको केवल मारवाड़ का राजा देशत्यागी नहीं बना रहा, परन्तु मारवाड़ की प्रजा ने यह आज्ञा दी है। मैं जाति का शत्रु नहीं हूं। यदि जाति मुझ को देशत्यागी बना रही है तो मैं खुशी २ चला जा रहा हूं। ऐसा न हो तुम्हारे साथ होने से कुछ लोग और का और समझ लें और भांड अपने गानों में आगामी नसलों को सुनाएं कि उमरावसिंह जाति का शत्रु बन गया था, इस लिए मैं अकेला जाऊंगा। मुझे देश और जाति से लड़ाई करना स्वीकार नहीं है। यदि राजा मुझ को राज्यपद से वंचित करता तब भी कहने सुनने की बात न थी परन्तु अब मेरे लिए कुछ भी कहने का स्थान नहीं है। और मैं खुशी से देश को त्याग करूंगा"। यह शब्द सुनकर राजपूतों के हृदय भर आए। और अन्त में बहुत कहने सुनने के पश्चात् केवल ग्यारह नौजवानों ने उसी प्रकार काले वस्त्र धारण करके और काले रंग के घोड़ों पर चढ़कर अपने सरदार के साथ मारवाड़ को अन्तिम नमस्कार किया। और फिर जीते जी उसकी ओर लौटने की इच्छा नहीं की।

उस दिन सारे देश में शोक मनाया गया क्योंकि उस समय यद्यपि नियम के अनुसार केवल ग्यारह लड़कों को उमरावसिंह के साथ जाने की आज्ञा थी परन्तु सहस्रों की संख्या में उत्साह और साहस से भरे हुए राजपूतों ने अपने माता पिता को छोड़ कर उमरावसिंह का साथ देना उचित

समझा. और मारवाड़ की सीमा से पार होने के पश्चात शेर ने उन सच्चे साथियों में से प्रत्येक को गले लगाया और सब मिल कर उत्तर की ओर चल पड़े।

आधुनिक समय जो नौजवान अमरीका आदि जाने की इच्छा करके रह जाते हैं, वह इस साहसी वीर के जीवन चरित्र से शिक्षा लाभ करें।

आगरा उस समय भारत वर्ष की राजधानी थी। मनचले राजपूतों का आशा थी कि उसके टिकने का प्रबन्ध अवश्य वहां होगा और बादशाह कदर करेगा। जिस समय यह स्याह वस्त्र धारी जथा आगरे की गलियों से निकला, सारे नगर में धूम मच गई। शाहजहां स्वयम एक ऊंचे कोठे की छत पर बैठा हुआ उनकी सज धज और बांकपन को देख कर मोहित हो रहा था, उसने राजकुमार के देश निकाला वृतान्त सुनकर अपने दरबारी से मौखिक कहला भेजा कि यदि तुम शाही सेना में रहना स्वीकार करो तो तुम्हारे लिए उचित प्रबन्ध किया जा सकेगा"।

उमरावसिंह ने स्वीकार कर लिया और दूसरे दिन उस को तीन हजारी की पदवी दी गई।

उमरावसिंह स्वतन्त्र भावी था। सेर और शिकार का बड़ा प्रेमी था, शेर. हाथी और पाढ़े का शिकार उसको बहुत भाता था, दरबार में रहना उसको अप्रिय था, नियमों की पाबन्दी. दरबार की दैनिक हाजिरी, महीनों नाच रंग की सभाओं को देखकर उसको घृणा हुआ करती थी। शेर की तरह वन में विचरना उसको अधिक प्रिय था, और इस लिए

वह प्रायः इसी प्रकार के कामों में अपना मन बहलाया करता था। एक दिन ठीक दरबार के समय शाहजहां ने पूछा "राव उमराव सिंह कहां है" लोगों के बतलाने से ज्ञात हुआ कि वह बिना छुट्टी लेने के आगरा से चला गया है और सारा समय सैर व शिकार में व्यतीत करता है। इसके भिन्न दरबारियों ने अवसर पाकर उसकी और भी बहुत सी चुगलियां कीं।

दो सप्ताह के पीछे उमराव सिंह शिकार से लौट आया, और जब वह दरबार में गया तो शाहजहां ने उसे लज्जित किया कि इस प्रकार बिना आज्ञा चले जाना उचित न था और इस अपराध के लिए तुमको दण्ड देना होगा"। उमरावसिंह अपने मन में लज्जित हुआ क्योंकि वास्तव में उसकी क्रिया नियम के विरुद्ध थी। तथापि दूसरे ही क्षण में उसके तेवर बदल गए, उसने निर्भीकता से उत्तर दिया "मैं शिकार को गया था, और ऐसे मनुष्य से जिस की सम्पत्ति केवल तलवार हो दण्ड प्राप्त करने की इच्छा रखना व्यर्थ है"। बादशाह का हृदय इस उत्तर से और भी बिगड़ गया।

जब वह घर लौट कर आया, तो सलावतखां जो तनख्वाह बांटने के काम पर नियुक्त था वहां मौजूद था, बादशाह ने दरबारियों के कहने से जुरमाना कर ही दिया और सलावतखां उसके प्राप्त करने के लिए भेजा गया। उमरावसिंह की आंखों में खून उतर आया। उसने कहा, मैं एक कौड़ी न दूंगा। बातकहाव बढ़ गया और उमरावसिंह ने सलाबतखां को वहां से निकलवा दिया।

सलावतखां उसी समय रोता पीटता बादशाह के पास गया और राव की शिकायत की। अभी कचहरी बन्द नहीं हुई थी सब लोग बैठे थे, एक चोबदार दौड़ा हुआ उमरावसिंह के घर पर आया कि अपने अपराध का चल कर उत्तर दो। उमरावसिंह उसी समय वहां चला गया।

शाहजहां तख्त ताऊस पर बैठा हुआ था, आंखें क्रोध से लाल थीं, सलावतखां मन में खुश था कि आज वैरी को दण्ड दिया जायगा। जिस समय उसने मुंह से निकाला कि "तुमने शाही नौकर होकर नमकहरामी की" तो उमराव सिंह अपने क्रोध को थाम न सका उसका हाथ तलवार के कब्जे पर गया यद्यपि आगे सैंकड़ों दरबारी मौजूद थे परन्तु उसने उछल कर एक ऐसा हाथ मारा कि उसका सिर चार गज के फासले पर जाकर गिरा, और फिर गर्ज कर कहा, "देख, मैं इसका नौकर हूं। सूर्यवंशी किसी और की नौकरी नहीं करता"।

सारे दरबार में खलबली पड़ गई, प्रथम इसके कि कोई उसके पकड़ने का साहस करे उमरावसिंह दोनों हाथों से तलवार चलाने लगा। क्रोध के मारे उसके नेत्रों में खून उतर आया था, अपने बेगाने की उसे सुध नहीं थी। कई दरबारी उसके हाथ से मारे गए। शाहजहां झटपट तख्त से उतर कर भाग गया। यद्यपि दरबार में सैंकड़ों मनुष्य वर्तमान थे, परन्तु किसी की हिम्मत नहीं हुई कि उसका सामना करता। आखिर उसके साले ने छल से खुशामद की बातें करके अचानक उस के कलेजे में कटार भोंक दी तब भी वह प्राण त्यागने तक तलवार चलाता ही रहा।

इतिहास ठीक पता नहीं देता कि कितने दरबारी उसके साथ में मारे गए, परन्तु जिस समय उमराव सिंह के साथियों को अपने सरदार के मारे जाने की खबर हुई उनके मुख से यह शब्द निकले "हे सिंह पुरुष! हमने विपद् काल में तेरा साथ दिया था अब मृत्यु के समय भी तेरा साथ देंगे"। सब ने उसी समय केसरी वस्त्र धारण किए और चम्पावत व कम्पावत नामी सरदारों की आधीनता में वह दरबार आम की ओर चले पहरे वालों ने रोका परन्तु समुद्र की लहरों का कौन सामना कर सकता था वह सब को अपनी तलवारों से टुकड़े टुकड़े करके अजारी दरवाजा की राह से घुस गए, और जिस समय यह थोड़े से राजपूत मुगलों पर टूट पड़े, तो दम के दम में हजारों को जमीन पर सुला दिया, उनके रक्त से संगमर-मर का फर्श लाल हो गया। आगरा के खम्बे आज तक उसकी साक्षी देते है, और समय भी कदाचित उनके इस प्रकार वीरता से लड़ने की घटना को इतिहास के पृष्ठों से कभी दूर न कर सकेगा। इस प्रकार इन असाधारण वीरता रखने वाले क्षत्रियों ने उमराव सिंह की लाश को नमस्कार करते हुए अपने प्राण त्यागन किए।

जब सब मारे गए और एक भी राजपूत जीवित नहीं रहा, तो उमरावसिंह की पतिव्रता स्त्री जो बूंदी की राजकुमारी थी खून से रंगे हुए फर्श पर पांव रखती हुई पति की लाश के पास आई मुगल सिपाही उसकी निर्भयता देख कर दंग रह गए, उसने निर्भीकता से पति की लाश को पीठ पर लाद लिया और उसके साथ सती होने के लिए घर पर उठा लाई और अपने

पति की वीरता की प्रशंसा करते हुए खुशी २ इस धार्मिका देवी ने भी मौत में अपने पति का साथ दिया।

नजरा का फाटक जिसमें उमरावसिंह की लाश बाहर गई थी सदा के लिए बन्द कर दिया गया। शाहजहां बहुत अच्छा बादशाह हुआ है। उसने लाश को उढ़ाने के लिए बहुत कीमती रेशमी वस्त्र भेजे, और जब उसने सुना कि किस प्रकार कायरों ने अकेले जन को छल कपट से बध किया, तो उसको शोक हुआ, उसने कहा "जिस फाटक से ऐसे शूरमा की लाश निकली है उसका बन्द ही करा देना अच्छा है"। वह उस समय से लेकर अब तक बराबर बन्द था, अब अंग्रेजों ने खुलवा दिया है। कहते हैं कि दीवार के दर्रों में एक जबरदस्त सर्प रहा करता था जब अंग्रेज इञ्जिनियर ने दीवार साफ कराई तो वह निकल कर कपतान की दोनों टांगों के बीच से होकर नदी की ओर चला गया।

---

(२)

मुकुन्ददास नाहरखाँ

ज़ी जाहो[1] ज़ी जलालतो[2] ज़ी फ़हमो[3] ज़ी शऊर,

यकता[4] मगर न दिल में तकब्बुर न कुछ गरूर,*

नशह शबाबो[5] शौक़ शुजाअत के मैय[6] में चूर,

---

* (१) उच्च पदवी वाला, (२) उच्च तेज वाला, (३) उच्च ज्ञान वाला, (४) अद्वैत, (५) युवावस्था, (६) मदिरा।

हरवक्त मर बकफ़ था वह सुलतान के हजूर।[७]
ऐसा मुकुन्द दास शुजाओ दलेर था,
जां बाज़ था जरी था बहादुर था शेर था।

मुकुन्ददास उमरावसिंह का छोटा भाई था जिसने जसवन्तसिंह वालिए जोधपुर के समय में नाम पैदा किया था, यह राजपूतों के कम्पावत कुल का सरदार था, एक समय औरंगजेब ने मारे डर के उसको बन्दीखाने में रखना चाहा मुकुन्ददास ने कहला भेजा जब मैंने बादशाह की सेवा के लिए वचन दिया है तो यह पेश बन्दी और शक व शुबहा का बर्ताव वृथा और अनावश्यक है शेरों के साथ लोमड़ी का बर्ताव करना उचित नहीं है। औरङ्गजेब इन बातों को सुन कर पानी २ हो गया, उस समय तो चुप रहा और उसकी वीरता और धीरता की प्रशंसा की परन्तु जी में सोचता था कि किसी प्रकार मुकुन्द दास को बध करा डाले, जसवन्तसिंह और मुकुन्ददास दोनों कांटे की तरह उसकी आंखों में खटकते थे। निदान उसने यह उपाय सोचा कि मुकुन्ददास का भूखे शेर से सामना कराया जावे। दुनिया में औरंगजेब जैसा मलीन हृदय, छली, कपटी, विश्वासघाती मनुष्य कदाचित कोई हुआ होगा। जो उसकी भलाई करते थे वह उन्हीं की बरबादी की तदबीरें सोचता था। शेर कटघरे में बन्द था, चार दिन तक उसको कुछ आहार नहीं दिया गया था, पांचवें दिन प्रातः काल के समय सब अमीरों और सरदारों के सामने उसने मुकुन्ददास की वीरता देखने की

(७) सिर को हाथ पर रक्खे हुए।

प्रार्थना की। शेर कठघरे के भीतर क्रोध के मारे लोहे की छड़ों को धक्का दे रहा था, उसके नेत्र अंगारे की तरह लाल थे। मुकुन्ददास ने जांघिया पहन लिया, और बिना हथियार लिए हुए कूद कर शेर के सम्मुख आया, और उसको ललकार कर कहा "हे मुसलमानी शेर आ! और जसवन्त के शेर का सामना कर"। औरङ्गजेब का चेहरा इन तिरस्कार युक्त शब्दों को सुन कर लाल हो गया। उसका इशारा पाकर नौकरों ने कठघरे का द्वार खोल दिया, मुकुन्ददास अफीम के नशे में चूर हो रहा था, उसने ताल ठोंक कर शेर को ललकारा, सब चुप थे सन्नाटा छाया हुआ था, शेर ने अपना सिर नीचा कर लिया और कठघरे के भीतर दुबक रहा, मुकुन्ददास ने दरबारियों को सम्बोधन करके कहा, "देखो इस को मेरे मुकाबले की ताब नहीं है और सच्चा राजपूत ऐसे शत्रु पर कभी आक्रमण नहीं करता जो उसके सामने आने से जी चुराता हो।"

औरङ्गजेब इस असाधारण वीरता को देख कर दङ्ग रह गया उसने मुकुन्ददास को अपने सामने बुलाया और बहुत कुछ पुरस्कार दिया और बात २ में पूछा "क्या तुम्हारे लड़के भी ऐसे हैं जिन में इस प्रकार का साहस है"? मुकुन्ददास ने उत्तर दिया "जब आप हम को नजरबन्द रखते हो तो लड़के किस प्रकार उत्पन्न होंगे"? उस दिन से शाही दरबारमें मुकुन्द दास का नाम नाहर खां रक्खा गया।

उसकी वीरता का एक और भी इसी प्रकार का उदाहरण है, इस बार बादशाह के सब से बड़े लड़के से कुछ झगड़ा हो गया था, राजपूतों की अश्व विद्वता के कर्तब दुनिया में प्रसिद्ध

हैं, उनमें से एक यह है कि घोड़ा बेतहाशा सरपट चला जा रहा है, और सवार किसी वृक्ष की शाखा पकड़ कर झूलने लगता है और घोड़ा उसकी रान के नीचे से निकल जाता है। ऐसे मौके पर कदाचित ही कोई सवार जीवित बचा है अन्यथा प्रायः सब को अपनी निर्भयता व ढीठता का फल भुगतना पड़ा है। जिस समय का यह वृत्तान्त है उसी समय मेवाड़ का एक राजकुमार वृक्ष से टकरा कर मर गया था, शहजादा ने मुकुन्ददास को कहला भेजा कि 'मैं इस करतब के देखने का इच्छुक हूं" मुकुन्द दास जानता था कि उसका अभिप्राय क्या है। उसने उत्तर में कहला भेजा कि "मैं कोई नट या बाज़ीगर नहीं हूं जो आलसी और निकम्मे लड़कों को तमाशा दिखलाया करूं। शहजादा से कहो मैं बन्दर भी नहीं हूं कि प्रसन्नता के लिए वृक्ष पर चढ़ कर उसकी क्रीड़ा के लिए हाथ और मुंह बनाऊं, मैं केवल तलवार चलाना जानता हूं, और जब कभी अवसर होगा वह राजपूती तलवार के जौहर देख सकेगा"।

लोगोंने इस उत्तर को ज्यों का त्यों सुना दिया। शहजादा ने कहा. मुकुन्ददास के लिए बादशाह का हुक्म है कि शिवरत्न नामी सिरोही के देवरा सरदार को जीता पकड़ कर दरबार में ले आवे, क्योंकि वह बादशाह से सरकश और बागी है वह शाही हुक्मों की कोई परवाह नहीं करता, इस लिए यही उचित है कि मुकुन्ददास उसे सजीव कैद करके लावे।

यह बात मुकुन्ददास ने स्वीकार कर ली और सरदार देवरा पर चढ़ाई की तैयारी करदी, मारवाड़ के सारे राजपूत मुकन्द दास के साथ जाने को तैयार हुए। शिवरत्नने जासूसों

ने यह खबर पाई तो खूब खिल खिलाकर हंसा, वह इतना बलवान नहीं था कि खुले मैदान में नाहर खां का सामना करता, किन्तु वह अपने पहाड़ी किले। अचल गढ़ में रह कर दिल्ली के बादशाह और कुमन्द खान दोनों की शक्ति को तुच्छ समझता था।

एक रात वह अजमेर के किसी किले में जो पहाड़ की चोटी पर बना हुआ था, अपने सरदारों को साथ लिए हुए बेसुध की नींद में सो रहा था, केवल एक सिपाही पहरे पर था, बाकी सब लोग सो रहे थे। क्योंकि किले की मजबूती के ख्याल ने सब को बे परवाह बना रक्खा था, यकायक सरदार की आंख खुल गई उसके हाथ पांव में दर्द प्रतीत होने लगा, उसने खाट से उठने की इच्छा की परन्तु वह किसी प्रकार से उठ न सका, किसी ने उसको उसकी खाट से खूब बांध रक्खी था। चांदनी रात थी, आकाश में तारे खिले हुए थे, और किले के भीतर कुछ स्याह वस्त्र धारी मनुष्य घूमते फिरते दिखाई दिए। थोड़ी देर तक वह चुप चाप रहा, फिर मारवाड़ी लहजे में किसी ने उस से कहा "कुशल इसी में है कि तुम आधीन हो जावो"।

सोने वाले इस शब्द को सुन कर जाग उठे और अपने २ हथियार संभालने लगे, चारों ओर दृष्टि पात की पहरे वाला मरा हुआ भूमि पर पड़ा था। शिवरत्न के हाथ पांव बन्धे हुए थे। खाट के चारों ओर शत्रुओं ने मण्डप बांध रक्खा था और सब के बीच में नङ्गी तलवार लिए हुए नाहर खां खड़ा था।

उसने चिल्लाकर कहा सुनो! तुम्हारे सरदार का जीवन

मेरे हाथ में है । मैं देख रहा हूं कि तुम लड़ने के लिए तैयार हो रहे हो परन्तु यदि तुम चतुरता से काम लो तो इसका फल बीका न होगा । तुमने तलवार उठाई नहीं कि मैं इस को अभी दो टुकड़े कर डालूंगा मैंने तुमको इस लिए जगाया है ताकि तुम देख लो कि मैं इसको अपने राजा जसवन्तसिंह के पास ले जा रहा हूं ।

देवरा के सरदार ने आधीनता स्वीकार कर ली, और मुकन्द दास ने शिवरत्न को जोधपुर में लाकर जसवन्तसिंह के हवाले कर दिया । जसवन्तसिंह ने हुकम दिया कि सरदार को दिल्ली में ले जाओ और उसके मान सन्मान का ध्यान रक्खो । खबरदार इसको किसी प्रकार का कष्ट न होने पावे ।

जब औरंगजेब ने इस वृतान्त को सुना तो उसने आज्ञा दी कि सरदार को दरबार में हाजिर करो । शिवरत्न सिंह दरबार में आया, इधर उधर दो सरदार उसकी रक्षा के लिए नियुक्त थे । दरबारियों ने नियम के अनुसार उस से प्रार्थना की " आदाब बजा लाओ और पाया तख्त को बोसा दो " । परन्तु जंजीरों से जकड़े हुए शेर ने फिर कर निगाह की और कहा " ऐसा कभी न होगा, मेरे प्राण बादशाह के हाथ में अवश्य है परन्तु मेरी प्रतिष्ठा मेरे अखतियार में है । मैंने कभी किसी मनुष्य के आगे सिर नहीं झुकाया और न कभी सिर झुकाऊंगा । यह प्रतिष्ठा सिर केवल उसके आगे झुकेगा जो सम्पूर्ण संसार का स्वामी और सब का उत्पन्न करने वाला है "।

औरङ्गजेब के दरबारी जसवन्तसिंह का नाम सुन कर तिनके की तरह कांपते थे, किसी को साहस नहीं हुआ कि

इस मामले में सख़्ती से काम ले क्योंकि वह जानते थे, कि कठोरता करने से विद्रोह की आग सम्पूर्ण राजिस्थान में फैल जायगी । परन्तु इसके साथ ही इस बात का ध्यान था कि सरदार से बादशाह का सन्मान कराना चाहिए इस लिए उसको दूसरे द्वार से लाए जो छोटा था और भीतर आने के लिए आवश्यक था कि आदमी सिर झुकाकर दाखिल हो दरबारियों ने सोचा यह तदबीर मुनासिब होगी और शिवरत्न सिंह झुककर आवेगा एक प्रकार का शहंशाह का सन्मान पूरा हो जायगा। परन्तु शिवरत्न भी बुद्धिमान था । उसने सिर नहीं झुकाया परन्तु पहले अपने पांव दरवाजे के अन्दर दाखिल किए और इस प्रकार दरबार में निर्भयता से चला आया जैसे शेर जंगल में घूमता है. सब को आश्चर्य और विस्मय हुआ सौभाग्य से औरङ्गजेब शिवरत्न की इस ज़िद्द और घमण्ड को देख कर बहुत प्रसन्न हुआ उसने दण्ड देने के स्थान में उसे जागीर और पुरस्कार दिया, और उसका अपराध क्षमा कर दिया, पुरस्कार और जागीर के बदले बांके राजपूतों को सिर झुकाना पड़ता इस लिए उसने कहा अचल गढ़ से अच्छी और अधिक मूल्य-वान मेरी दृष्टि में कोई जगह नहीं है अच्छा है कि मैं वहां लौट जाऊं और अपनी प्रजा के साथ स्वतन्त्रा का जीवन व्यतीत करूं ।

औरङ्गजेब ने उसकी प्रार्थना स्वीकार की और उसको सन्मान के साथ स्वतन्त्रता प्रदान की । नाहर खां का कैदी खुशी २ अचल गढ़ वापस गया । और चिरकाल तक अपने मित्रों के साथ जीवन व्यतीत करता रहा ।

मुकन्द दास जसवन्त सिंह का सच्चा वफ़ादार साथी था, वह जानता था कि औरंगजेब हर समय जसवन्तसिंह की ताक में लगा रहता है, इसलिए वह हर समय जसवन्तसिंह की रक्षा का ध्यान रखता था। सारे राजिस्थान में वह वफ़ादार के नाम से प्रसिद्ध था, और जब तक वह जीवित रहा जसवन्तसिंह को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुंची।

---

(१६)

जसवन्तसिंह वालिए मारवाड़ और उसकी रानी।

जसवन्त सर्फ़ चीर के तलवार से निकला।
रोका उसे जिसने वह उसे मार के निकला॥

दिल्ली के साथ अन्तिम युद्ध में जो जंग सी साला (३० वर्ष का युद्ध) के नाम से प्रसिद्ध है मारवाड़ ने अत्यन्त वीरता से काम लिया था। इस समय हम मेवाड़ के वृत्तान्तों का वर्णन छोड़ कर कुछ संक्षिप्त वृत्तान्त मारवाड़ का सुनाते हैं जो साधारण रूप से उस का शत्रु और मित्र दोनों रूप में प्रसिद्ध है। और अब उस की राजधानी जोधपुर के नाम से पुकारी जाती है।

शब्द मारवाड़। मारो वाड़ से बना है। इसको दूसरे शब्दों में मौत का स्थान कह सकते हैं। यह रेगिस्तान के उस

भाग का नाम है जो मेवाड़ के पश्चिम में बसा है। बीकानेर, जोधपुर, जैसलमेर आदि सब इसी मारवाड़ के विस्तीर्ण मैदान के छोटे २ भाग हैं परन्तु धीरे धीरे लोग मारवाड़ केवल उसी भूमि को समझने लगे जहां राजपूतों का राठौर कुल बसा है और जहां लोनी नदी अजमेर की ओर से निकल कर डेढ़ सौ मील तक बहती है।

तेरहवीं शताब्दी की समाप्ति पर महम्मद गोरी ने दिल्ली के अन्तिम चौहान महाराजा पृथ्वीराज को परास्त कर के बध किया उस ने उस के कुछ ही दिन पीछे कन्नोज के महा सुन्दर नगर को तहस नहस किया जो राठौर के अधिकार में था। राजा जयचन्द वालिए कन्नोज परास्त हुआ और जिस समय वह अपनी जान ले कर भाग रहा था, तो दरिया में डूब कर मर गया कुछ वर्षों के पीछे उस के दो पोते गङ्गा नदी के तट को छोड़ कर देश के और विभागों में घूमने लगे। उन के भाग्य ने उन्हें लोनी नदी के किनारे पहुंचाया और उन्होंने उजाड़ रेगिस्तान में अपने जातीय झण्डे को खड़ा किया। और आस पास के इलाकों पर कब्ज़ा कर लिया।

जिस प्रकार राठौरों ने कुछ काल तक मेवाड़ पर राज्य किया चन्द्रासिंह के इतिहास में उस का वर्णन हो चुका योधासिंह और उस के आदमियों को मेवाड़ से निकाल दिया और उस ने मारवाड़ को हाथ में ले कर १४४९ ई० में जोधपुर नगर की नींव डाली जो मैंसरूर के स्थान में अब उस की राजधानी है।

इस के पश्चात् कई पीढ़ी तक मारवाड़ का नाम सुनने में

नहीं आता। मानसिंह ने हुमायूं को [illegible] से इनकार किया, शूरसिंह उस का पोता अकबर के सूबाशियों में नियुक्त हो कर शाही धावे पर जाता रहा, राजा गज सिंह ने शाही दरबार में मेल जोल पैदा किया था इसी शूरसिंह का बेटा था और इसने बड़े ही जोखिम के समय में जहांगीर की सहायता की थी।

मारवाड़ का सब से नामी और प्रसिद्ध राजा जसवन्तसिंह हुआ है जो गज का लड़का था और जिसने महा विपद् के समय जोधपुर का राज्य अपने हाथ में लिया था।

जोधपुर की रानी यद्यपि महा सुन्दरी थी परन्तु वह बाह्यक रूप की तुलना में आन्तरिक रूप गुण, वीरता और साहस के लिये अधिक प्रसिद्ध थी। वह मेवाड़ के राजवंश की क्षत्रिय कुल कन्या थी जो राजपूतों में सब से अधिक प्रतिष्ठित कुलवान और प्रतापी समझा जाता था, इस के शरीर और तन्तुवाय में राना प्रताप और सांगा का रुधिर वर्तमान था, उस का विवाह बाल्यकाल में राजा जसवन्तसिंह वालिए जोधपुर के साथ हुआ था। और यहाँ आकर उस के वीर स्वभाव को काम करने का अवसर मिल गया था, वह अपने शूर वीर पति के काम में अधिक से अधिक भाग लेने लगी।

जसवन्तसिंह साधारण मनुष्य नहीं था, उस की वीरता की धाक सम्पूर्ण भारतवर्ष में बैठी थी और हर प्रकार के मुल्की मामले में उस की सम्मति ली जाती थी, हम जिस समय का वर्णन कर रहे हैं उस समय शाहजहां की सन्तान में ताज व तख्त के लिये परस्पर लड़ाई भिड़ाई आरम्भ हो चुकी थी। और उन में से प्रत्येक जन हिन्दू राजाओं से सहायता की प्रार्थना करता था।

जसवन्तसिंह को रानी ने सलाह दी कि दारा शिकोह की सहायता करनी उचित है। जसवन्तसिंह स्वयम् शाहजहां का हितैषी था इसलिए रानी की सम्मति उसे बहुत पसन्द आई, वह दारा शिकोह की सहायता के लिए चल पड़ा और रानी को जोधपुर के प्रबन्ध के लिए छोड़ गया।

जसवन्तसिंह कई हज़ार राजपूतों का दल साथ में लिए हुए औरङ्गज़ेब और मुराद के मुकाबले के लिए आ डटा ताकि वह दिल्ली की ओर न बढ़ने पावें। उज्जैन से १५ मील दक्षिण की ओर नरबदा नदी के किनारे युद्ध आरम्भ हुआ और यद्यपि राजपूतों ने हर प्रकार से शत्रुओं का सामना किया परन्तु शाही सेना इतनी अधिक थी कि वह उसे रोक न सके, औरङ्गज़ेब की सेना कृत कार्य्यता हो गई। राजपूतों की सेना बहुत सी कट मरी केवल थोड़े से मनुष्य जीवित रहे वह सब जसवन्तसिंह के साथ जोधपुर चले आए।

जसवन्तसिंह का मन उदास था उस को अपनी हार पर इतना शोक नहीं था क्योंकि वह दूसरी बार औरंगजेब पर आक्रमण कर सकता था, परन्तु चिन्ता इस बात की थी कि रानी इस घटना से महा दुःखी होगी क्यों कि राजपूत का मैदान युद्ध से परास्त हो कर लौट आना स्वयम बहुत लज्जा की बात थी। दूसरे शाहजहां की आशाओं का भी मलिया मेट हो गया। उस का विचार सत्य निकला रानी बहुत दुःखी हुई। हिन्दू राजा की हार की खबर उस के लिए एक बड़े आश्चर्य्य की बात थी। बहन भाई की कमर में तलवार बांध कर कहती थीं "वीर! या तो शत्रु को परास्त कर के आना अथवा सहस्रों

को मारते हुए सीधे स्वर्ग धाम को जाना" जहाँ इस प्रकार का वर्णन हो वहां किसी राजा का मैदान युद्ध में परास्त हो कर आना कितनी बड़ी लज्जा की बात समझी जाती है।

वरनियर साहब लेखक कहते हैं कि "जब रानी ने सुना कि जसवन्त सिंह निकट आ रहा है उसने अच्छी तरह वीरता से युद्ध किया सारे मनुष्य मारे गए केवल थोड़े राजपूत बाकी बचे हैं और यह किसी प्रकार शत्रु का सामना नहीं कर सकते थे। रानी ने इसके स्थान में कि किसी सरदार को राजा के स्वागत करने के लिए भेजती और उसके दुःख पर सहानुभूति का प्रकाश करे, आज्ञा दी किले का दरवाजा बन्द कर दो और क्षत्रिय धर्म्म से गिरे हुए जसवन्त को कभी नगर में दाखिल होने की आज्ञा न दी जाय।

उसने सरदारों के समूह के सामने कहा, 'वह मेरा पति नहीं है। महाराना मेवाड़ का दामाद ऐसा कायर, निर्लज्य, और निकम्मा नहीं हो सकता। उसका आत्मा इस कदर निर्लज्य नहीं बन सकता। ऐसे उच्च वंश से नाता करके उसे चाहिए था कि वैसा ही बनने की चेष्टा करता। उसको उचित था या तो शत्रु की सेना को परास्त करता, या मैदान में लड़ते हुए जान देता"।

कुछ देर में उसका हृदय और भी बिगड़ गया उसने अपने मनुष्यों को आज्ञा दी "राजपूतो! चिता तैय्यार करो लकड़ियों का ढेर अभी २ एकत्र कर दो ताकि मैं उस पर बैठ कर अपने आप को भस्म कर दूं। मेरा पति मर गया, जिन्हों ने उसकी वापसी की खबर दी है मुझे धोखा दिया है। मेरा

पति और वह कायरता कभी नहीं हो सकती है। जसवन्त सिंह मर गया उसकी वीरता और शूरता से यह कब आशा हो सकती है कि वह शत्रु के मुकाबले से भाग कर प्राण बचावे"।

कुछ देर के पश्चात् उसके मन में और परिवर्तन हुआ, उसका स्वभाव चिड़ चिड़ा हो गया, और वह उच्च स्वर के साथ जसवन्त सिंह को श्राप शब्द सुनाने लगी।

संक्षिप्त: आठ या नौ दिन तक वह एक जगह बराबर बैठी रही, और अपने पति के देखने से पूर्णतया इनकार कर दिया, अन्त में रानी की माता को समाचार भेजा गया वह बूढ़ी रानी आई और उसने समझाया बेटी, कुशल तो है! ऐसा क्रोध किस काम का? राजा का, सारा शरीर घावों से छलनी बन गया है ऐसी दशा में वह बाहर पड़ा हुआ ओस और घाम का दुःख सह रहा है। स्त्री के लिए इतना क्रोध करना उचित नहीं है। उसके शरीर में किंचित स्वस्थता आ जाय तो वह औरङ्गजेब के मुकाबले के लिए तैयार होगा"।

माता की बातों से सिंहनी का हृदय नरम हो गया, किले का फाटक खुलवा दिया गया, जसवन्त सिंह अन्दर आया, उसने अपनी रानी की बदसलूकी पर क्रोध नहीं किया, प्रत्युत उसके राजपूती गुण की प्रशंसा की। वह इस बात पर प्रसन्न था कि रानी राजपूती धर्म्म के विरुद्ध अपने पति तक का पास नहीं करती। लानत मलामत की जगह उसने उसकी प्रशंसा की।

रानी जो अब तक पत्थर की तरह कठोर हृदय थी। जिस समय अपने घायल पति और उसके साथियों की दशा

देखी आंख से आंसू बहने लगे। उसने स्वयम अपने हाथ से पानी गरम किया, सब के घाव धो कर अपने ही हाथों से पट्टी लगाई, राजा के साथी इस विचित्र स्त्री के स्वभाव को देख कर दङ्ग थे।

औरङ्गजेब इस घटना के पश्चात ही तख्त पर बैठा और दारा शिकोह को सूली दी गई। और मुराद को जञ्जीरों में जकड़ कर ग्वालियर के किले में कैद किया गया। सर्व प्रिय शाहजहां को इस कपूत ने कैद कर लिया। और उस देवता सरीखे मनुष्य ने कैद में सिसक २ कर प्राण त्यागे। औरङ्गजेब जसवन्त सिंह से डरता था, इसलिये स्वयम फरमान भेज दिया कि "तुम्हारा अपराध क्षमा किया गया राजपूतों की जबरदस्त फौज लाकर शुजाश्र के लिए तैयार करो"। राजा बदला लेने का इच्छुक था उसने सोचा अच्छा अवसर हाथ आया, उसने कहला भेजा "खजुआ में जो प्रयाग (अलाहाबाद) से ३० मील के फासले पर है मैं शाही सेना के साथ हूंगा"। और उसी समय तैयारी कर दी। रानी ने हंसकर कहा "जाइए इस दफा आपको कृतकार्य्यता होगी और यश व मरियादा समेत लौट आइएगा"।

लड़ाई के दिन जसवन्त सिंह ने औरङ्गजेब का साथ दिया, परन्तु थोड़ी ही देर पीछे वह शाही सेना पर टूट पड़ा और उसको टुकड़े २ करके तमाम शाही साज व सामान लेकर वहां से कूच किया। अब युद्ध केवल शुजाश्र और औरङ्गजेब के साथ था। जसवन्त सिंह ने सोच रक्खा था कि वह एक दूसरे के साथ लड़ते हुए जीवित न रहेंगे। राजा

के लौटने पर जोधपुर में आनन्द मनाया गया। और रानी ने समझा पहली बेइज्जती का यथेष्ट बदला होगया।

थोड़े दिन जसवन्त सिंह शान्ति के साथ जोधपुर में रहने पाया था कि औरङ्गजेब का दूत फिर पहुंचा, उसने कहा शुजाअ की हार हुई दूसरी बार आलमगीर आप का अपराध फिर क्षमा करता है और गुजरात का सूबेदार नियुक्त करता है, किन्तु दोनों शाहजादों में से किसी की सहायता न करें जसवन्त सिंह लालच में आ गया और गुजरात की सूबेदारी स्वीकार कर ली।

जसवन्त सिंह के साथ उसका लड़का भी गुजरात गया। इस में रानी के सम्पूर्ण गुण वर्तमान थे। यह दोनों मिलकर चिरकाल तक कृत्कार्य्यता के साथ महाराष्ट्र प्रति शिवाजी के साथ लड़ते भिड़ते रहे।

इस अवसर पर हम जसवन्त सिंह के कार नामों के साथ २ उसकी रानी के हालात भी लिखना चाहते हैं इस लिए जसवन्त सिंह के जीवन की उन घटनाओं का वर्णन करेंगे जिन में रानी का भी सम्बन्ध हो।

जब औरंगजेब अपने भाईयों के मारे जाने पर तख्त की ओर से निश्चिन्त हो गया तो उसने जसवन्त सिंह के वध करने का इरादा किया।

सन् १७७० ई० में उसने जसवन्त सिंह को दिल्ली में बुलाया और काबुल विजय करने के लिए रवाना किया। उसने सोचा जसवन्त सिंह को अफ़ग़ानों के सिवाय और कोई वध न कर सकेगा वह इस दुखदाई राजपूत का काम तमाम कर देंगे।

जसवन्त सिंह ने इस मुहीम पर जाना ख़ुशी २ स्वीकार कर लिया, और उसकी रानी ने भी पहाड़ी पठानों की लड़ाई में साथ रहने की इच्छा प्रगट की, ताकि पति की आफ़त व मुसीबत में भाग ले सके।

पृथिवी सिंह बड़े बेटे को राज्य का काम सौंपा गया बाकी और लड़के पिता के साथ काबुल गए। जसवन्त सिंह ने थोड़े से चुने हुए राजपूतों को साथ लिया क्योंकि शाही सेना बहुत थी। वह नहीं जानता था कि औरंगज़ेब उसका नाश करने के लिए काबुल भेज रहा है।

उसके काबुल की ओर जाते ही छली कपटी धोखे बाज़ औरंगज़ेब ने पृथवी सिंह को दरबार में बुला भेजा। दिखलावे के लिए उसका आदर सन्मान किया परन्तु मन में यह चाहता था, किसी प्रकार वह मारा जाय। दूसरे दिन उसने हंस कर पृथ्वी सिंह से कहा, "राठौर लोग कहते हैं तुम में जसवन्त सिंह और जोध पुर की रानी के सब गुण मौजूद हैं इस विषय में तुम क्या कहते हो" ? इस पर राजपूत ने जवाब दिया "जिस के सिर पर जहां पनाह का साया हो वह सब कुछ कर सकता है दुनियां का फ़तह कर लेना उसके लिए सहज है" इस उत्तर को सुन कर औरंगज़ेब तुरन्त कह उठा 'आह ! दूसरा जसवन्त यहां मौजूद है। फिर हंस कर उसे खिलअत पहनाया और विदा कर दिया।

पृथवी सिंह की आयु का यह अन्तिम दिन था वह एक दम बीमार पड़ गया बादशाह ने जो खिलअत पहनाई थी वह ज़हर की बुझी हुई थी। राजपूत ने तड़प २ कर प्राण दिए। यह औरंगज़ेब की शत्रुता का ढंग था।

औरंगजेब ने काबुल में जसवन्त सिंह को सहानुभूति का पत्र भेजा। राजा और रानी को पृथ्वी के मरने का जो दुःख हुआ वह अवर्णनीय है काबुल के जल वायु ने शेष दो लड़के दलथम्भन सिंह और जगत् सिंह का काम पहले ही से तमाम कर दिया था। अब जसवन्त सिंह के पुत्रों में से कोई बाकी न रहा था, जिस को देखकर उसका हृदय शान्त होता। थोड़े दिनों के पीछे औरङ्गजेब के भेदियों ने जसवन्त सिंह के साथ भी वही बर्ताव किया और उसके आहार में विष मिला दिया गया। और उसका काबुल में ही देहान्त हुआ। तब इस कपटी बादशाह को उसके मरने के पश्चात् चैन मिला। एक लेखक का कथन है कि जब तक जसवन्त सिंह जीवित रहा, बादशाह उसका नाम सुनकर आहें भरा करता था, उसको मारवाड़ में बयालीस वर्ष राज करने का अवसर मिला था।

जसवन्त सिंह इस प्रकार निर्दयता, कपटता, और नीचता तथा धोखे पन का शिकार हुआ परन्तु राजस्थान के लिए तीस वर्ष की लड़ाई की सामग्री छोड़ गया, जिसने मुगलों का सत्यानाश करके छोड़ा।

वीराङ्गना रानी का हाल कुछ न पूछो उसकी जिन्दगी मृत्यु से भी बुरी थी घर से हजारों कोस दूर, सन्तान और पति के मरने का शोक उसके प्राण समाप्त करने को यथेष्ट था उसने पति की लाश के साथ सती होने की तैयारी की, परन्तु गर्भवती थी इसलिये लोगों ने जबरदस्ती वर्जित किया।

रानी पति की लाश के पास बैठी थी, लोग पेट के बच्चे को स्मरण कराकर सती होने से रोक रहे थे। रानी ने राजा

का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा:—

एक दूजे पर थे सदा, हम दोनों बलिहार।
प्राण हृदय थे एकही, तन दो प्राणाधार।
तुम तो स्वामी चलि बसे, मैं जीऊं किस हेत।
प्राण हीन पिञ्जर पड़ा, क्यों श्वास नहीं लेत।

(ईशानदेव)

जिस समय वीर सिंह पुत्र जसवन्तसिंह के मरने का समाचार जोधपुर पहुंचा, तो निराशा की घटाएं चारों ओर से छा गईं। मन्दिरों के घण्टे बन्द होगए। शंखध्वनि रोक दी गई, ब्राह्मणों ने पूजा पाठ छोड़ दिया सायं व प्रातःकाल की आरती की जगह मुल्लाओं की बांग होने लगी और सब ज़बरदस्ती मुसलमान बनाए गए।

समय आने पर काबुल के पहाड़ों पर रानी के गर्भ से अजीतसिंह उत्पन्न हुआ (जिसने युवा होने पर हिन्दुओं को मुसलमानों के अत्याचार से मुक्त किया) रानी उसकी कन्याएं और शोकग्रस्त राजपूत भारत वर्ष की ओर पधारे यात्रा का दुःख, शत्रुओं का भय, बादशाह की असहायता, ऐसी आपदाएं हैं जिन्हें पाठकों का हृदय स्वयम् समझ सकता है।

यह दुःखी आत्माएं राम २ करते हुए किसी प्रकार दिल्ली पहुंचे। बादशाह के कानों तक जसवन्त के मरने और रानी की विपद् का समाचार पहुंचाया गया। वह इन बातों से अनजान नहीं था, पल २ की खबरें उसे जासूस पहुंचाया करते थे। दुःखी आत्माओं ने चाहा कि जोधपुर की राह लें, परन्तु दुष्ट हत्यारे

ने दुखित स्त्री के कोमल हृदय तक का ध्यान न किया, और साफ कहला भेजा कि तुम लोगों को उस समय तक शहर छोड़ने की आज्ञा नहीं है जब तक कि नवीन उत्पन्न हुए २ बालक को बादशाह की कैद में न दे दो"। रानी ने निर्भयता से उत्तर दिया "ऐसा कदापि न होगा"। और राजपूतों ने भी इस का अनुमोदन किया। और जब औरङ्गजेब ने वफादार राजपूतों को लालच देने के लिए कहा 'जोधपुर का इलाका तुम सब लोगों में बांट दिया जायगा"। शेर मर्दों ने उत्तर दिया "तुम कौन बांटने वाले होते हो हम जोधपुर के और हमारा जोधपुर जब तक जान में जान है जोधपुर और उसके राजा का कोई शख्स बाल बांका न कर सकेगा"। औरङ्गजेब के दरबार से चल कर राजपूतों ने अजीतसिंह के बचाने की आपस में सलाह की, इस अवसर पर रानी की सम्मति को सब ने अच्छा समझा। उसने कहा, मैं तुम्हारे साथ २ लड़ती भी रहूंगी और लड़के की रक्षा का काम भी करूंगी यह सेवा का काम मुझे सौंपो।

दूसरे दिन अजीत को एक टोकरी में रख कर एक मुसलमान को दिया गया, जिसने रानी की दशा पर तर्स खाकर कुरान की सौगन्द खाई कि मैं इसको शहर के फाटक के बाहर पहुंचा दूंगा और जब तक तुम में से कोई वहां न आवेगा मैं मौजूद रहूंगा"।

इस मनुष्य के चले जाने पर बहादुर राजपूतों ने फिर आपस में सलाह की और यह बात स्थिर हुई कि स्वतन्त्रता को अपने प्राण देकर भी खरीदना चाहिए। रानी के सिवा बाकी और स्त्रियों को चिता पर भस्म होने की आज्ञा सुनाई गई सब

ने खुशी २ स्वीकार किया, थोड़ी देर में चिता जल उठी और स्त्रियां दम के दम में जल कर भस्म हो गईं।

राजपूतों ने अब सन्नाह संजोवा पहन लिया और हाथ में तलवार लेकर रानी को बीच में कर लिया। इस प्रकार वह दिल्ली से बाहर निकले। महल के बाहर शाही सेना तईनात थी, घोड़ों पर सवार इने गिने शेर मर्दों का दल बाहर आता है और रोका जाता है। सैंकड़ों खाक और खून में लत पत होते हैं। राजपूत शेरों की तरह लड़े और शेरों ही की तरह जान दी, केवल थोड़े आदमी बाकी रहे थे जो हजारों के दल को काटते हुए जोधपुर पहुंचे और लोगों को औरङ्गजेब की नीचता और पापिष्टता का वृत्तान्त सुनाया। यह संग्राम दिल्ली की गलियों और सड़कों में हुआ था, और इतिहास में स्मरण योग्य है।

जब रानी थोड़े से इने गिने राजपूतों को लेकर नियत स्थान पर पहुंची, तो मुसलमान मेवा बेचने वाला सिर पर टोकरा लिए हुए वहां मौजूद था। रानी ने खुशी से बच्चे को लेकर गले से लगा लिया और मुसलमान को जवाहारात का थैला पुरस्कार में देकर मेवाड़ की ओर पवन वेग से भाग निकली राना तख्त पर बैठा हुआ था। रानी मरदाने वस्त्र पहने हुए शूर वीर राजपूतों के साथ दरबार में पहुंची, और लड़के को महाराना की गोद में देकर कहा "यह आप का भानजा है। मामा से बढ़ कर और कोई इस का रक्षक नहीं हो सकता अनजान की रक्षा कीजिए"।

राना ने अजीत को गोद में ले लिया, उसके मुंह पर चुम्बन दिया और कुछ वफादार राजपूतों को आज्ञा दी कि

"आबू पर्वत पर ले जाकर राजकुमार की पालना करो"।

जिन लोगों ने अजीतसिंह को मौत के पंजे से छुड़ा कर पालन किया उनकी सूचि में दुर्गादास का नाम बहुत सन्मान से लिखे जाने के योग्य है।

रानी जोधपुर लौट आई और मरने के समय तक औरङ्गजेब की दुष्टता से जोधपुर की रक्षा करती रही। परमात्मा ने उसको अजीतसिंह की वीरता के कारनामों को देखने का अवसर नहीं दिया, परन्तु उसने फिर जोधपुर की गद्दी पर उसके असली स्वामी को सुशोभित होते देख लिया था। जोधपुर के दिन फिर फिरे और रानी ने वृद्धावस्था में शरीर त्याग कर लोक व परलोक के यश को लाभ किया। उसको मरे हुए बहुत दिन हुए, परन्तु जोधपुर के जल वायु में अब तक उस सिंहनी का पुरुषार्थ, देश भक्ति और धर्म्म अनुराग वर्तमान है।

---

(१७)

तीस वर्षीय संग्राम

लावनी

मा २ के ठोकरें मरे लोग दिल्ली के,
जो बचे भाग कर बने पुत्र बिल्ली के।
टापों से कुचले गए दुष्ट बहुतेरे,
हो गईं हड्डियां चूर मिलें नहीं हेरे।

भागे धन दौलत छोड़ दुष्ट और पापी,
ईशान देव कहै हुए नष्ट सन्तापी।

साहस वाले क्या नहीं कर गुजरते, कौन सी शक्ति है जिसे धैर्य और साहस के सामने ठोकरें खाकर लज्जा नहीं उठानी पड़ती। साहस के साथ २ ईश्वर की सहायता का हाथ रहता है :—

चौपाई

किंचित साहस करे जो कोई।
अमित सहाय ईश की होई।

(ईशानदेव)

औरंगजेब की चालाकी काम नहीं आई इस का छल, कपट सब व्यर्थ प्रमाणित हुआ। सारे यत्न मिट्टी में मिल गए। जसवन्तसिंह की लड़कियां दूसरी स्त्रियों के साथ अग्नि के पवित्र मार्ग से स्वर्गधाम को गई। रानी लौंडियों के वस्त्र पहन कर दुर्गादास के साथ अजीत को बचा कर ले आई। और जिस प्रकार इन थोड़े से मनुष्यों ने दिल्ली के गली कूचों में लाखों की सेना को चीर कर अपनी असाधारण वीरता का तमाशा दिखलाया पाठक उस से अवगत हैं।

दुर्गादास ने अजीतसिंह की पालना का गुप्त स्थान में प्रबन्ध किया। औरंगजेब ने सुन लिया कि जसवन्त का पुत्र जीता है, वह मारवाड़ पर चढ़ दौड़ा, जोधपुर और तमाम दूसरे नगरों को उजाड़ डाला, परन्तु मारवाड़ियों ने कभी आधीनता पसन्द नहीं की उस समय जब औरंगजेब मारवड़ा

में लूट मार कर रहा था रूपनागढ़ की राजकुमारी की चाह में उस को अत्यन्त लज्जा उठानी पड़ी । जो निम्नलिखित वृत्तान्त से भली भांति विदित होगी ।

रूपनागढ़ की राजकुमारी का वृत्तान्त

रूपनागढ़ की राजकुमारी का वृत्तान्त टाड साहब ने भी विस्तीर्ण रूप से नहीं लिखा, यदि उस की वीरता और बुद्धि-मानी का सम्बन्ध एक इतिहासिक घटना से न होता तो कदाचित आज हम को उस के इतने हालात से भी अवगति न होती ।*

औरंगजेब के छल, कपट और अत्याचार ने सारे देश में विद्रोह और अप्रसन्नता की सामग्री उत्पन्न कर दी थी । वह स्वयम इस से अनजान नहीं था। उस ने अपनी पिछली आयु में इरादा किया कि इस में परिवर्तन किया जाय और इस विचार से उस ने अपना विवाह किसी अच्छे हिन्दू राजा की कन्या से करना चाहा, ताकि कम से कम जिस तरह अकबर, शाहजहां और जहांगीर के समय में राजपूतों की निकटता का लाभ उठाया गया था उस को भी वह अवसर प्राप्त हो जाय ।

औरंगजेब के दूत सारे राजपूताना में चिरकाल तक घूमते और खोज लगाते रहे, अन्त में उन को रूपनागढ़ की राज-कुमारी सब से अधिक रूपवान दिखाई दी। और औरंगजेब ने अपने मन्त्रियों की सलाह ले कर दो हजार सेना राजकुमारी के लेने के लिए रवाना की ।

---

* इस राजकुमारी का नाम वीर बाला था ।

वह जानता था कि इस छोटी सी रियासत को इतना साहस कहां होगा कि उस के हुकम से इनकार करे। परन्तु उस का विचार मिथ्या निकला, जिस समय यह समाचार राजकुमारी को मिला, उस ने क्रोध और घृणा से कहा मैं ऐसे पापी की स्त्री नहीं बन सकती। प्राण दे दूंगी पर यह अपमान नहीं सहूंगी।

प्रथम इस के कि वह प्राण त्याग करे उस ने औरंगज़ेब के अभिमान को भंग करने का उपाय सोचा और उस को दिखलाना चाहा कि राजपूतनी अपनी क्रांति के रईस को दिल्ली के विजाती बादशाह से बढ़ कर समझती है।

सन् १६५४ में राना राजसिंह मेवाड़ की गद्दी पर बैठा था, और दो तीन बार असाधारण वीरता का काम करने के कारण वह दूर २ तक प्रसिद्ध हो चुका था। राजकुमारी ने राना को अपने हाथ से पत्र लिखा, कि शीघ्र आ कर पापी के हाथ से छुटकारा दिलाओ, जिन शब्दों में यह पत्र लिखा था वह बड़े हृदय भेदी थे। राजकुमारी सब से पहले रूपनागढ़ और मेवाड़ के परस्पर सम्बन्ध को वर्णन कर के लिखती है, "जिस प्रकार हंसिनी कभी बगले के साथ नहीं रह सकती उसी प्रकार एक उच्च कुल की राजपूतनी बानर रूपी तुरुक की स्त्री नहीं बन सकती। यदि आप मेरा हाथ नहीं पकड़ते और मेरी इज्जत नहीं बचाते तो मैं मौत की गोद में निवास करने के लिये तैयार बैठी हूं।".

जब राना ने यह सन्देसा सुना तो उस के नेत्र क्रोध से लाल हो गए। उस ने औरंगज़ेब जैसे दुष्ट······के हाथ से राज-

कुमारी के बचाने का पूरा २ प्रण कर लिया। और उसी समय चुने हुए सवारों का दल साथ ले कर अरवली पर्वत की घाटियों में से होते हुए यकबारगी रूपनगढ़ पर धावा कर दिया और शाही सेना को टुकड़े २ कर के राजकुमारी को अपने साथ राजधानी में ले आया। राजकुमारी उस की वीरता से बहुत प्रसन्न हुई। और जिस समय राना ने उस को दुष्ट के पंजे से छुड़ाने के हर्ष से बधाई दिया, तो उस ने अपना कमल हस्त बढ़ा कर कहा "महाराज ! इस उपकार के बदले मेरे पास कुछ नहीं जो मैं आप की भेंट करूं। यदि आप मेरे हाथ को किसी योग्य समझते हो, तो यह सेवा में हाजिर है।" राना ने प्रसन्न होकर उस का हाथ चूम लिया और वैदिक रीति के अनुसार विवाह हो जाने पर वह मेवाड़ की रानी बनी।

औरंगजेब को इस घटना का समाचार पा कर जो क्रोध हुआ उस का वर्णन करना कठिन है। न केवल सुन्दर रानी उस के हाथ से छीन ली गई बल्कि उस की मर्यादा को भी बहुत हानि पहुंचाई गई। परन्तु उस ने उस समय राना से बदला लेने के लिए फौज रवाना की थी अथवा नहीं यह एक ऐसा विषय है जिस पर न टाट साहब ने कुछ लिखा है और न राजिस्थान के इतिहास से कुछ पता चलता है अनुमान से ऐसा ज्ञात होता है कि चारों ओर की आफतों से तंग हो कर औरंगजेब कुछ दिनों के लिए चुप हो गया था।

बादशाह इस प्रकार जब क्रोध की अग्नि में जल रहा था राना और उसकी रानी खुशी २ अपने दिन व्यतीत करते थे, और मेवाड़ के प्रबन्ध में लगे हुए थे।

इस घटना के थोड़े ही दिनों के पश्चात देश में एक ऐसा भयानक दुर्भिक्ष पड़ा जिसके वर्णन से रोंगटे खड़े होते हैं। कोसों तक राजपूताना में पानी न मिलता था, खाने पीने की सामग्री दुष्प्राप्य थी। भूख के मारे लोग ऐसी चीजें खा लेते थे जिन का अनुमान भी नहीं हो सकता। पानी और आहार की कमी ने सब को निराश कर रक्खा था, पति अपनी स्त्रियों को छोड़ कर भाग गए, स्त्रियां पतियों से पृथक होगईं। माता पिता ने अपने बच्चों को बेच कर उनके मूल्य पर समय व्यतीत किया, पशु, पक्षी, कीड़े, मकोड़े, सब मरने लगे। लाखों मनुष्य कुत्तों की मौत मरे। वायु पश्चिम को बहा करती थी। बादल का आकाश पर नाम व निशान भी न था। नदियां सूख गईं। धनवान निर्धन बन गए। ब्राह्मण पूजा पाठ भूल गए। जात पात का विवेक जाता रहा। उच्च वंश के लोग नीचों का जूठा खाने लगे। वर्णाश्रम का कोई विचार न रहा, ज्ञान बुद्धि सब कुछ जाते रहे, सब की दृष्टि अन्न की ओर लगी रहती थी, फल, फूल पत्ते छाल सब मनुष्य का आहार बन गए। कुछ दिनों के पश्चात् यह भी अलोप हो गए, तब मनुष्य, मनुष्य को खाने लगा। देश उजाड़ तबाह, नदी नाले शुष्क चारों ओर उदासी और सन्नाटा छाया हुआ था।

रूपना गढ़ की राजकुमारी इस अवसर पर बाहर निकल कर अपनी प्रजा के भरणपोषण का प्रबन्ध करती रहती थी। राज भण्डार में अन्न बहुत था वह घोड़े पर चढ़ कर चारों ओर घूमती रहती थी ताकि प्रजा भूख से न मरने पावे। परन्तु संसार व्यापी दुर्भिक्ष के दिनों में क्या हो सकता था, तथापि

जो कुछ उनसे हो सका वह साहस धैर्य और वीरता से करती रही। जिधर वह जाती थी लोग आकाश की ओर हाथ उठा कर उसको आशीसें देते थे। मरते हुए मनुष्यों के पास राज कुमारी बेधड़क जा पहुंचती और उनके सिरहाने जा कर उनकी सेवा करती और ढारस देती, वह मरते २ उसकी इस नेकी के लिए उसे आशीर्वाद देते।

राजकुमारी ने उसी समय राजसमद्र झील की खुदवाई का काम आरम्भ कर दिया ताकि लोग बेकार न रहें और देश में विद्रोह न फैले। यह देश और जाति सेवा का काम राजधानी से २५ मील के लग भग उत्तर दिशा में हो रहा था। परन्तु यह काम भी यथेष्ट तथा उसने अरवली पर्वत के इर्द गिर्द घूम कर देखा कि एक झरना पहाड़ से बहता है और रेगिस्तान में जा कर सुष्क हो जाता है। राज कुमारी ने एक बन्द बंधा कर उसको झील के आकार में रोक लिया। यह झील गोल बन्द से घिरी हुई प्रायः ३० मील के क्षेत्र फल (रक़बे) में है, और केवल उत्तर पश्चिम और उत्तर पूर्व की ओर पानी के लिए खुला हुआ है, यह बहुत गहरी झील है और इसका घेरा सफेद संग मरमर का बना हुआ प्रायः बीस मील है। घाट पर सुन्दर सीढ़ियां बनी हुई हैं। और बन्द के चारों ओर दृढ़ मट्टी के बन्द मौजूद है। इस काम में २० लाख से अधिक रुपिया खर्च हुआ था, जो राना और उसके सरदारों व अमीरों के खजानों से आया था। और पत्थर समीप की खान से निकाले गए थे। करनल टाड साहब लिखते हैं "इस में सन्देह नहीं यह काम अत्यन्त सुन्दर दृढ़ और प्रशंसा के योग्य है क्योंकि रानी ने

इसको केवल अपनी प्रजा की जान बचाने के निमित्य आरम्भ किया था" ।

लड़ाई और झगड़ों के मध्य में हिन्दु राजाओं को फिर भी अपनी गरीब और कंगाल प्रजा का बहुत ध्यान रहा करता था। रूपनगढ़ की राजकुमारी विशेष कर इस अवसर पर जिस प्रेम भाव से काम कर रही थी और अपने पति को प्रेरणा किया करती थी वह बहुत प्रशंसा के योग्य है ।

कठिनता से मेवाड़ और राजपूताना की दूसरी रियासतों को दुर्भिक्ष से छुटकारा मिला था, कि देश में दूसरी विपद् का प्रारम्भ हुआ इस अवसर पर भी राना और रानी ने जिस प्रेम और उत्साह से काम किया वह बहुत सराहनीय है।

औरङ्गज़ेब हिन्दुओं को मुसलमान बनाने के लिए बहुत घृणित उपायों से काम लिया करता था। कठिन से कठिन दण्ड देना तो साधारण बात थी। आग व तलवार ने असंख्या प्राण लिए। गांव के गांव तबाह कर दिए गए। प्रति दिन लाखों निर्दोषों के गले पर छुरी चलती थी। परन्तु हिन्दू भी ऐसे अड़े कि मुसलमान न हुए पर न हुए। और औरङ्गज़ेब ने मान लिया कि वह अपनी इच्छा कदापि पूरी नहीं कर सकता।

जब आग और तलवार से काम न निकला तो जज़िए लगाने की चेष्टा की गई। लोग गरीब थे यह अनुचित कर भर नहीं सकते थे। परन्तु कठिनता यह थी कि यदी जजिया न दें तो वह निरपराध बध किए जाते थे। अथवा बन्दी खाने में दुःख उठाते थे। इस जजिया का उद्देश्य और बातों के भिन्न एक यह भी था कि मुसलमान लोग उससे प्रसन्न रहें।

मेवाड़ के राना ने औरङ्गजेब को इस दुष्टता का मजा चखाया उसने अपने सह धर्म्मियों को दृढ़ और स्थिर रहने की आज्ञा दी। रूपनागढ़ की राजकुमारी ने राना से कहा कि औरङ्गजेब को पत्र लिखो कि ऐसा अत्याचार बन्द करे। और राना ने ऐसा ही किया। जिन शब्दों में यह पत्र लिखा हुआ था, उनसे ज्ञात होता है कि राजपूत किस शान और बेबाकी के लोग थे। इसमें खुले शब्दों में बादशाह को लानत मलामत की गई थी। और उसकी गति विधि को अधर्म्म और चण्डाली बतलाया गया था। क्योंकि संपूर्ण सृष्टि का ईश्वर एक है, वह कभी किसी एक जाति का पक्षपात करने वाला नहीं हो सकता।

राना ने इस पत्र में जहांगीर और शाहजहां की गति विधि की प्रशंसा की। जिसके कारण मे देश बसा और प्रजा सुखी थी और गत समय के शासन की तुलना करते हुए लिखा "आप के समय में कितने देश हाथ से निकल गए। और कितने विद्रोह के झण्डे खड़े हो रहे हैं। क्योंकि इस क्रिया से सारे देश उजाड़ होते जा रहे हैं। और लोग दुर्भिक्ष व आपदा से मर रहे हैं। आपकी प्रजा विनष्ट हो रही है। राज्य के समस्त प्रान्त कंगाल बन रहे हैं। दिक्कतें बढ़ती जाती है। जब स्वयम बादशाह व्याकुल और बेचैन है तो उसके सरदारों का क्या हाल होगा? सेना अप्रसन्न है। सौदागर दुःखी है, मुसलमान क्रोधित, हिन्दू बेहाल सर्व साधारण को एक समय तक का आहार नहीं मिलता। सब निराशा से सिर पीट रहे हैं"।

आगे चलकर रानी लिखती है। "उस बादशाह का यश कब तक सुरक्षित रह सकता है जो अपनी प्रजा से इस कदर अधिक कर वसूल करने की नीयत रखता है समस्त पूरब से पश्चिम तक प्रसिद्ध है कि बादशाह हिन्दुओं से द्वेष रखता है। और इसी लिए जजिया ले रहा है। यदि आप को ईश्वरी पुस्तक पर विश्वास है तो आपको मालूम होना चाहिए कि ईश्वर सब का स्वामी है केवल मुसलमानों ही का नहीं। हिन्दू मुसलमान सब उसके बन्दे हैं। रंगरूप का भेद मिथ्या है। वह सब का उत्पन्न करने वाला है। तुम मस्जिद में नमाज पढ़ते हो, हिन्दू मन्दिरों में पूजा करते हैं। सब का स्वामी एक है। मत के कारण किसी को तङ्ग करना ईश्वर को अप्रसन्न करना है इत्यादि २"।

आशा थी कि बादशाह इस पत्र के पाठ से ठीक रास्ते पर आजायगा परन्तु यह विचार मिथ्या निकला, औरङ्गजेब के क्रोध की अग्नि और भी भड़क उठी, क्योंकि राना ने रूपना गढ़ की राजकुमारी को छीन लेने से उसकी हतक और मान हानि की थी। उस ने बहादुर राना से युद्ध की तैयारी कर दी। और कहला भेजा कि इस मानहानि का बदला लिया जावेगा।"

औरंगजेब ने अपने पुत्र अकबर को बंगाल से, मुअज्जम को काबुल से और काम बख्श को दक्षिण से राना के विरुद्ध चढ़ाई करने के लिए बुला भेजा। कहां औरंगजेब ! और कहां राना ! हाथी और मच्छर की लड़ाई थी।

राना हताश था परन्तु रूपना गढ़ की राजकुमारी उस की आशा बंधाया करती थी। उस ने कहा कुछ परवाह नहीं

जब तक जान में जान है शत्रु को उस की नीचता का बदला देना चाहिए। वीरांगणा रानी की बातें सुन कर सब आदमी लड़ने को उद्यत हो गए।

जब औरंगजेब मेवाड़ में पहुंचा तो सब स्थानों को उजाड़ पाया, क्योंकि वहां के निवासी मैदान को छोड़ कर पहाड़ों पर चले गए थे। राना स्वयम प्रताप और साँगा की भांति मैदान में खीमा डालकर रहने लगा था। सारे नगरों पर अधिकार कर लिया गया था परन्तु मनुष्य आधीन नहीं हुए थे। उसने पहाड़ी किलों पर चढ़ाई का इरादा करदिया। जब तक शाही सेना पहाड़ पर नहीं चढ़ी थी, राजपूत चुपचाप प्रतीक्षा कर रहे थे। जब वह पहाड़ पर चढ़ने लगी। तो उस पर धावा किया गया और यद्यपि शाही सेना बहुत थी तथापि उसकी हार हुई। कईबार उसने संभल २ कर पर्वत पर चढ़ना चाहा परन्तु हर बार हार हुई। रानी स्वयम राना के साथ थी। इस प्रकार लड़ने की विधि स्वयम उसी ने बताई थी। शाही झण्डा छीन लिया गया। हाथी घोड़े रसद की सामग्री सब राना राज सिंह के हाथ लगी। परन्तु यह फ़तह बहुत सुखदाई प्रमाणित नहीं हुई यद्यपि औरङ्गजेब हृदय से हार गया था तथापि वह लज्या मिटाने के लिए फिर दूसरी बार चढ़ आया।

ऊपर का वृतान्त वास्तव में मेवाड़ की राजधानी के तीस वर्ष का सार है इस सब लड़ाइयों के विषय में जिस प्रकार इतिहास कारों ने विस्तृत वृतान्त लिखे हैं हम यहां उनका अनुवाद कर देना आवश्यक समझते हैं।

जब औरङ्गजेब चित्तौड़ पर अधिकार कर रहा था,

दुर्गादास ने उसको दुश्चिन्ता करने के लिए आलवर पर धावा कर दिया। खुले मैदान में राजपूत उसको विध्वंस नहीं कर सकते थे, इस लिए अवसर पाकर उसका सत्यानाश करते रहते थे। अकबर के समय की तरह राजिस्थान उजाड़ हो गया परन्तु राजपूत आधीन नहीं हुए। अरवल्ली ने राजपूतों को आश्रय दिया। यहां से कभी २ वह निकल कर औरङ्गजेब की सेना को विनष्ट कर देते थे। और उसको चैन नहीं लेने देते थे।

बादशाह एक दफ़ा राना के हाथ में पड़ने से बच गया। अब उसको अधिक होशियार रहने की आवश्यकता अनुभव हुई। उसने चालाकी से शहज़ादा अकबर को पचास हजार सेना देकर मेवाड़ की ओर रवाना किया। उसने झील के किनारे खीमा खड़ा किया और सुख चैन में दिन काटने लगा।

सकतावत फिरका का सरदार राना का मन्त्री था उसकी सलाह से उसने अकबर पर धावा किया, जिस प्रकार आकाश से बिजली गिरती है जैसिंह मेवाड़ का युवराज उस पर आगिरा कई आदमी निमाज़ पढ़ रहे थे। कई शतरंज खेल रहे थे। इतिहास कार लिखता है "यह चोरी करने आए थे, परन्तु सोगए और ऐसी गहरी निद्रा में सोए कि उन में से बहुतों को फिर जगाने का अवसर नहीं मिला"।

अकबर ने बचकर औरङ्गजेब की सेना से मिलना चाहा, परन्तु राना ने रास्ता रोक लिया, एक तरफ झील दूसरी ओर मारवाड़ी रोके हुए थे, तलवार और दुर्भिक्षने उसको प्राणान्तर कर दिया होता परन्तु राजपूतों की बाज समय की अनुचित और निन्दा के योग्य उदारता ने उनकी जान बखशी करदी।

अकबर ने शपथ खाई कि अब कभी न लडूंगा। राजपूत मान गए और मुगलों को हथियार सहित जाने दिया।

इस अवसर पर औरंगजेब की एक बेगम राना के हाथ पड़ गई उसने आदर सहित उसे अपने यहां रक्खा। और अपने मनुष्यों के साथ बादशाह के पास भेज दिया और उससे प्रार्थना की कि इस उपकार के बदले में आप राजस्थान में निर्दोष पशुओं का वध करना छोड़ दें। परन्तु इस दुष्ट ने ऐसी कृतघ्नता की उसे सारी दुनिया जानती है।

राजपूतों को इस प्रकार के युद्ध का बहुत अच्छा तजुर्बा था। एक बार जब अकबर ने चढ़ाई की और बादशाह का झण्डा और हाथी मेवाड़ की सेना के हाथ आया तो उन्होंने पांच सौ पकड़े हुए ऊंटों की गर्दन में जलती हुई मशालें बांध कर अकबर के खीमे की ओर भेज दिया।

दुर्गादास बड़ा चतुर मनुष्य था उसने सोचा "आओ जिस प्रकार शाहजहां के साथ औरंगजेब ने सलूक किया था उसी प्रकार का बरताव उसके साथ भी करें"। अकबर का हृदय राजपूतों की वीरता देख कर बहुत कुछ मोहित हो चुका था, और चूंकि उन्होंने इसके साथ उदारता का व्यवहार किया था वह एक प्रकार की दुविधा में था। औरंगजेब की ओर से उस को शान्ति नहीं थी। वह लड़ाई से घबड़ा गया था। दिल्ली के खीमे में चारों ओर से दूतों ने आकर प्रसिद्ध कर दिया कि अकबर ने अपने आप को भारत वर्ष का बादशाह प्रसिद्ध कर दिया है, और सत्तर हज़ार सेना लेकर औरङ्गजेब से लड़ने आ रहा है।

औरङ्गजेब भी बड़ा कांइयां मनुष्य था। उसके दूसरे लड़के दूर २ थे, अजमेर में केवल एक हज़ार सेना उसके पास थी। वह केवल अपनी चालाकी व होशियारी से बचता रहा, चाल-बाजी, छल कपट और धोखे से काम लेना उसी का भाग था, उसने किसी न किसी यत्न से एक पत्र लिखा कर दुर्गादास के खीमे में डलवा दिया कि अकबर बादशाह से मिला हुआ है और उसको उसे पकड़वाना चाहता है। परिणाम यह हुआ कि कई मुगल सरदार अकबर से अविश्वासी हो गए, उसके साथी भाग निकले। और सिवाय दुर्गादास व तीन हज़ार मनुष्यों के कोई भी उसका साथी नहीं रहा।

दूसरे दिन राजपूतों को मालूम हुआ यह केवल औरङ्गजेब की चालबाजी थी वरना अकबर उनको किंचित धोखा देना नहीं चाहता था।

परन्तु अवसर हाथ से निकल गया था, मुअज्ज़म और आजम अपने बाप के पास जा पहुंचे थे और अकबर को अब सिवाय लड़ने के और उपाय बाकी नहीं रहा था, दुर्गादास और पांच सौ मनुष्यों के पीछे वह महाराष्ट्र के देश में जापहुंचा। और चूंकि बादशाह को राजपूतों ने बनावटी खबर दी थी वह भी इधर उधर परेशान फिरता रहा।

अकबर के भाग जाने का समाचार सुनकर औरङ्गजेब के क्रोध की अग्नि भड़क उठी। टाड लिखता है कि तैश में आकर उस ने कुरान को धरती पर पटक दिया और तन मन से मार-वाड़ को विध्वन्स करने की ओर लग गया।

जसवन्तसिंह का पुत्र अब युवा हो चुका था। और राठौर

उस के देखने के लिए व्याकुल हो रहे थे। वह कहते थे बिना अपने सरदार के देखे हमारे लिये भोजन हराम है। निदान लोग उसे ले आये और सब के सामने माथे पर तिलक लगाया गया। लोगों ने सोने, चांदी, घोड़े और मोतियों की भेंटें दीं। अजीतसिंह के आने से लोगों का साहस बढ़ गया।

इस काल में राजसिंह मेवाड़ का राना का स्वर्गवास हो गया और उस का पुत्र जयसिंह राजगद्दी पर बैठा, यह वह जन था जिस ने शाहजादा अकबर को प्राण दान किए थे। यह बहादुर, धीर और शान्त स्वभाव था इसने औरंगजेब से सन्धि (सुलह) कर ली। क्योंकि बादशाह को दक्षिण की ओर जाने की आवश्यकता थी, और वह राजिस्थान में पड़ा रहना नहीं चाहता था, परन्तु यह सन्धि थोड़े दिनों की थी क्यों कि जब और रजवाड़े लड़ते रहे तो मेवाड़ के लिए पृथक रहना उचित नहीं था। और इसी कारण से वह दिल्ली की प्रतिज्ञा पर दृढ़ न रहने का अपराध लगाता था और बादशाह को दोषी ठहराता था।

निदान औरंगजेब के प्रायः शत्रु मर गए जयसिंह का भी देहान्त हो गया, उस की जगह उमरावसिंह द्वितीय राजगद्दी पर बैठा और जब उस को सात वर्ष राज करते हुए बीते तो मार्च सन् १७०७ को यह शुभ समाचार पहुंचा कि राजस्थान का शत्रु औरङ्गज़ेब मर मिटा।

अजीत तुरन्त घोड़े पर सवार होकर जोधपुर गया मुसलमान इस को देख कर थर्रा उठे और भागने लगे। परन्तु अजीत ने उनका पिछा किया, और एक २ को पकड़ कर बध किया,

अब जाकर हिन्दुओं को सुख और शान्ति प्राप्त हुई। धार्मिक नियमों की पालना आरम्भ हुई। राजपूतों ने दाढ़ी मुंडवा दी क्योंकि अब मुसलमानों की तरह भेष रखने की आवश्यकता नहीं थी।

बहादुरशाह में अपने बाप औरङ्गजेब की योग्यता नहीं थी। और उसको ऐसी दिक्कतों के साथ मुकाबला करना पड़ा जिनका और मुग़लों के समय सन्देह भी नहीं था सिख मरहठे राजपूत इसके बाप के कट्टर पने से व्याकुल हो रहे थे। वह अब अवसर पाकर राज्य को तहस नहस करने लगे, विषई आलसी, और नीच दरबारियों में वह साहस बाकी नहीं रहा था, वह पालकी पर चढ़कर लड़ने जाया करते थे। और बाबर व हुमायूँ के परिश्रम की कथाएं उनको कल्पित मालूम होती थीं। बहादुरशाह ने राजपूतों से सन्धि करली और सब को जान बूझ कर स्वतन्त्र और स्वाधीन बना दिया ताकि उसको उनके झगड़ों से छुट्टी रहे।

राजिस्थान के तीन रजवाड़े अमरसिंह वालिए उदयपुर, अजीतसिंह वालिए जोधपुर' जयसिंह वालिए जयपुर, ने परस्पर प्रतिज्ञा कर ली, कि आगामी दिल्ली से कोई सम्बन्ध न रक्खेंगे। इस प्रतिज्ञा को दृढ़ करने के लिए अजीतसिंह और जयसिंह ने मेवाड़ की राजकुमारियों से विवाह किया और शपथें खाईं कि उनके गर्भ से लड़के उत्पन्न होंगे वही राज गद्दी के स्वामी होंगे।

इस प्रकार तीस वर्षीय युद्ध की समाप्ति होगई। यदि औरङ्गज़ेब राजिस्थान वालों से मेल रखता तो वह निःसन्देह

औरङ्गज़ेब होता, मरहटे आदि उसको इस प्रकार तँग न कर सकते। राजिस्थान की विरोधता से उसका दाहना हाथ टूट गया। इसके सिवाय राजपूतों का दिल्ली से अलग होना उनके लिए कुछ कम दुखदाई नहीं हुआ। यह भी मरहटों के हाथ से बहुत दुखी हुए। विवाह की प्रतिज्ञाएं स्थिर नहीं रहीं और इसके कारण मरहटों को हस्तक्षेप करने का पूरा अवसर मिल गया।

अजीत की उत्पत्ति मेवाड़ और राजिस्थान के लिए आपदा लाई थी। वह बहुत दिनों तक अच्छी तरह राज्य करता रहा परन्तु पीछे से एक ऐसा निन्दा के योग्य काम किया जो उसके नाम पर कलङ्क लगाता है। दुर्गादास राजिस्थान में बड़ा माननीय और प्रतिष्ठि राजपूत था। उसकी छवि प्रत्येक घर में आदर से लटकाई जाती थी लोग कहते हैं कि स्वयम औरङ्गजेब ने अपने दोनों जानी शत्रुओं की छवियां खिचवा रक्खी थीं। शिवाजी तख्त पर बैठा था और दुर्गादास घोड़े पर सवार हाथ में भाला लिए हुए बनाया गया था। औरङ्गजेब इन छवियों को देखकर कहा करता था शिवाजी को तो मैं परास्त कर सकता हूं परन्तु दुर्गादास को परास्त करना असम्भव है, रक्षा शिक्षा, और पालना के लिए अजीत को दुर्गादास का कृतज्ञ होना चाहिए था, परन्तु मालूम नहीं किस कारण से वह उस से अप्रसन्न हो गया। और उसको घर बार धन सम्पद को हस्तगत करके देश निकालने का दण्ड दिया। राना मेवाड़ ने उसे सन्मान पूर्वक बुलाकर उदयपुर की झील के निकट उसके रहने के लिए मकान बनवा दिया, और पांच सौ रुपया गुजारे के लिए देता रहा।

एक मुसलमान इतिहासकार अंकित करता है कि बहादुर

शाह ने राना मेवाड़ से प्रार्थना की थी कि दुर्गादास को हमें दे दो। परन्तु राना ने उत्तर दिया कि नहीं मैं अपने आश्रित को कभी दूसरे के पास नहीं भेज सकता।

दुर्गादास ने अजीत की रक्षा और पालना पिता के समान की थी। अजीत को इस दुष्ट कर्म्म का फल तत्काल ही मिला। सन् १७३० ई० में जब वह अपनी रानी के साथ सोया हुआ था। स्वयम उसके दो पुत्रों ने आधी रात के समय उसे वध कर डाला। मारने वाला छोटा पुत्र था परन्तु बड़ा पुत्र अभय सिंह भी उसके साथ था।

जिस दिन यह काम किया गया उस दिन से लेकर आज तक फिर कभी मारवाड़ को अच्छे दिन देखने प्राप्त नहीं हुए। सत्य है जहां बदकारी से काम लिया जाता है वहां से शुभ और कल्याण अलोप हो जाता है।

(१८)

राना संग्रामसिंह

संग्रामसा संग्राम में दाना था न कोई।
रानाओं में इस अक़्ल का राना था न कोई॥

राना संग्रामसिंह सन् १७१६ में राजगद्दी पर बैठा। अठारहवीं सदी का यह अकेला राना है जिस में मेवाड़ की प्राचीन वीरता, बुद्धि, और साहस अपने असल रूप रंग में चमक रहा था।

उसके न्याय, दृढ़ता, और सरलता के जीवन के विषय में अनेक कथाएं अब तक प्रसिद्ध हैं। यह मेवाड़ का अन्तिम

महाराना है। जिस के समय प्रजा सुख और शान्ति से रहती थी और मरहटों के हस्ताक्षेप से सुरक्षित थी।

जब उमरावसिंह द्वितीय उसका पिता मरा तो उसकी आयु बहुत थोड़ी थी और इस लिए लगातार कई वर्ष तक उस की माता राजकुमार के नाम से राज का काम करती रही। जब वह तरुण अवस्था को पहुंचा तो राज का काम काज अपने हाथ में ले लिया। परन्तु रानी साहस वाली और जीदार थी वह हस्ताक्षेप करने से नहीं रुकती था। राना चाहता था किसी प्रकार उसको इस बात से वर्जित रहने की शिक्षा देवे। परन्तु वह माता थी, राजपूत माता का बड़ा सन्मान करते हैं। वह चाहता था रानी अपना ध्यान केवल गृह प्रबन्ध में देती रहे राज्य कार्य्य के मामलों में कोई वास्ता न रक्खे, परन्तु वह कब मानती थी। राना अच्छे स्वभाव वाला था। माता के सन्मान का सदा ध्यान रखता था। उसने समझा संग्राम सदा मेरी सम्मति का सन्मान करता रहेगा और तरुण होने पर भी वह उसके विरुद्ध कोई बात न करेगा परन्तु संग्राम और प्रकृति का मनुष्य था "दो बादशाह एक राज्य में नहीं होते" की कहावत वह नहीं चाहता था कि कोई मनुष्य उसके राज्य कार्य्य सम्बन्धी विषयों में हस्ताक्षेप करे।

राजवंश का एक रईस दरयावत का राजा किसी अपराध के कारण राना की दृष्टि में गिरा हुआ था, और संग्राम की आज्ञा से उसकी रियास्त हास हो गई थी। यद्यपि राना अल्पायु था परन्तु थोड़े ही काल में न्याय और धर्म के लिए उसकी महा प्रशंसा होने लगी। और उसके आधीन सरदारों को अच्छी प्रकार मालूम हो गया था कि वह बिना सोचे समझे

न किसी को दण्ड देना है न पुरस्कार देना है और न किसी के अपराध को क्षमा करता हैं। इस लिए किसी को दरियावत रईस के बीच बचाव अथवा सिफारिश की हिम्मत नहीं हुई।

दरबार से दो वर्ष की बन्दी के पश्चात् उसको महा कष्ट होने लगा। उसने सोच लिया कि किसी न किसी प्रकार से क्षमा प्राप्त करनी चाहिए। राना की माता की सहेलियों में उस की अवगति थी। उसने दो लाख रुपये की रकम घूस में दी। और सहेलियों को धन सम्पदा देकर प्रसन्न किया कि रानी उसकी प्रार्थना राना तक पहुंचा दे।

राना का नियम था कि भोजन करने से पहले वह अपनी माता के पास जाकर प्रणाम किया करता और उसका आशीर्वाद लेकर फिर भोजन करता था, एक दिन जब वह नियमानुसार माता के पास गया तो रानी ने कहा पुत्र! आज मैं तुझ से कुछ कहना चाहती हूं और आशा है तू स्वीकार करेगा, दरियावत के सरदार को आवश्यकता से अधिक दण्ड मिल चुका अब वह अपने किए पर लज्जित है, क्या तू उसके इलाके को लौटा कर फिर अपने दरबार में हाजिर होने की आज्ञा प्रदान न करेगा"? उसने साफ २ यह भी वर्णन कर दिया कि रईस ने व्याकुल होकर उसको नज़र भेजा है और इस कारण से उस की सिफारश की गई है, राना की तेवरी पर बट भी नहीं आया, उसने बिना पश्चाद्ग्र कहा "मुझे आप की आज्ञा से इनकार नहीं है। मेवाड़ में दस्तूर है जब किसी प्रकार की आज्ञा दी जाती है तो आज्ञा देने की तिथि से आठ दिन पीछे आज्ञा

पत्र प्रचलित किया जाता है। परन्तु इस मामले में उसने किसी नियम का विचार नहीं किया और उसी समय आज्ञा पत्र जारी कर दिया और रानी के कमरे में बैठे हुए सारी कार्य्यवाही की। जब सब बातें हो चुकीं तो राना ने सन्मान पूर्वक आज्ञा पत्र माता के हाथ में देकर कहा, इस को आप सरदार दरियावत के पास भेज देवें और प्रणाम करके भोजन करने गया।

रानी मन में बहुत प्रसन्न थी, समझी अच्छा काम हुआ और अपनी चतुरता पर घमण्ड करने लगी। परन्तु दूसरे दिन नियत समय पर राना नहीं आया कई उस के बुलाने के लिए मनुष्य गए। परन्तु राना ने उत्तर दिया, मैं आज प्रभात ही भोजन कर चुका। सन्ध्या समय आया राना फिर भी माता के पास नहीं गया। दूसरे और तीसरे दिन भी यही दशा रही। उस के बुलाने का उत्तर सन्मान के साथ और पुत्रवत दिया जाता था, परन्तु वह रानी के पास स्वयम् नहीं आता था।

रानी ने जाकर अब अपनी अज्ञानता पर विचार किया जैसी करनी वैसी भरना। अपने किए का इलाज नहीं, इस के हृदय पर दुःख का पहाड़ टूट पड़ा। उसने बेटे के क्रोध को अनुभव किया। और अपनी पदवी का विचार न करके राज मन्त्री को बुला भेजा और उस से शिफारिश करने की प्रार्थना की। संग्राम का मन्त्री चतुर और धार्म्मिक था पिछले तीन रानाओं के समय से लोग उसका सन्मान करते आते थे। मन्त्री ने रानी को कहला भेजा यूं तो मैं आप का दास हूं परन्तु

राज कार्य्य के सम्बन्ध में सिवाय राना के और किसी के साथ बात चीत करने की मुझको आज्ञा नहीं है।

रानी ने अपने पुत्र का पुनः प्रेम प्राप्त करने की हज़ार चेष्टा की परन्तु कुछ लाभ न हुआ। उस के स्वभाव में चिड़ चिड़ाहट आ गई, सहेलियों का दम नाक में आ गया। वह कभी २ बिलकुल अकेली बैठी रहती, किसी को पास आने की आज्ञा न देती, खाने पीने से भी उदास रहती, परन्तु राना ने किंचित परवाह नहीं की, उस ने तीर्थ यात्रा की इच्छा की, कहने की देर थी उसी समय तैयारी कर दी गई जब उस के चलने का समय आया पालकी सहन खाने में रखी गई राना के आने का इन्तजार होने लगा। माता ने समझा अब मेरा बेटा अवश्य आवेगा चलते समय आ कर मिलेगा। मनुष्य भेजे गए परन्तु इस अवसर पर भी उसे वही उत्तर मिला। निराश और लज्जित हो कर हत भाग्यता पालकी में सवार हुई। हृदय में दुःख भरा था। शोक का कारण ऐसा था जिस को गंगा भी नहीं धो सकती थी न धुलने की आशा थी। पालकी उदयपुर से चल पड़ी।

मार्ग में वह अम्बर की ओर से गुजरी उस समय उस का बलवान राजा जयसिंह सवाई गद्दी पर बैठा था। वह मार्ग में उस को प्रणाम करने आया मेवाड़ और अम्बर के खान्दान में हमेशा से नाता रहा है। राना को राजा की बहिन, और राजा को रानी की बहिन ब्याही थी। वह रानी से बड़े आदर और सन्मान के साथ मिला। नए बने हुए जयपुर नगर को देखने की रानी से प्रार्थना की। और रानी की पालकी को

उठा कर अपने कन्धे पर रख लिया, ताकि सब पर प्रभाव पड़े कि जयसिंह मेवाड़ की रानी का कितना सन्मान करता है। इस प्रीति के बर्ताव ने उस के मन को मोहित कर लिया राजा जयसिंह फिर भी ऐसा न था जिस का अधिक विश्वास किया जाता रानी भ्रम चक्र में थी। वह किसी न किसी को अपना दुःख सुनाना चाहती थी। जयसिंह ने अपनी सहानुभूति प्रकट की और वादा किया कि मैं राना से मिल कर इस अन्मेल को दूर कर दूंगा।

रानी जयपुर से विदा हो कर तीर्थ यात्रा को गई और अनेक पवित्र तीर्थों का परिक्रमा किया अनेक नदियों में स्नान किया। परन्तु मन का शोक न गया पर न गया। यात्रा कर के वह देश की ओर लौटी और जब सवारी अम्बर के समीप पहुंची, राजा जयसिंह अपनी सेना का एक रिसाला साथ लिए हुए स्वागत को आया और उदयपुर तक साथ चलने का इरादा किया ताकि राना से सिफारश कर सके।

जब संग्रामसिंह ने सुना कि माता के साथ सवाई जयसिंह आ रहा है, उस ने समझ लिया कि उस के आने का उद्देश्य क्या है। और उस ने इरादा किया कि अम्बर के राजा को इस विषय में मध्यवर्ती बनने का अवसर न देना चाहिए। राजपूत अतिथि सत्कार के नियम अनुसार उस की कोई प्रार्थना अस्वीकार नहीं की जा सकती। इस के सिवाय किसी अन्य मनुष्य का मा बेटे के बीच में सहायक बनना उचित न था। वह सन्तोष के साथ प्रतीक्षा करता रहा जब सवारी समीप आई वह स्वयम् अपने सरदारों को साथ ले कर बाहर निकला

ताकि राजा का नियमानुसार स्वागत करें। जब वह जयसिंह के खीमे के निकट आया उस ने घोड़े की बाग रोक ली और माता की पालकी का परदा उठा कर उस को प्रणाम किया और उसे साथ ले कर उदयपुर पहुंचा आया फिर जयसिंह का स्वागत किया। उस दिन राना ने इस के अतिरिक्त और कोई बात नहीं कही कि गृह सम्बन्धी काम काज और राज सम्बन्धी काम काज का कोई सम्बन्ध नहीं है। और घर की बात घर ही तक रहनी चाहिए। और फिर उसी प्रकार माता से मिलने जुलने लगा।

मुग़लिया राज दिन प्रति दिन गिर रहा था, परन्तु संग्राम ने उस की ओर किंचित ध्यान नहीं दिया। उस के पड़ोसी, मारवाड़ का अजीतसिंह और अम्बर का जयसिंह दिल्ली की दुर्बलता से लाभ उठा कर उस के इलाकों को अपने राज्य में मिलाते रहे। परन्तु राना ने सारा उद्योग अपनी प्रजा की उन्नति की ओर किया। और अठारह लड़ाइयां जो उस को लड़नी पड़ीं वह केवल मेवाड़ को बचाने और सुरक्षित रखने की इच्छा से थीं। उस ने अपने राज के बढ़ाने का किंचित लोभ नहीं किया।

एक दिन वह भोजन करने के लिए बैठा। थाली सामने परोस कर रखी गई, जिस समय उस ने ग्रास उठाना चाहा, उसी समय एक मनुष्य ने आ कर खबर दी कि मालवा के पठानों ने पंडिश्वर के बहुत से गांव लूट लिए और गांव वालों को पकड़ कर लिए जा रहे हैं। राना उसी समय अपनी जगह से उछल पड़ा, थाल को आगे से हटा दिया और नौकरों से कहा

जल्द घोड़ा तैयार करो" डंके पर चोट दी गई। आस पास के सरदार महल में आ कर पूछने लगे। महाराज का क्या हुकुम है हम को किस मुहीम पर जाना होगा जब उन को मालूम हुआ कि राना किसी मुहीम पर नहीं जा रहा प्रत्युत मालवा के पठानों को दण्ड देने जाता है। उन्हों ने कहा प्राणनाथ! ऐसे तुच्छ और नीच मनुष्यों के ऊपर आप को चढ़ाई करना उचित नहीं उन को दण्ड देने के लिए आप के सेवक क्या कम हैं? आप हम पर विश्वास करें उन की नीचता का फल हम उन्हें अच्छी तरह चखा देंगे। राना को यह बात अच्छी नहीं मालूम हुई परन्तु जब सब दरबारी यही कहने लगे तो विवश हो कर वह रह गया और सरदार पठानों को दण्ड देने के लिए गए।

उसी समय एक बहुत दुबला पतला रोगी मनुष्य राना के पास आया, यह ज्वर में ग्रस्त था. ज्वर के प्रकोप से सारा शरीर कांप रहा था। बल का नाम नहीं था और चिरकाल से बीमारी की सेज पर पड़ा हुआ था डंके की चोट सुन कर वह चौंक पड़ा और इस खयाल से कि न जाने राजा ने क्यों बुलाया हो बिस्तरे से उठ कर सन्नाह पहन ली और हालते कांपते राना की सेना में झट पट हाजिर हुआ। 'महाराज! आप की क्या आज्ञा है? दास सीस निवछावर करने को तैयार है"। यह शख्श कनवारह का सरदार था और इस का मकान महल से कुछ ही दूर पर बना हुआ था।

राना ने कहा "आप बीमार हैं इस लिए चले जांय और दवा दारू करें, मैं इसी में प्रसन्न हूं और यही मेरी आज्ञा है'।

सरदार ने कहा नहीं इक्के पर चोट यूंही नहीं पड़नी और हमको सेवा करने का अवसर बार २ नहीं मिलता : आप केवल मेरी बीमारी के विचार से ऐसा कहते हैं इसलिए मैं आप से मुहीम पर जाने की आज्ञा चाहता हूं"। राना ने विवश होकर आज्ञा दी और बीमार सरदार ने घोड़े को सरपट दौड़ाते हुए पांडेश्वर का मार्ग लिया।

इस घटना को लोग चाहे किसी दृष्टि से क्यों न देखें, परन्तु इस से स्पष्ट विदित है, कि अठारवीं शताब्दी तक के हिन्दुओं में अपने कर्तव्य का बहुत कुछ ख्याल वर्तमान था। और आवश्यकता के समय बीमारी दुर्बलता, चिन्ता आदि भी उनको कर्तव्य पालन करने से वञ्चित नहीं रख सकती थी।

यहां का वृत्तान्त सुनिये कि पठानों में से केवल थोड़े से मनुष्य जीवित बचे बाकी सब मारे गए और मेवाड़ के सरदार विजय का बाजा बजाते हुए लौट आए। परन्तु पांडेश्वर के लिए वह शोक का दिन था सरदार लड़ता हुआ मारा गया उस के सब आदमी काम आए क्योंकि अपने स्वामी की नीरता देख कर मेवाड़ियों में वह सब से आगे थे। और सब जान पर खेल गए। उस का पुत्र भी अत्यन्त घायल हुआ।

दरबार के समाप्त होने पर सरदारों को पान दिया जाता था,केवल प्रथम श्रेणी के सरदारोंको राना अपने हाथसे पान देता था कनवाहर का सरदार दरबारियों में मौजूद नहीं था घायल लड़के के घाव कुछ २ अच्छे हुए थे वह दरबार में बुलाया गया और जब वह सन्मुख आया तो राना ने अपने हाथ से उसे पान दिया और उसकी सेवा का यही मूल्यवान बदला था, राजपूत इसको बड़े आदर और सन्मान से ग्रहण करते थे।

आज हिन्दुओं में अफ़रा तफरी पड़ी हुई है "नाऊ की बरात में जने २ ठाकुर" बने हुए हैं। परन्तु कोई समय था और उसको व्यतीत हुए अभी बहुत दिन नहीं हुए उन की अवस्था कुछ और थी। और वह सरदार की आधीनता व तावेदारी की आवश्यकता से अवगत थे। और सरदार भी उनके दुःख दर्द का हमेशा साथी होता था यह बात संग्रामसिंह में विशेष रूप से देखी गई थी।

एक बार ऐसा अवसर हुआ कि सलोम्बरा के चन्दावत सरदार को राना ने दिल्ली की सेना से मिल कर काम करने की आज्ञा दी यह सेना मालवा में थी। शत्रुओं पर विजय पाने पर सब लोग जल्दी के साथ मेवाड़ आए और दरबार में हाज़िर हुए। परन्तु सलोम्बरा ने बजाय इस के कि राना की सेवा में जा कर विजय का सम्वाद सुनाए, राह में ठहरने और अपने घर वालों से मिलने की आज्ञा चाही।

उस के शत्रुओं ने राना के कान भरे कि सरदार चन्दावत मेवाड़ के शत्रुओं से मिल गया है और दरबार दिल्ली के साथ षड्यन्त्र कर रहा है, अन्यथा इस अवसर पर घर चले जाने की क्या आवश्यकता थी ? यह उस की चालबाजी है। इस प्रकार से वह अपने सहायकों को एकत्र करना चाहता है और उदयपुर आने से बहाना बनाना चाहता है।

संग्राम ने चुपचाप और साधारण रूप से इस वृत्तान्त को सुना और जब पिशुनता करने वाले ने अपनी बात समाप्त कर ली तो क्रोध की दृष्टि से उस की ओर देख कर घृणा का प्रकाश करते हुए कहा "मैं खूब जानता हूं। मेरे सरदारों में से एक भी

ऐसा नहीं जो मुझे कभी धोखा दे। मुझे सलोम्बरा पर पूरा विश्वास है मैं अपना आदमी भेज कर उस को बुलाऊंगा और वह तुरन्त चला आवेगा और अनुचित सन्देह करने वालों को दिखा देगा कि उनका विचार मिथ्या है। यही उस की वफ़ादारी और सच्चाई का पूरा प्रमाण होगा।

जिस समय राना के दरबार में यह बात हो रही थी सलोम्बरा अपने आधीन सरदारों को बिदा कर चुका था, और स्वयम भी महल के भीतर प्रवेश कर चुका था उस का पांव रनवास की चौखट पर था, जिस के दूसरी ओर मातायें बहनें और २ स्त्रियां बैठी हुई थीं। प्रथम इस के कि वह फाटक खोल कर रनिवास के भीतर जाय, राना का धावन जा पहुंचा और कहा राना आप को स्वागत करता है और मुझे आज्ञा है कि इस पत्र का उत्तर शीघ्र पहुंचाऊं।

सरदार उसी समय खड़ा हो गया। पत्र को सन्मुख किया और खोल कर पाठ किया तुरन्त आज्ञा दी 'मेरा घोड़ा लाओ और माता को प्रणाम कह दो' यह कह कर उस ने उदयपुर का मार्ग लिया।

उदयपुर में उस के आने की किसी को आशा नहीं थी। उस का निवास मन्दिर खाली पड़ा था नौकर चाकर बाहर चले गए थे। थके हुए सरदार के लिए सेवकों और सुख की सामग्री की आवश्यकता थी जो वहां वर्तमान न थी परन्तु राना ने अपने मनुष्य भेज दिये और उन्हों ने सब आवश्यकता निवारण कर दी। राज मन्दिर से खाने पीने की सामग्री भेजी गई।

दूसरे दिन सलोम्बरा दरबार में पेश हुआ। राना ने

असाधारण कृपा का उस के साथ वर्ताव किया जब वह विदा होने लगा, राना ने घोड़े और जवाहारात देने चाहे। जो ऐसे अवसर पर हमेशा दिए जाते थे और उस को जागीर देने की भी इच्छा की।

चन्दावत ने विस्मित हो कर पूछा "इस प्रकार की महाराज की कृपा का कारण क्या है" और जब उस को सब वृत्तान्त खोल कर कहा गया, उस ने उत्तर दिया मैं चप्पा भर धरती भी लेना नहीं चाहता इस पुरस्कार के बदले, ऐसे बेढब मामले में राना मेरे सीस उतारने की आज्ञा दे सकता था, यदि राना को मेरी सेवा का बदला देना अवश्य स्वीकार है और मुझ को अपनी इच्छा प्रगट करने की आज्ञा है तो सब से अधिक सन्मान मेरा इस बात में है कि जब कभी मैं अथवा मेरी सन्तान महाराज की सेवा के निमित्त उदयपुर में आवे तो हम सब को राज मन्दिर से इतना ही सामान मिला करे जो इस अवसर पर मुझे प्राप्त हुआ है।

प्रार्थना स्वीकार की गई और करनल टाड साहब के समय तक बराबर उस के अनुसार वर्ताव होता रहा। चन्दावत सरदार की दावत में राना अधिक खर्च किया करता था नत्वा वह अपने निज सुख में बहुत कम खर्च करने वाला था।

संग्राम को अपने पूर्वजों के अपव्यय के मिटाने का सदैव ध्यान था। क्यों कि वह अपने समय में अपव्यय के कारण प्राय दुखी रहा करते थे। उस ने अपने निज के खर्च के लिए इने गिने कुछ गांव नियत कर लिए थे। और केवल उन की आमदनी उस के निज के काम में आती थी। यथा कुछ गाँव की

आमदनी उस के रसोई घर में खर्च होती थी और कुछ गांव की आमदनी से रानियों के वस्त्रादि के खर्च चलते थे। और प्रत्येक गांव किसी विशेष सरदार की निगरानी में रहा करता था और वह सब प्रधान मन्त्री के अधीन थे।

एक दफा किसी गफलत और बेपरवाही के कारण संग्राम ने उन में से एक गांव किसी को दे दिया, थोड़े ही दिनों के पश्चात् जब वह भोजन करने बैठा तो दही का कटोरा रखा गया परन्तु उस में खांड न थी राणा ने कारण पूछा उत्तर मिला महाराज! जो गांव खांड के लिए नियत था उस को दीवान साहब ने किसी को दे दिया है।" राना ने नम्रता पूर्वक उत्तर दिया हां सच है और उस दिन से फिर कभी खांड का नाम नहीं लिया।

एक और अवसर पर उस के एक बड़े सरदार कोठारी के राजा ने मेवाड़ के दरबारी पहनावे के विषय में सम्मति प्रगट की कि वह बहुत तंग हुआ करता है और पुरानी भांति का है। ढीले ढाले आस्तीन बड़े सुन्दर मालूम होंगे इत्यादि २ राना ने उस की बातें सुनीं। और वस्त्रों के बदलने का वादा किया, सरदार प्रसन्न हो कर घर गया, उस ने समझा बड़ा अच्छा काम हुआ, आज से राजस्थान के और दरबारों की तरह उदयपुर का लिबास भी देखने में अच्छा और सजीला मालूम हुआ करेगा।

कुछ दिनों के पश्चात् उस को खबर मिली कि राना ने उस के दो गांव जब्त कर लिए। उस ने बहुत सोचा कि मुझ से क्या अपराध हुआ, परन्तु कोई बात समझ में नहीं आई।

वह जानता था कि राना अकारण किसी को दण्ड नहीं देता, विस्मित हो कर वह दरबार में आया और नम्रता से पूछा मैंने किस अपराध के द्वारा अपने स्वामी को अप्रसन्न किया है ?

राना ने कहा "तुम ने कोई भी अपराध नहीं किया, गांव के ज़ब्त होने का कारण यह है कि मैं हिसाब की पड़ताल कर रहा था, मुझे मालूम हुआ कि दरबारी वस्त्रों में परिवर्तन करने के कारण कुछ खर्च बढ़ गया, मैं ऐसे सरदार की प्रार्थना अस्वीकार नहीं कर सकता था जो मेरे सरदारों में सब से अधिक माननीय हो और विशेष कर जब उस ने मुझ से ऐसी प्रार्थना की है, मेरे निज के गांव की आमदनी किसी न किसी पद के लिए नियत है, इस लिए आप के दो गांवों की आमदनी मेरे खयाल में इस खर्च के लिए यथेष्ट होगी' मैंने आपकी इच्छानुसार काम करने के लिए विवश होकर यह दो गाँव जब्त कर लिए हैं ।

कोठारी के सरदार ने लज्जा से सिर झुका लिया, और अपने आप को लानत मलामत करने लगा कि नाहक इस प्रकार की प्रार्थना की फिर उसने कहा कृपया परिवर्तन वस्त्र के मामले को इस समय आप रहने दीजिए और उस रोज से उसने राना से किसी प्रकार की प्रार्थना नहीं की।

संग्राम ने सन् १७३४में शरीर त्याग किया। उसके मरते ही मेवाड़ की दशा बदल गई । उस के प्रतिनिधि दुर्बल थे वह मरहटों के धावों को रोक न सके, मरहटों ने समस्त राजिस्थान में लूट मार मचा दी। सम्भव है पृथक रहने के कार्य्य ने मेवाड़ को हानि पहुंचाई हो! मेवाड़ दक्षिण के भेड़ियों का सामना

करने के अयोग्य था । परन्तु अन्त में उसने बापा रावल के नियमों पर चलना फिर आरम्भ किया । और चढ़ाई करने वालों के दांत खट्टे कर दिए ।

सत्तर वर्ष के पश्चात् राजिस्थान को जिस प्रकार फिर अवन्नति होने लगी उस की समस्त घटनाओं का वर्णन बहुत लम्बा है । मेवाड़ के संग्रामसिंह और मारवाड़ के अजीतसिंह के मरते ही राजपूतों में अनमेल, ईर्षा द्वेष फिर बढ़गया । एक राजपूत दूसरे के विरुद्ध उठ खड़ा हुआ । भाई ने भाई की गरदन दबाई, और जब परस्पर इस प्रकार लड़ २ कर दुर्बल होगए, तो शत्रुओं ने उन्हें सहज शिकार समझ कर घर दबाया, कभी कोई राजपूत रियास्त अवन्नति के लक्षण प्रगट करती थी और कभी कोई । उधर मरहटों की शक्ति ज़ोर पकड़ती गई । राजपूत केवल राजपूती शान स्थिर रखने के लिए युद्ध करते थे, मरहठे देशोन्नति के नियम से काम कर रहे थे, मरहटा शब्द की व्याख्या है कि मार कर हट जाना । लूट मार उनका काम था । यदि राजपूतों को उनके पूर्वजों के कारनामे न सुनाए जाते और उनसे राजपूती प्रतिष्टा बचाए रखने की प्रार्थना न की जाती तो वह लड़ते भी न थे । मरहटा इस के प्रतिकूल अपनी रुचि से लड़ने भिड़ने को तैयार थे । धीरे २ राजिस्थान पर प्रबल आते गए । और जब अंग्रेजों ने उन को पराजित किया तो राजपूत बरतानिया राज्य के कर देने वाले रईस बन गए:—

धन सम्पद का गर्व न करिए मट्टी में मिल जाएगा ।
हाथ पसारे आया बन्दा हाथ पसारे जाएगा ॥

(१६)

अजीतसिंह के लड़के

बेमिस्ल१ था इस नस्लका इकएक खुश२ अवतार ।
भय और अभय दोनों हुए लेक सितमगार३ ॥
गो दोनों थे जाँ बाज़४ जरी फ़ौज के सरदार ।
क्या लुत्फ़ जो दुनियां की निगाहों में हुए ख्वार५ ॥
बद्कारी का इक शख्स से इक शोर६ पड़ा है ।
जंगल में मरा बेकफ़न व गोर पड़ा है ॥

मारवाड़ में यह कहावत प्रसिद्ध है कि जब राजा अजीत सिंह चौहान राजकुमारी को व्याहने जा रहा था। तो मार्ग में दो व्याघ्र दिखाई दिए । एक सो रहा था और दूसरा जागतो था। ज्योतिषियों ने इस घटना को देख कर कहा, तुम्हारे दो पुत्र होंगे। एक आलसी और कायर, दूसरा वीर और शूरमा, सच मुच समय आने पर अजीत के दो पुत्र हुए । अभयसिंह और भगतसिंह, और यही दोनों उस की मृत्यु का कारण हुए।

अजीत के मारे जाने पर मारवाड़ में भय और निराशा की दशा छा गई। क्योंकि अजीत अपने समय का बड़ा शूरमा और चतुर था। उसने औरङ्गज़ेब की सन्तान का नाक में दम कर दिया था, और उस के मरते ही उस ने अपने बाप का बदला ले लिया था। इस ने मुगल बादशाहों को विवश किया कि

---

(१) अद्वितीय। (२) सदाचारी। (३) अत्याचारी।
(४) वीर। (५) बरबाद। (६) रौला।

वह प्रण करें कि आगामी गऊ बध न होगी, हिन्दुओं को शंख बजाने और अपनी धार्मिक रीति पूरी करने की स्वतन्त्रता रहेगी। मीना बाजार की प्रथा बन्द की जायगी और जजिया की रीति को सदा के लिए तिलांजुलि दी जायगी। यद्यपि उसने दुर्गादास के साथ अनुचित वर्ताव किया, परन्तु राठोर फिर भी उस को प्रिय समझते थे। उस की सम्पूर्ण रानियों ने पति के साथ सती होने का इरादा किया। चौहानी रानी से कहा गया कि तुम कम से कम अपने पुत्रों के विचार से जीती रहो, परन्तु उसने इनकार कर दिया वह सो रही थी, जब वह दुर्घटना हुई। और जब अजीत का तप्त रुधिर उसकी छाती पर बह आया, तो उस की आंख खुल गई। भगत की तलवार ने पिता को वध किया। और जब सब सरदार एकत्र हुए उस ने अभयसिंह के उस पत्र को सब के सन्मुख फेंक दिया, जिस में उस को ऐसे भयानक पाप के करने की प्रेरणा की गई थी। रानी ने कहा आग की ज्वाला इतनी दुःखदाई नहीं होती जितनी दुःखदाई यह पापी लड़के प्रमाणित हुए हैं।

जिस उपाय से अभयसिंह ने मारवाड़ की गद्दी प्राप्त की वह कभी भुलाने के योग्य नहीं था। चाहे वह मारवाड़ का अच्छा प्रबन्ध करता रहा हो, परन्तु उस में यह एक बड़ा दोष था कि वह अफीम बहुत सेवन करता था। और जब किसी काम की ओर उस का ध्यान जाता था तो उसे पूरा ही कर के छोड़ता था। इस में सन्देह नहीं कि वह बीरों में बीर और शेरों में शेर मर्द था। और सम्पूर्ण राजिस्थान भर में कोई ऐसा

राजा नहीं था जो तलवार चलाने में उस का सहयोगी कहा जा सके एक अवसर पर उस की तलवार बाजी का परिणाम बहुत ही भयंकर हुआ था। सवाई जयसिंह वालिए अम्बर को उस की पुत्री व्याही थी। कछवाहे लोग जिस का अगुआ जयसिंह था वीरता और साहस के कामों में ऐसे प्रसिद्ध नहीं थे। जयसिंह को ज्योतिष विद्या का बहुत प्रेम था। और युद्ध सम्बन्धी कर्तव्यों की तुलना में उसे गणित विद्या अधिक भाती थी। बादशाह के दरबार में भी अभयसिंह प्रायः जयसिंह के साथ मखौल किया करता था। वह बहुदा दरबारियों की मौजूदगी में कह उठता "आखिर तुम कछवाहा हो तुम्हारी उत्पत्ति कुश। अर्थात् घास से है और तुम्हारी तलवार केवल उतना गम्भीर घाव कर सकती है जितना कुश। (घास) कर सकती है।

यद्यपि जयसिंह लड़ाका नहीं था, तथापि वह बड़ा भयानक जन था किसी न किसी कारण से शत्रु को उस से नीचा देखना पड़ता था। उस ने अभयसिंह से बदला लेने का इरादा कर लिया। और कृपाराम नामी शाही मुसद्दी की सहायता से उस को नीचा दिखाना चाहा।

एक दिन जब सब वजीर और सरदार आदि दरबार में बैठे थे। अभयसिंह व जयसिंह भी मौजूद थे। कृपाराम अभय सिंह महाराजा मारवाड़ की तलवार बाजी की प्रशंसा करने लगा और बादशाह ने भी उस पर ध्यान दिया।

निदान बादशाह ने अभयसिंह को सम्बोधन कर के कहा "तुम्हारे तलवार चलाने की बड़ी धूम है" अभयसिंह ने गर्व

से उत्तर दिया हां मौके पर तलवार चलाना मैं अच्छी प्रकार जानता हूं। कृपाराम ने झट बादशाह से कहा जहांपनाह महाराजा केवल एक बार से भैंसे का सिर काट कर फेंक सकते हैं।

बादशाह ने कहा "यदि यह सत्य है तो मैं भी देखना चाहता हूं अभी एक भैंसा मंगाओ।

छोटे बड़े सब को अभयसिंह की वीरता देखने का चाव था अभयसिंह ने अपनी तलवार म्यान से खींच ली और अखाड़े में कूद पड़ा। जयसिंह ने पहिले ही से प्रबन्ध कर रक्खा था, कि भैंसा असाधारण मोटा ताजा हो जिस समय अभयसिंह ने भैंसे को देखा उसकी आंखों में खून उतर आया क्योंकि उसकी गर्दन बड़ी मोटी थी और कोई अनुमान भी नहीं कर सकता था कि एक तलवार के वार से उस की गर्दन कट जायगी।

महाराज ने बादशाह को सम्बोधन कर के कहा जहांपनाह मैं एक क्षण के लिए अपने कमरे में हो आऊं॥

बादशाह ने कहा बहुत अच्छा अभयसिंह भीतर गया, और वहां उसने अफीम बहुत ज्यादा खाली। और फिर दरबार में आया उस समय उसके नेत्र अंगारे के समान लाल थे उसने जयसिंह को बादशाह के पास देखकर सोचा हो न हो यह उसी बदला लेने की तदबीर है। वह बादशाह के तख्त की ओर झुका। जयसिंह होशियार था उस ने बादशाह के कान में झुक कर कहा हजूर गाफिल न रहें। क्योंकि जब राजपूत अफीम के नशे में होते थे तब किसी की परवाह नहीं करते थे बादशाह के ऊपर हाथ उठाना उन के लिए कोई विचित्र बात नहीं थी। अभयसिंह ने अपने दामाद की ओर दृष्टि कर के एक छलांग

भारी और भैंसे का सिर उसकी तलवार की एक वार से कट कर दूर जा पड़ा और अभयसिंह मूर्च्छित होकर उस की लाश पर गिर पड़ा । चारों ओर से वाह २ ध्वनि आरम्भ हुई । जय सिंह को बदला लेने में अकृत्कार्य्यता हुई ।

इतिहास कार कहता है कि फिर बादशाह को दूसरी बार इस प्रकार की प्रार्थना करने का साहस नहीं हुआ ।

अभयसिंह ने बीस वर्ष तक राज किया और उस को भगतसिंह का हमेशा खटका लगा रहा । भगतसिंह भी शूरवीर और योधा था । और उस को सुख शान्ति का जीवन व्यतीत करना पसन्द नहीं था, अभयसिंह ने नागौर का इलाका उस को दे दिया था परन्तु उस की ओर से पूरी २ शान्ति नहीं थी । भगत भी जान्ता था कि राजा को उस का विश्वास नहीं है । और इस विचार से कि वह उस पर कोई आपत्ति न लावे, भगत एक समीप के रईस को अभय के मुकाबले पर खड़ा कर दिया करता था । इन लड़ाई झगड़ों का परिणाम यह हुआ कि मारवाड़ और अम्बर की परस्पर लड़ाई हो पड़ी । अभयसिंह ने बीकानेर घेर लिया । जयसिंह उसकी कुमक पर आया परन्तु विजय अभयसिंह को हुई, जयसिंह परास्त हुआ किन्तु परस्पर विरोध बहुत बढ़ गया, और अन्त को महाराना मेवाड़ ने उस के बीच में पड़ कर सुलह सफाई करादी ।

इस के पश्चात् अभयसिंह का देहान्त हुआ और उसका लड़का रामसिंह गद्दी पर बैठा ।

भगतसिंह को उचित था कि वह सब से पहले भेंट

देता और अपने हाथों से परन्तु वह नहीं आया और अपनी दाई के हाथ नज़राना आदि भेजा। सरदारों के मन में सन्देह हुआ कि अब भगतसिंह और रामसिंह में अवश्य अनबन होगी।

राजकुमार की दाई सन्मान के योग्य समझी जाती है और बड़े २ कामों में उसका शामिल होना आवश्यक समझा जाता था। परन्तु इस अवसर पर राजा बहुत क्रोधित हुआ। उसने उससे कहा "यहां से चली जा, भगत ने मुझ को बच्चा समझ लिया है कि तू टीका करने आई है" और भगत की भेजी हुई चीजों को भी फेंक दिया, उनका लेना भी स्वीकार न किया और उसको कहला भेजा कि इस मान हानि के बदले तुम्हारे इलाके का एक भाग अपहरण कर लिया जायगा।

धाय भगत के पास लौट गई और अपने अपमान का सारा वृत्तान्त कह सुनाया, भगत ने उत्तर में बहुत नम्रता का सन्देशा भेजा "आप हमारे राजा हो यदि आप की इच्छा यही है तो नागोर हर हालत में आप की आज्ञा के आधीन है"।

थोड़े ही काल में रामसिंह के अपशब्दों और अनुचित बर्ताव ने राठोर सरदारों को शत्रु बना लिया। वह एक नीच जाति के नोकर का मित्र बन गया और अपने सलाहकारों से बेपरवाह रहने लगा और उनके मुंह पर मखौल करने लगा आसोप का कोनी राम कम्पावत फिरके का सरदार और मारवाड़ का सब से बड़ा सरदार था, आयु का भी बूढ़ा था। उसके चेहरे पर बुढ़ापे से झुर्रियां पड़ गई थीं, रामसिंह उसे

वन्दर के नाम से स्मरण करता था। कुशलसिंह रईस अहुंवा उस से भी अधिक प्रतिष्ठित समझा जाता था। वह न केवल चम्पावत लोगों का अगुआ था बल्कि मारवाड़ का दीवान कहलाता था इसका शरीर किंचित ठिगना और साधारण रूप रंग का मनुष्य था, राजा उस को कुत्ता कहा करता था।

राठौरो से इस प्रकार के मख़ौल का अच्छा फल नहीं मिल सकता था। कुशलसिंह ने एक रोज़ क्रोध में आकर कहा हाँ मैं ऐसा कुत्ता हूं जिस के दान्त से सिंह भी व्याकुल होता है। रामसिंह को इस उत्तर से सचेत रहने की आवश्यकता थी। परन्तु वह अपने राजसी के नशे में चूर था। इस घटना के पश्चात् जब वह मन्दौर के बाग में बैठा हुआ था उस ने पूछा यह कौन वृक्ष है।

सरदार ने उत्तर दिया महाराज! यह चम्पा का वृक्ष है जो आप के बाग में बाग की शोभा है। जिस प्रकार मैं आपके राजपूतों की शोभा हूं।

राजा ने कहा इस को तुरन्त उखाड़ कर फेंक दो, जिस का नाम चम्पा है वह मेरे राज के योग्य नहीं है।

उस समय से कुशलसिंह ने राजा के दरबार में आना जाना बन्द कर दिया उस को थोड़े दिनों के पीछे खबर मिली कि राजा ने भगतसिंह पर चढ़ाई करने के उद्देश्य से नागौर का इरादा किया है, कुशलसिंह इस ख़बर को सुन कर व्याकुल हुआ वह नहीं चाहता था कि राठौर कभी राठौर के साथ युद्ध करे। क्योंकि मारवाड़ के बहुत से जन शत्रु हो गए थे। वफ़ादारी के विचार से और राजा को उचित मार्ग पर लाने

की इच्छा से उसने उसी समय जोधपुर जाने की इच्छा की। और वह बेचारा कठिनता से अभी दरबार में बैठने पाया था कि बद तमीज और अज्ञान राजा ने उस के साथ मखौल करना उसके रूप को देख कर मुंह बनाना आरम्भ किया। और अन्त में यह कह दिया कि जहां तक सम्भव है तुम अपनी नापाक सूरत न दिखाया करो।

सरदार यह सुन कर उठ खड़ा हुआ और ढाल को धरती पर पटक कर क्रोध में कहा "स्मरण रक्खो तुम ने राठौर की मान हानि की है जो मारवाड़ को उलट पलट सकता है और इस ढाल की तरह जब जो चाहे उलट दे सकता है। यह कह कर वह दरबार से चला गया।

असौप का कुनीराम भी क्रोध में था, वह भी उसका साथी बन गया। कुशलसिंह को तो शत्रु बना ही लिया गया था, कुनीराम को देख कर उसके प्रणाम के उत्तर में राजा ने कहा "आओ जी बूढ़े बन्दर" कुनीराम ने गम्भीरता से कहा " जब बन्दर नाचने लगेगा तब तुमको मज़ा आजायगा"। यह कहकर वह भी क्रोधित होकर चला गया।

दोनों सरदारों ने मिलकर सलाह की कि अभयसिंह के लड़कों से मारवाड़ का कुछ भला न होगा। भगत सिंह उनकी अपेक्षा अच्छा मनुष्य है। अपने मनुष्यों को साथ लेकर वह नागौर की ओर चल पड़े। उनके साथ मारवाड़ का भाट भी था जिसको राजिस्थान के संपूर्ण वृतान्तों से पूरी २ अवगति थी।

भगतसिंह को पता मिला कि अहुआ और आसोप के रईस उसके इलाके में आरहे हैं। यह दोनों मारवाड़ के खम्भ थे। भगत ने समझा कोई न कोई विशेष कारण उनके आने का अवश्य है। इसलिए घोड़े पर चढ़कर प्रभात के समय उनके खीमे के भीतर गया। दोनों सरदार अभी सो रहे थे। भगत के आने के कारण कुशल सिंह के नौकर ने अपने स्वामी को जगाना चाहा, परन्तु भगतसिंह ने उसे रोक दिया और जब तक वह आप नहीं जागा यह पलङ्ग के पास बैठा हुआ इन्तिजार करता रहा।

खीमे में शोरगुल के होने के कारण उसकी आंख खुल गई। उसने नौकर से हुक्का मांगा इतने में उसकी निगाह भगतसिंह की ओर गई और उसने अपने मन में सोचा कौन जाने भगतसिंह रामसिंह का सहायक हो आखिर वह उन्हीं का चचा ही है। और इस प्रकार बिना सोचे समझे अपने आप को उसके हाथों में दे देना उचित नहीं है।

परन्तु जब मामला एक सीमा तक पहुंच जाता है राजपूत फिर परिणाम की ओर कम ध्यान देते हैं। हुक्का पीने पर उसके मन में चैतन्यता और उमंग आई अब उसके मन में राजा की ओर से दुबिधा नहीं थी। और अब बात का छिपाना भी कठिन था उसने कहा:—

"डुबकी मारो गंग में होनी होय सो होय"

उसने उठाकर भगत सिंह को प्रणाम किया और कहा "यह सिर अब आप का है"।

उसने कहा यह क्या बात है? स्वामी की अधीन्ताई

करना राजपूत का धर्म्म है, रामसिंह अभी बालक है आप को क्षमा करना चाहिए। मैं बीच में पड़कर मेल मिलाप करा दूंगा।

यद्यपि राजा को पता मिल गया होगा कि आप नागौर आए हुए हैं परन्तु इसकी कोई परवाह नहीं। दोनों सरदारों ने कहा "नहीं जो होने को था सो हो चुका "अब आपने इरादा से मुड़ना असम्भव है"। भाट ने कहा "अब हम जोधपुर लौटकर नहीं जायेंगे" और इस प्रकार भगतसिंह को मारवाड़ के तीन सरदारों की सहायता अपने आप ही प्राप्त हो गई।

इस बात को सुनकर कि अहुआ और असोप के सरदार नागौर गए हुए हैं। राजा ने भगतसिंह को कहला भेजा कि झालबर के कसबे को तुरन्त खाली कर दो। इस दफा भी भगत सिंह ने नम्रता से उत्तर दिया कि मुझको अपने राजा से लड़ाई करना स्वीकार नहीं है। जिस समय आप पधारेंगे झालबर आप के नज़र कर दिये जायगा, परन्तु रामसिंह इस बात पर तुला हुआ था कि भगतसिंह और उसके सब साथियों को नष्ट कर दिया जाय। उसने नागौर पर चढ़ाई करने की आज्ञा दे दी। और मारवाड़ की समग्र शक्ति उस एक सूबा के विध्वंस करने के लिए भेजी गई।

कई लड़ाईयां हुईं परन्तु किसी को जय प्राप्त नहीं हुई। दोनों ओर के सैनिक बाईरत के मैदान में एक दूसरे के विरुद्ध लड़ते रहे। मनुष्य की सहानुभूति भगतसिंह के साथ थी, क्योंकि अहुआ और असोप के सरदारों के अतिरिक्त और

सरदार भी रामसिंह से नाराज हो गए थे। परन्तु राजा होने के कारण सिपाहियों की संख्या रामसिंह के पास अधिक थी। और इसलिए सम्भव था कि उसकी विजय हो जाती।

परन्तु उसकी मूर्खता के कारण उसको हानि पहुंची।

उसकी रानी भुज की राज कुमारी स्वयम मैदान में आई हुई थी। और वह किसी सेना पति से कम समझदार नहीं थी। बन्दूक में उसका निशाना कभी खाली नहीं जाता था। इसके सिवा हर प्रकार की युद्ध विद्या, ज्योतिष, रमल, आदि में वह प्रवीण थी। भुज के पांच हजार मनुष्य उसके पति के झण्डे तले लड़ने के लिए आए हुए थे।

जिस समय रामसिंह की सेना का खीमा खड़ा किया जा रहा था रानी को खीमे पर एक काग बैठा हुआ दिखाई दिया। इस से बढ़कर और क्या अशगुन हो सकता था? और जब काग बोलने लगा तो सब लोग आने वाली विपद को स्मरण करके सन्नाटे में आ गए।

काग ने तीन बार अपना मुंह खोला और तीन ही बार शब्द उच्चारण किया। उसी समय एक बन्दूक का धमाका हुआ। और काग धरती पर खीमे के नीचे आ रहा।

सिवाय राजा के सब प्रसन्न हो गए। उसको क्रोध आ गया उसने कहा "किस धृष्ट ने यह गोली मेरे खीमे पर चलाई है? उसको कैद करके मेरे सामने लाओ"।

सब लोग विस्मित हुए और परस्पर बातें होने लगीं कि गोली रानी ने चलाई है।

राजा के मुख से कठोर शब्द निकले उसने रानी को अपशब्द कहे और आज्ञा दी कि वह मेरे राज्य से चली जावे जहां से आई है वहां ही वापस जाय।

रानी ने क्षमा प्रार्थना की। दीनता के सन्देसे भेजे। बहुत कहने सुनने के पश्चात् उसने अन्तिम बार मिलने की आज्ञा दी। रानी ने मिलने पर बहुत कुछ समझाया बुझाया परन्तु उस अज्ञान ने उसकी एक न सुनी। रानी को देश निकाला की आज्ञा हो चुकी थी उसको अब मारवाड़ में रहने की कोई आवश्यकता नहीं थी। राजा एक अज्ञान हठी बालक की तरह अपने हठ पर स्थिर रहा। रानी ने कहा बहुत अच्छा तो मैं जाती हूं। प्रणाम! अब तुम अपने आप को नहीं बचा सकते। मेरा जाना इस बात का सूचक है कि मारवाड़ तुम्हारे हाथ से जाता रहेगा। यह कहकर वह भुज की ओर चली गई और पांच हज़ार मनुष्य जो उसके पति की सहायता के लिए आए थे वह भी लौट गए।

दो दिन तक फिर युद्ध हुआ, परन्तु विजय किसी की नहीं हुई। योधाओं ने दिल खोल कर पुरुषार्थ किया। आमने सामने लड़ाई होती रही। इस दो दिन की लड़ाई में मारवाड़ तबाह हो गया। भाई भाई के विरुद्ध नातेदार नातेदार के विरुद्ध लड़ा किए और सब राठौर विनष्ट होगए। बूढ़े चम्पावत व कम्पावत से लेकर छोटे २ लड़के तक मैदान में लड़ने आए थे।

महतरी के सरदार का लड़का १४ वर्ष की आयु का था वह विवाह कर के घर की ओर जा रहा था, मार्ग में पता

लगा कि राजा की सेना युद्ध के लिए जा रही है। राजपूत का गरम खून उबलने लगा वह उसी प्रकार विवाह के वस्त्र और आभूषण पहने हुए रायसिंह की सेना में शामिल हुआ बहादुर को इतना भी समय नहीं मिला कि वस्त्र तो बदल लेता। वह मैदान में घोड़ा कुदाता हुआ आया और जिस समय तलवार म्यान से खींच कर शत्रुओं पर गिरा सैंकड़ों मनुष्य खाक और खून में लत पत हो गए।

दरिया की तरह फ़ौज को जुम्बिश१ हुई यकबार।
तेगों की उठी मौज चमकने लगी तलवार।
ढालों का हुआ अब्र२ सियह दिन में नमूदार३।
बदली जो हवा पड़ने लगी तीरों की बौछाड़।
पैठा वह जरी४ तेग बकफ़५ अहले जफ़ाद६ में।
बिजली सी लगी कौंधने ढालों की घटा में।
यक बर्क़७ अजल८ फ़ौज सितमगार९ पै आई।
तेग़ आई कि आफ़त सिरे सरदार पै आई।
आरी किया उसको भी जो रहवार पै आई।
दो हो गया असवार जो रहवार पै आई।
राकिब१० न गिरा था अभी खुशरंग के नीचे।
यह ज़ीन के ऊपर से गई तंग के नीचे।

(१) हिलना (२) बादल (३) प्रगट (४) बहादुर (५) हाथ में लिए हुए (६) अभिप्राय सेना से है (७) बिजली (८) मृत्यु (९) जालिम (१०) सवार।

नौशाह११ ने पाई थी अजब हिम्मते आली।
तलवार का आना हुआ साबित न कहीं पर।
दो टुकड़े नज़र आए बराबर सिरे ज़मीं पर।
हमला किया जिस सफ़ पै वह सफ़ हो गई खाली।
तलवार ने आफ़त सिरे सरदार पै डाली।
लड़ने के लिए तेगों सिपर जिसने संभाली।

निडर राजपूत ने शत्रु सेना में तहलका डाल दिया। उस को अपनी जान की परवाह न थी जब वह शत्रु दल में घिर गया एक शूरमा की तलवार ने उसका भी वहीं काम तमाम कर दिया। मरते समय उसने खून में रंगी हुई पगड़ी अपनी क्वारी विधवा को उपहार स्वरूप भेज दी और उस देवी ने उसका चुम्बन करके जलती हुई चिता में लेकर बैठ गई। और अपने अल्पायु पति के नाम पर सती होगई। और दोनों ने दुनिया पर प्रमाणित कर दिया कि स्त्री हो अथवा पुत्र, राजपूत इस प्रकार निर्भीकता से धर्म्म पर जान देते हैं :—

कहते हैं अब भी लोग सदा मरहबा उन्हें।
देते हैं जानो दिल से सभी बस दुआ उन्हें।

झील के किनारे जहां यह लड़ाई हो रही थी साधुओं का मठ बना हुआ था। जब दोनों ओर से तोपों के गोलों की बरशा होने लगी। साधू अपनी २ जान लेकर भाग निकले

---

(११) दुल्हा।

क्योंकि वह अकाल मृत्यु के साथ से मरकर स्वर्गी सुख लाभ करना नहीं चाहते थे । परन्तु उन का महन्त दृढ़ता से वहीं बैठा रहा । गोले उसके चारों ओर बरसते रहे । परन्तु उसने अपने स्थान से हिलने का नाम तक नहीं लिया । दोनों ओर के सरदारों ने कहला भेजा आप इस स्थान को छोड़ देवें । उस ने उन्हें उत्तर में कहला भेजा "यदि मुझे राठौरों की बन्दूक से मरना लिखा है तो मैं कहां बच कर जा सकता हूं और यदि आयु बाकी है तो मुझको कोई मार नहीं सकता । समय आगया है तो मैं तैयार हूं । सायंकाल फिर उसने कहला भेजा "बस अब लड़ना बन्द करो दूसरे स्थान में जाकर लड़ो" । दोनों दलों ने उसकी आज्ञा मानली और अपने २ खीमों में चले गए ।

दूसरे दिन रामसिंह की हार हुई और माईरत के कसबे में आश्रय लिया, परन्तु वह स्थान कोई किला नहीं था, उस को बड़ी चिन्ता करनी पड़ी क्योंकि सबकी सहानुभूति भगत सिंह के साथ थी । उसके शुभचिन्तक बहुत थोड़े रह गए थे । आधी रात के समय थोड़े से मनुष्यों को लेकर वह जय आपा सेन्धिया मरहटा के पास सहायता के लिए भाग गया ।

भगतसिंह जोधपुर गया किसी ने उस के साथ रोक टोक नहीं की, वह वहां अपने पिता की जगह गद्दी पर बैठा और मारवाड़ियों ने पूरी २ उसकी आधीनताई स्वीकार की । जब यह समाचार मिला कि जयआपा मारवाड़पर चढ़ाई करने के लिए आरहा है, तो लाखों राजपूत भगतसिंह के सहायक होगए, यह दशा देख कर मरहटों के हाथ पांव फूल गए, क्योंकि

वह यूंहि व्यर्थ लड़ाई नहीं लड़ना चाहते थे, और जब तक अपना लाभ न हो कभी मैदान में न आते थे।

भगतसिंह ने प्रजा को तसल्ली दी कि सब के साथ न्याय, दया, और उदारता का वर्ताव किया जायगा। इस में वीरता और बुद्धि कूट २ कर भरी हुई थी। रूप रंग और डील डौल भी अच्छा था, दातव्यता और उदारता में भी अपना सहयोगी नहीं रखता था। तलवार चलाने और पुस्तक लिखने में उस के हाथ को एक जैसी निपुणता प्राप्त थी, कौन मनुष्य आशा कर सकता था, कि जिसने अपने पिता को बध किया था उसमें ऐसे सद्गुण वर्तमान होंगे। राठौर उसको पूजते थे। सती होने के समय अजीत की रानी ने यह शब्द कहे थे कि "घातक की हड्डियां मारवाड़ के बाहर सड़ेंगी" यद्यपि यह शब्द सब के कानों में गूंजते थे, तथापि सब की यह अभिलाषा थी कि भगतसिंह चिरकाल तक उन पर राज्य करता रहे।

मरहटों को दमन करने के लिए भगतसिंह ने अजमेर की ओर कूच किया और ईश्वरीसिंह अम्बर के राजा को कहला भेजा कि "राठौर की साहायता के लिए कछवाहों को साथ लाओ ताकि दक्षिणी मनुष्यों का सामना करें"।

ईश्वरीसिंह हृदय का बड़ा दुर्बल था, एक ओर उस को भगतसिंह से बिगाड़ होजाने का भय था, दूसरी ओर मरहटों के साथ लड़ने से भी डरता था, परन्तु भगतसिंह उसका पड़ोसी था, और जयअप्पा की तुलना में भयानक था, इसके सिवाय ईश्वरीसिंह की कन्या रामसिंह को व्याही थी जो मरहटों के

साथ था इस लिये वह हृदय से मरहटों की जय चाहता था, उसने यह भी देखा कछवाहों की राठौर से शत्रुता करने में कभी कुशल नहीं है।

इस विषय में उसने अपनी स्त्री से सम्मति ली। यह राजा अजीतसिंह के छोटे पुत्र की कन्या थी "वह भगतसिंह की उन्नति को देख नहीं सकती थी, और यह भी चाहती थी कि मेरे पति को हानि न पहुंचावे"।

कुछ दिनों के व्यतीत हो चुकने पर जब भगतसिंह मेवाड़, मारवाड़ और अम्बर की सरहद्द पर सेना लिए हुए पहुंचा, तो अम्बर की रानी अपने पति की ओर से कुछ नजराना लेकर उससे मिलने गई और एक बहुत ही मूल्यवान और सुन्दर वस्त्र पहनने के लिये ले गई, राजा ने उस वस्त्र को बहुत पसन्द किया, और अपनी भतीजी से वादा किया कि मैं इसे पहनूंगा।

कुछ देर के पश्चात् यह बात प्रसिद्ध हुई कि भगतसिंह मर रहा है, राज वैद्यों ने कहा, ज्वर बहुत प्रचण्ड है, यह भी मालूम हुआ कि जो वस्त्र उसके शरीर पर था वह विष से रंगा हुआ था और उस की भतीजी उसके मारने के लिए लाई थी।

उस समय सब दुखी थे। केवल भगतसिंह प्रसन्न था, वह हंस २ कर वार्तालाप कर रहा था, उसने राजवैद्य को सम्बोधन करके कहा, क्यों खोजा! तुमको जागीर और इनाम इतने अधिक मिले हैं क्या तुम मुझे अच्छा नहीं कर सकते? फिर तुम्हारे गुण और विद्या से क्या लाभ है, वैद्यने कुछ टोटका आदि करके कहा "अब इलाज मेरी सामर्थ्य से बाहर है"।

भगतसिंह अब भी धैर्य्य और दृढ़ता से बैठा हुआ था, उसने मारवाड़ के सरदारों को बुला कर कहा "देखना मेरे पुत्र विजयसिंह की रक्षा करना" और जब सब ने सौगन्द खाई तब ब्राह्मण बुलाए गए ताकि इस के अन्त समय का दान प्राप्त करें। उसी समय भगतसिंह को स्मरण हुआ कि सती होने के समय रानियों ने शाप दी थी कि अजीतसिंह के घातक की मृत्यु मेवाड़ से बाहर होगी इस खयाल से वह कांप उठा और उसी समय उसके प्राण निकल गए।

उसकी चिता किसी ने नहीं बनाई, और उस की हड्डियां लोगों ने पीछे से एक कबर में डालदीं जो बड़े बुरे नाम से स्मरण की जाती थी।

अब रामसिंह (अभयसिंह के बेटे) और विजयसिंह (भगतसिंह के लड़के) के दरमियान (बीच) युद्ध आरम्भ हुआ, भगतसिंह मर चुका था, मरहटों ने हस्तक्षेप करने का अवसर देखा, और यद्यपि राठौरों का दल अब भी भगतसिंह के लड़के के साथ था तथापि वह विजयसिंह पर चढ़ आये।

परिणाम यह हुआ, कि तीन दिन के युद्ध में दोनों ओर के असंख्य सिपाही काम आए, राठौर बड़ी वीरता से लड़े मरहटा भगने वाले थे क्यों कि वह बहुत मर चुके थे, विजय सिंह एक कोने में विजय के लिए प्रार्थना कर रहा था, इतने में रूपनगढ़ के राजकुमार ने चलाकी से प्रसिद्ध कर दिया कि विजयसिंह मारा गया। इस खबर से उस की सेना इधर उधर भाग गई।

राठौरों का साहस जाता रहा, बीकानेर और कृष्णगढ़

के राजे अपनी २ सेना लेकर चल दिए। बाकी लोगों ने राम सिंह से सुलह करली और किसी ने यह नहीं पता किया कि विजयसिंह सच मुच मर गया हैं अथवा जीवित है? मरहटों ने राठोरों की तोपों आदि पर कबजा कर लिया, विजयसिंह मैदान छोड़ कर लालसिंह के साथ नागौर की ओर भाग गया, लालसिंह रईस उन सरदारों में से था जो अन्त समय तक विजयसिंह के साथ रहे।

रात का समय था, कई मनुष्य घावों के कारण मर गए, कईयों के घोड़े मर गए, अन्धेरे में उन को मार्ग का भी पता नहीं लगा, यह ज्ञात हुआ कि वह नागौर से दूर चले जा रहे हैं, राजा ने लालसिंह को पुकार कर कहा किञ्चित थम जाओ ताकि ठीक मार्ग दरियाफ़्त करलें। लालसिंह को यह बात बुरी मालूम हुई उसने कहा" मैं अब राहन के निकट आया हूं। इस में कोई सन्देह नहीं कि यह मार्ग नागौर का नहीं है परन्तु क्या अब आप मुझे यह आज्ञा न देंगे कि मैं अपने घरवालों से मिल लूं।

राजा ने देखा लालसिंह घर जाने का इच्छुक है, उसने बेबसी से मौन धारण किया। अन्धेरे में केवल ५ मनुष्य उस के साथ रहे, और लालसिंह ने घर का मार्ग लिया

जिस वेग से वह घोड़े को भगाये चले जा रहे थे, उस का वर्णन करना कठिन है, एक कसबा में जो नागौर से उन्नीस मील की दूरी पर था। राजा का घोड़ा मर गया लाचार होकर वह अपने नौकर के घोड़े पर सवार हुआ मार्ग में ठहरने में शत्रुओं का भय था इस लिए वह बराबर भागता

गया, बेचारे को खाने पीने का अवसर तक प्राप्त न हुआ, सूर्य्य निकल चुका था धूप की गरमी का भय लग रहा था, सवार तो चलने को तैयार थे, जब यह मुसाफिर देशवाल में पहुंचे और तीन मील और चल चुके तो उसके घोड़े लंगड़े होगए। अब सिवाय इस के कि सब अलग होकर अकेले २ भाग्याधीन अपना २ मार्ग लें और क्या उपाय हो सकता था।

बिजयसिंह ने सन्नाह उतार दी और देशवाल के इधर उधर साधारण मनुष्यों के रूप में फिरने लगा, एक गंवार किसान बैल गाड़ी हांक रहा था, उस के साथ बात चीत कर के राजा ने कहा "क्या तुम मुझ को कल सुबह नागौर पहुंचा सकोगे मुझे वहां कुछ काम है।"

किसान ने कहा नागौर यहां से पूरे १६ मील हैं बैलों को रात भर चलना पड़ेगा किन्तु अन्त बात यह स्थिर हुई कि यदि उचित मज़दूरी मिलेगी तो वह चलने को तैयार हो जावेगा।

मारवाड़ का राजा किसान के साथ बैठ गया, और यद्यपि बैल अच्छी तरह चल रहे थे, परन्तु एक विचार से वह धीरे थे, राजा बार२ किसान को शीघ्र चलाने के लिए कहता था, किसान बार २ के कहने से क्रोधित होगया और उसको अपशब्द कहने आरम्भ किए, और कहा मैं अपने बैलों को इतना तेज चला रहा हूं तुम कौन हो जो ऐसी जल्दी २ कर रहे हो? अच्छा होता कि तुम माईरत में राजा विजयसिंह के साथ लड़ते होते, इस प्रकार जल्द २ नागौर की ओर भागने से क्या मतलब है? कहीं दक्खिनी मनुष्य तुम्हारा पीछा तो नहीं कर रहे हैं? चुप रहो नहीं तो मैं बैलों को खोल दूंगा।

राजा चुप रहा। गरीब क्या करता प्रभात होगया, नागौर अभी पूरे दो मील और बाकी था। किसान ध्यान के साथ राजा को देखने लगा, यद्यपि उसे दो दिन से किसी प्रकार का सुख नहीं मिला था और चेहरे का रंग उतरा हुआ था तथापि उसने विजयसिंह को पहचान लिया।

वह गाड़ी से उतर कर उस के पांव पर गिर पड़ा, और क्षमा प्रार्थना की, क्योंकि वह उसके बराबर बैठा था कठोर और अनुचित शब्द उच्चारण किए थे। परन्तु राजा ने कहा मैं तुझको क्षमा करता हूं। अपनी जगह पर बैठ जा किसान इस बात पर राज़ी नहीं होता था जब राजा ने बहुत हठ किया तो बैठा राजा ने उसे भोजन भी अपने साथ कराया और फिर ज़ोर से हांकने की प्रार्थना की और बड़ी कठिनाई से वह नागौर में पहुंचा।

यहां राजा ने उसको पांच रुपये दिए और वादा किया कि यदि अच्छे दिन आवेंगे तो तुझे मुंह मांगा इनाम दूंगा, टाड साहब लिखते हैं कि विजयसिंह ने जो जागीर किसान को दी थी वह अब तक उसकी सन्तान के अधिकार में हैं शर्त केवल यह थी कि जब राजा नागौर की ओर से आने लगे तो वह उस के लिए दही और रोटी प्रस्तुत कर दिया करें।

विजयसिंह के साथी जो पीछे रहे थे इकट्ठे होगए और छैः महीने तक नागौर के किले में घिरे रहे, इस काल में मारवाड़ के विशेष २ नगर एक २ करके रामसिंह और उसके साथी मरहटों के हाथ में आगए, और विजयसिंह सोचने लगा कि अब मेरे लिये चारों ओर से निराशा ही निराशा है।

उस के पास पांच सौ तेज सांडनियां थीं एक २ पर उस ने दो २ राठौर सवार किए और मरहटों की गफलत में २४ घन्टे के भीतर वह बीकानेर पहुंच गया।

बीकानेर का राजा पहला मनुष्य था जिसने विजयसिंह के मरने का समाचार सुन कर मैदान छोड़ दिया था, उसने आन्तरिक हर्ष के साथ उसका स्वागत नहीं किया, क्योंकि विजयसिंह की खातिर वह अपने आप को विपद् में नहीं डालना चाहता था, राजा ने उसकी दशा देखकर अपने मन को निराश नहीं किया वह चौबीस घण्टे के भीतर २ जयपुर जा पहुंचा और ईश्वरीसिंह से सहाय प्रार्थना की।

यहां उसका स्वागत अपेक्षा कृत अधिक धूमधाम से किया गया, और मुसाफिर खाना में जगह दी गई। ईश्वरीसिंह बड़े प्रेम से मिला और आलिंगन किया।

विजयसिंह के साथ एक राठौर सरदार जवानसिंह मौजूद था, उस पर राजा की विशेष कृपा दृष्टि रहा करती थी। उसने आश्चर्य और शोक के साथ दोनों राजों को भेंट करते हुए देखा और साधारण गम्भीरता के साथ विजयसिंह के दाहने हाथ खड़ा हो गया और बैठते समय जान बूझ कर ईश्वरीसिंह के लटके हुए दामन पर बैठ गया। ईश्वरी ने भी उसकी क्रिया को देख लिया और पूछा सरदार! आज आप पीछे क्यों बैठे?

जवानसिंह ने गम्भीरता और बेपरवाही से कहा आज के दिन ऐसी ही आवश्यकता है। और फिर अपने स्वामी को सम्बोधन करके कहा "उठो कूच कर दो नहीं तो आप के प्राण और स्वतन्त्रता दोनों को हानि होगी"।

विजयसिंह को कछवाहों की कपटता का ज्ञान था वह उठ खड़ा हुआ और जल्दी से चल दिया। ईश्वरी ने उठना चाहा परन्तु जवानसिंह के बोझ ने उसे उठने न दिया क्योंकि वह दामन दबाए बैठा था और अपनी कटार निकाल ली थी और विजयसिंह को चलते हुए कह दिया था कि अपने कूच की आज्ञा मुझे भेज देना।

कछवाहा सरदार जो राजा के साथ आये थे निराशा से एक दूसरे की ओर देखने लगे। और इस काल में राठौर सांड-नियों पर सवार हो गए। जवानसिंह जरा भी अपनी जगह से नहीं हिला। थोड़ी देर के बाद एक मनुष्य ने आकर कहा विजय सिंह सवार हो गया आपकी राह देख रहा है।

जवानसिंह निशंकिता से उठ खड़ा हुआ, तलवार को म्यान में रक्खा और आम्बर के राजा को प्रणाम किया। वह अपने मन्सूबे में अकृत कार्य्य होकर आश्चर्य दृष्टि से जवान को देखता रहा, उसने प्रणाम का उत्तर दिया और जब जवानसिंह चला गया अपने साथियों को सम्बोधन करके कहने लगा, देखो यह सच्चा वफादार और जाननिसार था। ऐसे मनुष्यों की तुलना में कृतकार्य्यता प्राप्त करना कठिन ही नहीं परन्तु असम्भव है।

जवानसिंह का ससुर अम्बर में बहुत बड़ा सरदार था उसने गुप्त रीति से उसको पता दे दिया था कि ईश्वरीसिंह विजयसिंह के साथ छल करना चाहता है।

विजयसिंह नागौर लौट गया और जिस सुगमता से बाहर निकला था उसी प्रकार भीतर चला गया। और ६

महीने तक फिर किले के भीतर पड़ा रहा । उसके मन में निराशा छा गई थी कि एक दिन दो सिपाही उसके पास आए उन में से एक राजपूत दूसरा पठान था दोनों ने राजा से कहा यदि आप हमारे बाल बच्चों के भरण पोषण का प्रबन्ध करदें तो हम आपके एक शत्रु को बध कर देंगे बाकी सब आप ही इधर उधर भाग जायेंगे । राजा ने स्वीकार कर लिया ।

जेअप्पा किले के द्वार पर स्नान कर रहा था उस के दो बनिए हिसाब किताब के विषय में झगड़ा कर रहे थे और यहां तक उनकी लड़ाई बढ़ी कि दोनों एक दूसरे को गालियां देने लगे फिर दोनों मरहटा सरदार के पास चले आए उसी समय दो तलवारें म्यान से निकलीं एक ने कहा यह "मन्दौर के सन्मान में है" दूसरे ने कहा यह "जोधपुर के सन्मान में है" और उसी क्षण जयअप्पा मुरदा होकर गिर पड़ा ।

सब लोग डर गए, खीमे में व्याकुलता छा गई । पठान तो मारा गया परन्तु राजपूत भीड़ में मिल गया । और किसी प्रकार नागौर में पहुंच कर अपनी वीरता का वृतान्त कह सुनाया । काम निःसन्देह बड़ी वीरता से किया गया था । मरहटे घेरे से तंग आ गए थे । और अब जब उनका कोई सरदार नहीं रहा उनको अधिक दिन तक रहने का साहस नहीं रहा । विजय ने अजमेर का किला और जिला देने का बहाना किया और धन का प्रलोभन देकर मरहटों को राजिस्थान से पृथक कर दिया । उन्होंने रामसिंह का साथ छोड़ दिया और विजयसिंह मारवाड़ का राजा हो गया ।

परन्तु इस उथल पथल ने भयानिक फल उत्पन्न किए ।

अजमेर राजिस्थान की कुञ्जी थी जो उस समय से बराबर मरहटों के कब्ज़े में रहा।

विजयसिंह ने इकतीस वर्ष तक राज्य किया सन् १७६४ ई० में उनका देहान्त हुआ। रामसिंह ने सन् १७७३ ई० में देश निकाला की अवस्था में प्राण तजे। उसने आदि से लेकर अन्त तक बाईस लड़ाइयां लड़ीं परन्तु अपना तख़्त न प्राप्त कर सका।

---

(२०)

धार्म्मिका कृष्णा कुमारी

लड़ो न तुम मुझ तुच्छ की खातिर, मैं मरने को बैठी हूं
प्राण हथेली पर धर कर मैं, हरी प्रेम में बैठी हूं।
विन्ती सुनो मेरी प्रिय भाई, प्राण का मोह न करती हूं
ईश्वर प्रेम देश की भक्ति, छोह धर्म्म का रखती हूं।
मारी जाऊं लाख बार नहीं, शंका इसकी करती हूं
और न कोई मारा जाए, यह इच्छा इक रखती हूं।

(पं० ईशानदेव)

आकाश मण्डल आह के काले धूम्र से आच्छिन्न है। निर्दोषों की आह के शब्द गंगन गर्जन से भी बढ़ कर दुनिया के हृदयों को कम्पायमान करते हैं, उनके हृदयभेदी आर्त्त शब्द को सुनकर कलेजे के टुकड़े २ होते हैं।

जब से हिन्दुओं ने न्याय छोड़ा, और धर्म्म अधर्म्म के

विवेक को तिलाञ्जुली दी तब से परमात्मा ने उनका संपूर्ण वैभव और ऐश्वर्य्य छीन लिया। शुभ और कल्याण देश से जाता रहा। गोसांई तुलसीदास जी ने ठीक कहा है:—

तुलसी आह गरीब की, हरि से सही न जाय।
मुए चाम की आह से, लोह भस्म हो जाय॥

जिस अज्ञान जाति के पुजारियों ने दो दो वर्ष की आयु की कन्याओं को विधवा बना दिया, जहां कन्याघात और कन्या बेचने का रिवाज चल पड़ा, जिस देश के दुष्ट कुलीन धनवान सौ २ तक विवाह करें, जहां निराश्रित यतीम निर्दयता से विनिष्ट हों, जहां स्त्रियों के स्वत्व का किंचित ध्यान न हो, जहां अधर्म्म को धर्म्म समझा जाता हो, वह देश वास्तव में इसी योग्य है कि ताऊन, महामारी आदमियों से विनष्ट हो। दुर्भिक्ष सदा डेरा जमाए लोग पेटाघात से कुत्तों की मौत मरें। दुनियाँ उनको हमेशा पांव तले रौंदती रहे। हे सचाई की ओर से आँखें बन्द करने वालो! अपवित्र और अधर्म्म के अपराधियो! स्मरण रक्खो:—

गेहूं से गेहूं हो उत्पन्न जौ से जौ जग जाने।
क्यों नहिं पापको त्याग मूढ़ तू ईश्वरको पहिचाने॥

पृथिवी के सदैव भ्रमण करने वाले पहियों के चक्र से शब्द निकल रहा है यदि कान रखते हो तो सुनो:—

कर्म्म प्रधान विश्व रचि राखा।
जो जस कीन्ह सो तस फल चाखा॥

हिन्द जाति की अन्याय मूलक घटनाएं रोज देखते हो,

आज उस के सम्बन्ध में एक इतिहासिक हृदय विदारक वृतान्त सुनों।

कृष्णकुमारी, परम सुन्दरी, कोमलांगी, पवित्र धार्म्मिका राज कन्या थी! गुलाब के पुष्प में तीतरियों के पांव का सूक्ष्म चिन्ह पड़ जाता है, कमल की पंखड़ियों पर भ्रमर के पांव का गुप्त चिन्ह बना रहता है, परन्तु कृष्णकुमारी सर्व्वाङ्ग सुन्दर निर्दोष और धार्म्मिका कन्या थी इस देवी का असाधारण रूप और गुण राजपूताना में युद्ध और संग्राम का हेतु हुआ। और उस निर्दोष के प्राण गए। इस की माता चौहान कुल राजपूत महाराजा अन्हलवाड़ के वंश से थी। इस का पिता महाराना भीमसिंह वालिए उदयपुर था, जो श्री रामचन्द्र जी का प्रतिनिधि और हिन्दुओं का सूर्य्य कहलाता था। राजदुलारी कृष्णाकुमारी हिन्दुओं के उच्च वंश से थी। उस की नसों और पट्ठों में प्राचीन महा पुरुषों का रक्त भ्रमण करता था। उस में वाह्यक अद्वितीय रूप गुण और सौन्दर्य्य के साथ आन्तरिक धर्म्म भाव भी बड़े उच्च और महान् थे। उस की सुन्दरता देश में प्रसिद्ध थी। और राजिस्थान की गुलाब के नाम से उसे स्मरण किया जाता था।

सन् १८०४ ई० में अंगरेजों से हारने के कारण होल्कर और सेंधिया ने राना को तंग करना चाहा, मरहटों की हर लड़ाई में हार होती रही। उनकी संपूर्ण सेना तितर बितर होगई। उन की समस्त आशाएं मिट्टी में मिल गई थीं। होलकर पर आपदा छा गई थी। खजाना पूर्णतः खाली हो गया था। अंगरेजों के साथ लड़ने के लिए आवश्यक था

कि उनके पास बहुत सा धन हो। इस लिए उसने मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी, ताकि मेवाड़ और राजिस्थान के दूसरे राजों को आवश्यकता के समय सहायता देने के लिए बाध्य करे।

मेवाड़ के महाराना से उसने चालिस लाख रुपया मांगा मरहटों का कुछ ऐसा ज़ोर था कि इतिहास कार लिखता है कि महल की सजावट का सामान रुपयों के बदले दे दिया गया। रानियों ने अपने आभूषण उतार दिए। उनके सुख चैन की चीजें लेली गईं। इस कठोरता और निर्दयता से एकत्र करने पर भी केवल दो लाख रुपया की रकम वसूल हुई, बाकी के लिए महाराना ने जमानत दी नगर के अच्छे २ प्रतिष्ठित लोग मरहटों को सौंप दिए गए। और महाराना भी मरहटों के खीमे में एक प्रकार का बन्दी हो गया। इसपर भी होल्कर को सन्तोष न हुआ वह आठ महीने मेवाड़ में रहा, जहां कहीं उसने पांव रक्खा वहीं तबाही थी। देश उजड़ जाता था प्रजा पर दुःख आता था। घर जलाए जाते थे खेत उजाड़े जाते थे।

राना के दुःखों का कोई अन्त नहीं था। उसकी अवस्था बहुत कृपापात्र थी। इसपर भी दुःखों का घटा टोप समाप्त नहीं हुआ था। निम्न लिखित दुर्घटना ने उसकी वह दुर्गति करदी कि जिसके सोचने समझने से रोंगटे खड़े होते हैं। इस विपद् और दुःख के समय उसकी प्यारी राजकुमारी कृष्णा अपनी सुन्दर बातों से उसको धैर्य्य और शान्ति देती थी वह उसको देखकर अपना दुःख भूल जाता था परन्तु शोक! कवि ने सत्य कहा है:—

विधि की गति जाने नहिं कोई,
लक्षण रह्यो कुलक्षण सोई।

ग़रीब कृष्णा भी एक प्रकार से उसकी आपदा का कारण बन गई। यद्यपि इस में उसका कोई दोष नहीं था।

अल्पायु राजकुमारी का रूप राजपूताना के कवीश्वरों के कवितों का विषय बन गया था। निकट व दूर के राजकुमार उसके विवाह के इच्छुक थे। और भान्त २ के उपाय सोचते रहते थे। इन में से एक जगतसिंह जयपुर का राजा भी था।

सन् १८०६ ई० में इस राजा ने तीन हज़ार सिपाहियों के साथ कृष्णा के विवाह के लिए प्रार्थना भेजी और रीति के अनुसार नजराना तथा उपहार की सामग्री भी भेजी।

परन्तु यहां कई प्रकार की कठिनाइयां संघटित हुई। मारवाड़ का राजा मानसिंह कृष्णा के रूप की प्रशंसा सुन कर सब से बढ़ कर प्रेमक बन चुका था। उसने कहला भेजा राजकुमारी की ठहरौनी (मंगनी) मारवाड़ के राजा से पहले हो चुकी थी वह अब जीवित नहीं हैं मैं उसका प्रतिनिधि हूं। इस लिए मुझसे अधिक कोई भी इस पद का अधिकारी नहीं है। उसने यह भी कहला भेजा कि यदि मेरी बात न मानी गई तो मेवाड़ में खून की नदियां बहेंगी और सारे राज्य में खराबी मच जायगी।

जब सेंधिया ने यह समाचार सुना वह राजा मारवाड़ का सहायक बन गया। क्योंकि जयपुर ने उसकी सहायता करने से इनकार कर दिया था, और जब उसने सुना कि जयपुर की सेना मेवाड़ में पहुंची हुई है उस ने अपना दूत मेवाड़ की राजधानी में भेज दिया और कहला भेजा कि "जयपुर की प्रार्थना कदापि न स्वीकार की जावे। जगतसिंह से राजकुमारी का विवाह न किया जावे"।

महाराना को सेंधिया की बात बुरी मालूम हुई। मन में क्रोध आया, उसने झट पट विवाह का प्रबन्ध करा दिया परन्तु मरहटा सरदार साधारण बुद्धि का नहीं था, वह अपने दूत के पीछे २ आप भी रवाना हुआ था ताकि राना उसकी आज्ञा को टाल न सके। वह अपने साथ आठ हजार सेना लाया और शहर के सन्मुख तोपखाना खड़ा कर दिया। अब गरीब राना के लिए सिवाय इसके और कोई उपाय नहीं था कि वह विवाह को बन्द कर देवे और सेंधिया की प्रार्थना को स्वीकार करे।

जयपुर की प्रार्थना का अपमान असह्य था। उसके लिए इस के सिवाय अब कोई उपाय नहीं था, कि वह सेना लेकर मेवाड़ पर चढ़ाई करे। उस ने इतने अधिक सैनिक एकत्र किये कि राजिस्थान में कभी सुने भी नहीं गए थे। मारवाड़ के राजा भी यह खबर सुन कर धावा करने का इरादा कर लिया, महा बिकट युद्ध होने का अवसर उपस्थित हुआ, जिस का विस्तृत वृतान्त वर्णन करने की हम आवश्यकता नहीं समझते। दोनों ओर के लाखों मनुष्य मारे गए परन्तु कोई जन अपनी हार नहीं मानता था। और न लड़ाई के समाप्त करने पर तैयार था दोनों अपनी धुन के पक्के थे।

इस अवसर पर लड़ाई झगड़े के बन्द करने की जो तदबीर सुझाई गई वह ऐसी पाप मूलक और निन्दनीय थी कि उसका उदाहरण दुनियां के इतिहास में और कहीं नहीं मिलता। इस तदबीर का बताने वाला नवाब अमीर खां वालिए टोंक था, जिसके विषय में करनल टाड साहिब लिखते हैं कि "हिन्दुस्तान में इस प्रकार का मक्कार पापी, कठोर

हृदय, और खराब मनुष्य कभी नहीं हुआ था"। उसने सलाह दी कि "लड़ाई की अग्नि को कृष्णा के रक्त से बुझाओ"।

अमीर खां ने स्वयम राना से यह बात कही। पापी नवाब की बात को राना ने बहुत घृणा के साथ सुना और उसे अस्वीकार किया। एक निर्दोष कन्या का बध करना धर्म नीति और सभ्यता के विरुद्ध था। परन्तु दुष्ट अमीर खां ने कहा "नहीं तुम को ऐसा करना पड़ेगा इस के सिवाय और कोई उपाय नहीं है। कृष्णा को अवश्य मरना चाहिए"।

विवश होकर अपने राज्य की कुशल और रक्षा के विचार से उसने स्वीकार कर लिया। इस प्रकार की कायरता और नीचतामूलक क्रिया राजपूताना में कभी नहीं की गई थी। यद्यपि राना ने विवश होकर ऐसा किया, प्रबल शत्रुओं के पंजे मे वह फंसा हुआ था तथापि यह काम राजपूती धर्म के विरुद्ध था। राजपूतों की बीरता पर इसके कारण महा कलङ्क आगया। और आगामी नसलें इस घटना को हमेशा दुख शोक और घृणा की दृष्टि से देखेंगी।

महाराज दौलतसिंह कृष्णा का मामा था उससे कहा गया कि "तुम कृष्णा को मार दो" महाराजा क्रोधित हो कर उठ खड़ा हुआ और कहने लगा लानत है उस जिह्वा पर जो ऐसी आज्ञा देती है। मैं आज से राना का साथी नहीं हूं। यह कह कर वह चला गया। फिर महाराज जीवनदास राजकुमारी के भाई को आज्ञा दी गई। आज्ञा से लाचार होकर वह उठा, हाथ में खड्ग ले लिया और अपनी बहिन के कमरे की ओर पाप की इच्छा से चला। भाई को आते हुए देखकर धर्म्मिका कृष्णा मुस्कराती हुई स्वागत

के लिए उठी, वह जानती थी क्या होने वाला है, वह मौत की राह देख रही थी। परन्तु उसके हंसते हुए मुख को देख कर भाई के हाथ से कटार छूट कर धरती पर गिर पड़ी। उसका हृदय भर आया और दुख से रोने लगा और लज्जित व व्याकुल होकर रोता हुआ उलटे पांव चला गया। ऐसा कौन कठोर हृदय और पापी मनुष्य है जो निर्दोष कन्या के बध करने के लिए हाथ उठाता? विषधर सर्प हिंसक सिंह आदि पशु भी भोले भाले बच्चे को देख कर उसका घात नहीं करते बल्कि उस की सरलता के साथ खेलने लगते हैं।

इस बलि की चर्चा सारे महल में फैल गई। सारी स्त्रियों की आँखो में आँसू धारा बहने लगी। गरीब माता की दशा कुछ न पूछो। वह बावरी बन गई। दुख ने उसकी सुध बुध स्थिर नहीं रक्खी। वह प्रत्येक के पांव पर गिर कर अपनी पुत्री के बचाने की प्रार्थना करती थी। उसकी अवस्था का किञ्चित दृश्य निम्न लिखित उर्दू कविता से विदित होगा: —

मां रो रही थी चेहरा था, यासो[१] अलम से ज़र्द[२]।
हर यक को देखती थी वह, भर भर के आह सर्द।
हिचकी जब उसको आती थी, उठता था दिलमें दर्द।
आंसु रवां[३] थे आंखों से, मुंह पर जमी थी गर्द।
कृष्णा को कोई मौत के, मुंह से छुड़ाइयो।
निर्दोष धार्मिका है इसे, मत सताइयो।

---

(१) निराशा (२) पीला (३) बहते।

है है ! नहीं ज़माना१ में, कोई भी हक़ शिनास२ ।
इतने न सख़्त दिल ही करो, कुछ भी हक़ का पास ॥
दुनिया यह चन्द रोज़ा है, रक्खो न इसकी आस ।
नेकी ही साथ होगी न होएगा, कुछ भी पास ॥
हे लोगो चन्द रोज़ की, यह मेहमान है ।
कृष्णा का क्या कसूर है, यह बेज़बान है ॥
रनिवास में बुपा३ है यह, क्या आज शोरशैं४ ।
दर पर फुफी बिलकती है, माँ कर रही है बैन५ ॥
तुमको क़सम है राम की, मत हाथ उठाइयो ।
है है हमारी प्यारी सुता६, को बचाइयो ॥
राना पर कैसा पाप हुआ, है सवार आज ।
पापी नवाब करता है, क्यों हमको ख़्वार७ आज ॥
व्याकल है शहर ख़ल्क, है सब बे करार आज ।
रह रह के दिल धड़कता है, हाँ बार बार आज ॥
है है करेंगे ज़बह८ वह इस, नौ निहाल को ।
मारेंगे बेगुनाह वह इस, मेरे लाल को ॥
छाती पे मेरी तीर न, ग़म का लगाओ तुम ।
गोदी मेरी बेटी से न, ख़ाली कराओ तुम ॥

---

(१) दुनिया (२) जानने वाला (३) मचा (४) रोना धोना
(५) चिल्लाना (६) बेटी (७) तबाह (८) कतल ।

है हात सो गवार न, मुझ को बनाओ तुम ।
मां के क़लक़ का ध्यान ज़रा, दिल में लाओ तुम ।
बहनें हैं बेक़रार चचीं, बद हवास है ।
मातम मचा है घर में, तो झूला उदास है ।
बेकस है बेगुनाह है दिल, दुःख से चूर है ।
ईश्वर गवाह रहियो कि, वह बे क़सूर है ।
क़तले गरीब अदल१ अदालत२ से दूर है ।
लख़ते जिगर३ है मां की वह आंखों की नूर४ है ।
हा राम ! कोई सुनता नहीं कुछ दुहाई है ।
बेटी की नन्हीं जां पे यह क्या आफ़त आई है ।
राजपूतों की वह अगले शराफ़त किधर गई ।
वह राम लक्ष्मण की मुहब्बत किधर गई ।
बहिनो की पास उलफ़तो५ शिफ़क़त६ किधर गई
मां बाप का वह प्यार मुहब्बत किधर गई ।
क्यों जिबह कर रहे हो तुम इस बे क़सूर को ।
क्योंकर करार आए दिले ना सबूर को ।
यह माजरा तो सुन के मेरा दिल दहल गया ।
खूं जोश खाके जख़म गलू७ से उबल गया ।
मुरदा हुई हयात८ का नकशा बदल गया ।

(१) धर्म्म (२) न्याय (३) कलेजा का टुकड़ा (४) ज्योति (५) प्रेम (६) दया (७) गला (८) जिन्दगी ।

हिचकी के साथ होंठ खुले दम निकल गया ।
बेटी को मेरी मार के तुम कल न पाओगे
दुनिया से दाग़ हसरते खुद ले के जाओगे ।

चारों ओर से हिचकियों का शब्द आ रहा है। रानियां बिलक २ कर रो रही हैं। केवल एक कृष्णा है जो मौन साधे आश्चर्य मूर्ति बनी बैठी है। किसी को इस के बध करने का साहस नहीं हुआ। पुरुषों ने कहा यह पाप हम से नहीं हो सकता। लाचार स्त्रियों को तैयार किया गया। हलाहल विष का प्याला तैयार किया गया। एक दासी कृष्णा के पास रो कर बोली "राना की आज्ञा है इसे पी जावो" कृष्णा ने सन्मान के साथ पियाला हाथ में लिया और उसको पी गई।

दुखिया माता के चीखने का शब्द ज़ोर से सुनाई दिया। दरोदीवार उसके आरत शब्द से गूँजने लगे। राना को सर्व गालियां सुनाने लगे। कृष्णा ने माता का हाथ पकड़ कर कहा "माता तू इतना क्यों रोती है। जिन्दगी पानी के बुदबुदे के समान है। मनुष्य थोड़े दिनों का मेहमान है। धैर्य्य धर, मृत्यु की गोद में सब दुख दर्द भूल जाते हैं। मुझ को मौत का भय नहीं है। मैं राजपूत कन्या हूँ, मैं क्यों मरने से डरूं। हम मरने ही के लिए हैं। हम को जन्म इसी लिए दिया गया है कि बरबाद कर दिया जाय। हम फिर दुनियां में आते हैं, बार २ उत्पन्न होते हैं और मरते रहते हैं। पिता का कोई दोष नहीं, उन्होंने मुझ को जन्म दिया था। यह शरीर उन्होंने दिया था उन्हीं ने ले लिया, तू मत रो"। यह कह कर वह माता के गले से लिपट गई।

कृष्णा के सन्तोष देने वाले शब्द महा हृदय स्पर्शी और दुख से परिपूर्ण हैं माता ने समझा अब वह मर जायगी। उसने कृष्णा को ज़ोर से गोदी में खींच लिया। मानो वह एक अन्मोल मोती था जिसको डाकू ज़बरदस्ती छीनना चाहते थे।

एक मिन्ट, दो मिन्ट, दश मिन्ट बीत गए विष ने काम नहीं किया। हलाहल विष को भी उसकी प्यारी जान लेने में दुःख मालूम हुआ दूसरी दफ़ा फिर विष दिया गया, उसने उस को भी पी लिया। इस दफ़ा भी उसने अपना काम करने से इन्कार कर दिया। तीसरी दफ़ा फिर पापी हाथों से प्याला दिया गया, निर्दोष ने इस मर्तबा भी उसको पी लिया। आ-श्चर्य! इस दफ़ा भी विष ने अपना काम नहीं किया। या तो उसकी जीवनी शक्ति इतनी प्रबल थी जो मरने में नहीं आती थी या प्रकृति को उसकी दीन अवस्था अपूर्व सुन्दरता पर तरस आता था। तीन दफ़ा फांसी पर जान न निकलने से अपराधी को माफ़ कर दिया जाता है परन्तु पापी नवाब टोंक महा कठोर हृदय था, उसने किसी की एक न सुनी।

चौथी बार हलाहल विष बहुत अधिक मात्रा में दिया गया उसका नाम कुसम्ब विष है, कृष्णा ने मुस्कराते हुए उसको भी पी लिया, और आकाश की ओर हाथ उठा कर माता को आशीश दी और मेवाड़ की कुशल की प्रार्थना की। इस के अनन्तर सिर में चक्कर आने लगा, आंखों की पुतलियां बदलने लगीं, हाथ पांव टूटने लगे। उसने माता के हाथों को पकड़ कर होठों से लगाया और छाती पर रख कर लेट गई, और उस गहरी निद्रा में सोई जिस से फिर कोई जाग्रत नहीं होता।

मज़लूम और दुखिया माता का शब्द इस दफा बन्द हो गया। आंख से फिर आंसू नहीं निकले, उनका श्रोत भीतर ही भीतर सूख गया, और कृष्णा कुमारी के मरने के दो ही चार दिन के पश्चात् उसकी लाश भी चिता पर जलने के लिए रक्खी गई।

जिस समय राजपूताना में यह समाचार फैला, सारा देश शोकमय बन गया, राजिस्थान की गुलाब को इस प्रकार ज़ुल्म व अत्याचार ने पांव के तले कुचल दिया, उसका सिवाय इस के और क्या दोष था कि वह बहुत स्वरूपवान थी।

सन्मान के योग्य टाड साहब राजिस्थान के लेखक वर्णन करते हैं कि जब से बेगुनाह कृष्णाकुमारी को वध किया गया राजपूत इस वृत्तान्त को सुन कर आंसू बरसाए बिना नहीं रहते। उन की जिह्वा इस लज्या युक्त और दुखदाई कथा को कहते हुए लड़खड़ाती है, और हाथ पांव में सन्सनी छा जाती है।

यह ज़ुल्म का एक वृत्तान्त है। इसी प्रकार हिन्दू घरानों में अब भी कितनी कृष्णा कुमारियां ज़ुल्म की दूसरी शकलों में सताई जा रही हैं और अनुचित रस्मों और रिवाजों के बहाने से उन पर क्या २ अत्याचार नहीं ढाए जाते, परन्तु हिन्दुओं के पत्थर हृदय हैं कि किंचित नहीं पसीजते। कोमल हृदय हिन्दू अपनी पुत्रियों की ओर से पाषाण हृदय हैं। उनकी सन्तान का यह भाग अत्यन्त निकृष्ट समझ लिया गया है, जिस कोख से केवल कन्याएं उत्पन्न होती हैं उस को कोसा जाता है। कन्याओं के साथ न दया की जाती है न न्याय किया

जाता है, कौन नहीं जानता कि ज़बरदस्ती विधवा रखने से गर्भ गिराए जाते हैं, किसको नहीं मालूम कि इज्जत आबरू के विचार से तरह २ के अत्याचार होते रहते हैं। कानून को चाहे उन का पता न लगे। पृथ्वी की अदालत को चाहे धोका दिया जाय, पुलिस अनुसन्धान में अकृत्कार्य्य हो, परन्तु संसार का सब से महान हाकिम और सब से बड़ा न्यायकारी बिना दण्ड दिए नहीं छोड़ेगा। ताऊन की तबाही, केवल इस अनुचित अत्याचार और अनुचित कार्रवाई का दण्ड है, और वह ताऊन दुर्भिक्ष रोग दुःख शोक के आकार में उस समय तक बराबर बना रहेगा, जब तक हिन्दू सत्य प्रियता, न्याय और धर्म्म का विचार करके अपनी कृष्णा कुमारियों के साथ न्याय करने को तैयार नहीं होते, और जब तक अनुचित रस्मों को पांव तले रौंद कर निर्दोष ग़रीब बेबस बेज़बान कन्याओं के स्वत्व (हकूक) का खयाल न किया जायगा यह दुर्भिक्ष, यह शोक, यह दुःख, यह विपद, मौसम की गरमी, असयम का शीत,वर्षा की कमी, कभी दूर न होगी, जिन्होंने नहीं सुना है अब सुनलें।

चिराग़ें कि बेवा जने बर फ़रोख्त,
बसे दीदह बाशी कि शहरे व सोख्त।
इन फूलों से रुखसारों के कुम्हलाने को देखो,
इन सूखे हुए होठों के मुरझाने को देखो।
गश आने को और सांस उलट जाने को देखो,
कन्याओं के दुख दर्द से मर जाने को देखो।
कन्याएं कभी काबिले बेदाद नहीं हैं,
क्या ऐसे पिता मोज़ी व जल्लाद नहीं हैं।

जयसिंह वालिए अम्बर जिस में एक सौ गुण वर्तमान।

यह वक्त था कि हम दरे दरियाय नूर१ थे,
दुनियां के जितने ऐब हैं सब हम से दूर थे।
फ़खरे२ बशर३ थे अर्ज४ के नाज़ो गरूर थे,
जरीर५ थे सखी६ थे वली७ थे ग़यूर८ थे।
बिगड़े थे जब तो खून के दरिया बहाते थे,
सिर दे दिया है बात पर जिस वक्त आते थे।

मेवाड़ और बून्दी के उत्तर और मारवाड़ व बीकानेर के पश्चिम में एक राजपूत रियासत है जो जयपुर के नाम से प्रसिद्ध है। किसी समय में इसका नाम आम्बर था और पहले पहल प्रारम्भ में यह धूंदर कहलाती थी। जयपुर उस की राजधानी है। और अर्सा से वह इसी नाम से पुकारी जाती है। जो जाति यहां राज करती है कछवाहा कहलाती है। दूसरे राजपूतों को इस भोंड़े नाम से सदा से एक प्रकार की घृणा रहती है और राजपूताना में यह बहुधा कहा जाता है कि कछवाहे उत्कट और बीर नहीं होते।

(१) ज्योति (२) गौरव (३) मनुष्य (४) धरती (५) शूरमा (६) दाता (७) महात्मा (८) लज्यावान।

भगवानदास वालिए अम्बर पहला जन था जिसने अपनी कन्या दिल्ली के मुग़लों को दी थी। उसका भतीजा और दत्तक विधानी (मुतबन्ना) पुत्र मानसिंह था, जिसका वर्णन अकबर के समय के इतिहास में बहुधा आता है। यह वह जन था जिसने अकबर के विशेष विद्रोही भाइयों को आधीन कर रक्खा था। खैबर के विद्रोही अफगानों का नाक में दम कर दिया था। महाराना प्रताप इसी के लगातार हमलों से व्याकुल हो गया था, और वह बङ्गाल बिहार, दक्खिन और काबुल में अकबर की ओर से सूबेदार के तौर पर शासन करता था, राजपूतों में प्रसिद्ध है कि अकबर इस के बल और प्रतिष्ठा से अन्त में इतना डर गया था, कि इस के मारने के इरादे से मिठाई में विष मिला दिया। मानसिंह ने तो वह मिठाई नहीं खाई, गलती से अकबर ही उस को खा गया और "जैसी करणी वैसी भरनी" की कहावत के अनुसार वह आप ही मौत का शिकार बना परन्तु इस लोकोक्ति में कहां तक सच्चाई है कोई नहीं कह सकता।

सन् १६०५ ई० में मानसिंह का देहान्त हुआ। यह सारी आयु अकबर ही के लिये लड़ता भिड़ता रहा इस लिए अम्बर की उन्नति में यथेष्ट ध्यान न दे सका, तथापि किसी न किसी प्रकार उसको और आक्रमणकारियों के अत्याचारों से बचाता रहा। वह राजपूत राजे जो इस के पश्चात् राजगद्दी पर बैठे वीर साहसी और योधा नहीं थे। वह अम्बर की प्रतिष्ठा को दिल्ली दरबार में सुरक्षित न रख सके, और मारवाड़ के राजकुमार उन से बढ़ गए।

सम्राट जहांगीर की बेगमात में जोधाबाई एक राजपूत शाहज़ादी थी यह बीकानेर की लड़की थी। उसने जहांगीर से प्रेरणा की, कि अम्बर का इलाका जयसिंह को दिया जाय जो मानसिंह का भतीजा है। कहावत है कि एक दिन जोधाबाई और जहांगीर बालाखाना पर बैठे हुए थे। जयसिंह नीचे चला जा रहा था। जहांगीर ने उच्च स्वर से पुकारा "ऐ अम्बर का राजा! यहां आकर जोधाबाई को सलाम कर क्योंकि उसी की कृपा से तुझ को अम्बर की राजगद्दी मिली है"।

नवयुवक जयसिंह के लिए यह विशेष आनन्द और सौभाग्य का दिन था। वह दिल में बहुत प्रसन्न हुआ। परन्तु उसको स्मरण हुआ कि राजपूत कभी ऐसी स्त्री के सामने सिर नहीं झुकाते जो धर्म्म से पतित हुई हो, उस की दृष्टि में जोधा बाई अपने धर्म्म से पतित हुई २ थी, और अब वह राजपूतनी नहीं रही थी। और जिसने बेदीन मुसलमान से विवाह कर लिया था वह कब किसी सन्मान अथवा प्रतिष्ठा के योग्य समझी जा सकती थी। उसने नम्रतापूर्वक परन्तु स्वतन्त्रता भाव में कहा "प्रभू मैं आपकी नसल की किसी और शाहज़ादी के सामने सिर झुका सकता हूं लेकिन जोधाबाई को कभी सलाम न करूंगा"।

जोधाबाई इस बात को सुन कर खिलखिला कर हंस पड़ी, क्योंकि वह अपने देश वालों के चाल चलन से भली भांति अवगत थी। और शायद उसको इस बात का अभिमान भी हुआ होगा कि राजा अम्बर ऐसे अवसर पर भी अपनी खुद्दारी और राजपूती धर्म्म को नहीं त्यागता। उसने

उसी प्रकार हंसकर कहा कुछ मुजायका नहीं मैं तुमको अम्बर का राज देती हूं"।

जयसिंह अम्बर का राजा होगया, जोधाबाई का चुनाव अच्छा था क्योंकि जयसिंह अम्बर के ज़बरदस्त और प्रसिद्ध राजाओं में गिना जाता है, वह कर दाता के रूप में हमेशा औरङ्गजेब की सेवा करता रहा। यहां तक कि शिवाजी मरहटा को व्याकुल कर के औरङ्गजेब के दरबार में लाना उसी के ज़बरदस्त दिमाग़ और बलवान हाथों का काम था परन्तु जब उसको मालूम हुआ कि बादशाह शिवाजी के प्राण लेना चाहता है तो उस को घृणा होगई और उसने शिवाजी को जान बचा कर भाग जाने का अवसर दे दिया।

मुगलों के इतिहास में वह मिरज़ा राजा कहलाता है। मिरज़ा राजा ने अम्बर को बहुत सुन्दर नगर बनाया। इसने एक गहरी और लम्बी झील खोदाई, सुन्दर बाग़ लगवाए, बहुत सुन्दर महल बनवाए, और अर्द्ध बने हुए मन्दिरों की सर्वाङ्ग पूर्ति की, जो इससे पहले राजाओं के समयों में बनने आरम्भ हुए थे। दरबार आम और दरबार खास के मकानात जो अब भी दर्शक यात्रियों के आनन्द और विस्मय का कारण हुआ करते हैं इसकी इञ्जिनियरी विद्या की स्मृति हैं। दोनों इमारतें लाल पत्थर के खम्भों पर खड़ी हैं। और उन में चित्र कारी का काम बड़ी सुन्दरता से किया गया है। इन मकानों के बनते ही जहांगीर को खबर हो गई कि उस के आधीन रईस ने इस प्रकार के दरबार आम और दरबार खास बनवाए हैं कि दिल्ली और आगरा की इमारतें भी उनकी बराबरी नहीं कर

सकतीं। बादशाह को यह बात बूरी मालूम हुई उसने आज्ञा दी कि आदमी जांय उसको जड़ से ढा दें।

जिस समय बादशाह के मनुष्य पहुंचे मिरजा राजा ने बड़े आदर और सन्मान से उनका स्वागत किया और उनको दरबार के मकान में ले जाकर कहा बादशाह को गल्त खबर दी गई है कहने वालों ने झूठ से काम लिया है, भला इन मकानों की इमारतों से कब तुलना हो सकती है। आप लोग स्वयम् चलकर देख लीजिए। बादशाह के मनुष्य जाकर देर तक विस्मय से देखते रहे लाल वा भूरे रङ्ग के पत्थर का वहां नाम व निशान भी नहीं था, न ही चित्रकारी ही थी। दरबार आम दुहरे खम्भों के ऊपर बना हुआ था, और सब सफेद था यह लोग अफसोस करते हुए आगरा गए और इस खबर को गलत बता कर बादशाह को शान्त कर दिया। और जयसिंह की चित्रकारी सब चूने के नीचे दबी हुई पड़ी रही। आज तक वह उसी दशा में है। केवल कहीं कहीं पीछे से खोदा गया है।

इस घटना से डरने के स्थान में जयसिंह और निर्भय हो गया। औरङ्गजेब के समय में वह केवल नाम मात्र दिल्ली दरबार के आधीन रहा। वह अपने दरबार में बैठता था और बाईस कछवाहे सरदार उस के इर्द गिर्द रहा करते थे। उन में से प्रत्येक के आधीन एक एक हज़ार सवार थे, उस के दाहिनी ओर एक शीशा रक्खा रहता था जिसका नाम दिल्ली था और दूसरी ओर के शीशे का नाम सितारा था, जो उस समय मरहटों की राजधानी थी। वह बहुधा इस दर्पण को फ़र्श पर फेंक कर कहा करता था "यह सितारा है और दिल्ली के भाग्य भी

मेरे हाथ में है । मैं इस को भी सुगमता से बरबाद क
सकता हूं ।

जब यह समाचार औरंगजेब को मिला उसने इरादा किय
कि जयसिंह वालिए अम्बर की ज़िन्दगी को संसार से मिट
देना चाहिए, उसमें यह साहस तो कहां था कि खुल्लम खुल्ल
चढ़ाई करता, इस लिए जयसिंह के अयोग्य बेटों को लाल
देकर विष देने को तैयार किया ।

छोटे लड़के ने अपनी इच्छा प्रगट की, इस शर्त पर कि
जयसिंह के मरने के पश्चात् अम्बर की गद्दी उस को दी जाय
इस ने पिता की अफ़ीम में विष मिला दिया, और औरंगजे
के पास आकर शर्त पूरी करने की प्रार्थना की । औरंगजे
अपने बचन का इतना सच्चा नहीं था, उसने उस पापी पित
घातक को केवल एक छोटा सा जिला जागीर में दिया, राम
सिंह बड़ा लड़का गद्दी पर बैठा परन्तु उसने कोई ऐसा कार
नहीं किया जो विशेष वर्णनीय हो, अम्बर की अवस्था दि
प्रतिदिन रद्दी होती गई और विष्णुसिंह के समय में तो व
सर्वथा दुर्बल हो गया और जब तक जयसिंह द्वितीय ने उसक
फिर दोबारा शोभा प्रदान नहीं की राजिस्थान में वह पू
क्षुद्र और तुच्छ रियासत बन गई थी । इस जयसिंह में करन
टाड साहब के लेखानुसार एक सौ गुण वर्तमान थे, औ
कछवाहों में वह सब से बलवान और उन्नत चेता राज
हुआ है ।

जयसिंह ने सन् १६३८ में राजगद्दी को सुशोभित किय
उसने गुलाबी रंग का हवाई महल बनवाया, यह एक विचि

प्रकार की इमारत नगर के बीच में बनी है, उसकी आकाश लोचन (रसदगाह) अद्वितीय थी, और रात २ बैठा हुआ वह वहां से सितारों की बाट को देखता रहा करता और गणित विद्या की सहायता से उसकी चाल के जानने की चेष्टा किया करता था। इस को अपनी ज्योतिष और गणित विद्या की निपुणता का गर्व था, यह बड़ा उन्नत दूरदर्शी और विद्वान राजा हुआ है, देश और राज्य सम्बन्धी उलझनों के मिटाने और उनसे स्वयम लाभ उठाने में इस की बुद्धि की प्रशंसा की जाती थी, अम्बर के प्राचीन खण्डरों से ही इस के हाथ की कारीगरी का पता लगता है। यद्यपि उसने उस नगर की ओर से अपना ध्यान हटा लिया था और एक नए नगर जयपुर की बुनियाद डाली थी, जयसिंह प्रथम की संग मरमर की बैठक जिसकी दीवार में शीशे आदि जड़े थे पहले से मौजूद थी। नगर की और सब इमारतें इसी राजा ने बनवाईं थीं।

अम्बर के महाराजा विष्णुसिंह की दो रानियां थी, दोनों के पेट से एक २ पुत्र उत्पन्न हुआ था, विजयसिंह की माता अपने पुत्र को पिता के दरबार में रखना नहीं चाहती थी उसको इस बात की शंका थी कि कहीं उसके प्राण अपहरण न किए जांय, और दरबारियों के षड़यंत्र से वह वध न कर दिया जाय, राज दरबारों में इस प्रकार की घटनाएं सदैव हुआ करती हैं और जहां कहीं एक से अधिक स्त्रियां होंगी यही अवस्था न्यूनाधिक दिखाई देगी, इस लिए विजयसिंह तो अपने मामा के घर रहता था और जयसिंह अम्बर में था। जब विश्नुसिंह मर गया तो जयसिंह उसकी जगह गद्दी पर बैठा।

कुछ काल के व्यतीत होने पर विजयसिंह ने अपने भाई के पास सन्देशा भेजा कि हम और आप एक ही पिता के लड़के हैं आप चलुआ का इलाका जागीर के तौर पर हम को दे दें, जयसिंह ने झगड़ा बढ़ाना नहीं चाहा, वह बिलकुल नहीं चाहता था कि भाई के साथ युद्ध हो।

अभी इस बात का निर्णय नहीं होने पाया था कि एक भरोसे के योग्य खबर मिली कि 'अपनी अच्छी तरह से रक्षा करो अन्यथा तुम्हारी जगह कोई और मनुष्य दिल्ली की ओर से राज गद्दी पर बैठाया जायगा", विजयसिंह गुप्त रूप से राजगद्दी के लिए षड्यंत्र कर रहा है, उसकी माता भी गुप्त रूप से उसके गद्दी पर बैठाने की चेष्टा कर रही थी, उसने बहु मूल्य जवाहिरात अंबर के खज़ाने से भेजे थे और उनके द्वारा विजयसिंह को कमरउद्दीन खां मंत्री (वज़ीर) मुग़लिया राज्य की मित्रता प्राप्त हो गई थी, यह शख्स बड़ा रोब दाब वाला था, विजयसिंह ने इकरार किया कि अगर जयसिंह गद्दी से उतार दिया जाय और मुझ को गद्दी पर बैठाया जाय तो मैं पांच हज़ार घोड़े और बहुत सा धन नज़र में दूंगा", मुगल मंत्री ने प्रार्थना स्वीकार की और जब बादशाह की आज्ञा ली जा रही थी, जयसिंह के किसी मित्र को इस का पता लग गया और उसने तत्काल सूचना दी कि होशियार हो जाओ।

इस पत्र को पाकर जयसिंह ने अपने मंत्री से सलाह की उसने उत्तर दिया "चन्द राजपूतों का गुरू कहलाता है उसने लिखा है राज करने के चार उपाय हैं साम, दाम, भेद, दण्ड, इस अवसर पर बल और युक्ति काम नहीं कर सकती, बल

पूर्णतः व्यर्थ है केवल चतुरता से काम निकल सकता है, और जिस शख्स ने षड़यंत्र किया उसको धोखा देने से काम सिद्ध हो सकता है"।

जयसिंह में यदि कोई कमी थी तो यह कि वह लड़ाका नहीं था, वह बुद्धिमान जन अवश्य था और आज कल के यूरपियन दर्बार के लिए बहुत ठीक मनुष्य होता। उसने अम्बर के बड़े २ और विशेष २ सरदारों को बुला भेजा। सब उसकी आज्ञा पाते ही आ गए। इन में चुहू का मोहनसिंह नथावत दल का सरदार था उसने उसको संबोधन करके कहा "देखो दुनियां में किस प्रकार का पाखण्ड होता है आपने मुझको गद्दी पर बैठाया मेरे भाई को बसुआ की जागीर पर सन्तोष करना चाहिए था परन्तु कमरउद्दीन वज़ीर उसको अंबर का राजा बना कर भेजना चाहता है"।

कोई नहीं कह सकता सरदारों ने इस बात को सत्य समझा वा असत्य, परन्तु उन्होंने एक मुख होकर कहा "हमारी भलाई जयसिंह के साथ है। आप घबराइए नहीं, हमारा विश्वास कीजिए। और यह खतरा आप ही आप बीत जायगा, परन्तु आप बसुआ को दे दीजिए।

जयसिंह ने सौगन्द खाई बसुआ मेरे भाई की जागीर हो चुका, जिस समय आप चाहें ले सकते हैं, और उसी समय विजयसिंह के नाम आज्ञा पत्र लिख दिया कि "बसुआ तुम्हारे गुजारे के लिए दिया जाता है," इस के पश्चात् उसने दरबार समाप्त कर दिया। और फिर सोचने लगा आगामी क्या करना चाहिए।

थोड़े ही दिनों में विजयसिंह अंबर की कौंसिल में बुलाया गया ताकि भ्रातृ भाव से एक कठिन कार्य्य में अपनी सम्मति दे, और भी वादा किया गया कि जिस समय वह आवेगा बसुआ उसको दे दिया जायगा और जयसिंह ने यह भी वादा किया कि उस के तन धन की पूर्णरूप से रक्षा की जायगी, परन्तु विजयसिंह भी कछवाहा था, वह जानता था जयसिंह का विश्वास करने में कुशल नहीं है, अम्बर की ओर पांव उठाना जान जोखिम में पड़ना है, उस ने सौगन्द खाई कि मैं कदापि उधर न जाऊंगा।

कौंसल ने कहला भेजा तुम को शंका करने की कोई आवश्यकता नहीं है तुम को उस की जगह गद्दी पर बिठा देंगे।

कमरउद्दीन वजीर बहुत व्याकुल हुआ, इन लेखों से परिचालित होकर विजयसिंह ने अंबर जाने की आज्ञा मांगी, परीक्षा ने प्रमाणित कर दिया था, कि कछवाहे केवल अपने मतलब के होते थे, जहां काम निकल गया वहां तोते की तरह आंख फेर लेते थे लेकिन बारह खानदान के मुखियाओं की सौगन्दें फिर भी आशा जनक थीं, वह सोचता था क्या आश्चर्य कि मुझ को अंबर के प्राप्त करने में सुगमता हो, उसने विजयसिंह को छैः हज़ार सवार और दरबार के दो सरदारों के साथ अंबर को भेज दिया ताकि उस के उद्देश्य की पूर्ति में सहायता करें। इन्हीं दो सरदारों में से एक जयसिंह का मित्र भी था जिसने उसको पहले से आने वाली आपत्ति से अवगत किया था। कमरउद्दीन ने चलते समय भी कहा कि

विजयसिंह को हानि न पहुंचने पावे और उसने बेबसी के साथ उसे विदा कर दिया।

इस अर्से में जयसिंह ने भ्रातृभाव के प्रकाश के लिए अच्छी तरह से तैयारी कर रक्खी थी, उसने विजयसिंह के उतरने के लिये एक विशेष सुन्दर स्थान नियत किया, परन्तु जब उसने वहां उतरने से इन्कार किया तो इसने कहला भेजा आप मान भूम में निवास करें जहां नथावत का सरदार रहता है, अंबर में इस सरदार की वही पदवी थी जो मेवाड़ में चन्पावत और असोप की है उसने वहां से भी इनकार किया और जिस जगह को उसने पसन्द किया वह सांगानेर कहलाती है यह जयपुर से छः मील दक्षिण पश्चिम की ओर है, यहां विजयसिंह ने आकर अपना खीमा खड़ा किया।

जिस समय जयसिंह रईसों के साथ दरबार में बैठा हुआ सांगानेर जाने की तैयारी कर रहा था, उसकी माता की ओर से नाजिर ने आकर प्रार्थना की कि रानी की इच्छा है कि दोनों भाई एक दूसरे से मिलाप कर लें, ताकि उसके हृदय को आनन्द हो। जयसिंह ने कहला भेजा कि जब तक मैं अपने सरदारों से सलाह न कर लूं इस का कुछ उत्तर नहीं दे सकता, परन्तु सब सरदारों ने एक मन व एक स्वर हो कर कहा "ऐसी प्रार्थना के स्वीकार कर लेने में कोई हर्ज नहीं हो सकता"। जयसिंह ने स्वीकार कर लिया। और उसी समय पालकी तैयार की गई और तीन सौ परदेदार रथ सजावट के साथ सांगानेर की ओर चल पड़े, मार्ग में गांव के लोग अपनी रानी देखने के लिए चारों ओर से एकत्र हो गए और उसको इस नेक काम के लिए

आशीसें देने लगे, रानी के नौकर मार्ग में बराबर अन्न बांटते जाते थे।

जयसिंह और उसके सरदार भी सांगानेर गए। महाराजा प्रेम का रूप बना हुआ था, वह हंसते हुए बड़े प्रेम से भाई से गले मिला, और सब उपस्थित जन इस भ्रातृ भाव को देख कर प्रसन्न हुए, उसने विजयसिंह से मिलकर कहा यह बसुआ की जागीर का परवाना है. और यदि तुम अंबर की गद्दी की इच्छा रखते हो तो मैं उसे भी तुम्हें देने को तैयार हूं, अच्छा है कि मेरे और तुम्हारे बीच फैसला होजाय अगर तुम्हारी इच्छा हो तो मैं बसुआ में जाकर रहने के लिए तैयार हूं।

विजयसिंह का हृदय भी भाई की उदारता और प्रीति को देख कर भर आया उसने कृतज्ञता पूर्वक कहा अब मेरी सारी आवश्यकताऐं पूरी हो गईं।

जब सरदारों ने इस भ्रातृ प्रेम के अद्भुत दृश्य को देख लिया, नाजिर फिर रानी का सन्देसा ले आया कि "वह दोनों भाइयों को एक साथ अपनी आंखों से रनिवास में देखना चाहती है, यदि किसी कारण से ऐसा न हो सके तो वह स्वयम दरबार में आ जावें," जयसिंह ने रईसों की ओर देखकर कहा "मैं आप लोगों की सम्मति के अनुसार चलना चाहता हूं आप लोग क्या कहते हैं हम रानी के पास जांय या आप दरबार में रानी को आने की आज्ञा देते हो," सरदारों ने कहा उचित है कि आप रानी के पास जाइए, यह सुन कर जयसिंह ने विजयसिंह का हाथ पकड़ लिया और रनिवास की तरफ चल पड़ा।

रानी के कमरे के द्वार पर पहुंच कर जयसिंह ने अपनी कटार कमर से खोल कर ड्योढ़ी बरदार की तरफ फेंक कर कहा इस स्थान में इस की क्या आवश्यकता है। विजय सिंह ने भी उसी प्रकार करना उचित समझा, उसने अपना कटार खोल कर रख दिया और उस के साथ भीतर गया, नाजिर ने उस के भीतर जाते ही द्वार बन्द कर लिया और उसी समय दो बलवान हाथों ने विजयसिंह को कैद कर लिया। और वह नाहक छुड़ाने के लिए जोर लगाने लगा परन्तु उसका बल लगाना व्यर्थ था क्योंकि यह रानी के कोमल हाथ नहीं बल्कि किसी जबरदस्त पहलवान के थे।

सहायता के लिए चिल्ल पुकार करना भी व्यर्थ था, क्योंकि प्रथम तो कोई सुनने वाला ही नहीं था और यदि सुनता भी तो क्या हो सकता था, अतिकाय और बलवान भाटी सरदार जो पालकी में आया था उसी ने विजयसिंह को कैद कर लिया और उसके हाथ पांव बांध दिए, जो भीड़ भाड़ बाहर मौजूद थी उसी प्रकार असीसें देती रही और समझा कि रानी लौटी जा रही है किन्तु पालकी में भाटी सरदार और उसका बेबस और गरीब कैदी सवार था, तीन सौ परदेदार रथों में भी रानियां नहीं थीं बल्कि हथियार बन्द सिपाही बैठे हुए थे।

एक घण्टे के पीछे एक सवार ने आकर खबर दी कि विजयसिंह को अंबर के किले के भीतर कैद कर दिया गया, तब वह अपने हथियार बन्द आदमियों को लेकर फिर दरबार में आया, सरदार थोड़ी देर चुप रहे, फिर विस्मित होकर पूछने लगे विजयसिंह कहां है? जयसिंह ने वीरता से उत्तर दिया,

मेरे पेट में है, हम दोनों विष्णुसिंह के पुत्र हैं मैं बड़ा हूं। यदि तुम उसको निकालना चाहते हो तो मुझ को वध कर डालो और उसको निकाल लो", फिर उसने नम्रता पूर्वक उन से कहा मैंने केवल तुम्हारी भलाई के लिए अपने वचन का विचार नहीं किया, यदि विष्णुसिंह तुम्हारे शत्रुओं को लाया होता तो निश्चय हम में से आज कोई भी जीवित न रहा होता।

सरदारों की विचित्र दशा थी, न कुछ कह सकते थे, न सुन सकते थे, जयसिंह के हाथ में सब की नकेल थी, लाचार चुप रहना ही उचित समझा, सब लोग बिना किसी तकरार के दरबार से विदा हो गए, और जयसिंह को केवल अब उस से सलूक करना बाकी रहा जो उसकी राह में कांटा बना हुआ था।

छैः हजार शाही सेना जो सांगानेर के बाहर खीमा डाले हुए पड़ी थी विजयसिंह के गुप्त होने पर व्याकुल व चिन्तवान हुई उसने दरियाफ्त करने के लिए आदमी भेजे कि विजयसिंह कहां है? उत्तर मिला तुम्हारा उससे कोई सम्बन्ध नहीं है, तुम अपना खीमा उखाड़ कर दिल्ली का रास्ता लो या मैं लाचार होकर तुम से कहूंगा कि अपने २ घोड़े मेरे हवाले कर दो, सवारों ने इस संकेत से जयसिंह का मतलब समझ लिया, विजयसिंह उसके हाथ बुरी तरह से कैद हुआ और इतिहास-कार कहते हैं कि एक सौ नौ गुण वाले राजा के एक सौ नौ कारनामों में से यह पहला कारनामा था, परन्तु कोई इतिहास-कार पता नहीं देता कि उस निर्दोष के साथ क्या सलूक किया।

इस प्रकार गद्दी प्राप्त करने पर जयसिंह अब अंबर की शक्ति बढ़ाने लगा, और उस को राजपूत रियास्तों में प्रतिष्टा के योग्य बना दिया, उसकी सरहद तंग थी, पश्चिमी भाग बहुत कुछ अजमेर में मिल कर मुगलों के हाथ पड़ गया था, शखावत का इलाका जो पहले कर दिया करता था स्वाधीन बन बैठा था। बराह खाश खानदानों की जागीरें छोटी २ थीं। सलोम्बरा चन्द्रावत का मुखिया अपने आप को अम्बर के बराबर समझता था।

चतुरता के साथ धीरे २ जयसिंह अपना काम करने लगा, वह हृदय का पवित्र और स्वभाव का निष्कपट नहीं था। केवल अपनी कार्य्य सिद्धि का ध्यान रखता था। और दूसरों को तकलीफ और दिक्कतों से लाभ उठाना खूब जानता था, उस को इस बात की परवाह न थी कि वह राजपूत है अथवा मुग़ल। उन बड़े २ संग्रामों के समय जिन में राजिस्थान उजाड़ हो गया, वह हमेशा चालाकी और चतुरता से काम लेता रहा, औरों को तो हानि पहुंची परन्तु इसने लाभ उठाया।

राजपूत बेचारे इज्जत के लिए मर जाते थे या बंश गत रीति भान्ति के आधीन थे किन्तु जयसिंह अवसर को पहचानने वाला मनुष्य था। जैसा समय आया वैसा ही वह बन गया और नफे में रहा। अम्बर ने धीरे २ बड़ी उन्नति की और जयसिंह की राजिस्थान के बहुत बड़े राजाओं में गणना होने लगी, ३० वर्षीय युद्ध के जोड़ तोड़ में इस ने भी बहुत कुछ भाग लिया था। उसका वर्णन करना इस स्थान पर व्यर्थ है।

परन्तु जिस प्रकार उसने देवती पर अधिकार किया वह उस की बुद्धिमानी का एक बहुत अच्छा उदाहरण है। इस लिए हम उसको यहां अङ्कित किए देते हैं।

अम्बर की सीमा पर एक स्वाधीन रियासत देवती के नाम से प्रसिद्ध थी। उस की राजधानी राजौर पीढ़ी प्रति पीढ़ी से बड़गूजर बंश की राजधानी समझी जाती थी। उन की भी उत्पत्ति कछवाहों ही में है। परन्तु यह अपने आप को बड़े भाई की सन्तान बताते थे और कछवाहों की तरह अपनी बेटियां मुसलमानों को कभी नहीं दी थीं। और इन को घमण्ड था कि हम सांसारिक लाभ की खातिर बे इज्जती अथवा बे गैरती का कोई काम नहीं करते। कछवाहों और बड़गूजरों का इसी कारण से परस्पर मेल मिलाप भी नहीं था।

राजौर का नवयुवक राजा दिल्ली की आज्ञा से बाहर हो गया था, राज का काम छोटे भाई के हाथ में था, जो शेर शिकार खेलने के लिए बहुत बदनाम था।

ऐसी घटना हुई कि एक दिन वह राजा बनशूकर के शिकार में प्रवृत्त था, और खाने में देर हो जाने के कारण मन उत्तेजित हो गया था। उस की भावज नाराज हो गई उस ने ताना मार कर कहा, आप ऐसी जल्दी में हैं जैसे जयसिंह पर भाले से वार करने जा रहे हैं ?

अल्पायु राजपूत इस ताने को सुन कर आपे से बाहर हो गया और भोजन करने के बिना ही घर से चला गया और अपनी भावज से कह गया कि जब तक मैं जयसिंह पर भाले से

वार न कर लूंगा तब तक अब तुम्हारे हाथ का खाना न खाऊंगा, केवल दस सवार उसके साथ थे और वह राजौर के फाटकों से अम्बर की तरफ चल पड़े।

कुछ महीनों तक नगर वालों ने देखा कि एक अपरचित (अजनबी) मनुष्य शहरपनाह के बाहर प्रायः इधर उधर घूमता रहता है, और वह सिर से पांव तक हथियार बांधे रहा करता था, परन्तु उसको इसी घात में बहुत समय लग गया, धन सम्पद् खर्च हो जाने के कारण उसने साथियों को एक २ करके पृथक कर दिया, अन्त में घोड़ा तक बेच डाला वह बराबर ताक में लगा रहता था, परन्तु अवसर नहीं पाता था, निर्धनता ने उसे यहां तक बेबस किया कि उसने अपने हथियार तक बेच डाले, एक दिन ऐसा समय आया कि उसके पास सिवाय एक भाले के और कुछ सामान नहीं रहा, परन्तु फिर भी उसने अम्बर की शहर पनाह को नहीं छोड़ा, उस का शरीर दुबला हो गया, आंखें दुर्बलता से धस गई थीं। जब और कुछ नहीं रहा तब उसने आधी पगड़ी बेच डाली और उसके मूल्य से अपना पेट पाला परन्तु फिर भी अपनी प्रतिज्ञा में अटल रहा।

उस दिन जयसिंह पेचदार गली से शहर के बाहर निकला, युवक की आंख उसकी पालकी पर लगी हुई थी, उसने भाला सम्भाला और जयसिंह पर वार कर दिया। सिपाहियों ने उस को वहीं समाप्त कर दिया होता किन्तु राजा ने कहा खबरदार उस पर हाथ मत चलाओ, जीवित कैद करके अम्बर में ले आओ।

जब अंबर में जयसिंह के सिपाहियों ने उसे खड़ा और

जयसिंह ने उस से प्रश्न किया कि तू कौन है ? तो उसने साफ़ उत्तर दिया कि मैं देवती का बड़गूजर हूं। मैंने तुम पर इस लिये वार किया कि मेरी भावज ने ताना मारा था चाहे मुझे बध कर दो चाहे मुझे छोड़ दो, कई महीनों से मैं तुम्हारी ताक में लगा हुआ था, आज तीन दिन हुए मैंने अन्न जल नहीं किया अन्यथा मेरा भाला काम किए बिना न रहता।

जयसिंह ने उसको जल्लादों के हवाले करने के स्थान में उस से कृपा पूर्वक बात चीत की और उसको स्वतन्त्र करके अच्छे वस्त्र पहन कर अच्छे घोड़े पर सवार किया और पचास आदमियों के साथ राजौर को वापस भेज दिया।

जब वह लड़का घर पहुंचा उसने अपनी भावज से सारा वृतान्त कह सुनाया उसने लानत मलामत करके कहा "तुम ने अच्छा नहीं किया, जहरीले सांप को छोड़ना कभी उचित नहीं था यह चिरकाल से चाहता था कि लड़ाई का बहाना मिल जाय अब राजौर की नींव (बुनियाद) में सब मुच पानी दे दिया गया," परन्तु सोचने अथवा विचारने का समय नहीं रहा था, लानत मलामत करने से क्या लाभ हो सकता था, स्त्रियां और बालक अनूप नगर में बड़े भाई के पास भेज दिय गए, यह नगर गंगा के तट पर बसा हुआ है, देवती के किले में खाने पीने की सामग्री एकत्र करली गई, और राजौर को रात दिन जयसिंह के आक्रमण का भय रहने लगा।

शत्रु को विदा करने के तीसरे दिन पश्चात् जयसिंह ने सरदारों को सभा में बुला भेजा और अपने मौत से बचने का वृत्तान्त कह सुनाया, और दरबारियों को पान देना चाहा

और युद्ध की तैयारी करने की आज्ञा सुनाई। परन्तु उपस्थित जनों में से किसी ने बीड़ा उठाना स्वीकार नहीं किया, मोहन सिंह नथावत के सरदार ने जिस की बहिन के कटु बचनों से यह सब आपदा खड़ी हुई थी इस युद्ध के विरुद्ध सम्मति प्रगट की उसने कहा बड़गूजर का सरदार दिल्ली के बड़े सरदारों में से है और इस समय दिल्ली के युद्ध में लगा है, यदि कहीं बादशाह को यह समाचार मिल गया कि राजा की गैर हाजरी में देवती पर धावा किया गया तो फिर अम्बर के लिए अच्छा न होगा, दूसरे सरदारों ने भी यही सम्मति प्रगट की और जयसिंह ने मन में क्रोधित होकर दरबार समाप्त कर दिया।

एक मास के पश्चात् फिर दरबार हुआ और देवती का बीड़ा रक्खा गया इस दफा भी लोगों ने इन्कार करदिया तब फतह सिंह बनबीर का पोता जो बहुत छोटे पद का सरदार था और मुशकिल से डेढ़ सौ आदमी ला सकता था, उठ खड़ा हुआ। पांच हजार सवार उस को सौंपे गए और यह देवती पर धावा करने के निमित्त चल पड़ा सिवाय जयसिंह के और किसी को उस का जाना अच्छा नहीं मालूम हुआ।

बड़ गूजर का सरदार हमेशा से बे परवाह था। राजौर से निकल कर सब लोग मेला देख रहे थे, और जब वह हंसी खेल में लगे हुए थे अम्बर के दूतों ने फतहसिंह बनबीर के पोते के आने की खबर सुनाई।

नादान लड़के को तजुर्बा नहीं था उस ने दूतों के बध करने की आज्ञा दी, उसके पश्चात् ही उस के साथी कैद कर लिये गए और अम्बर की सेना ने उनका सब का काम वहीं

समाप्त कर दिया, राजौर ले लिया गया और कछवाही रानी ने अपनी अनुचित वाणी पर लज्जित होकर आत्मघात कर लिया

बदला लेने वाली सेना ने मरे हुए रईसों के सिर काट कर रुमाल में बांध कर अपने घोड़ों की जीन से लटका लिया और अम्बर की ओर चल पड़े, जयसिंह ने सरदार बड़गूजर का सिर मांगा वह उस के आगे रक्खा गया, जयसिंह का हृदय अत्यन्त प्रसन्न हुआ, परन्तु जब मोहनसिंह नथावत ने अज्ञान और चतुर लड़के का रूप देखा, उनकी आंखों से आंसू निकल पड़े और देवती की अज्ञानता पर उसको शोक हुआ जयसिंह ने क्रोध से उस की ओर देख कर कहा "पूरे एक मास तुम्हारे आगा पीछा करने से बदला लेने में विलम्ब हुआ तुम उस समय नहीं रोए थे जब मेरे ऊपर भाले से वार किया गया था।

बूढ़ा सरदार जिसने जयसिंह को गद्दी लाभ करने में सहायता दी थी बेइज्जती के साथ अम्बर के इलाके से निकाल दिया गया, वह उदयपुर चला गया और मेवाड़ के राना की सेना मैं मर्य्यादा पूर्वक रहने लगा, राजौर का हत भाग्य राजा फिर लौट कर देवती में नहीं आया, और टाड साहब के समय में उस की सन्तान अनूप नगर में जागीरदार की भान्त बसी थी।

इस प्रकार से जयसिंह ने अम्बर के राज्य को विस्तीर्ण किया, यद्यपि उसके अधिकार करने की विधि अनुचित अवश्य थी तथापि वह बुद्धिमान और शक्ति शालि राजा हुआ है, उसने जयपुर और अम्बर के किले को जो पहाड़ की चोटी

पर बना है रद्द किया, उस की इमारतें जैनियों के समान थीं जैनियों पर विशेष कृपा किया करता था वह हिन्दू मुसलमानों पर भी दया करता था यदि उन में किसी प्रकार की योग्यता होती थी ज्योतिष विद्या में जयसिंह की समता के मनुष्य दुनियां में कब थे।

सौभाग्य से अपने और सहयोगियों की तरह वह निर्धन नहीं था, और जहां २ वह रहता था वहीं उसकी आकाश लोचना (रसदगाह) मौजूद थी, दिल्ली उजैन, बनारस, और जयपुर की आकाश लोचनाएँ उसकी स्मृति हैं, इन में प्रायः रात २ भर उस को सितारों की चाल देखने का अवसर होता था, सातवर्ष लगातार निरीक्षण करने के पश्चात् उसने ज्योतिष के विषय में बहुत सी नई २ बातें प्रगट की थीं, जब उसको पादरियों के द्वारा मालूम हुआ कि पुर्तगाल में भी ज्योतिषी हैं तो उसने शाह एमानवल के पास दूत भेजकर डीलाहायज साहब प्रसिद्ध ज्योतिषी की पुस्तक मंगाई और उस की भूलों का संशोधन किया, ज्योतिष के औज़ार अपेक्षाकृत अच्छे नहीं थे, परन्तु उसके अपने बनाए हुए औज़ार बहुत अच्छे थे उनहीं की सहायता से उसको अनुसन्धान में कृत्कार्य्यता हुई थी, परन्तु यूरुप की विद्वता को वह फिर भी असन्मान की दृष्टि से नहीं देखता था, उसी की आज्ञा से उकलैदिस, इल्म मुसल्लस आदि गणित की पुस्तकों का भाषा में अनुवाद किया गया उसका पुस्तकालय भी बहुत बड़ा था, और यदि उसके प्रतिनिधियों ने बरबाद न कर दिया होता तो आज वह अद्वितीय भण्डार प्रमाणित होता।

राजा होकर वह फिर भी नेक और न्यायकारी था उसने अपने खर्च से यात्रियों के लिए विविध प्रान्तों में सरायें बनवाईं, विवाह के अनुचित खर्च रोकने के निमित्त नियम प्रचलित किए, क्योंकि उसके समय बहुधा राजपूत निर्धनता के कारण कन्याओं का विवाह नहीं कर सकते थे, और उन को बाल्यकाल में ही गला घोंट कर मार डालते थे, वह मदिरा भी बहुत पीता था, जिस के कारण उस का स्वभाव कभी २ बहुत बिगड़ जाता था, फिर भी उसने चालीस वर्ष तक राज्य किया।

पड़ोस की रियास्तों के साथ सुलह करने में सदैव उसे कृतकार्य्यता रही, मुगल बादशाह उसको "सवाई" कहा करता था क्योंकि ज्ञान बुद्धि में वह प्रत्येक मनुष्य से सवाया था, सवाई की उपाधि आज तक उसके वंश में चली जाती है। दो अवसरों पर जयसिंह को अपने से अधिक बुद्धिमान और चतुर मनुष्यों से पाला पड़ा था, जिन का वह लोहा मान गया था और दोनों ही अवसरों पर वह स्त्रियां थीं।

जयसिंह की बहिन बुद्धसेन बून्दी के राव को ब्याही थी, उस से सन्तान उत्पन्न नहीं हुई थी, वह बेचारी सदा दुखित रहा करती थी, उसकी दूसरी रानी जो मेवाड़ की राज कुमारी थी उस से दो पुत्र उत्पन्न हुए थे, यह और भी दुःख का कारण था, निदान उस को सदा ईर्षा की अग्नि में जलना स्वीकार नहीं था, एक दिन जब राव बून्दी बाहर गया हुआ था और राजा कोटा से लड़ रहा था, कछवाही रानी ने गर्भवती होने का बहाना किया और जब बुद्धसेन लौट आया तो

पुत्र उत्पन्न होने की बधाई सुनाई।

राव इस समाचार से प्रसन्न नहीं था, उस को निश्चय था कि यह लड़का न तो रानी का है और न उस का, बेचारा चुप था, संयोग से जयसिंह अपने जीजा से मिलने आया और उस ने रानी के सन्मुख इस छल कपट का उलहना दिया।

जयसिंह ने क्रोधित होकर बहिन से प्रश्नोत्तर करना आरम्भ किया. रानी ने देखा कि मामला बिगड़ा हुआ है परन्तु वह दृढ़ स्वभाव थी उसने महाराजा को खूब खरी सुनाई उसको दरजी का पुत्र बताया, दामन पकड़ लिया और सम्भव था कि यदि जयसिंह वहां से भाग न जाता तो उसके कलेजे में कटार भोंक दी जाती।

एक और अवसर पर स्वयम उस की रानी कोटा की राज कुमारी ने बहुत लज्जित किया था, यह रानी बहुत उग्र भावी थी, और इसमें हाड़ा राजपूतों के सारे गुण वर्तमान थे, जयसिंह की और सब रानियां दिल्ली की बेगमाओं की सी पोशाक पहना करती थीं परन्तु कोटा वाली रानी अपने देश की सादा पोशाक को प्रिय समझती थी, किन्तु उसके पहनावे को देख कर दूसरी रानियां हंसा करती थीं, वह इस बात की कुछ परवाह नहीं करती थी, एक दिन वह महाराजा के पास अकेली बैठी हुई थी, वह उस के वस्त्रों के विषय में कटाक्ष करने लगा थोड़ी देर तक तो रानी ने सन्तोष किया, परन्तु जब राजा ने कैंची लेकर उसके लम्बे और ढीले वस्त्रों का कतर व्योंत करना चाहा, तो रानी की क्रोधाग्नि भड़क उठी, वह अपनी जगह से उठ खड़ी हुई और उस की कमर

से कटार खींच कर कहा "खबरदार ! मैं जिस वंश की लड़की हूं वह इस प्रकार का मखौल नहीं करते, परस्पर सन्मान का ध्यान हर समय आवश्यक समझा जाता है, यदि तुम ने फिर मेरा अपमान किया तो देख लोगे कि कोटा की राजकुमारी को जो तलवार चलाने में निपुणता है वह अंबर के राजा को कैंची चलाने में नहीं है"।

क्षमा प्रार्थना करने पर भी रानी की क्रोधाग्नि शान्त नहीं हुई उसने कहा "आगामी मेरे कुल की किसी राजकुमारी की ऐसी मान हानि न की जाय, मैं सौगन्ध दिलाती हूं कि कोटा और अम्बर के मध्य सदा के लिए विवाह कार्य्य बन्द कर दिया जाय"।

सन् १७४३ ई० में जयसिंह का देहान्त हुआ, तीन रानियां उसके साथ सती हुईं, अयोग्य प्रतिनिधियों ने अम्बर को फिर तुच्छ और रद्दी बना दिया, उसका नालायक पोता जगतसिंह जो राजकुमारी कृष्णा से विवाह करना चाहता था इतना अप-व्ययकारी और विषयी निकला कि समस्त खजाना खाली कर डाला, दरबार आम की चान्दी की छतें आदि नंगी कर दी गईं, आधे से अधिक पुस्तकालय की पुस्तकें एक मुसलमान वेश्या को दी गईं, और मूल्यवान लिखी हुई पुस्तकें जयपुर के गली कूचों में निरादर के साथ बेची गईं।

देश प्रेम का ध्यान रहे नित मन में,
सेवा करो जब लग प्राण रहें इस तन में।
उद्योग करो तुम साहस कभी न छोड़ो,
ईशान देव कह धर्म्म से मुख ना मोड़ो।

बूंदी के बहादुर हड्डों के वृत्तान्त ।

(२२)

घाटी के सरदार

छन्द आल्हा

चले सिरोही बूंदी वाली कोता खानी चले कटार ।
तेगा चटके बरदवान का धरती झड़ २ परें अंगार ॥
कटें भसुराडा गज हस्तिन के कल्ले कटें बछेड़न केरि ।
कटें शूरमा दल के भीतर धरती गिरें घुमेरि घुमेरि ॥
बहुतक क्षत्रिय भागन लागे रामानन्दी तिलक रमाय ।
हमें न मरियो हमें न मरियो हम तो हरद्वार को जांय ॥

राजिस्थान के मध्य में एक समतल प्रदेश है, जिस का नाम प्राचीन समय से पटहड़ चला आता है किसी समय में यह स्वतन्त्र और स्वाधीन मनुष्यों का निवास स्थान था यद्यपि पहले नाम मात्र राना मेवाड़ के आधीन था, किन्तु जब से अलाउद्दीन ने चित्तौड़ को तहस नहस किया तब से यह पूर्णतः स्वतन्त्र हो गया। न किसी राजा के आधीन रहा और न किसी नियम की पाबन्दी की, हर जगह ऊंची पहाड़ी अथवा उभरे हुये पठानों के ऊपर अब भी पुराने किलों के खण्डरात दिखाई देते हैं, जो उनके प्राचीन ऐश्वर्य्य व वैभव को स्मरण कराते हैं। यहां जो हथियार बन्द राजपूतों का दल राज करता था उनको घाटी के सरदार की पदवी दी गई थी। और यह पदवी वास्तव

में अनुचित न थी क्योंकि घाटी के लोग सच मुच बड़े बहादुर और शूरमा थे।

इन किलों के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की कहावतें प्रसिद्ध हैं। उक्त क्षेत्र की पश्चिम दिशा में मेवाड़ की ओर कांटेदार झाड़ियों और घने वन में बोमोदा का किला है जिस के आधीन चौबीस किले थे परन्तु अब वह सब गिरे पड़े हैं। दर्शक यात्रियों को अब भी किले के भीतर और बाहर तीन मन्दिरों और एक दालान के चिन्ह दिखाई देते हैं। एक चटान के तले अब भी देवी का मन्दिर बना हुआ है जो भवानी माता कहलाती थी। और जिसको मूर्ख हड़ पहाड़ और किले की रक्षक समझते थे।

बोमोदा को शायद चौदहवीं शताब्दी में किसी हड़ सरदार ने बनवाया था। यह हड़ जाति चौहान राजपूतों की [illegible] शाखा है। जो आर्य्या वर्त के छत्तीस राजपूत घरानों में सब से श्रेष्ट समझे जाते हैं। और हड़ उन से भी विशेष समझे जाते हैं। शूरता, बीरता, वफादारी आदि में कदाचित ही कोई दूसरा उनसे बढ़ चढ़ कर मिलेगा उन में राजपूतों के गुण कूट २ कर भरे होते थे। स्त्रियां तक बहादुर और साहस वान होती थीं। और जहां कहीं किसी स्त्री ने अपने समय के इतिहास में कोई विशेष कार्य्य किया है वह साधारणतः हड़ जाति की स्त्री पाई गई है।

बोमोदा के पहले स्वामी ने जो पटहर पर शासन करता था नगर बसाए और किले बनवाए थे उस के पश्चात् उसके बारह बलवान लड़कों ने उस के काम को उसी प्रकार प्रचलित रक्खा। उन में से राव देवा पटहर का राजा कहता था

और वह इतना वीर और योधा था कि आस पास के रज-वाड़े उस का नाम लेने से कांपते थे। उसकी प्रशंसा दिल्ली तक पहुंची थी और मुगल बादशाह को भय हुआ कि कदाचित मेवाड़ के खण्डरात में एक और शक्ति शाली राजपूत रियास्त स्थापन हो जाय। थोड़े दिन के पश्चात् बादशाह ने उस को दिल्ली के दरबार में बुला भेजा। राव इनकार न कर सका, यद्यपि वह जान्ता था कि दिल्ली से कुशल पूर्वक आना कठिन है तथापि उसने बोमोदा अपने बड़े बेटे को सौंप दिया और आप दिल्ली में चला आया।

राव देवा के पास एक अद्भुत घोड़ा था। जिसकी तुलना का बादशाह के हयशाला में भी कोई घोड़ा नहीं था। उस घोड़े का बाप राना मेवाड़ के हयशाल में था, उस घोड़े में यह गुण था कि प्रायः पहाड़ी नदियां को कूद कर लांघ जाता था, और उस के सुम गीले नहीं होने पाते थे, उस की मां पटहर की घोड़ी थी। बादशाह ने जिस समय इस घोड़े को देखा उस के मुंह में पानी भर आया। पहले शंकेत और इशारों से प्रार्थना की गई परन्तु जब राजपूत ने एक नहीं सुनी तब बादशाह ने रावदेवा को जो उसका महिमान था विष दिला कर उसे बध करना चाहा। राव देवा ने देखा कि मैं मौत के मुंह में आ फंसा हूं। उस ने धीरे २ अपने परिवार के एक २ मनुष्य को घर भेज दिया और स्वयम अकेला दिल्ली में रह गया।

एक दिन बादशाह बाला खाना पर बैठा हुआ था, नीचे एक सवार हथियार बन्द दिखाई दिया। यह राव देवा था

और अपने विशेष घोड़े पर सवार था, उस ने भाले को उठा कर सलाम किया और ज़ोर से पुकार कर कहा "राजपूत से तीन चीजें घोड़ा, स्त्री, और तलवार कभी न मांगनी चाहिए" यह कह कर उसने घोड़े को ऐड़ लगाई, यह जा, वह जा दो चार लमहों में आंखों से अलोप हो गया। पठानो ने पीछा किया परन्तु राव देवा के घोड़े की गर्द को भी किसी का घोड़ा न पहुंच सका।

राव देवा कुशल सहित पटहर पहुंच गया, यहां पहुं-चने पर उसका लड़का बोमोदा के किलेकी पश्चिम ओर चला गया, यहां अब बून्दी के इर्द गिर्द के निवासी राव गंगू नामी डाकू के हाथ से बहुत दुःखी थे उसने सब का नाक में दम कर रक्खा था। चम्बल नदी के पूरब पहाड़ों के ऊपर उस ने राम गढ़ का किला बनाया था, यहां से कभी २ वह नीचे उतर आता और राजपूत तथा मीना दोनों जातियों को कर देने के लिए दुखी करता। जंगल में दोनों ओर उनका आक्रमण रोकने के लिए इन लोगों ने दीवारें बना रक्खी थी, परन्तु उसके आक्रमण और अत्याचारों से फिर भी सुरक्षित नहीं थे। प्रति दूसरे मास पूरनमासी की रात्रि को राव गंगू दीवार पर चढ़ आता और यदि कर (खिराज) के थैले को वहां न पाता, तो उन बेचारों पर तरह २ के अत्याचार करता।

राव देवा ने इस वृतान्त को सुना उस को बड़ा क्रोध आया उसने कहा मेरे होते कौन ऐसा है जो उधम मचावे। दूसरी पूरनमासी आई गंगा भाला लेकर दीवार पर चढ़ आया, उसी समय राव देवा उसका सामना करने के लिये सामने आ डटा।

ऐसा युद्ध अभी कदाचित हुआ होगा । बल, वीरता, साहस में दोनों एक से थे । देवा का घोड़ा गजब का था, परन्तु राव गंगू का भी कुछ कम नहीं था, वह भी नदी पार का घोड़ा था और अब तक सैंकड़ों लड़ाइयों में वह नदी नाले फलांगता हुआ अपने मालिक को सब प्रकार की आफतों से बचा ले जाता था । । दोनों शूरमाओं में गुत्थम गुत्था की नौबत पहुंची । गंगू ने देखा शत्रू प्रबल है मेरा वार खाली जाता है । लाचार भागने की चेष्टा की, परन्तु देवा ने भागते हुए का भी पीछा किया । गंगू पूरब की ओर से रामगढ़ की ओर भागा जहां उसका किला था, और उन पहाड़ी टीलों पर पहुंचा जो चम्बल नदी के किनारे है । देवा ने अपने मन में कहा कि वहां अवश्य ठहरेगा । और मुझ से दूबदू लड़ाई होगी । परन्तु गंगू उसी समय अपने घोड़े समेत टीले की चोटी से नदीमें गिर पड़ा और जल के भीतर जा छुपा । राव देवा ने सोचा कि शत्रू ने मेरे भय से पानी में कूद कर आत्मघात कर लिया हैं। वह ऐसे बहादुर शत्रू की मौत पर शोक करने लगा, और अपने घोड़े को थाम कर नीचे नदी की ओर देखने लगा । नदी बाढ़ पर थी उसने देखा गंगू अपने घोड़े समेत जल के ऊपर आगया और थोड़ी देर में कुशल सहित दूसरे किनारे पर जा पहुंचा । देवा ने कहा वाह क्या कहना है ! जरा अपना नाम तो बतादे "?

उसने कहा "मैं राव गंगू हूं और तेरा क्या नाम है "?

इस ने कहा "मैं देवा हूँ आज से हम दोनों शत्रुता करने के स्थान में भाइयों की तरह रहेंगे और चम्बल नदी हम दोनों के बीच में मध्यवर्ती रहेगी ।

इस प्रकार राव देवा और राव गंगू के बीच में मित्रता स्थापन हुई। अब लुटेरों और डाकुओं का भय नहीं था। राव देवा ने बून्दी के नगर की नींव (बुनियाद) डाली। और यहां उसको सुख और शान्ति प्राप्त हुई।

बोमोदा पर उसके पुत्रके पश्चात पोता गद्दी पर बैठा उसका नाम आलोहड़ था, उसके विषय में बहुत सी कहावतें प्रसिद्ध हैं। सच्चे राजपूतों की तरह वह वीरता और साहस का रूप था। एक बार यदि उसने बचन दे दिया तो मौत का भय अथवा पुरस्कार का प्रलोभन उसे मोड़ नहीं सकता था।

एक दिन आलोहड़ शिकार खेल कर जंगल से आ रहा था, राह में उसको एक भाट मिला, और उस ने आशीर्वाद दिया। रीति के अनुसार भाट को कुछ न कुछ देना चाहिए था, अस्तु आलोहड़ ने पूछा तुम क्या चाहते हो? भाट ने सोना चान्दी, ज़र जवाहिर हाथी घोड़ा, लेने से इनकार कर दिया और कहा आप अपनी पगड़ी मुझे दे दो आलोहड़ को यह प्रार्थना अनुचित लगी परन्तु भाट ने कहा कि इनकार करोगे तो मैं शाप दूंगा। यद्यपि आलोहड़ बड़ा निडर और शूरवीर था तथापि ब्राह्मण के शाप के नाम से कांप उठा उसने पगड़ी उतार कर भाट को अर्पण की, और भाट ने उस को अपने सिर पर रख कर घर का मार्ग लिया।

अभी बहुत दिन नहीं बीते थे आलोहड़ बोमोदा दरबार में बैठा हुआ था, एक कङ्गाल मनुष्य उस के सन्मुख आया वह फटे पुराने कपड़े पहने हुए था और पगड़ी को कांख

(बगल) में दबाए हुए था । और चिल्ला कर मारवाड़ के राजा से बदला लेने की प्रार्थना करने लगा ।

कारण यह था कि वह आलोहड़ से विदा होकर मन्दौर में जो मारवाड़ की राजधानी थी गया और दरबार में मारवाड़ नरेश के सामने जा कर सलाम किया परन्तु सलाम करने से पहले उसने दाहने हाथ से पगड़ी उतारी और बाएं हाथ से सलाम किया । राजा ने उसी से प्रश्न किया कि तूने बांऐं हाथ से क्यों सलाम किया ? उसने उत्तर दिया "महाराज ! मेरे सिर पर आलोहड़ की पगड़ी थी और यह ऐसा शूरमा है कि उसकी पगड़ी को किसी मनुष्य के सामने झुकाना उचित नहीं, एवम् मैंने दहने हाथ से उसे उतारा और बाऐं हाथ से सलाम किया ।" यह सुन कर राजा को क्रोध आया उसने एक ऐसी छड़ी मारी कि पगड़ी उस के हाथ से गिर पड़ी भाट उन्हीं पांओ चल कर बोमोदा आया और इस मान हानि के बदले की प्रार्थना करने लगा ।

जब आलोहड़ को यह वृतान्त मालूम हुआ उस को बहुत दुःख हुआ उसने भाट से कहा तुम धन धरती सोना चांदी, हाथी घोड़े लेते, तुमने यह चीथड़ा लिया और अब मेरी जान के लिए आपदा लाए हो ।

आलो ने भाट को तो यह कहा परन्तु हृदय उस का भड़क उठा इस अपिमान का बदला न लेना भी उस के लिए लज्जा की बात थी उसी समय पांच सौ मनुष्य जो उस कुल के थे बोमोदा बुलाए गए, मारवाड़ के राजा से बदला लेना अवश्य था, परन्तु इन को यह आशा नहीं थी कि वह फिर

अपने पहाड़ी घरों को लौट आवेंगे, तथापि सब अपने सरदार की मानहानि सुनकर मरने को तैयार हो गए, मैदान में मर मिटने की सौगन्दें खाई। और अपनी स्त्री तथा बच्चों से विदा हो कर मारवाड़ की ओर चल पड़े, आलोहड़ का नवयुवक भतीजा बोमोदा की रक्षा के लिए रह गया, वह भी जाने को तैयार था घर में रहना नहीं चाहता था परन्तु आलोहड़ ने उसको घर के भीतर बन्द कर के कुफल लगा दिया था ता कि कम से कम उस के वंश का कोई मनुष्य जीता तो रह जाय।

राजा मारवाड़ को लोगों ने समझाया कि महाराज सावधान रहना ऐसा न हो कि आलोहड़ आपको हानि पहुंचावे, क्यों कि वह साधारण मनुष्य नहीं है परन्तु उसने कुछ भी परवाह न की उलटा हंसता रहा और कहने लगा कि एक तुच्छ सरदार की क्या सामर्थ्य कि जंगल के बादशाह के साथ लड़ाई कर सके, मैं सौगन्द खाता हूं कि मेरे राज्य की धरती के जिस विभाग पर वह अपना पांव रक्खेगा मैं उसे ब्राह्मणों को दान कर दूंगा, रात्रि के समय मारवाड़ नरेश गहरी निद्रा में सो रहा था, फाटक पर मारु डंके का शब्द सुन कर वह जाग पड़ा, उस को आश्चर्य हुआ ऐसा कौन शूरमा है जिस ने मन्दौर के फाटक पर डंका बजवाया, लोगों ने कहा बोमोदा का आलोहड़ आपहुंचा है और वह अपने मनुष्यों समेत किले में घुस आया है और अपने अभिमान का बदला लिया चाहता है।

ऐसे भयानक समय में मारवाड़ के राजा ने प्रमाणित कर

दिखाया कि उस में भी राजपूती रुधिर वर्तमान है। उस की माता ने ताना मार कर कहा "क्या अब भी तू उस धरती को ब्राह्मणों को दान कर देगा जिस पर आलोहड़ ने पांव रक्खा है" उस ने कहा "हां मैं अब भी उसे दान कर दूंगा और उसी समय अपने आदमियों को बुला कर कहा पांच सौ हड़ों का सामना पांच सौ मनुष्यों से किया जाय, विशेष २ योधा छांटे गए। लड़ाई देखने के लिये भीड़ एकत्र होगई लड़ाके वीर आमने सामने आ डटे। इतने में एक अकेला सवार हड़ो की सेना में घोड़ा दौड़ाता हुआ आ पहुंचा। उस का घोड़ा थक गया था, झाग मुंह से निकल रही थी, इस सवार की आयु अभी बहुत थोड़ी केवल दस बारह वर्ष के लग भग थी, उस ने राजा के सन्मुख सन्मान पूर्वक सिर झुका कर कहा "सब से पहले मुझ को मारवाड़ियों से लड़ने की आज्ञा दी जाय, "समस्त हड़ आश्चर्य्य दृष्टि से उसकी ओर देखने लगे क्योंकि वह जल्दी उसे पहचान न सके, यह वह शूरमा बालक था जिस को आलोहड़ ताले के भीतर बन्द करके बोमोदा में छोड़ आया था, निदान उस के चचा ने क्रोधित होकर कहा अज्ञान बालक। तू यहां किस लिये आया है, क्या तू हड़ों का वंश नाश करना चाहता है।

बालक ने कहा इसकी कुछ परवाह नहीं है युद्ध के समय मुझे तुम्हारा साथ देना आवश्यक है राजपूत बालक होकर मैं घर में नहीं बैठ सकता, कितने लज्जा की बात होगी और लोग मुझ को चिरकाल तक कहते रहेंगे कि युद्ध के समय मैं घर में छिप कर बैठ रहा था, मैं कभी लड़ने के बिना नहीं रह सकता"।

उस के बचन सुन कर हड़ सेना में साधारण जोश फैला, वह लड़ने के लिए फेंट बांधने लगा, सब हड़ों ने एक स्वर हो कर कहा "महाराज! इसे लड़ने दो इस पर ईश्वर का पंजा है, कोई इस को आघात न पहुंचा सकेगा और न इस का बाल बीका होगा जिन पर ईश्वर की दया होती है उन्हीं में ऐसी बेबाकी और बीरता देखी गई है।

पहला सामन्त जो मारवाड़ की सेना से निकला बहुत तजुर्बेकार सिपाही था वह देर तक लड़के की बीरता को सराहता रहा, फिर वार करने के लिए एक दूसरे की ओर देखने लगे कि पहला वार कौन करे निदान इस तजुर्बा कार सिपाही के कहने से बालक ने तलवार उठाई और एक ही वार में मारवाड़ी शूरमा का सिर भुट्टे की तरह उड़ा दिया एक २ करके कई मारवाड़ी योधा इस बालक के हाथ से मारे गए अब इस के सामने आने से लोग डरने लगे क्योंकि सच मुच इस के सिर पर ईश्वर का पंजा दिखाई दे रहा था, परन्तु शोक? कि अन्त में वह भी मारा गया।

उसका धरती पर गिरना था कि सब हड़ों की आंखों में खून उतर आया, निकट था कि सब हड़ तलवार सौन्त कर मारवाड़ियो पर टूट पड़ें कि इतने में मारवाड़ नरेश की रानी ने लड़ाई को रोक दिया, उसने कहा "कितने शोक की बात होगी यह बीरों का दल यूं ही व्यर्थ सत्यानाश कर दिया जाय और हड़ों की वीर तथा बहादुर जाति पूर्णतः नष्ट कर दी जाय, पगड़ी के अभिमान का पूरा बदला हो चुका अब उचित है कि राजा अपनी कन्या ऐसे शूरमा को ब्याह दे ताकि उसकी जगह

वैसे ही शूरमा पुत्र उत्पन्न हों जैसे अभी एक रणशूर बालक ने लड़ कर अपने प्राण दिए हैं।

रानी के बचन सुन कर सब प्रसन्न हुए और मारवाड़ नरेश ने आलोहड़ के साथ अपनी कन्या को व्याह दिया और वह आनन्द पूर्वक बोमोदा को चला आया।

इस राज कुमारी के गर्भ से केवल एक कन्या उत्पन्न हुई परन्तु आलोहड़ को आशा थी कि इसकी लड़की की सन्तान मेरे नाम को जीवित रखने वाली होगी. जब वह युवावस्था को पहुंची उस का विवाह एक अच्छे राजपूत के साथ कर दिया, परन्तु उसकी आशा पूरी नहीं हुई और आलोहड़ के वंश में उसके पश्चात् कोई ऐसा मनुष्य उत्पन्न नहीं हुआ जिसका वृत्तान्त अंकित करने के योग्य समझा जा सके।

हड़ों की वीरता की इति श्री इस के साथ ही नहीं होगई, उस भयानक समय में जब कि भाई २ के खून का प्यासा हो गया था, राजपूतो ने राजिस्थान की प्रतिष्ठा को बहुत लज्जा शील अवस्था में पहुंचा दिया था, बाबर और औरंगजेब के समय में भी हड़ों का बन्श बराबर स्वाधीन रहा, उस समय में "घाटी का स्वामी" गुमानसिंह हड़ था, जो मालवा और कोटा के मध्य में किसी पहाड़ी स्थान में रहा करता था, राजा कोटा इन सब इलाकों का स्वामी था और वह स्वयम बूंदी के राज वंश का सदस्य था।

किसी शत्रु ने गुमान के विरुद्ध राजा कोटा के कान भरने आरम्भ किए, परिणाम यह हुआ कि एक दिन उसे दरबार में बुलाया गया, और उसकी रियास्त के अपहरण की

आज्ञा सुनाई गई, घाटी के स्वामी की पदवी किसी और को दे दी गई, गुमानसिंह चुप चाप उदासीनता की दशा में नगर के फाटक की ओर से घर लौटा आ रहा था, उस ने रात्रि के समय देखा कि कोई मनुष्य पालकी में बैठा हुआ जा रहा है, उसके आगे २ एक मश्याल जल रही है और पीछे नौकरों और सेवकों की कतार है, उसने अपने मन में निश्चय किया कि इस पालकी में अवश्य मेरा शत्रु सवार है, उसी समय मश्याल अलग फेंक दीगई और गुमानसिंह के भाले ने पालकी सवार को यमपुरी पहुंचा दिया अन्धेरे में नौकर चाकर चिल्लाने लगे, एक दूसरे पर गिरने लगा गुमान सिंह वहां से चला आया, और फाटक पर पहुंच कर दरबान से कह दिया कि आज राजा का हुकम हैं कि फाटक अभी से बन्द कर दिया जाय, और प्रातःकाल तक न खुलने पावे यह कह कर उसने घोड़े को घाटी की ओर दौड़ाया और अपने किले में पहुंच कर साथियों को बुला भेजा, और प्रथम इस के कि राजा कोटा उस से पूछ ताछ करे वह महाराना मेवाड़ की सीमा में चला आया।

राना ने उस का आदर और सन्मान किया, बहुत दिनों तक वह मेवाड़ में रहा, परन्तु उनका चित्त देश त्यागने के कारण प्रसन्न नहीं था, मन ही मन में वह बराबर कुछ न कुछ सोचता रहा, कुछ दिनों के पश्चात यह किम्वदन्ति मेवाड़ में प्रसिद्ध हुई कि राजा अम्बर कोटा पर धावा करने के लिए जा रहा है, देश की ममता नए सिरे से जाग उठी उसने राना से आज्ञा मांगी कि यदि आज्ञा हो तो मैं अपने प्राचीन राजा की सहायता के लिये

जाऊं, राजा ने स्वीकार कर लिया, और उसने वफ़ादार मित्रों को साथ लेकर जल्दी देश की ओर कूच कर दिया, अम्बर की सेना ने किले को चारों ओर से घेर रक्खा था। किसी ओर से भीतर जाने का मार्ग नहीं था ।

गुमानसिंह ने समीप पहुंच कर मारू डङ्का बजवा दिया अंबर के राजा ने पूछा यह कौन मनुष्य है जो हमारी सेना के निकट आकर युद्ध का बाजा बजवा रहा है? लोगों ने उत्तर दिया यह गुमानसिंह है, राजा ने कहा "गुमानसिंह को सन्मान पूर्वक मेरे पास लाओ, मेरे बाप ने कहा था कि इस ने एक बार बिना किसी हथियार के शेर को मार डाला था, मैं उसको देख कर बहुत प्रसन्न हूंगा।

परन्तु गुमानसिंह ने अपने साथियों से अलग होने से इनकार कर दिया। निदान सब के सब आदर के साथ राजा के सन्मुख पेश किए गए। राजा ने बहुत कुछ प्रलोभन दिया कि अम्बरके साथ मिल जावे, इसके अतिरिक्त राजा कोटा ने उसका निरादर किया था, क्या आश्चर्य अब भी उस की जिन्दगी किसी आपत्ति में फंस जावे, और ऐसा ना भी हो तो भी कोटा से किसी प्रकार की आशा नहीं थी। और कोटा की बरबादी का समय आ चुका था अम्बर के राजा ने पान हाथ में लेकर कहा इस पान के खाने में जितनी देर लगेगी उतने ही अरसे में कोटा मेरे कबजे में आ जायगा"।

अन्तिम शब्द सुन कर गुमानसिंह से नहीं रहा गया। उसने कहा मेरा सलाम लो और मैं आप को मुकाबले के लिए

ललकारता हूं, बीस हजार हड़ अपने सिरों से कोटा की रक्षा करेंगे"।

अम्बर वालों में भी राजपूतों की सी वीरता वर्तमान थी। यद्यपि इन का नाम बदनाम हो चुका था तथापि वह इतने कायर नहीं थे। गुमानसिंह और उसके साथियों को उन्हों ने खीमे से बाहर चले जाने दिया। वह उन के बुलाने से आया था इस समय उसके साथ युद्ध करना अनुचित था अस्तु अम्बर वाले चुपचाप रहे।

कोटा की दीवार के पीछे राजा बैठा हुआ था उसने उच्च स्वर के साथ कहा "घाटी का सरदार आ गया है नौकर भेजो"। नाव भेजी गई और थोड़ी ही देर में उस सरदार ने आकर राजा कोटा को प्रणाम किया जो निरादर के साथ दरबार से निकाला गया था! शोक प्रकाश अथवा कृतज्ञता प्रगट करने का समय कहां रहा था। जिस समय राजा ने अपने वफादार सरदार का प्रणाम लिया उसी समय दूतों ने खबर दी कि शत्रु किले की दीवार तोड़ रहे हैं। गुमानसिंह ने सलाम किया और अपने साथियों समेत किले की फ़र्साल पर चढ़ गया। जब तक सम्भव था उस ने कोटा की रक्षा की, किन्तु कोटा की दशा पूर्णतः नष्ट हो चुकी थी और जब शत्रु भीतर आए गुमानसिंह और उस के साथी मुरदह हो कर पृथ्वी पर पड़े थे। घाटी के सरदार इस वीरता और साहस के मनुष्य थे। शोक!

कैसी दशा हमारी बिगड़ी, विपद है हम पर भारी।
श्री पति दीन दयाल दयानिधि, करो सहाय हमारी।

(२३)

सती की शाप

जो कोइ किसी को दुःख दयेगा,
स्वमय भी सो दुःख पावेगा ।
जो २ कर्म किया मानुष ने,
एक व्यर्थ नहिं जावेगा ॥
(ईशानदेव)

एक बार जब मेवाड़ का राना झील को साफ करा रहा था, तो ऐसी घटना हुई कि कुछ गड़ा हुआ धन और चतुर्भुजी मूर्ति मिली। मूर्ति का एक हाथ आकाश को ओर उठा हुआ था, और दूसरा धरती की ओर, और एक सामने की ओर संकेत कर रहा था।

राना ने अपने राज्य के सब भाटों को बुला भेजा, और जब वह सब आ गए तो उसने प्रश्न किया कि इस मूर्ति के हाथ इस प्रकार क्यों बने हैं? परन्तु उन में से किसी में भी ऐसी ऐसा योग्यता न थी कि उसका तात्पर्य समझ सकता और न कोई उस का कारण बता सका, राना बहुत क्रोधित हुआ, और उसने सब को अपने देश से निकाल दिया।

कुछ दिनों के पश्चात् एक भट चित्तौड़में आया और साहस के साथ यह बात प्रसिद्ध कराई कि मैं उस मूर्त्ति का यथार्थ कारण बता सकता हूं, लोग उसको राना के पास लाए उसने कहा "देखो ऊपर का हाथ संकेत करता है कि स्वर्ग अर्थात्

आकाश में केवल एक राजा है जो इन्द्र कहलाता है,इसी प्रकार नीचे को एक हाथ संकेत करता है कि पाताल में भी एक ही राजा है और इसी प्रकार तीसरा हाथ प्रगट कर रहा है कि "मेवाड़ में एक ही राजा है जो स्वर्ग और पाताल के मध्य में है और वह महाराना है" ।

सब लोग यह उत्तर सुन कर बहुत प्रसन्न हुए और राना ने उसे बहुत कुछ पुरस्कार देना चाहा, परन्तु उस ने कहा मैंने सौगन्द खाई है मैं किसी से दान नहीं लेता आप इतना कीजिए कि जिन भाटों को देश से निकाल दिया है उन को फिर लौट आने की आज्ञा दीजिए, यह प्रार्थना स्वीकार की गई और भाट आदर के साथ युवराज के साथ रहने लगा।

युवराज एक दिन अपने पिता के दरबार से लौट कर आ रहा था, मार्ग से एक वृद्ध ब्राह्मण मिला जिस का मन मलीन था और उसके हाथ में नारियल था जो राजिस्थान में सदा विवाह की प्रार्थना समझा जाता है, राजकुमार ने पूछा विप्र जी तुम्हारी क्या हालत है ? कहां से आए हो ? और इतना क्यों उदास हो ? ब्राह्मण ने उत्तर दिया 'मैं बून्दी का रहने वाला हूं लल्ला जी वहां का रईस है, अपनी लड़की की शादी राणा से करना चाहता है, मगर राणा ने मन्जूर नहीं किया, और मैं अब शर्म अथवा मायुसी से अपने घर वापिस जा रहा हूं, राजकुमार ने कहा, कुछ ग़म नहीं, यदि मेरा बाप दूसरी शादी नहीं करना चाहता तो मैं इस की लड़की से शादी करूंगा। किसी वीर पुरुष का इस प्रकार अपमान करना बुरी बात है, तूं जा और सरदार से कह दे मेवाड़ के राणा का

लड़का निश्चित समय पर बूंदी आकर तेरी लड़की से शादी करेगा।

जब लल्ला जी ने राजकुमार का संदेशा सुना, दिल में बहुत प्रसन्न हुआ और शादी की तय्यारी करने लगा। शादी का बन्दोबस्त बोमोदा किले में किया गया, और निश्चित दिन बोमोदा पर मेवाड़ का राजकुमार अपने यार दोस्त को साथ लिये हुये वहां आकर उपस्थित हो गया।

सब लोग उत्सव में विराजमान थे। लल्लाजी को इस बात पर नाज़ था कि मेरी लड़की मेवाड़ के राणा से ब्याही जायेगी, उसने भाट को बहुत कुछ इसी खुशी में दान दिया। राजकुमार के भाट को वह सब से मूल्यवान दान देने लगा, घोड़ा जिस का साज़ सोने चांदी का था, और कई प्रकार के ज़र व जवाहरात भाट ने इनकार कर दिया मगर बहुमूल्य वस्तुओं को देख कर उस के मुंह में पानी भर आया, अपनी प्रतिज्ञा को भूल गया, और विवश करने पर उसके पास सब चीज़ें रख दी गईं और मानो उसने स्वीकार करलीं।

विवाह का समय आ गया और निकट था कि दुलहा दुलहिन का गठ बन्धन किया जाय, इतने में रौला मच गया कि 'मेवाड़ का भाट मार दिया गया।' असल बात यह थी कि अपनी प्रतिज्ञा भंग का विचार कर के उसने स्वयम् आत्म घात कर लिया था, राजकुमार इस वृत्तान्त को सुन कर बहुत दुःखी हुआ, वह अपनी जगह से उठ खड़ा हुआ और भाट का बदला लेने की धमकियां देने लगा।

सारे नगर में एक कुलाहल सा मच गया एक ओर तो

राजकुमार मेवाड़ भाट के मारे जाने पर क्रोधित हो रहा था दूसरी ओर बून्दी वाले क्रोध में थे कि राजकुमार चौके पर से क्यों उठ गया और विवाह की रीति पूरी न होने दी, मानो उसने जान बूझ कर बून्दी का अपमान किया, अन्त में परी- णाम यह हुआ कि राजकुमार और उस के साथी क्रोधित होकर किले से निकल कर चले गए और विवाह की रीति पूरी नहीं हुई।

राजकुमार ने सेना ले कर बोमोदा को घेर लिया. परन्तु किला मजबूत था वह एकाएक सर नहीं हो सकता था, राज कुमार बहुत दिनों तक किले को घेरे रहा परन्तु कभी बदला लेने का अवसर नहीं आया, बहुत दिनों के पश्चात बसन्त का दिन आया इस दिन हड़ लोग जंगली शूकर का बलिदान करते थे, लल्ला जी अपने मनुष्यों को लेकर किले से बाहर निकला क्योंकि कुल की रीति पूरी करनी आवश्यक थी, और जब वह शूकर का शिकार कर रहे थे मेवाड़ वालों ने उन पर धावा कर दिया, दोनों ओर के शूरमा खूब दिल खोल कर लड़े परन्तु जब सन्ध्या का समय हुआ तो उन्हों ने देखा कि दोनों ओर के सरदार नहीं हैं वह मैदान में काम आ गए थे।

बोमोदा के फाटक के भीतर दो चिताएं तैयार की गईं एक पर लल्ला जी की रानी अपने पति की लाश को गोद में लेकर बैठी और दूसरी पर उसकी लड़की मेवाड़ के राजकुमार के साथ जलने को तय्यार हुई, जब आग की ज्वाला प्रचण्ड हुई मनुष्यों के दल के दल सती का आशीर्वाद लेने के लिए

झुके। लड़की ने जो विवाह की रीति पूरे होने के बिना सती हो रही थी, लोगों से कहा, आज से मेवाड़ और बून्दी के मनुष्य जब कभी बसन्त के शिकार में एकत्र होंगे उनके लिए कुशल न होगी, राना और राव जब ऐसे अवसर पर मिलेंगे तो उसका परिणाम मृत्यु होगी, और इससे कभी उसको छुटकारा प्राप्त न होगा, इतना कह कर सती स्वर्ग धाम को सिधार गई, लोग उसके सतीत्व की प्रशंसा करते हुए चले गए।

अभी इस घटना को बीते बहुत दिन नहीं हुए थे, कि सती की भविष्य वाणी सत्य हुई। मेवाड़ का राना एक पठान के धावे के पश्चात् अपने राज्य को हद बन्दी कर रहा था, उस ने बून्दी के राजा को दरबार में बुला भेजा, कि मेवाड़ को अपना मित्र और सहायक स्वीकार करे। राव ने इस बात के स्वीकार करने से इनकार कर दिया। और पांच सौ आदमी, नङ्गी तलवारें लेकर रात के समय मेवाड़ वालों पर टूट पड़े और एक २ को मार डाला, राना ने बड़ी कठिनता से भाग कर प्राण बचाए।

क्रोध में आकर राना ने सौगन्द खाई कि "जब तक बून्दी पर अधिकार न कर लूंगा तब तक अन्न जल ग्रहण न करूंगा"। सेना एकत्रित की गई, बून्दी की ओर सिपाहियों ने कूच किया। बून्दी मेवाड़ से ६० मील की दूरी पर थी और किले में रसद की सामग्री बहुत सी मौजूद थी। सरदारों ने कहा आपने बिना विचारे सौगन्द खाई है। बून्दी के सर होने से पहले तो आप भूख ही से मर जायेंगे। राना स्वभाव का हठी था उसने कहा कोई परवाह नहीं मैंने जो प्रण किया है उस पर स्थिर रहूंगा।

सरदार बुद्धिमान थे उन्हों ने कहा राना की प्रतिज्ञा स्थिर रखने के लिए चित्तौड़ के बाहर एक मिट्टी की बून्दी बना ली जाय और उस को सर कर के राना अन्न जल ग्रहण कर ले।

भूख और प्यास से राना व्याकुल हो रहा था उस ने इस तजवीज़ को स्वीकार कर लिया। और जब यह नई बून्दी तैयार हो गई वह धावा करने की इच्छा से बाहर निकला परन्तु अभी उस के पास भी नहीं पहुंचा था कि उस की ओर बन्दूक की गोलियां आने लगीं, कारण यह था कि राना की सेना में एक हड़ सरदार नौकर था जो हिरन के शिकार के लिए बाहर गया हुआ था जब लौट कर आया तो दीवार के नीचे बड़ी भीड़ दिखाई दी। उस ने पूछा यह कैसा मेला लगा हुआ है? लोगों ने बताया कि राना की प्रतिज्ञा स्थिर रखने के लिए नकली बून्दी बनाई गई है। इसे सर कर के राना अन्न जल ग्रहण करेगा। हड़ ने अपने साथियों को एकत्र कर कहा "देखो हम बून्दी के रहने वाले हैं हमारा शरीर बून्दी की मिट्टी से बना है कैसे लज्जा की बात होगी यदि हमारी जन्म भूमि का अपमान किया जायगा इन गिन्ती के मनुष्यों ने मिट्टी के फाटक के सामने सफेद चादर बिछा दी और तलवार हाथ में लेकर उस की रक्षा पर उतारू हो गए। मानो वह असली बून्दी थी और उस के लिए लड़ कर मर गए। राना ने बून्दी वालों की इस कदर देश भक्ति देख कर फिर राव से छेड़ छाड़ नहीं की। और दोनों नरेशों में मित्रता हो गई।

बहुत वर्षों के पश्चात् मेवाड़ और बून्दी के परस्पर शादी

विवाह भी होने लगा और किसी को सती के शाप का ध्यान नहीं रहा।

जिस काल में राना रतन सेन मेवाड़ की गद्दी पर सुशोभित था, उस की रानी सोजा बाईवालिए बून्दी की बहिन थी, और राना की बहिन राव सूरजमल वालिए बून्दी को व्याही थी।

सूरजमल का पिता बड़ा बलवान और शूरमा था। लड़के में भी क्षत्रियपन के सम्पूर्ण गुण वर्तमान थे। अवगुण केवल यह था कि अफीम बहुत खाता था। एक दिन जब वह राना के दरबार में बैठा हुआ था पीनक में आकर वह वहां लेट गया और खर्राटे भरने लगा उसको किञ्चित ध्यान नहीं रहा कि यह दरबार है। सूरजमल को इस प्रकार अचेत सोते देख कर एक सरदार ने उसके कान में सींक डाल दी और अन्य सब कहकहा मार करहंसने लगे।

सूरजमल की आंख खुल गई, उस की आंखें अफीम के नशे से लाल हो रही थीं, उस ने भी अपनी कमर से तलवार खींच ली और मखौल करने वाले सरदार का सिर एक बार से उड़ा दिया, दरबार में सन्नाटा छा गया, सब हंसने के स्थान में उदासीन हो गए।

राना को इस बात से क्रोध आया, प्रथम तो किसी का दरबार में सो जाना नियम के विरुद्ध था दूसरे एक सरदार को इस प्रकार बध करना और भी अनुचित था। मृतक सरदार के पुत्र ने राना के क्रोध को और भी भड़का दिया, और उसके मन में तरह २ के सन्देह, उत्पन्न कर दिए, उसनें कहा राव केवल सोजा बाई की प्रीति से इतनी जल्दी २ मेवाड़ में

नहीं आता बल्कि उस की कुछ और भी इच्छा है, राना उस की ओर चौकना हो गया, और किसी समय में सूरजमल किसी राजपूतनी को जबरदस्ती छीन ले गया था जो राना के साथ विवाहित होने वाली थी, वह मन ही मन में बदला लेने का अवसर ढूंढने लगा।

सोजा बाई भी बहादुर और निडर थी और अपने भाई को बहुत प्यार करती थी, और राजपूत स्त्रियों की तरह इस को भी अपने पिता और भाई की इज्जत का बड़ा ध्यान रहता था, एक दिन उसने पकवान बनाया और पति वा भाई को खाने के लिए बुला भेजा और दोनों को अपने हाथों से परोसा जब वह खाने लगे आप दोनों को पंखा झलने लगी, सूरज मल भूखा था उसने सब का सब आहार झट पट खा लिया परन्तु राना ने बहुत थोड़ा खाया, कौन जाने वह उस समय बीमार रहा हो, सोजाबाई को अपने भोजन बनाने पर बड़ा गर्व था, पति का भली भान्ति भोजन न करना उसको बुरा लगा, और उस के मुख से शब्द निकल गए देखो राव तो शेर की तरह खा रहा है परन्तु राना बालक की तरह आहार से खेल रहा है।

राना के मन में क्रोध की अग्नि और भी भड़क उठी और उस ने प्रतिज्ञा की कि अब सूरजमल से अवश्य बदला लेना चाहिए, परन्तु वह फिर भी ऊपर से प्रीति की बातें करता रहा और उस को खिलअत देकर कहा जब बसन्त ऋतु में शूकर के शिकार का समय आवे तो मुझ को अवश्य बुला भेजना।

सूरज मल राना की बातों से प्रसन्न हो गया, और जब शिकार का समय आया उसने चम्बल नदी के किनारे किसी

पहाड़ की चोटी पर राना को शिकार के लिए बुला भेजा, राना अपनी सेना लेकर पहुंच गया, और सूरजमल से मिलने पर बहुत हर्ष प्रकाश किया और प्रेमालाप की बातें होती रहीं, फिर शिकार की प्रतीक्षा में दोनों अपनी २ जगह पर बैठे गए, दो ऊंची जगहों पर राना और राव थोड़े २ फ़ासले पर बैठे थे, राना के साथ उस का सौतेला भाई और वह मनुष्य भी था जिस के पिता को सूरजमल ने बध कर दिया था।

सूरजमल एकाग्र चित्त से देख रहा था कि कब शूकर निकले और कब उस पर वार करे इतने में उसने सिर फेर कर देखा राना उसको तीर का निशाना बना रहा था, तीर सन्सनाता हुआ उस तक पहुंच गया, उसने अपनी कमान से उसे हटा दिया, सूरजमल ने समझा कि राना ने किसी पशू का ओर तीर चलाया था गलती से मेरी ओर आगया है, इस लिये उसने चाहा कि राना को अवगत करदे इतने में उसकी दृष्टि राना के सौतेले भाई की ओर गई, वह दूसरा तीर चिल्ले से जोड़ रहा था, इस बेचारे को उस के तीर से मुश्किल से बचने का अवसर मिला था, कि राना उस पर झपट कर आया और अपनी तलवार का वार किया।

कोई मनुष्य समीप नहीं था कि उस की सहायता करता और सूरजमल को स्त्रियों की तरह सहायता के लिए शोर मचाना स्वीकार नहीं था, तलवार जहर में बुझाई थी उसने कमर से शाल खींच कर घाव को बांध दिया और कुछ शाल घाव के भीतर ठोंस दिया ताकि खून न निकले, जब

कायर राना भागा चला जा रहा था तो मरते हुए सूरजमल ने चिल्ला कर कहा आज तो तू बचा जा रहा है परन्तु जा मेवाड़ मेरे हाथ से निकल गया" मरे हुए सरदार के बेटे ने जो अब तक शूकर की घात में था राना को सम्बोधन करके कहा "तुम्हारा काम अधूरा रहा जाता है" राना इन शब्दों से घबरा कर पीछे की ओर लौटा सूरजमल का हाथ प्राय: प्रथम हो चुका था परन्तु उस को ख्याल नहीं हुआ और जब वह लौट कर सूरजमल के पास पहुंचा मरते हुए शेर मर्द ने उछल कर अपने हाथ से उस को नीचे की ओर खींच लिया, वह घोड़े पर से गिर गया और दोनों राजपूत एक दूसरे के साथ गुथे हुए धरती पर आ रहे, सूरजमल अधिक बलवान था उसने राणा की छाती को अपने हाथ के नीचे दबा लिया और कटार खींच कर कलेजे में झोंक दी, और दोनों का एक साथ प्राणान्त हो गया, क्योंकि सूरजमल पहले ही मरने के योग्य हो गया था, शिकार का ऐसा भयानक परिणाम देख कर लोगों की बुद्धि जाती रही।

चित्तौड़ और बून्दी दोनों की ओर खबर देने के लिए मनुष्य भेजे गए, जब सूरजमल की माता को खबर मिली उस के मुंह से न तो आह का शब्द निकला और न आंखों से आंसू बहे, उसने मनुष्यों से पूछा केवल राव ही मरा है या उसने अपने शत्रु को भी मारा? इन छातियों के दूध से पला हुआ लड़का कभी शत्रु को मारे बिना नहीं मर सकता" लोग कहते हैं जिस समय रानी यह शब्द मुख से उच्चारण कर रही थी उसी समय उस को यह सुनाया गया कि मरते २

राव ने अपने शत्रु को मार डाला, यह सुनते ही उस की छाती उभर आई और दूध की धार बहने लगी, और जहां २ दूध की बून्दें गिरी वहां के फर्श का संगमरमर फट गया।

सोजाबाई को अपने ताने देने का बदला मिल गया वह राणा की लाश के साथ सती हुई और राना की बहिन सूरजमल के साथ सती हो गई।

बहुत काल बीत गया, राव और राना पर तरह २ के दुःख आए अठारहवीं शताब्दी का अन्त था राना और राव दोनों की सेंधिया के हाथों से दुर्गत हुई। मरहटे बाबर के राज्य को टुकड़े कर रहे थे। यह नई २ मुसीबतें पिछले समय के वृतान्तों से अधिक दुखदाई थीं। मेवाड़ तख़्त पर राना उरसी था, जिस के विषय में कहा जाता है कि बड़ा क्रोधी और कठोर हृदय था। यह किम्बदन्ति लोगों में फैली हुई थी कि यह मेवाड़ के उचित अधिकारी और अपने भतीजे को बध करने की इच्छा रखता है। और उस की अन्य अनुचित क्रियाओं से सब सरदार क्रोधित थे बून्दी का अल्पायु राजा अजीतसिंह था और उस के बुद्धिमान पिता राव उम्मीदसिंह ने पुत्र के लिए राज गद्दी की पहिले ही त्यारी कर दी थी।

इसी स्थान पर जहां बून्दी और मेवाड़ की सरहदें मिलती हैं। एक गांव बसा हुआ है उस का नाम बुलतियां है। यह एक साधारण गांव था कोई विशेषता नहीं थी किञ्चित अम्ल-के वृक्षों के सिवाय और कोई चीज़ वहां उत्पन्न नहीं होती थी। परन्तु इस के समीप लुटेरों का एक दल रहता था, जो बून्दी में लूट मार किया करता था, और इस लिए राव बून्दी

ने बुलतियां को दृढ़ बना लिया था और यहां सिपाहियों की अच्छी संख्या रहा करती थी। ताकि लुटेरों के आक्रमण से बून्दी सुरक्षित रहे। चुगल खोरों ने राना के कान भरने आरम्भ किए कि अजीतसिंह ने उस के राज्य का कुछ भाग दबा लिया है। रानी ने उसी समय संदेसा भेजा कि बुलतियां तुरन्त मेवाड़ के हवाले कर दिया जाय।

राव और राना दोनों एक नियत स्थान में मिले। राव को उरसी के प्रताप के देखने से आश्चर्य हुआ और उरसी पर राव के तेज़ और प्रताप का बड़ा प्रभाव पड़ा। जब वह परस्पर मिल चुके फिर बुलतिया के विषय में कोई बात चीत नहीं हुई और दोनों सच्चे मित्र बन गए। राव ने राना को बसन्त ऋतु में शिकार खेलने का निमन्त्रण दिया और राना उरसी ने आनन्द पूर्वक स्वीकार कर लिया। क्यों कि उस को मालूम था कि पटहर की पहाड़ी में शेर, पाढे, हिरन, जङ्गली कुत्ते बारह सिंगा आदि बहुत रहते हैं। और शिकार का स्थान भी नन्दता की भयानक चोटी इस बार भी नियत की गई।

जब शिकार का मौसम आ पहुंचा लोगों ने सरदारों को मना किया, उम्मीदसिंह भूत राव बून्दी तीर्थ यात्रा से लौट आया था, उस ने बेटे को सती के शाप को स्मरण कराया किन्तु अजीत ने कहा यह केवल मिथ्या विश्वास है। इस मिथ्या संस्कार के कारण मैं अपनी प्रतिज्ञा नहीं त्याग सकता, राना की स्त्री ने भी जिस को बहिन अजीत को ब्याही थी उरसी को रोकना चाहा परन्तु उस ने भी किसी का कहना न माना।

मेवाड़ के सब सरदार राना के साथ चल पड़े। उसके महा मन्त्री ने सब को भोज दिया जिस में राव और राना दोनों शामिल थे। सब प्रसन्न थे, और अजीत सोनेके निमित्य अपने तम्बू में गया ताकि प्रातःकाल के शिकार के लिए सबल हो जाय। आधी रात के समय उस की नींद खुल गई। मेवाड़ का महा मन्त्री गुप्त रीति से उस के भीतर घुस आया था। और क्षमा प्रार्थना के पश्चात उस ने निवेदन किया कि 'राना की आज्ञा है कि आप कुलतियां दे दें"। यह प्रार्थना ऐसे अनुचित शब्दों में की गई थी, जिस को कोई सभ्य पुरुष सुनना गवारा न कर सकता।

वास्तव में राना ने कोई सन्देसा नहीं भेजा था, यह महा मन्त्री की चलाकी थी क्योंकि मेवाड़ के सब रईस तथा सरदार राना से दुःखी थे, वह चाहते थे किसी प्रकार राना का अजीत से मुकाबला हो जाय और वह उस के हाथ से मारा जाय। जब मंत्री लौट आया उस ने समझ लिया अब काम पूरा हो जायगा राव और राना दोनों परस्पर लड़ कर कट मरेंगे।

प्रातः कल राव और राना शिकार के लिए गए। रात के सन्देसे को स्मरण कर के अजीतसिंह इस घात में था कि राना को बध कर दे जब दिन भर शिकार खेल चुके तो सन्ध्या समय राना ने अजीतसिंह के प्रति कृतज्ञता का प्रकाश किया और अपनी गहरी मित्रता का निश्चय दिला कर विदा होना चाहा परन्तु अजीत किसी चिन्ता में लगा रहा, राना यह समझ कर कि कदाचित मेरी बात राव की समझ में नहीं आई दूसरी बार कहा अब हम एक दूसरे से जुदा होते हैं ईश्वर ने चाहा तो फिर कभी मिलेंगे।

अजीत ने झुक कर प्रणाम किया और वहां से चलने की इच्छा की परन्तु मन में कुछ और ही चिन्ता थी। जब राना अपने घोड़े पर सवार होने लगा तो उस ने मुड़ कर उस पर भाले का वार कर दिया।

राना धरती पर गिर पड़ा और मरते २ कहा "ऐ हड यह तूने क्या किया" ? उसी समय अजीत ने दूसरा वार कर के सदैव के लिये उसे सुला दिया। केवल एक बहुत वफ़ादार अपने स्वामी का बदला लेने के लिए दौड़ा बाकी और सरदार मेवाड़ की ओर भाग गए। क्यों कि उन की इच्छा यही थी। राव सूरज मुखी झण्डा अपने साथ लिए हुए बून्दी में गया।

मेवाड़ तम्बू में एक मनुष्य भी नहीं रहा था। अकेले राना की लाश पड़ी हुई थी, कोई रखवाली करने वाला भी पास नहीं था। प्रातः काल जिन पशुओं का शिकार करने की इच्छा से वह जङ्गल में आया था वही उसकी लाश को नोच २ कर खाने लगे। सब मनुष्यों में से जो उसके साथ आए थे केवल एक मनुष्य मरने दम तक वफ़ादार रहा। यह एक स्त्री थी जो उस की बिवाहित रानी नहीं थी परन्तु उस के महल में रानी ही की भान्ति रहा करती थी। उसने जंगल में लकड़ियों का ढेर लगाया और राना की लाश को गोद में लेकर बैठ गई और अपने हाथों से चिता में आग दे दी। और जब आग भड़कने लगी उसने चिल्ला कर कहा, हे जंगल के वृक्ष ! तुम मेरे शब्दों को सुन और संकेत के द्वारा उत्तर दे यदि मेरा पति सती के शाप के कारणमरा है तो उस के मारने वाले को ईश्वर कुशल से रक्खे किन्तु यदि मेरा पति किसी और धोखे अथवा कपट के

कारण मारा गया हैं तो दो मास से पहले उसके मारने वाले को इस विश्वासघात का दण्ड मिले ताकि संसार को पाप से भय हो" उसी समय वृक्ष की एक शाखा टूट कर गिर पड़ी सती को निश्चय हुआ कि प्रार्थना स्वीकार । वह आनन्द पूर्वक पति के साथ जल कर राख हो गई।

अभी दो मास नहीं बीतने पाए थे कि राव अजीतसिंह कठिन रोग में ग्रस्त हुआ। उसके शरीर का मास कट २ कर गिरने लगा। किसी २ स्थान पर सफेद हड्डियां तक दिखाई देने लगीं। अनेक प्रकार की औषधियां की गईं परन्तु सब निष्फल प्रमाणित हुईं। और उसने तड़फ २ कर महा दुख के साथ प्राण त्याग किए। मेवाड़ और बून्दी की राज गद्दियों पर नन्हे बालक बैठाए गए। यह तीसरी घटना थी जो सती की शाप के अनुसार पूरी हुई। अजीतसिंह की मृत्यु बहुत दुखदाई थी। उसने समझ बूझ से काम नहीं लिया था और नाहक एक ऐसे मनुष्य को बध कर डाला जो उस का सब से अधिक मित्र प्रमाणित होता।

क्यों पापी तू धर्म्म छोड़ कर, पाप का कारज करता है।
चींटी भी फरियाद करे तो, वह भी ईश्वर सुनता है॥

(पं० ईशानदेवशर्म्मा)

(२४)

जयसलमेर के राजकुमार ।

पद्य

करो ध्यान देखो यह है वीर भूमि,
हो बलिहार इस पर चरण लेव चूमि ।
हैं उपजे यहां ऐसे सावन्त बांके,
जो यूरुप से लेकर अरब तक थे डंके ॥

जयसलमेर एक छोटी सी रियासत मारवाड़ के उत्तर में है । राजिस्थान के विस्तीर्ण रेगिस्थान में वास्तव मे यही एक ऐसा स्थान है जिस की धरती उपजाऊ कही जा सकती है, जो राजपूत कुल यहां बसा है वह भाटी कहलाता है । यह अपने आप को चन्द्रवंशी कहते हैं । राजपूताना के दूसरे क्षत्रिय सूर्य्यवन्शी कहाते हैं ।

जयसलमेर के अगले राजे राव कहलाते थे, इन को अनेक शत्रुओं के साथ युद्ध करना पड़ता था, जिन के नाम से उनकी जाती अथवा स्थानादि पता लगना असम्भव है । तथा तक्षक (सर्प) और वाराह (शूकर) पूर्वोक्त विषय में कहा जाता है कि चित्तोड़ की बुनियाद उसी ने रक्खी थी ।

आठवीं शताब्दी के अन्त में जयसलमेर चिर काल तक समर भूमि बना रहा । राव टन्नू को वाराह पर जय प्राप्त हुई, जिस ने मुसलमान, पठान, मुगल, और दूसरी पहाड़ी जातियों के साथ सम्बन्ध स्थापन किया था, इन सब ने मिल कर राव

टन्नू के किले के गिर्द अपने तम्बू तान दिये थे। और चार दिन तक उसके किलों को घेरे रहे थे। पांचवें दिन किले का द्वार खुल गया और किले के घेरने वालों पर टन्नू उस के पुत्र राव बीजी बहादुर भाटियों ने धावा कर दिया। पठान अथवा बाराहों में से किसी में भी उनका सामना करने का साहस नहीं रहा, उन के पाव उखड़ गए, और बहुत कुछ माल असबाब टन्नू के हाथ लगा।

इस चढ़ाई के पश्चात् फिर किसी पड़ोसी को टन्नू पर चढ़ाई करने का साहस नहीं हुआ, आठ वर्ष राज करने के अनन्तर उसका देहान्त हो गया, बीजी राव उस की जगह गद्दी पर बैठा और बूटा वन की राज कुमारी के साथ अपना विवाह किया।

बीजी राव ने बड़ी बुद्धिमानी से काम काज करना आरम्भ किया, वह बराबर बाराह को हार पर हार देता गया। निदान वह सब प्रकार विवश हो गया और सन्धि करने की प्रार्थना की और यह शर्त नियत की गई की देवराज बीजी राव का पुत्र बाराह के सरदार की कन्या के साथ विवाह करे और दोनों परस्पर मित्र बन जायें।

बीजी राव ने प्रार्थना स्वीकार कर ली। उस के मन में किसी प्रकार का छल कपट नहीं था, वह अपने पुत्र को साथ लेकर विवाह करने गया। परन्तु उसके साथ छल किया गया। जब वह अपने साथियों समेत सोया हुआ था और उन के अस्त्र शस्त्र और जगह रक्खे हुए थे। कपटी बाराहों ने अवसर देख कर उन पर धावा कर दिया। बीजी राव और उनके आठ सौ

नातेदार सब के सब मारे गए। एक मनुष्य भी जीवित नहीं बचा, तब वाराहों ने तन्नोट की ओर जो उस समय में जयसलमेर की राजधानी था कूच कर दिया ; यहां कुछ मनुष्य रक्षा के लिए मौजूद थे परन्तु वह बहु संख्यक वाराहों का क्या सामना कर सकते थे। किले के भीतर जितने मनुष्य थे सब मारे गए पापियों ने एक स्त्री अथवा बालक तक को न छोड़ा, और जब पूर्ण रूप से निश्चिन्त होगए कि अब भली भान्त भाटी जाती की जड़ उखाड़ दी गई है और नाम निशान पृथवी से मिटा दिया गया है तब वह अपने घर लौट गए।

किन्तु देवराज वीजीराय का पुत्र जिस के विवाह के लिए उसके पिता भाई आदि सम्पूर्ण सम्बधी मारे गए थे जीवित बच रहा था, विश्वास घात के समय वह भाग गया था और एक योगी के घर में घुस कर छिप रहा था, अभी वह जोगी को अपना दुःख सुना भी नहीं सका था कि शत्रु वहां भी रौला मचाते हुए पहुंच गए, वाराहों ने एक अपरचित लड़के को जोगी के घर में जाते हुए देख लिया था, और अब संभव नहीं था कि वह उस के हाथ से जीवित बच कर जाता।

योगी बाराह सरदार का पुरोहित था परन्तु उस को गरीब बालक को सौंपते हुए दुःख हुआ, उस ने उसी समय उस के गले में जनेऊ डाल दिया और उस के साथ बैठ कर भोजन करने लगा, पीछा करने वालों ने देखा योगी अपने चेले के साथ एक ही थाल में भोजन कर रहा है यह सम

हमारा शत्रु किसी और जगह चला गया है और उलटे पांव वहां से चले आए।

कुछ दिनों तक देवराज योगी के घर रहा और लोग उसको चेला समझते रहे परन्तु उसको चैन कहां था? वह जानना चाहता था कि उस के सम्बन्धियों में से कोई जीवित बचा है या नहीं? और उसकी माता आदि सब बध करदी गई या कोई जीवित भी है।

योगी प्रति दिन बाहर जाया करता था और देवराज अकेला घर में रहा करता था, एक दिन वह अकेले घर के भीतर इधर उधर घूमने लगा उसकी दृष्टि योगी के पहनने वाले वस्त्रों पर गई उनके भीतर एक विचित्र प्रकार के रसकी शीशी मिली, देवराज ने उस रस को अपनी तलवार पर टप-काया वह तुरन्त सोने का रंग की होगई, देवराज ने समझा यह रसायन है।

देवराज के लिए बड़ी कठिनता का अवसर था एक तो योगी फिर अपने उपकारी को, धोखा देना सब प्रकार से अनुचित था, परन्तु आवश्यकता क्या नहीं कराती, उसने तलवार और शीशी को अपने वस्त्रों में छिपा लिया और उसी समय अपने देश का मार्ग लिया जहां उस के माता पिता आदि रहते थे।

उस की माता भी जीवित बच गई थी, उस ने भी किसी प्रकार भाग कर शत्रुओं के हाथ से अपने प्राण बचाए थे। उस ने अपने पुत्र को पहचान लिया, उस को आशीर्वाद दिया और उस के सिर पर से नमक उतार कर पानी में फेंक दिया

और कहा जिस प्रकार यह नमक पानी में पिघले उसी प्रकार तेरे शत्रु भी पिघल जांय, बूटा का सरदार उस के आने से खुश नहीं हुआ क्योंकि वह जानता था, देवराज कभी न कभी गद्दी मुझ से छीनेगा।

देवराज ने सब से पहले अपने मामा से एक गांव गुजारे के लिए माँगा उस ने बड़ी अप्रसन्नता के साथ उसकी प्रार्थना स्वीकार की, दूसरे क्षण उस के साथियों ने कहा गांव देना उचित नहीं है जहाँ दस भाले बरदार उस के साथ हुए वह एक २ करके सब गांव तुम से छीन लेगा, परिणाम यह हुआ कि खुशामद करने पर भी गांव देवराज के हाथ से छीन लिया गया, और उस को घर बनाने तक की आज्ञा न मिली, किन्तु जब वह बहुत खुशामद करने लगा और अपना दुःख सुनाने लगा, सरदार ने कहा बहुत अच्छा जितनी धरती एक बैल के चमड़े से ढक जावे तू ले सकता है।

दुःख के समय मनुष्य को सोचने और अपनी बुद्धि को काम में लाने का बहुत अवसर मिल जाता है, देवराज ने चर्मकार से प्रार्थना की और उस ने चमड़े को इस प्रकार बारीक सूत की तरह काटा कि उस से बहुत सी धरती घिर गई, सरदार ने इस का कुछ भी ख्याल नहीं किया क्योंकि वह धरती जंगल में थी और देवराज के पास इतना धन कहां था कि वह अपने वास्ते अच्छा मकान बना सकता।

सौभाग्य से देवराज के पास वह शीशी थी जिस में रसायनिक पदार्थ था उसकी दस बीस बून्दों की सहायता से वह असंख्य मजदूर रख सकता था, थोड़े दिन के पीछे रईस को

पता लगा कि उस के भानजे ने अच्छा दृढ़ और भारी किला बना दिया है, यह सुनकर वह बहुत व्याकुल हुआ उस ने भांजे के दण्ड देने और किले को ढा देने की इच्छा से जंगल का मार्ग लिया।

उसे भय था कि किले के मनुष्य तीर और पत्थरों से उस का सामना करेंगे किन्तु यह विचार उसका मिथ्या निकला, देवराज की माता अपने बेटे की ओर से क्षमा प्रार्थना का पत्र और किले की कुञ्जी लिए हुए आई और भाई का स्वागत किया, उस ने मिलते हुए कहा "आप ने विपद् काल में देवराज की सहायता की है वह आप से बागी नहीं हो सकता यह किला और उसका सिर आप का है, आप भीतर चलें और उसकी सेवा स्वीकार करें। वह अपने साथियों समेत चल पड़ा और एक छोटे द्वार से सब मनुष्य गुज़ारे गए, देवराज ने एक २ करके सब को बध कर डाला, जब एक सौ तीस मनुष्य मारे जा चुके तो शेष जन आप ही भाग गए।

देवराज को अब दूसरा खटका योगी की ओर का लगा हुआ था जिस की सम्पदा लेकर भाग आया था, परन्तु योगी ने न तो लानत मलामत की और न दण्ड देना चाहा, क्योंकि वह अपने ज्ञान बल से जानता था कि जयसलमेर के सम्पूर्ण किलों पर उसका राज हो जायगा, उसने कहा "तुम मेरी शीशी उठा लाए हो मैं इस बात को जानता हूं और यदि तुम मेरे शिष्य बन जावो तो मैं क्षमा कर दूंगा देवराज अपने मन में खुश हुआ और समझा कि आई हुई बला सहज में टल गई।

योगी ने उस के कपड़े और हथियार उतार कर गेरवे वस्त्र

पहना दिए, और तो भी हाथ में देकर कहा जावो द्वार २ पर भिक्षा मांगो, वह परमात्मा का नाम लेकर द्वार २ भीख मांगता रहा, इस परीक्षा के पश्चात् योगी ने उस को बुलाया और राव के स्थान में रावल की पदवी देकर उसकी तो भी सोना और मोतियों से भर दी, और अपने हाथ में तिलक लगा कर कहा, "आज से तेरे खान्दान की यह रीति होगी कि तेरे प्रतिनिधि राजा गद्दी पर बैठने के समय योगी के वस्त्र पहनेंगे" इस के पश्चात् योगी अलोप हो गया, फिर कभी देवराज ने उसका दर्शन नहीं पाया, और उस समय से जयसलमेर के सम्पूर्ण राजकुमार गद्दी पर बैठने के दिन गेरूआ वस्त्र पहनते हैं और उनकी पदवी "रावल" हुआ करती है।

तीन शताब्दीयों तक इस रियास्त के सम्बन्ध में कोई वर्णनीय घटना इतिहास में नहीं मिलती, बारहवीं शताब्दी में एक ब्राह्मण जयसल देव को एक पानी के स्रोत (चश्मा) के पास ले गया, और उस ने उस के किनारे एक नगर बसाया जो जयसलमेर के नाम से प्रसिद्ध हुआ, इसी जयसल देव के प्रतिनिधियों में से एक मनुष्य लखन सेन अपनी मूर्खता के लिये समस्त देश में प्रसिद्ध हो गया था कहते हैं एक रात गीदड़ बहुत बोल रहे थे उसने पूछा इन के बोलने का क्या कारण है? लोगों ने उत्तर दिया, जाड़े के कारण दुखी होकर चिल्ला रहे हैं, उसी समय रावल ने आज्ञा दी कि "सब के लिए रूई की रजाइयां बना कर भेजी जांय'।

रजाइयां बना कर भेजी गई परन्तु बोलना फिर भी बन्द नहीं हुआ, रावल का हृदय बहुत दुःखी हुआ, उसने फिर पूछा

अब गीदड़ क्यों चिल्लाते हैं उत्तर मिला कि रहने के लिए घर नहीं हैं उसने आज्ञा दी उन के लिए घर तैयार किए जांय, टाड साहब लिखते हैं उन में से कितने ही मकान हमने अपनी आंखों से देखे हैं, वह पूर्णतः रानी के वश में था, जो अमर कोट की राजकुमारी थी, और उसके कारण उसे बहुत दुःख उठाना पड़ा था, जब उस के भाई जयसलमेर में रावल से मिलने के लिए आए उसने सब को वध करा दिया और उनकी लाशों को किले की दीवार पर फिकवा दिया।

उसका चचा जितैसी और प्रकार का मनुष्य था, जब लखण का लड़का अयोग्य पाया गया तो प्रजाने उसी को गद्दी पर बैठाया, जितैसी महावीर और योधा था उसकी सन्तान भी अच्छी माननीय और बहादुर हुई है, उस के दो पुत्रों (मूलराज और रत्नसिंह) ने अपनी सन्तान को अच्छी तरह युद्ध विद्या की शिक्षा दी, क्योंकि वह जानते थे ऐसा समय आ रहा है जब उनको कठिन शत्रुओं से सामना करना पड़ेगा।

अलाउद्दीन खिलजी दिल्ली का बादशाह अपनी लूट मार के लिये बहुत प्रसिद्ध था, जहाँ कहीं वह जाता था वहां के देश और नगर उजड़ जाते थे, चित्तौड़ की घटना का वर्णन हो चुका है दूसरी रियास्तें भी तबाह हो चुकी थीं, और यदि जयसलमेर अपनी रक्षा न करता तो उस की भी वही दशा होती।

रावल जितैषी के पुत्रों को खबर मिली कि पन्द्रह सौ घोड़े और पन्द्रह सौ खच्चरों का काफिला मुलतान से धन लिए हुए दिल्ली को जा रहा है, इन सब ने अन्न बेचने वालों का सा भेष बना लिया और सात हजार सवार और बारह सौ ऊंट

लेकर नदी के किनारे तम्बू खड़ा किया, काफिला भी उसी के निकट ठहरा हुआ था, रात के समय राजकुमार और उस के मनुष्य काफिले पर टूट पड़े और सब धन छीन कर जयसलमेर लेगए।

वृद्ध रावल ने समझा कि लड़कों ने अनुचित किया. क्योंकि जब काफिले के बचे हुए मनुष्य अलाउद्दीन को खबर देंगे वह अवश्य चढ़ाई करेगा, जयसलमेर में सब प्रकार की सामग्री एकत्र कर ली गई, कोसों तक देश उजाड़ बन गया, लोग नगर और ग्रामों को त्याग कर किले में जा रहे. और किले की फसीलों को ईंट पत्थरों से भर लिया, ताकि शत्रुओं के धावे के समय उन का सिर कुचला जाय, सब प्रकार की तैयारियां पहले से कर ली गईं, रावल ने बूढ़ों, लूलों लंगड़ों और छोटे बच्चों को जंगल में भेज दिया ताकि युद्ध शत्रुओं से सुरक्षित रहें, उस के सब नाती पोते किले में रहे ताकि शत्रु का सामना करें।

अलाउद्दीन ने भादों की बाढ़ की तरह नवाब महबूबखां को जयसलमेर की बरबादी के लिए रवाना किया, रावल के पास सेना बहुत थोड़ी थी, परन्तु वह जानता था कि किस प्रकार युद्ध करना चाहिए जयसलमेर के छप्पन बुर्जों पर तीन हज़ार सात सौ योधा नियुक्त किए गए और दो हजार अलग रक्खे गए ताकि आवश्यकता के समय काम आवें, एक सप्ताह बीत गया सात सौ शत्रु बध कर दिए दो वर्ष तक यह बिल्कुल चुप रहे कोई नहीं कह सकता था कौन धावा करने वाले हैं और किन पर धावा किया गया है भाटी किले के भीतर सब प्रकार सुरक्षित थे और दूसरी ओर से सब प्रकार की रसद मंगाते थे

मुसलमान अपने खीमों से इस भय से बाराह नहीं जाते थे कि ऐसा न हो कि जितेसी पर मार के लड़के कहीं उन को लूट लें।

धावे के समय दोनों पक्ष के लिए यह भय रहता है रत्नसी जितेसी के पुत्र ने महबूबखां से मित्रता करली और पीछे से यह मालूम हुआ कि दोनों को शतरंज खेलने का बड़ा शौक था, प्रतिदिन नियत समय पर राज कुमार किले से और महबूबखां खीमे से बाहर आता था और वृक्ष के नीचे शतरंज बिछ जाती और दोनों आनन्द से खेला करते थे।

इस प्रकार से आठ वर्ष बीत गए, इस काल में जितेसी मर गया उस के स्थान में मूलराज गद्दी पर बैठा, जब राजकुमार नियत समय पर शतरंज खेलने गया, नबाब ने पूछा आज किले में असाधारण हर्ष किस बात का है, राजकुमार ने उत्तर दिया मूलराज पिता के स्थान में गद्दी पर बैठा है, नबाब ने उसको मुबारकबाद दिया और शोक प्रकट किया कि आज से फिर हमको तुम्हारे साथ मिलने की खुशी प्राप्त न होगी, अलाउद्दीन को खबर मिली है कि मैं राजपूतों के साथ नम्रता का व्योहार करता हूं उसने आज्ञा भेजी है कि अब शतरंज खेली जाय, इस लिए आज मैं तुम से बिदा होता हूं। कल को किले पर धावा होगा और हम तुम युद्ध में मिलेंगे।

दूसरे दिन नवाब अपने मनुष्यों को लेकर किले पर चढ़ दौड़ा, भाटी पहले से तैयार बैठे थे इस दिन उन्हों ने शत्रु सेना के दस हजार मनुष्यों को मारा और दिल्ली का सेना को फिर अपने खीमों की ओर लौट जाना पड़ा।

इस प्रकार यह दिन भी बीत गया सुलतान ने और सेना रवाना की इस काल में किले वालों की संख्या भी कम रह गई, और उन की रसद का सामान भी कम होगया, मूल-राज ने अपने सम्बन्धियों को बुला कर कहा नौ वर्ष तक हम बराबर अपनी रक्षा के लिए लड़ते रहे किन्तु अब हमारे पास रसद का सामान नहीं है न कहीं से उस के मिलने की आशा की जा सकती है, अब हम को क्या करना चाहिए ? सरदारों ने कहा "हम और हमारी स्त्रियां राजपूतों की तरह काम आवेंगी जब किसी प्रकार की आशा बाकी नहीं रहती राजपूत स्वाधीनता पर प्राणों को निवछावर कर देते हैं।

परन्तु अगले दिन शत्रु अपने खीमे छोड़ कर भाग गए अलउद्दीन व्याकुल होगया था उसने निराश होकर उन्हें बुला लिया था, मौत के पञ्जे से छुटकारा पाने पर जयसलमेर वालों ने बड़ा आनन्द मनाय, और ऐसे अचेत हुए कि नवाब का छोटा भाई जो उनकी कैद में था भाग गया।

थोड़े ही दिनों के पीछे फसील के पहरे वालों ने देखा कि सामने की ओर से बड़ी गर्द उठ रही है। बात यह हुई कि नवाब ने अपने भाई से सुना कि उसने चले आने में गलती की है किले वालों के पास रसद की सामग्री बिल्कुल नहीं है वह तुरन्त आधीन होजाने वाले हैं। यह सुनकर वह लौट पड़ा ताकि जो काम अधूरा रह गया है उस को पूरा कर दे।

मूलराज ने रतसी से कहा देखो यह नवाब के साथ

तुम्हारी मित्रता का फल है। अब क्या होना चाहिए ! रत्न सी ने कहा स्त्रियों से कहो कि चिता पर बैठ जायें और हम लोग तलवार लेकर शत्रुओं पर पिल पड़े।

सरदार फिर बुलाए गए सब ने रत्नसी की बात को स्वीकार किया और कहा कि ऐसा ही करना चाहिए। तब मूल-राज ने उच्च स्वर से कहा तुम लोग वास्तव में शेर मर्द हो, तुम्हारी उत्पत्ति शूरमाओं से है। तुम जानते हो अपने देश की रक्षा के लिए किस प्रकार लड़ा जाता है। कौन ऐसा है जो तुम को मैदान में हरा सकता है? युद्ध में हाथी को भी तुम्हारे सामने ठहरने का साहस नहीं होता। देश की मर्य्यादा तुम्हारे हाथ में है। तुम जयसलमेर की नाक रखने वाले हो। आओ अन्तिम समय जयसलमेर का नाम उज्वल कर जायें"।

राजकुमारों ने जाकर यह सम्मति रानियों को सुनाई सब के मुख आगकी तरह लाल होगए। उन्होंने कहा आज रात को हम तैयारी करेंगी और प्रातः काल का चमकता हुआ सूर्य्य मण्डल, हम को अग्नि के विमान पर सवार देख कर स्वर्गधाम के फाटक पर स्वागत करेगा। ऐसा सुन्दर समय बार २ नहीं प्राप्त होता"। सरदार और रानियां असा-धारण बीरता के साथ मरने मारने को तैयार होगए।

रत्नसी को अपने दो पुत्रों के बचाने की चिन्ता थी। वह गोरसी और कंवर के नाम से प्रसिद्ध थे बड़ा केवल बारह वर्ष की आयु का था, उसने नवाब को कहला भेजा मेरे पुत्रों को किसी प्रकार कुशल पूर्वक मैदान से बाहर जाने दो। नव्वाब ने सौगन्द खाई और अपने नौकरों को भेजा ताकि राज

कुमारों को ले आवे। रत्नसी ने पुत्रों को सीने से लगाया और उनको नव्वाब के पास भेज दिया। नव्वाब ने उन का स्वागत किया। और उनके सिर पर हाथ रख कर कहा तुम्हारा एक बाल तक बीका न हो सकेगा। उसी समय उस ने उनके खाने पीने का प्रबन्ध करा दिया और दो ब्राह्मण उन की शिक्षा के लिए नौकर रख दिए।

राजपूत रात भर एक जगह बैठे रहे और परस्पर बातें करते रहे। जब प्रभात का तारा निकला सब ने मिल कर सन्ध्या की, परमात्मा से प्रार्थना की। पुरुषों की संख्या कम थी स्त्रियां चौबीस हज़ार थी जिनकी गोद में नन्हें २ बालक थे, चालीस वर्ष की आयु से लेकर दो वर्ष की आयु की कन्याएं तक मौजूद थीं। सब आनन्द पूर्वक चिता पर बैठ गईं और शान्ति पूर्वक जलती रहीं, किसी के मुख से आह का शब्द तक नहीं निकला, पहले वस्त्र जले फिर हाथ पांव छाती को आग ने अपने पेट में छिपा लिया सिरों के ऊपर चमकती हुई ज्वाला दिखाई दी। और इस प्रकार वह महा सुन्दरी देवियां जो पवित्रता और धर्म्म की मूर्ति थीं जल कर भस्म हो गईं। उन में से कितनों ने तो अपने कलेजों में कटार भोंक लिए थे ताकि आग का क्लेश उन्हें प्रतीत न हो। परन्तु ऐसी स्त्रियां बहुत थोड़ी थीं। सब की सब मर मिटीं एक राजपूतनी भी जीवित नहीं रही जो शत्रुओं के हाथ में पड़ती।

पुरुष खड़े २ उन पवित्र और सन्मान के योग्य धार्म्मिका देवियों के असाधारण साहस को देखा किये। सच मुच जिन को मौत का भय नहीं होता वह ऐसी ही स्त्रियों के गर्भ

से उत्पन्न होते हैं जब वह जल कर भस्म हो गईं तो पुरुषों ने समझा कि अब समय आ गया है। उन्हों ने हथियार संभाल लिए, केसरी वस्त्र पहिन लिये, तुलसी दल मुख में डाले। और विवाह की मौरी भी बांध ली, मानों विवाह करने के लिये जा रहे हैं। तीन हज़ार आठ सौ पुरुष जो नौ वर्ष के युद्ध में जीवित बचे थे। एक दूसरे से अन्तिम बार मिल कर चल पड़े। जयसलमेर का फाटक खुल गया और बीर राजपूतों ने अन्तिम युद्ध के लिए तलवारें म्यान से खींच लीं। रतसी पहला राजपूत था जो युद्ध के समुद्र में कूद पड़ा और एक सौ बीस बीरों को मार कर स्वर्ग का मार्ग लिया। मूलराज के हाथ में भाला था उस ने इस प्रकार से भाले के जौहर किए कि शत्रुओं की लाशें एक दूसरे से गुथी हुई धरती पर पड़ी थीं। और रक्त से धरती लाल हो गई थी।

सन्ध्या से पहले नव्वाब मूलराज और रतसी की लाश को सन्मान के साथ महल में ले गया ताकि चिता पर जलाई जाय। रत्नसी के लड़के और उस के कुटम्ब की नव्वाब ने पालना की। गौरसी ने सुलतान दिल्ली को एक युद्ध के समय अपनी बीरता से ऐसा प्रसन्न किया कि उस ने जयसलमेर उसको दे दिया उसने किले की नए सिरे मरम्मत कराई। किन्तु वह निःसन्तान था इस लिए मूलराज का पोता फिर राज-गद्दी पर बैठा।

जो लोग इन घटनाओं को विचार की दृष्टि से देखेंगे वह अवश्य समझ लेंगे कि राजपूतों से अधिक बीर जाति किसी

देश में नहीं थी । यदि उन में किञ्चित दूरदर्शिता और समय चारिता होती तो आज उन की यह दुर्दशा न होती ।

जैसे लड़का गवड़ी खेलैं,
गिन २ धरैं अगाड़ी पांय ।
वैसे क्षत्री रण में कूदैं,
शत्रु रैन बैन हो जांय ।
जैसे वीर ते अम्वा काटैं,
जैसे खेती लुने किसान ।
वैसे क्षत्री हनैं शत्रु को,
रण में काठि २ करैं घमसान ।
बारह वर्ष लौं चीता जीवे,
तेरह वर्ष लौं जिए सियार ।
वर्ष अठारह क्षत्री जीवे,
रणमें करे कठिन तलवार ।
सन्मुख जूझे समर भूमि में,
पहुंचे स्वर्ग धाम के बीच ।
खटिया पड़िके जो मरजावे,
सो नर माह अधम और नीच ॥

(२५)

जयसलमेर के बाज़ २ सरदार

यक समय जगत में ऐसा था,
कहि जाय न भारत जैसा था ।
सब हमरी महिमा गाते थे,
कर जोड़ के सीस नवाते थे ।
अब एक समय यह आया है,
सब ने हमें बुरा बताया है ॥

पन्द्रहवीं शताब्दी के आरम्भ में जयसलमेर के कुछ सरदार आपस में लड़ते झगड़ते रहे। जिस का प्रारम्भ एक हठ के कारण हुआ था और परिणाम बहुत ही हृदय विदारक निकला था।

मानिक राव महील जाति का सरदार चौहान सौ गांव का स्वामी था, उस की एक कन्या थी जिस का नाम कर्म्म देवी था। यह कन्या आनित नामी गांव में उत्पन्न हुई थी। और वर्षों तक उस के जीवन में कोई ऐसी घटना नहीं हुई जो वर्णनीय समझी जाय। लेकिन सन १४०७ ई० में एक पथिक उस गांव में से होकर गुज़रा। उसकी वीरता से भरी हुई चाल ढाल ने न केवल गांव वालों पर बड़ा प्रभाव डाला। किन्तु कर्म्मदेवी के मन को मोहित कर लिया। वह प्रेम के समुद्र में डूब गई। अपने आप की सुध जाती रही, विरह का

तीक्षण बाण उस के कलेजे पर ऐसा लगा कि टुकड़े २ हो गया।

इस पथिक (मुसाफिर) का नाम साधू था और जय-सलमेर के सरदार तुङ्गदेव रईस लोंगल का बेटा था, यह जङ्गल का निशङ्क शेर कहलाता था। इर्द गिर्द के रईस इस के नाम से कांपते थे। शरीर की घड़त ऐसी सुन्दर थी मानो प्रकृति ने अपने हाथों से सांचे में ढाल कर बनाया था। जिस समय साधू का हिन हिनाता हुआ घोड़ा जङ्गल में से गुज-रता था शेरों का कलेजा भी कांप उठता था। सिन्ध नदी (पंजाब) से लेकर नागौर तक उस की धाक बन्धी हुई थी। पहाड़ों की घाटियों, पेचदार नदीयां रेगिस्तान के बेढब जंगल इस शूरवीर के नाम से कांपते थे। मानिक राव ने उसकी बीरता की प्रशंसा पहले से सुन रक्खी थी किन्तु उसे देखा नहीं था। ऐसी घटना हुई कि साधू किसी राजा के ऊंट, घोड़े हाथी, धन दौलत आदि छीने हुए अपने घर को लौटा हुआ जा रहा था। मानिक राव ने कहला भेजा कि आप मेरी महमानदारी स्वीकार करें। सरल चित्त साधू ने खुशी से उसकी प्रार्थना स्वीकार की और उसके घर महिमान हुआ।

कर्म्म देवी मानिक राव की एकलौती बेटी थी, उस का हृदय हंसनी के परों की भान्त पवित्र और निर्मल था, वह सारे घर का प्रबन्ध और काम काज किया करती थी, और अतिथि सत्कार के नियमों को सदैव पालन करने के लिए तैयार रहती थी :। उसी ने साधू के भी अतिथि सत्कार का प्रबन्ध किया। और जब सन्ध्या के समय वह उस के पिता के

साथ अंगेठी के पास बैठा हुआ अपनी लड़ाई के भयानक वृतान्तों का वर्णन कर रहा था, कर्म्म देवी उस को आश्चर्य्य की दृष्टि से देखने लगी। यह स्वयम पवित्र हृदय और वीराङ्गना थी। प्रकृति का नियम है कि प्रत्येक चीज अपने तद्रूप की ओर आकृष्ट करती है। साधू की मूर्ति उसके हृदयरूपी मन्दिर में सदा के लिए बस गई।

यह महिमानदारी साधारण बात थी, कोई नवीन घटना नहीं थी। मानिक राव ने कर्म्मदेवी के विवाह का प्रबन्ध और स्थान में कर रक्खा था। उस की रियासत से थोड़ी दूर पर मन्डोर का राजा था, वहां के राठौर राजा अरिकंवल चन्दा सिंह के बेटे ने विवाह की प्रार्थना की थी, और मानिक राव ने बिना किसी पश्चादग्र के उसे स्वीकार किया था। प्रारम्भिक रीति भान्ति भी पूरी हो चुकी थी। यदि साधू न आया होता तो निश्चय कर्म्म देवी मन्डोर की रानी हो कर सुख के साथ अपना जीवन व्यतीत करती। राठौर राजा ऐश्वर्य्यवान था और उसके साथ सम्बन्ध स्थापन करना मानिक राव के लिए इज्जत की बात थी। परन्तु कर्म्म के प्रभाव ने चाहे भला समझो अथवा बुरा दूसरा रूप धारण करना था।

जब से साधू उस देवी का मन हर कर लेगया, उस की अवस्था में एक प्रकार का परिवर्तन दिखाई देने लगा, वह प्रायः उदास रहती थी, आंखों में आंसू भरे रहते थे, हृदय व्याकुल रहता था, वह अपने हृदय की प्रेमाग्नि को दबाने की बड़ी चेष्टा करती थी, परन्तु वह आग दबने वाली नहीं थी, उसकी ज्वाला दिन प्रति दिन प्रचण्ड होती गई और कर्म्म देवी के

वाटिका रूपी शरीर को भस्म करने लगी, मानिक राव ने पुत्री की यह दशा देखकर उस का कारण पूछने लगा और जब उसको यथार्थ घटना की खबर दी गई, वृद्ध सरदार थोड़ी देर के लिए चिन्ता सागर में डूब गया उसने बेटी को समझाया. कि राठौर राजा हठी और बलवान है, वह इस में अपनी हतक समझेगा और कभी लड़ाई किए बिना न रहेगा। परन्तु कर्म्मदेवी ने कहा, मैं बेवश हूं, मैं उस जंगली सरदार को हृदय अर्पण कर चुकी हूं, उस को त्याग कर राठौर से विवाह न करूंगी, प्राण त्यागन कर दूंगी परन्तु इस प्रण से कदापि न फिरूंगी।

पिता बहुत चिन्तित हुआ, उसने सोच विचार कर साधु को बुलाया और सारा वृत्तान्त उसे कह सुनाया:—

जाके जापर सत्य सनेहू। ते अहि मिलन न कुछ सन्देहू॥

उस का हृदय भी कर्मदेवी के प्रेम से रहित नहीं था, उसने कहा इस विषय में मैं क्या कह सकता हूं, दो भद्र घरानों की बरबादी का मामला ऐसा है जो विचार करने के योग्य है आप कर्म्म देवी को समझावें वह मान जाय तो उत्तम है अन्यथा मैं हाज़िर हूं, देर तक बातचीत करने के पश्चात् यह स्थिर हुआ कि साधू अपने धन दौलत समेत इस समय घर चला जाय और वह कुछ दिनो तक कर्म्मदेवी के विचार की प्रतीक्षा करे और उसने ऐसा ही किया।

पिता का विचार था कि कर्म्मदेवी कुछ दिनों में उसे भूल जायगी, परन्तु उसका इरादा दृढ़ निकला, उसके स्वभाव में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ, उसका प्रेम वैसा ही

रहा, पिता की खुशामद सहेलियों का समझाना बुझाना कुछ काम न आया, उसने साफ २ कह दिया, राठौर की रानी न बनूंगी, जंगली सरदार की पत्नी बन कर रहूंगी।

पिता ने देखा अधिक कहना सुनना व्यर्थ है उसने विवश होकर भाग्य के भरोसे साधु को बुला कर विवाह कर दिया और पुत्री जहेज में देकर बहुत कुछ धन जवाहिर हाथी घोड़े दास दासियां, जामात्र को दिये।

इस समाचार को मन्दौर के राठौर ने भी सुना, यदि और कोई होता तो कदाचित इतनी परवाह न करता परन्तु वह राजपूत था, राजपूत ऐसी बात में अपनी हतक समझते थे, उसके विवाह होते समय कोई उपद्रव नहीं किया, परन्तु जब लौटते समय बरात जंगल के बीच से गुजरने लगी तो बदला लेने के लिये राठौर मुकाबले पर आकर खड़ा होगया।

चार हजार राठौर राजपूत जो अपने सरदार की मानहानि का बदला लेने की सौगन्द कर चुके थे, मन्दौर के झण्डे तले जमा हो गए। मानिक राव ने चलते हुए साधु से कहा कि मैं अपने सिपाही घर तक पहुंचाने के लिए साथ कर देता हूं। परन्तु साधु ने कहा नहीं, सात सौ शूरमा भाटी बहुत हैं इन के सन्मुख किसी को ठहरने का साहस न होगा।

बरात आनन्द पूर्वक घर को चल पड़ी। दुलहा दुलिहन और बराती आदि सब प्रसन्न थे, परन्तु शोक ?

अद्‌भुत रचना है विधना की, मित्रो कुछ वर्णी न जाय।
ऐसा कठिन हृदय बूढ़ा है, किसी का सुखना इसे सुहाय।
समय समटया है सब ही पर, मित्रो समय पड़े संसार।

समया पड़ गई नल राजा पर, खूंटी लिला नौलखा हार ।
समय पड़गई रामचन्द्र पर, वन में हरा निशाचर नारि ।
सोई समया है साधू पर, मित्रो देखो आंख पसार ।
दोनों शूरमन का झुरमुट है, देखो काह करें कर्तार ।
दोनों शूरमा रण बांके हैं, जिन के बल का नहीं शुमार ॥

जङ्गल के बीच में साधु का मार्ग रोक दिया गया, राठौर के मनुष्यों ने कहा "आगे जाने की आज्ञा नहीं है, यदि मर्द हो तो तलवार मियान से खींच लो" । इतना कहना था कि दोनों ओर के शूरमाओं की तलवारें सूरज की तरह चमकती हुई मियान से बाहर हुईं । और सिंह पुरुष उसी समय अपनी २ वीरता दिखाने के लिए उद्यत हो गए ।

राठौर राजा भी योधा था, उसने देखा साधु के सिपाही थोड़े हैं । उसने कहा मैं नहीं चाहता कि नाहक बहुत से मनुष्य मारे जांय एक २ के साथ एक का सामना हो, जीतङ्ग साधू का नातेदार सब से पहले मस्त हाथी की तरह मैदान में आया वह सलाह संजोवा पहने हुए था एक राठौर उस के सामने आया, जीतङ्ग ने उसे एक ही वार में धरती पर सुला दिया, दोनों ओर के मनुष्य उस की वीरता देखकर खुश हुए और उसकी प्रशंसा की, दोनों ओर के सरदार आमने सामने खड़े हुए अपने शूरमाओं की वीरता देख रहे थे, कई मनुष्य इस प्रकार मारे गए एक के मरते ही दूसरा तुरन्त आ खड़ा होता था ।

कुछ देर तक इस प्रकार युद्ध होता रहा, निदान यह

सलाह की गई कि इस प्रकार के युद्ध से कोई लाभ नहीं है दोनों ओर के सरदारों के रिश्तेदार एक दूसरे से लड़ कर अपने मन का हौसला क्यों न निकाल लें, ताकि व्यर्थ रक्त न बहे दोनों सरदारों ने खुशी से स्वीकार कर लिया, साधू अपने घोड़े पर सवार होकर रण क्षेत्र में आया, राठौर के रिश्तेदारों ने उसका सामना किया, साधू तलवार चलाने में अद्वितीय था, जिस समय वह तलवार चलाता था, परे के परे साफ हो जाते थे, गजब की तलवार थीः—

खाक उड़गई मैदां की जिधर सने से वह निकली,
खूदो१ सिपर२ को काट के जोशन३ से वह निकली।
असवार का गिरना था कि तोसन४ से वह निकली।
दो कर के जिरह सीनऐ५ दुशमन से वह निकली।
थी रेत में जब तोसने चालाक से निकली,
खींचा तो चमकती हुई फिर खाक से निकली।
आफ़त थी कयामत थी छलावा थी वह बला थी,
बिजली थी कटारी थी करीलो थी कज़ा थी।
रोके कोई क्या बाढ़ न थी सेले फिना थी,
पिश्शा था वह ज़ालिम कि लहू जिस की गिज़ा थी।
बिजली को भी तड़पा दिया था जिलवा गरी ने,

---

(१) लोहे का टोप। (२) ढाल। (३) सन्नाह। (४) घोड़ा (५) छाती।

ताब उसको न थी मांग निकाली थी परी ने ।
सालिम सफ़े बेजा में किसी सिर को न छोड़ा
सर क्या है कि वे दो किए पैकर को न छोड़ा ।
लोहे के चबाने की सदा१ आगई उस को,
जिस चीज़ पर मुंह डाल दिया खा गई उस को ॥

कर्म्मदेवी प्यारे पति की वीरता देख कर मन ही मन में आनन्द होती थी. छे सौ चुने हुए राठौर काम आए, और आधे मनुष्य दूसरी ओर के भी मारे गए ।

राठौर सरदार ने देखकर कहा लड़ाई की यह विधि भी ठीक नहीं है , लड़ाई केवल दो मनुष्यों की है, "आओ परस्पर वार करके इस झगड़े को निपटा लेवें" साधु तैयार हो गया उसने दूसरे दिन कर्म्मदेवी को हृदय से लगा कर विदा मांगी । वीराङ्गना कर्म्मदेवी ने कहा "जाओ मैं तुम्हारी वीरता को देखती रहूंगी. यदि मौत का समय आ गया है तो इस दशा में भी मुझे कोई तुम्हारे साथ चलने से रोक न सकेगा" अब दोनों सरदार मैदान में आए, एक ने दूसरे को नियमानुसार सिर झुका कर प्रणाम किया, राठौर कहता था "पहला वार तुम करो." साधु कहता था "नहीं पहला वार तुम्हारी ओर से होगा" निदान साधु ने कुछ देर के बाद अपनी तलवार राठौर की गर्दन पर लगा दी, उसने भी बिजली की तरह गर्ज कर बदला लिया, कर्म्मदेवी ने दूर से देखा कि तलवार ने उस के पति को भी जीवित नहीं छोड़ा, दोनों राजकुमार धरती पर गिर पड़े, राठौर अधिक खून निकलने से मूर्छा की दशा में

(१) आवाज़ ।

था, उधर साधु के भी प्राण निकल रहे थे, मृत्यु के सामने किसी की वीरता काम नहीं आती समय आ चुका था उसने सच्चे क्षत्रियों की तरह लड़ कर प्राण त्यागे।

सरदारों के गिरते ही लड़ाई समाप्त हो गई। दोनों ओर के मनुष्य अपने २ सरदारों का शोक करने लगे। कोमलाङ्गी कर्म्मदेवी ने लाश के समीप जाकर अपने प्यारे पति के मुख का दर्शन किया। उस के सच्चे और अटल प्रेम में मृत्यु कोई बाधा न दे सकी। उसने कहा "प्राणपति मैं भी तुम्हारे साथ २ चलती हूं" एक राजपूत से तलवार मांग कर] उस ने पहले अपने कोमल शरीर पर उसकी धार की परीक्षा की फिर दाहने हाथ से अपना बायाँ हाथ काट कर मनुष्यों से कहा, इसको मेरे पति के बाप के पास ले जावो और कहो तुम्हारे बेटे की पत्नी ऐसी थी, फिर उसने एक राजपूत को आज्ञा दी कि मेरा दूसरा हाथ काट कर आभूषणों समेत मेरे पिता के पास पहुंचा दो, राजपूत ने कुछ आगा पीछा किया, उसने कहा "सुनो तुम क्षत्रिय हो, फौजी नियम को जानते हो मैं तुम्हारे सरदार की अनुपस्थिति में सरदार हूं राजपूत सरदार की कभी आज्ञा भङ्ग नहीं करते" इतना सुनना था कि संकोच करने वाले सिपाही ने उसके हाथ को काट लिया।

इस प्रकार असाधारण सहन शक्ति दिखलाने के पश्चात कर्म्मदेवी ने चिता पर बैठने की तैयारी की। रणक्षेत्र के मध्यमें लकड़ियों का ढेर लगाया गया, बहादुर राजकुमारी पति की लाश के पास बैठ गई, उसकी आंख से आंसू भी नहीं निकला आग की ज्वाला के बीच में वह आश्चर्य्य धैर्य्य और शान्ति के

साथ बैठी हुई थी, देखने वाले उस दृश्य को विस्मय की दृष्टि से देख रहे हैं, सिर के बाल जल रहे हैं, कटे हुए हाथ में आग लग रही है सारे शरीर से आग की लपक उठ रही है परन्तु वह वैसे ही तेज संयुक्त बैठी हुई भस्म हो गई, और जैसा उसने कहा था अलग करने वाली मौत को भी साहस नहीं हुआ कि दो प्रेमी हृदयों को जुदा कर सके। कर्म्मदेवी इस तरह ठीक जवानी के समय इस प्रकार मर मिटी और राज-पूताना में जाड़े के दिनों में जब सब लोग आग के गिर्द इकट्ठे होते हैं कभी कभी इसका वर्णन किया करते हैं।

मन्दौर के राठौर ने भी इस घटना के छः महीने पश्चात् इस असार संसार से कूंच किया क्योंकि उनके हाथ का घाव अच्छा नहीं हुआ, और दिन प्रतिदिन दुर्बल होता गया निदान एक दिन घाव के टांके खुल गए और वह मर गया:—

बख्शा था हक़ीक़त में शुजाअत को खुदा ने,
बेशक अजल१ पाई थी लड़ाई के बहाने।
इफ़रात२ जराहत३ से सरापा४ था बदन चूर,
बस मौत का मुहताज था वह साहबे मक़दूर।

इस लड़ाई का परिणाम यहां ही तक पहुंच कर समाप्त नहीं हुआ बल्कि और भयानक निकला, लड़के तो मर चुके थे अब बड़ों की बारी आई।

वृद्ध राव रिनिगदेव ने अपने नातेदारों को बुला कर सिंगल जाति के विरुद्ध रवाना किया जिसने साधू के साथ

(१) मौत (२) अधिकता (३) घाव (४) नख से शिख तक।

लड़ाई की थी, तीन सौ पचास संगली में से केवल पचीस बाकी रहे और पचास अपने घायल सरदार को उठा कर भाग गए थे, क्योंकि अब उनमें पौगल के मुकाबले की सामर्थ्य नहीं रही थी रिनिंगदेव इस विजय से आनन्द होकर लौटा जा रहा था, कि अरिन्कवल के पिता चन्दासिंह रईस मन्दौर ने उसका रास्ता रोक लिया, रिनिंगदेव बड़े युद्ध के पश्चात् मारा गया और चन्दासिंह अपने शत्रु पर विजय पाकर घर को लौट गया।

रिनिंगदेव और चन्दासिंह के दरमियान दिन प्रति दिन शत्रुता बढ़ती गई, अब टलू और मीरा रिनिंगदेव के पुत्रों की बारी आई, पौगल मन्दौर के मुकाबले में दुर्बल था इस लिये दोनों ने त्याग दिया और खिजरखाँ लोदी के पास जाकर कहा यदि तुम चन्दासिंह की बरबादी का सामान पैदा करदो और हमारी सहायता करो तो हम मुसलमान हो जाने को तैयार हैं।

इस अवसर पर एक और मित्र केलवन जयसलमेर के रावल का तीसरा पुत्र भी उन से आकर मिला, पौगल जयसलमेर की जागीर थी, इस लिये उसकी सहानुभूति भाइयों के साथ थी, उसने उनसे कहा यदि तुम चतुरता से काम लो तो हम चन्दासिंह को हरा सकते हैं।

केवलन ने चन्दासिंह को एक पत्र लिखा कि जयसलमेर और मन्दौर के बीच में जो चिरकाल से शत्रुता चली आती है, क्या हमारे दरमियान सुलह नहीं हो सकती? हमारे दोनों ओर उजाड़ धरती पड़ी हुई है, जो मनुष्य यहां बसते हैं वह अपने

पड़ोसियों को लूटते और दुःखी करते रहते हैं, उनकी रक्षा का काम महा कठिन होगया है, मैं उस के रोकने की प्रेरणा करता हूं और अपनी लड़की आप (चन्दासिंह) को ब्याहना चाहता हूं, और यद्यपि दस्तूर तो यह है कि दुलहा दुलहिन के यहाँ ब्याहने आता है परन्तु मैं अपनी कन्या को नागौर भेज दूंगा।

राजपूत के सूक्ष्म विचार से इस प्रकार की प्रार्थना साधारण बात नहीं थी। चन्दासिंह ने कृतज्ञता के साथ इस बात को स्वीकार कर लिया। दुलहिन के नागौर भेजने की तैयारियां की गईं और नियत तिथि पर चन्दासिंह अपने सरदारों को लेकर दुलहिन वालों के स्वागत के लिये नगर के फाटक से बाहर निकला, पहले घोड़ों और ऊंटों की कतार थी जो धन सम्पत् से लदे हुए थे, फिर पचास परदह पड़े हुए रथ थे, और उन के साथ थोड़े से हथियार बन्द सिपाही थे।

चन्दासिंह को इस जथे को देखने से भय हुआ क्योंकि विवाह के अवसर पर जो आनन्द हुआ करता था उसका कहीं नाम व निशान भी नहीं था, और ऊंटों पर पलंग बिछौने आदि लदे हुए दिखाई नहीं दिए जो ऐसे अवसर पर अवश्यक समझे जाते हैं, इस के सिवा सवारों के इतने फासले पर रहने की क्या अवश्यकता थी, उसने अपने साथियों को किले के भीतर लौट जाने की आज्ञा दी, परन्तु लौटने का समय नहीं था, रथों के भीतर से पोगल के हथियारबन्द सिपाहियों ने निकल कर युद्ध करना आरम्भ किया। जो लोग घोड़ों और ऊंटों पर सवार थे वह भी तलवार खींच कर मन्दौर वालों पर झपटे

मुसलमान सवार भी दम के दम में लड़ाई के मौके पर आगए, और बहादुर चन्दासिंह नगर के फाटक पर मारा गया, राठौर दरवाज़ों से भाग निकले, किन्तु भाटी और तातारियों ने उनकी दुर्गति बना दी।

जिस समय दिल्ली की सेना लूट मार कर रही थी कुछ राठौर और भाटी सरदारों ने परस्पर सलाह की कि इस प्रकार राजपूत रियासत का मुसलमानों के हाथ से सत्यानाश होना उचित नहीं है। जो कुछ होना था हो चुका बाप और बेटे दोनों ओर के मारे गए, अब शत्रुता बनाए रखने की कोई आवश्यकता मालूम नहीं होती। उचित है वह अब मित्र बन कर रहें सब ने यह सलाह उचित समझी। और राठौर व भटियों ने मिल कर दिल्ली के मनुष्यों पर धावा कर दिया और एक २ को चुन कर मार डाला, माल असबाब अपने हाथ में कर लिया और सब के सब प्रसन्न हुए।

जिन को सब से अधिक दुःख हुआ वह रनिंगदेव के लड़के थे क्योंकि वह धर्म से अपने आप पतित हो चुके थे अब पौगल में उनका रहना उचित नहीं था, जिस को सब से ज्यादह आनन्द हुआ वह केलवन था क्योंकि उसने दोनों के राज्यों पर अधिकार कर लिया था।

केलवन का लड़का और प्रतिनिधि चचकदेव हुआ जो अपने पिता से कहीं बढ़ कर प्रसिद्ध था। अपनी आयु का बहुत सा भाग लड़ाई झगड़े और पड़ोसियों पर धावा करने के पश्चात वह अपनी सेना को कृतकार्य्यता के साथ पंजाब के मध्य में लाया। यहां वह बड़े भयानक रोग में ग्रस्त हुआ, कोई

औषधि हित कर प्रमाणित नहीं हुई उसने समझा कि मेरे मरने का समय आ गया, पलंग पर लेटे हुए मरना वह अपने लिए उचित नहीं समझता था, उसने कहा "यदि कोई शत्रु मिल जाता तो बहुत अच्छा होता क्योंकि मैं युद्ध में लड़ता हुआ घोड़े की पीठ पर मरता"। परन्तु यह बात कठिन थी क्योंकि उसने अपनी वीरता की धाक ऐसी बैठाई हुई थी कि दूर व निकट के मनुष्य उस का नाम लेते ही कांप उठते थे।

कालू शाह लंगा मुलतान का शहज़ादा उस का महा शत्रु था, चचकदेव ने उस को दो बार परास्त किया था और दोनों बार उस को बड़ी हानि पहुंची थी, चचकदेव ने इस शत्रु को सन्देसा भेजा कि "तुम आओ और मेरे साथ युद्ध करो, मैं राजपूत हूं इस लिए घोड़े की पीठ पर मरना चाहता हूं रोग से निर्बल होकर मरना मेरे धर्म के विरुद्ध है"।

कालूशाह में उस का सामना करने का साहस कहां था। चचकदेव बल और वीरता का अवतार था, कालू शाह ने विचारा कहीं यह चाल न की गई हो कि तीसरी बार मुलतान का अच्छी तरह मलियामेट कर दिया जाय।

परन्तु दूत ने कहा "नहीं आप राजपूत की प्रार्थना का आदर करें। रावल चचक देव तुम्हारे हाथ बुरी इच्छा नहीं रखता। उस क उद्देश्य केवल इतना ही हैं कि तुम्हारे हाथ से उसे वीरता की मौत प्राप्त हो, और इस लिए वह केवल पांच सौ मनुष्य साथ लेकर आना चाहता है'।

लङ्गा भी सुभट मनुष्य था। उस का वीर भाव भी जाग

उठा, उस ने कहला भेजा अच्छा मैं आता हूं। चचकदेव यह सुन कर युद्ध की तैयारी करने लगा रानी और लड़कों से मिल कर उन के बीच में अपना सारा राज बांट दिया और समर भूमि में तम्बू खड़ा कर दिया दूतों ने खबर पहुंचाई मुगल का बादशाह सेना लिए आ रहा है। यह सुन कर उस का हृदय आनन्द हो गया। उसने हाथ पाव धोए उसी समय सन्ध्या की ईश्वर से आत्मिक शान्ति के लिये प्रार्थना की ब्राह्मणों को भली भान्ति दान दिया और अपने आप को संसार के माया मोह से विरक्त कर लिया।

संग्राम भूमि में दो घन्टे तक विकट युद्ध होता रहा। चचक देव की इच्छा पूरी हुई वह घोड़े के पीठ पर मर गया, इस लड़ाई का उद्देश्य केवल इतना ही था इस लिये कालू शाह मुलतान को लौट गया।

केवलन का बड़ा पुत्र कुम्भ उन्माद रोग में ग्रस्त था इस लिए उसका बड़ा भाई वीरसल अपने पिता की गद्दी पर बैठा, रावल वीरसलदेव देश रीति के अनुसार १२ दिन तक शोक में बैठा रहा। अभी वह शोक में ही था कि कुम्भ उसके पास दौड़ता हुआ आया और उसने सौगन्द खाई कि मैं कालूशाह से अपने पिता के बध का बदला लूँगा जब तक ऐसा न कर कर लूंगा तब तक मैं विश्राम न करूंगा। दीवाने मनुष्य को समझाना बुझाना कठिन था, वह किसी की बात को सुनने वाला नहीं था, कोई उस को रोक न सका। कुम्भ केवल अपने एक दास को साथ लेकर चल पड़ा और उस सड़क की तरफ जाकर डट गया जिधर से मुलतान की सेना लौटी जा रही थी।

कालूशाह अपनी सेना के साथ तम्बू में था। तम्बू के पास ग्यारह गज़ चौड़ी खाई खुदी हुई थी। कुम्भ यहां तक पहुंच गया। रात अन्धेरी थी उस ने आगा पीछा नहीं किया अपने घोड़े के ऐड़ लगा दी, घोड़ा असील था, वह सवार समेत खन्दक फांद गया। कुम्भ तम्बू में घुस गया और कुछ देर के बाद वहां से निकला और लौट कर अपने वफादार नौकर से जा मिला।

बीरमल और उस के साथी अभी देव रावल में ही थे कि कुम्भ निर्भयता से उन के पास पहुंचा। वह बिलकुल थक गया था मुंह का रंग पीला पड़ गया था, कपड़े मैले कुचैले थे। उस के हाथ में एक सिर था उस को उस ने सबके आगे लाकर रख दिया। भाटियों को उसके पहचान ने में कुछ भी कठिनता नहीं हुई क्योंकि वह सचमुच कालू शाह का सिर था।

पाठक! यह राजपूतों की वीरता का हाल है। इसमें सन्देह नहीं कि उन में एक दो त्रुटियां (कमी) अवश्य थीं, अभिमान, अपने ऊपर हद से अधिक भरोसा करना, शत्रुओं के साथ उचित से अधिक उदारता का बरताव करना, ऐसे दोष हैं जो बहुधा उन की तबाही और बरबादी के हेतु हुए, इन में चौकस रहने का भाव बिल्कुल नहीं था, लेकिन थोड़ी देर के लिये इन के अवगुणों को त्याग कर देखो क्या दुनियां में कोई जाति इन से अधिक शूरमा थी? कभी नहीं। स्पारटा की वीरता प्रसिद्ध है रूमी भी वीरता के लिये प्रसिद्ध हैं। पारसियों में रुस्तम और असफन्दयार के कारनामें विचित्र समझे जाते हैं और आज कल जापानियों के विषय में क्या २ नहीं कहा जाता। परन्तु इन में से कोई भी ऐसा नहीं है जो राजपूतों के पासंग को भी

पहुंच सके। हां ? यदि राजपूतों में किञ्चित अधिक दूर दर्शिता होती। और अपस्वार्थियों के धूर्ता ने इन को मिथ्योपासक न बना दिया होता तो आज हमारा देश भी मनुष्यत्व के आदर्श पर पहुंचा होता।

काल चक्र तेरी लीला विचित्र है ! तू किसी को एक दशा में नहीं रहने देता, उन्नति और अवन्नति तेरे घूमने वाले पहिए के फल हैं, संसार में किसी बात का ठिकाना नहीं। जो कल तख्तशाही पर सुशोभित थे, आज उनकी सन्तान दो २ तीन ३ रुपये मासिक की चपरासी के लिये प्रार्थना करती फिरती है। और वह भी नहीं मिलती :—

वृथा न भूल जगत् सम्पदपर, क्षण में मिटने वाली है।
पता नहीं क्या घटना मित्रो, पल में आने वाली है॥
(पं० ईशान देव शर्म्मा)

आत्मा चल बसा, शरीर चिताओं पर जला दिए गए। पञ्च तत्व अपने अपने कोशों में मिल गए सम्भव है राजिस्थान के किसी २ स्थान में उनकी सड़ी गली हड्डियां अब तक वर्तमान थीं। परन्तु मृत्यु के समान करने वाले बलवान हाथ ने उनके भी पहिचानने का आकार बाकी नहीं रक्खा कोई नहीं कह सकता यह किसकी बाकी यादगार है।

तथापि संसार को अब तक उन के कारनामे विस्तीर्ण नहीं तो संक्षिप्ततः याद हैं। मित्रो उन को पढ़ो, सुनो, और उन से मनुष्यत्व की शिक्षा सीखो।

वर्तमान राज्य ने तुम को कम से कम अपनी अस्ति स्थिर रखने का बहुत अच्छा अवसर दे रक्खा है, इसको सौभा-

ग्य समझो, और इतना तो करो कि अनुचित और मिथ्या संस्कार आदि के बन्धनों से तुम्हें मुक्ति प्राप्त हो, क्योंकि उनके कारण से आज हम पर:—

छाया शोक दुःख है दारुण कष्ट आपदा भारी है।
चिल्लाती है प्यारी जाति ऐसी दशा हमारी है ॥

(पं० ईशानदेव शर्म्मा)

क्रोड़ पत्र।

अर्थात् वह वृत्तान्त जिन को टाड साहब अथवा अन्य इतिहासकारों ने बहुत संक्षेप के साथ लिखा है।

(२६)

मीरा बाई।

मीरा बाई वास्तव में एक अत्यन्त धार्म्मिका उन्नत चेता और ईश्वर अनुरागी स्त्री हुई है, इस के स्मरण मात्र से हृदय में एक प्रकार की पवित्रता आजाती है, हिन्दुओं में स्त्रियां केवल चार दीवारी के भीतर ही रहकर अपना समय नहीं व्यतीत करती थीं किन्तु बहुधा अपने पवित्र दृष्टान्त और उच्च जीवन से जाति को उभारने वाली भी हुई हैं, मीरा बाई के विषय में प्रसिद्ध है कि वह एक पन्थ की भी मुखिया हुई है, जिस के अनुयाई अब तक मीरा के भजन गाते फिरते हैं, परन्तु हमने इस विषय में अनुसन्धान नहीं किया। उस के भजन यद्यपि अपने तौर पर बहुत आकृष्ट कारी हैं, तथापि उनमें प्रायः मत दोष भी पाया जाता है, मीरा के विषय में

प्रसिद्ध है कि वह रयदास भक्त नागी चमार की चेली थी, साधारणतः यही कारण उस के पति (राना कुम्भ) से अन बन होने का मालूम होता है, इतिहास में इसका कुछ पता नहीं चलता, केवल कहावतों से ऐसा विदित होता है।

पार्वती, सीता, मीरा बाई आदि हिन्दुओं में ऐसे पवित्र नाम हैं जिस के प्रभावों को एक २ बालक तक का हृदय अनुभव करता है, हिमालय से लेकर रास कुमारी तक, और द्वारिका से लेकर अराकान तक सब इन पवित्र देवियों के नाम से अवगत हैं। इन में मीराबाई के नाम की एक विशेषता है वह यह कि उस के पवित्र संगीत अब तक मौजूद हैं, गऊ चराने वाला ग्वाला दोपहर की झुलसने वाली धूप से बचने के लिए किसी छायादार वृक्ष के नीचे बैठ कर मीरा के भजन गाता हुआ प्रसन्न दिखाई देगा, इकतारा बजाता हुआ साधू मीरा के प्रभाव शाली भजन को असाधारण प्रेम एकता और ईश्वर भक्ति का हेतु समझेगा, अमीरों की महफिलों में, संगीत सभाओं में प्रत्येक जगह मीरा का नाम गूंजता हुआ मिलेगा।

यह मीरा कौन थी? इस का उत्तर हम निम्न लिखित किंचित पंक्तियों में देंगे।

मीरा जाति की राजपूतनी, नीरात नामी गांव की रहने वाली, चित्तौड़ के महाराना कुम्भसिंह की रानी और हिन्दु जाति की सच्ची देवी थी, बाल्य काल से ही उसको छन्द और काव्य से अनुराग था, इस का पति कुम्भ भी कवि था, उसकी संगत से मीरा का यह भाव और भी बढ़ गया, कुम्भसिंह संसार सेवी था मीरा ईश्वर भक्त थी, उसका अनुराग

दिन प्रति दिन बढ़ता गया। उसकी कविता ऐसी प्यारी थी कि सुनने वालों का हृदय उछल पड़ता था, थोड़े ही काल में मीरा की यह दशा होगई कि वह ईश्वर प्रेम में मस्त रहने लगी, हृदय के उच्च और पवित्र भावों ने उसको किसी और लोक का वासी बना दिया।

गान विद्या में भी बड़ी निपुण थी, गान विद्या और कविता ने उस को ऐसा प्रभु प्रेमी बनाया कि वह प्रायः अपने बनाए हुए भजन गाती हुई बाहर गली कूचों में फिरने लगी, और साधु संगत को अहोभाग्य समझने लगी।

राना को यह दशा बहुत बुरी लगी, परन्तु उसका कुछ वश न था, मीरा अपने आप में नहीं थी। प्रभात के समय जब वह गाती हुई चित्तौड़ की गलियों से गुजरती तो हज़ारों मनुष्यों की भीड़ उस के साथ हो लेती, और वह कभी २ मन्दिरों की सीढ़ी पर बैठ कर अथवा साधुओं के सत्संग में रह कर घण्टों गुज़ार देती।

राना ने अपनी माता को भेजा कि वह उसे समझा कर ऐसा करने से विरत रक्खे, परन्तु पत्थर को जोंक नहीं लगती, जिस समय रानी ने मीरा को कहा कि स्वामी की आज्ञा मानना सब से श्रेष्ट धर्म्म है। मीरा ने उत्तर दिया, "माता! यह दशा स्वामी ही की दी हुई है। मेरा तेरा सब का स्वामी एक है, तू भी इसकी भक्ति कर।" रानी ने इस बात को कुछ का कुछ समझ लिया वह महा क्रोधित होकर बेटे के पास गई और उससे मीरा के विरुद्ध बहुत कुछ कहा सुना, राना हाथ में तलवार लेकर मीरा के वध करने के इरादे से उठा परन्तु जब

उस के और मीरा के नेत्र आमने सामने हुए तो उनके विद्युत के तुल्य प्रभावों ने उसके हृदय को मोम कर दिया, और क्रोधवान राजपूत उस निर्दोष पर हाथ न उठा सका, लज्जा से पसीने २ होकर दरबार में आया और मंत्रियों से सलाह ले कर यह इरादा किया कि कोई मनुष्य दूध के पियाले में हलाहल विष मिला कर उन को दे आवे, ताकि मेवाड़ का कुल बदनामी से बच जावे !

जिस समय कुमारी कन्या ने वह प्याला लेकर मीरा को दिया और कहा यह ठाकुर जी का चरणामृत है पी लो। मीरा ने खुशी २ उसे पी लिया और दुतारा उठा कर गाने लगी।

"राना ने ज़हर दिया हम जानी"

दो मिन्ट गुजरे, दस मिन्ट गुजरे, आध घन्टा गुजरा परन्तु मीरा को विष का प्रभाव न हुआ, यह कोई करामात अथवा महिमा नहीं है, जिसका चित अत्यन्त एकाग्र होता है बहुधा देखा गया है कि विष ने उस पर अपना असर नहीं किया, सब को आश्चर्य्य हुआ और अब राना को मीरा के बध करने की चिन्ता और अधिक हुई, परन्तु मीरा पर कौन हाथ चला सकता था ? वह सारे मेवाड़ देश की देवी प्रसिद्ध हो चुकी थी, सब उसकी पवित्रता और धर्म्मिष्ठता की प्रशंसा करते थे, परन्तु निर्दय कुम्भ ने सोच कर अन्त मैं उस के बध की तदबीर निकाल ही ली।

दूसरे दिन मीरा नियमानुसार हरि मन्दिर में पूजा के लिए गई और वहां से यह भजन गाती हुई लौटी आ रही थी।

मेरे मन राम नाम दूसरा न कोई (टेक)
आई थी भक्ति काज जगत देख मोही,
वृथा नर देही खोय अन्त समय रोई ।
साधू संग बैठ बैठ लोक लाज खोई,
अब तो बात फैल गई जाने सब कोई ।
दूध की मटकिया मैंने यतन से बिलोई,
मक्खन २ काढ़ लिया छाछ पीवे कोई ।
चन्द हार फेंक मैंने तुलसी की माला पोई,
शाल दुशाला छोड़ अब तो ओढ़ लई लोई ।
गङ्गा जमुना नहाय कर मलि मलि काया धोई,
मन का मैल जभी गया नाम जल मिलोई ।
मेरे मन राम नाम दूसरा न कोई ॥

वह अपने ध्यान में मग्न थी, साथ की सहेलियाँ भी प्रेम में मस्त थीं, राह में प्रधान सन्मान पूर्वक प्रणाम करके राना का आज्ञा पत्र हाथ में दिया, मीरा ने उसे सिर और आँखों से लगा लिया ' और पढ़ कर कहा क्या अन्तिम बार मुझे अपने पति के दर्शन करने का अवसर मिल सकता है ? प्रधान ने कहा महारानी ! महाराना की आज्ञा इस पत्र में लिखी है, उन का हुकम है कि मीरा को यह आज्ञा भंग न करनी चाहिए, मीरा ने कहा "बहुत अच्छा मैं जानती हूं राज धर्म्म क्या है" ? साथ की सहेलियों को नहीं मालूम हुआ कि पत्र में क्या लिखा था, सब उसी प्रकार गाती हुई महल में लौट गईं ।

आधी रात के समय जब सब सो रहे थे मीरा शान्ति से उठी और सादे वस्त्र धारण कर के राज मन्दिर से निकली, किसी को क्या पता उस का क्या इरादा था, चार पांच मील के फासले पर एक नदी बह रही थी, बरसात के दिन थे, अन्धेरी रात, अकेली कोमलाङ्गी स्त्री का ऐसे भयानक स्थानपर जाना आश्चर्य्य मालूम होता है, राजा की आज्ञा हो चुकी थी कि वह आत्मघात करके मेवाड़ के कुल को बदनामी के धब्बे से मुक्ति दे, वह निर्भयता से नदी के किनारे आई, पानी ज़ोर से बह रहा था, रात के अन्धेरे में उसके गर्ज के शब्द से मनुष्य का कलेजा हिल जाता था, मीरा बिना आगा पीछा किए राम २ कहती हुई उस में धम से कूद पड़ी, दो एक मिन्ट तक हाथ पांव मारती रही फिर पानी की लहरें उस को अपनी तेज़ी के साथ बहा ले गईं।

प्रभात का सोहावना समय था, मीरा मालिक की सच्ची भगत थी, नदी को भी उस पर अत्याचार करने का साहस नहीं हुआ, लहरों ने उसके मूर्छित शरीर को रेत पर ला कर डाल दिया, वह निद्रावस्था में हैं सूर्य्य अपनी किरणों से उसके प्रायः मृत शरीर को उष्णता पहुंचा रहा है, वह कभी २ मुस्करा उठती है, जिस से विदित होता है कि वह कोई आनन्द दायक स्वप्न देख रही है।

घन्टों के पश्चात् उसने आंख खोली, दिन के ग्यारह बज गए थे, थोड़ी देर के पश्चात वह अपने आप को ऐसे भयानक स्थान में देख कर सहम गई। परन्तु फिर राना की आज्ञा और अपने आत्मघात का विचार स्मरण कर के उसने सोचा स्वामी की आज्ञा है इस शरीर को जीवित न रक्खू"।

किन्तु उसी समय एक शब्द सुनाई दिया "सच्चे स्वामी की आज्ञा नहीं है कि मीरा आत्मघात करे"।

रानी ने आंख उठा कर देखा कोई मनुष्य दिखाई नहीं दिया। उसने समझा अभी ज़िन्दगी के दिन कुछ और बाकी हैं वह गीले कपड़ों को खुश्क कर के एक ओर को चल पड़ी यद्यपि उस को स्पष्ट रूप से यह नहीं मालूम था कि वह कहां जा रही है तथापि वह ईश्वर के आसरे आनन्द से जा रही थी।

मार्ग में वह इसी प्रकार सुरीली आवाज़ में भजन गाती हुई चली जा रही थी, गांव वाले अहीर ग्वाले गाय चराते हुए मिले, मीरा ने कहा, पुत्रो! "बृन्दाबन की राह बता दो।" चरवाहे उसका रूप देख कर दङ्ग रह गए क्यों कि मीरा राजिस्थान में सब से अधिक रूपवती थी उन्हों ने कहा "देवी! तू अकेले बृन्दाबन कैसे जायगी हम भी तेरे साथ चलेंगे" मीरा ने पहले तो इनकार किया परन्तु उन के प्रेम को देख कर कहा "अच्छा चलो तुम्हारी इच्छा" वह सब चल पड़े मार्ग में जो कोई मिलता वह मीरा के धार्मिक गीत की धारा में बहता हुआ उसी ओर का राही हो जाता, मार्ग में लोग खाने पीने के पदार्थ मीरा के भेंट करते परन्तु मीरा इनकार कर देती, केवल दूध ग्रहण कर लेती थी।

जिस समय वह बृन्दाबन में पहुंची सैंकड़ों का जत्था उस के साथ हो गया, बृन्दाबन में उस समय रूप सनातन

१—यह उसके अपने मन की कल्पना थी।

नामी साधू जो चेतन स्वामी के चेले थे, उन्हों ने मीरा का बड़े सन्मान के साथ स्वागत किया और वह आनन्द पूर्वक वहां रहने लगी।

जिस रोज़ से मीरा बृन्दाबन आई चारों ओर हरि प्रेम की धारा बहने लगी प्रत्येक जगह लोग मीरा के भजन गाते फिरते थे।

जब चित्तौड़ में मीरा के बृन्दान पहुंचने की खबर पहुंची तो बहुत से स्त्री पुरुष अपने आप चित्तौड़ त्याग कर मीरा के साथ रहने के लिए बृन्दाबन में चले आए। चित्तौड़ में भी बृन्दाबन की तरह घर २ स्त्री पुरुष बच्चे बूढ़े सब मीरा के भजन गाते रहते थे।

कुम्भसिंह का दिल यह हाल देख कर भर आया, उसने सोचा मीरा सच्ची देवी थी उसके साथ महाअन्याय हुआ उस के कारण राज बंश को कलङ्क नहीं लगा बल्कि बहुत बड़ा यश और प्रशंसा प्राप्त हुई। यह मेरी भूल थी कि उसके विषय अनुचित कल्पनाएं अपने मन में उत्पन्न कीं।

यह विचार कर उसने अपना भेष बदल लिया और बृन्दाबन में आ गया। तीसरे पहर का समय था मीरा अकेली एक मन्दिर की सीढी पर बैठी हुई ईश्वर के भजन गा रही थी, एक जटा जूट धारी साधु उसके समीप आया और जब मीरा भजन गा चुकी, उसने सन्मुख आ कर प्रार्थना की।

मीरा ने कहा "महात्मा! मैं स्वयम् भिखारिणी हूं मेरे पास क्या धरा है जो आप को दूं।

साधू ने कहा "देवी! मैं क्षमा मांगता हूं।"

यह कह कर उसने अपने सिर से फ़क़ीरी पगड़ी अलग

की ओर मीरा के चरणों की ओर झुका, परन्तु मीरा ने उस को तुरन्त ही पहचान लिया और उसके चरण पकड़ कर रोक लिया और रो कर कहने लगी "प्राण नाथ! आप को अब अभागी मीरा की सुध आई है"।

पति पत्नी का मिलाप बहुत ही विचित्र था, कुम्भ अपनी स्त्री को चित्तौड़ वापस लाया, प्रजा इस बात से बहुत प्रसन्न हुई। अब मीरा छैः महीने चित्तौड़ और छः महीने बृन्दावन में रहने लगी और स्वतन्त्रता के साथ अपना समय मालिक के भजन और उपासना में खर्च करती रहती थी। और इस प्रकार प्रेम और भक्ति में ज़िन्दगी गुजारते हुए उसने द्वारका जी में अपने प्राण त्याग दिए।

मीरा के धर्म्म मत और भक्ति भाव पर ज्योति डालने के अभिप्राय से हम यहां एक भजन अंकित करते हैं जिस का अध्ययन मनोरञ्जनता से खाली न होगाः—

भजन

मीरा मन मानी सुरति शील असमानी (टेक)

जब२ सुरति लगे वा घर की पल २ नयनन पानी,
जीवन पीर तीरसम सालत कसक२ कसकानी ॥१॥
रात दिवस मोहे नींद न आवे भावे अन्न न पानी,
ऐसी पीर बिरह तन भीतर जागत रैन विहानी ॥२॥
ऐसा वेद मिलै कोई भेदी देश विदेश पिछानी,
तासों पीर कहू तन केरी फिर नहीं भरमो खानी ॥३॥

खोजत फिरूं भेद वा घर को कोई न करत बखानी,
रैदास सन्त मिले मोहे सतगुर दीना सुरति शब्ददानी ॥४॥
मैं मिली जाय पाय पिय अपना तब मेरी पीर बुझानी,
मीरा खाक खल्क सिर डारी मैं अपना घर जानी ॥५॥

मीरा ! तू धन्य थी, तेरा प्रेम मुबारक था, जब तक हिन्दी भाषा बोलने वाली आर्य्य सन्तान वर्त्तमान है तेरा नाम प्रत्येक स्थान में आदर और सन्मान के साथ लिया जायगा, और तेरा पवित्र भाव हम सब को परमात्मा की भक्ति का मार्ग दिखाता रहेगा ।

---

(२७)

आल्हा ऊदल और उनकी माता देवल देवी ।

अब आ के डट गए नहीं हटने के याँ से हम ।
राही करेंगे अब तो अदू१ को सुये२ अदम३ ॥
दुश्मन बहुत हैं दिल मगर अपना नहीं है कम।
राजपूत आगे बढ़ के हटाते नहीं क़दम ॥
हम और खौफ जां से लड़ाई को छोड़दें ।
देखा नहीं कि शेर तराई को छोड़ दें ॥

(१) दुश्मन (२) ओर (३) यमपुरी ।

आल्हा ऊदल का वृतान्त संयुक्त प्रान्त के संपूर्ण जिलों में विख्यात है। जिस समय बरसात के दिनों में गाँव के रहने वाले ढोल बजा कर आल्हा गाने लगते हैं एक सभा बन्ध जाती है और सुनने वालों के हृदय बल्लियां उछलने लगते हैं। जोश की यह दशा होती है कि कभी युद्ध की नौबत आ जाती है। उन सूबों में जिन में कि यह विशेष राग गाया जाता है उस का नाम ही आल्हा छन्द है और अब हिन्दी भाषा में पुस्तक की न्याईं मुद्रत भी हुआ है। इस समय हम केवल उस की अंशिक (जुज़वी) वीरता का वर्णन करते हैं जिस को टाड साहब ने अंकित किया है। जिन को अभिलाषा हो वह आल्हा खण्ड मंगा कर देखें और आनन्द लाभ करें। यदि उपन्यास (नाविल) लिखने के स्थान में हमारे देश के लेखक ऐसे वृत्तान्तों को सुरक्षित कर सकते तो कितनी अच्छी बात होती परन्तु शोक कि लोगों के अध्ययन की अभिलाषा भी कैसी ख़राब हो गई है कि वह अश्लील (बेहूदा) उपन्यास पढ़ते और लिखते हैं और आवश्यक तथा लाभ दायक पुस्तकों की ओर ध्यान नहीं देते।

(सम्पादक व अनुवादक)

दिल्ली का अन्तिम सम्राट महाराजा पृथिवीराज चौहान सामन्त देश की राजकुमारी को भगाए लिए चला आ रहा था। आधुनिक समय के विचारों के अनुसार विवाह की यह विधि चाहे उचित न हो परन्तु राजपूतों में यह रसम सैंकड़ों वर्षों से चली आती थी। वीर अर्जुन ने स्वयम् श्रीकृष्ण भगवान की बहिन सुभद्रा के साथ इसी तरह से विवाह किया था और ऐसे ही अन्य कई एक ने ऐसा ही किया था। क्योंकि

जब सूसायटी किसी प्रकार के रवाज को आदर की दृष्टि से देखने लगती है तो फिर उस से घृणा नहीं की जाती।

जिस समय पृथ्वीराज धावा किए हुए दिल्ली की ओर आ रहा था, महोबा के निकट परिमाल नामी चन्देल राजा ने उस पर आक्रमण किया और कई घायल आदमियों को मार डाला, दिल्ली के आदमी संख्या में थोड़े थे, उस समय तो पृथ्वीराज विवश होकर चला गया, परन्तु अपनी नई विवाहिता पत्नी को दिल्ली में पहुंचा कर जल्दी ही बदला लेने की इच्छा से सिरसवा के मैदान में तम्बू खड़ा किया, यह वही स्थान था जहां दिल्ली के घायल मनुष्य मारे गये थे, चंदेल उसके सामने कब ठहर सकते थे, उसने चंदेलों के बहुत से किलों पर अपना अधिकार कर लिया और चन्देलों को ऐसा नीचा दिखलाया कि जिस की कोई हद नहीं।

अनुमान से जान पड़ता है कि परिमल कुछ बली और साहसी नहीं था, परन्तु उसकी रानी मलिनदेवी चतुर और बुद्धिमान थी, परन्तु उस ने चन्देल सरदारों को इकट्ठा करके सलाह की, बहुत वार्तालाप के पीछे यह बात स्थिर हुई कि जब तक आल्हा ऊदल न आ लें तब तक युद्ध बन्द रहे, और दिल्ली के महाराजा से मुहलत मांगी जाय। सब ने इस बात को पसन्द किया और महोवे के भाट का भाई धावन बन कर पृथ्वीराज के तम्बू की ओर चल पड़ा। दिल्ली की सेना फावज नदी के पार आने ही को थी कि यह वहां जा पहुंचा और आदर व सम्मान पूर्वक चौहान् महाराजा के सामने पेश किया गया उसने चन्देल की ओर से नज़र भेंट देने के पश्चात बेन्ती

की "आप को सच्चे राजपूत होकर हमारी दुर्बलता से लाभ उठाना उचित नहीं है। जब तक हमारे देश त्यागी सरदार आल्हा ऊदल यहां न आवे, तब तक लड़ाई बन्द रहे और दोनों ओर से कोई छेड़ छाड़ न करे" पृथवीराज ने इस प्रार्थना को स्वीकार कर लिया और दूत को राजसी पुरस्कार देने के पश्चात विदा कर दिया। उसके जाने के पश्चात चौहान महाराज ने अपने मित्र चन्दवरदाय से जो दिल्ली का भाट था और हिन्दी में बीर कविता का अद्वैत कवि हुआ है सम्बोधन कर के पूछा "चन्द! तुम जानते हो बनाफर क्यों देश से निकाले गए थे और किस अपराध में उन्हें यह दण्ड दिया गया था?" चन्द ने इस के उत्तर में इस प्रकार निवेदन किया "महाराज! जसराज अपने जीते जी चन्देलों की सेना का सरदार रहा, जिधर वह मुंह करता था विजय उसका पांव चूमती थी एक बार ऐसी घटना हुई कि महोबा के राजा ने गोंडों के मुकाबले में शिकस्त खाई जसराज उस समय साथ नहीं था। जब उसने सुना कि चन्देलों की इज्जत गोंडों ने गर्द में मिला दी तो वह धावा मारता हुआ मैदान में आ पहुंचा और शत्रुओं को लोहे के चने चबवा दिए। उनका किला जीत कर महोबा के राज में मिला दिया। और गोंड़ सरदार का सिर काट कर चन्देल राजा के चरणों पर रख दिया, परिमाल जब विजय का झण्डा उड़ाया हुआ महोबा आया तो उसने जसराज का सन्मान करने के लिए पुत्रों को छाती से लगाया, और उनको पुरस्कार तथा जागीरें प्रदान की। मलिनदेवी महोबा की रानी अपने और उस के पुत्रों में कोई अन्तर नहीं रखती थी। जब जसराज का देहान्त हुआ आल्हा कलिंजर के किले में जागीरदार की तरह रहता था,

संयोग से परिमाल का गमन कालिञ्जर की ओर हुआ उसने आल्हा की तेज चलने वाली घोड़ी को देख कर पसन्द किया परन्तु आल्हा को देने से इनकार था।

परिमाल जसराज की सेवाओं को भूल चुका था, क्रोध की दशा में उसने आल्हा को देश निकाला का दण्ड दिया, आल्हा ऊदल ने उस की आज्ञा स्वीकार की परन्तु जाते जाते परिहार सरदार के इलाका को विध्वंस कर डाला क्योंकि उसी की प्रेरणा से उनको यह दण्ड दिया गया था, बनाफर कन्नौज चले गए उनकी माता देवलदेवी भी साथ गई, महाराजा जयचन्द ने उन को जागीर में कई गांव दिए हैं"।

चन्द जिस समय पृथवीराज से यह वृतान्त वर्णन कर रहा था चन्देलों का भाट अपने राजा के दरबार में जा पहुंचा और चन्देलों को मुहलत स्वीकार होने की खबर जा सुनाई, सब ने प्रसन्न होकर जगनिका को कन्नौज रवाना होने की सलाह दी और वह जल्दी से मार्ग तय करता हुआ वहां जा पहुंचा।

जिस प्रकार से जगनिक ने कन्नौज में आल्हा ऊदल के सामने महोबा का हाल वर्णन किया था उस को हम चन्द ही के शब्दों में वर्णन करना आवश्यक समझते हैं वह कहता है:—

"चौहान पृथ्वीराज महोबा के मैदान में तम्बू डाले हुए है। नरसिंह और वीरसिंह दोनों योधा मैदान में काम आए, सिरसवा का इलाका आग से नष्ट कर दिया गया और परिमाल की प्रजा को उजाड़ दिया गया, हे बनाफर के लड़को! सुनो जब से तुम चले आए हो मलिनदेवी तुम्हारे लिए आहें भरती है, वह तुम को अपने पुत्रों की तरह प्यार करती थी,

उस की दृष्टि हमेशा कन्नौज की ओर लगी रहती है, जब कभी तुम उस को याद आते हो तो आंखों से आंसुओं की धारा बहती है, और वह यह प्रायः कह उठती है, शोक! चन्देलों की प्रतिष्ठा जा रही है, यदि महोबा की मर्यादा में फर्क आया, यदि उस की स्वाधीनता के सिर को चौहान ने कुचल दिया तो हे जसराज के पुत्रो! सब से अधिक तुम को शोक होगा, उठो महोबा का खयाल करो।"

परन्तु बनाफर राय के लड़के उत्तर देते हैं "महोबा गारत हो जाय, चन्देल बरबाद होजाय हम को निर्दोश देश त्यागी बनाया, हमारा पिता उनकी सेवा में मारा गया, हमने चन्देल के राज को बढ़ा दिया, जावो कहदो चुगली खाने वाले परिवार को मैदान में भेजो और उस से कहो आज दिल्ली के बहादुरों का सामना करे हमारे सिर महोबा के खम्भ थे, हमने गोड़ों को परास्त किया, हमने चन्देरी और देवगढ़ को उसके राज्य में मिला दिया, हमने यादवों से युद्ध किया, रुहेलों को गारत किया, और कट मरे मैदान में चन्देल का झण्डा खड़ा कर दिया, हमने कछवाहों की फतह करने वाली तलवार की धार को पकड़ लिया, मुलतान के अमीर हमारे आगे से भाग गए, हमने गया को विजय किया, रींवा को महोबा में मिला लिया, अन्तर वेद में आग लगादी, मेवात के किलों को गर्द में मिला दिया जसराज ने दस राजों से कर वसूल किया, हमने यह सब कुछ किया परन्तु हम को देश निकाला पुरस्कार में दिया गया, सात बार चन्देल के काम में मेरे भारी घाव आए और अपने पिता के देहान्त के पश्चात मैंने (आल्हा की जबानी है) चालीस मैदान जीते, और

ऊदल मेरा भाई सात जगहों से परिमाल के पास जय पत्र लाया "अर्थात् सात मुल्क विजय किए। मैंने उस के कुल की इज्जत रखली, परन्तु देख आज मैं देश त्यागी कर दिया गया हूं"।

जगनिक उत्तर देता है "तुम को याद नहीं परिमाल के पिता ने मरते समय अपने पुत्र को जसराज के सिपुर्द किया था तुम्हारा पिता कितना उस का मित्र और अनुग्रहीत था, तुम जसराज के पुत्र हो आज विपद के समय जब वह तुम को देश की याद दिलाता हुआ बुला रहा है कैसे तुम राजा की आवाज़ न सुनोगे जो राजपूत अपने राजा को विपद काल में छोड़ता है वह नर्क गामी होता है, अपने पिता की स्वामि भक्ति और वफ़ादारी को पुनर्जीवित करो, राज भक्ति का मुकुट सिर पर रक्खो, तुम्हारी उत्पत्ति पर उसने हजारों खर्च किए थे, क्या विपद के समय तुम सच मुच उसका साथ न दोगे, न केवल राजा किन्तु मलिन देवी तुम्हारी रानी भी आज्ञा देती है कि तुम बिना किसी संकोच के उसकी आज्ञा मानो वह देवल देवी तुम्हारी माता को याद दिलाती हैं कि महोबा की याद करो, क्यों कि तुम्हारी माता हमेशा कहा करती थी "महोबा और मेरे प्राण साथ २ हैं," यह उसका प्रण हैं और जो प्रतिज्ञा की पालन नहीं करता वह उस समय तक नर्क में रहता हैं जब तक सूर्य और चन्द्र पृथ्वी को ज्योतिर्मान करते हैं,"।

बनाफर के पुत्रों ने कुछ उत्तर नहीं दिया, देवल देवी ने सन्देसे को सुना उस ने पुत्रों को सम्बोधन करके कहा:—

बेटो उठ खञ्जर को अभी हाथ लगाओ,
दुश्मन तिहे शमशेर हों नाम उनका मिटाओ ।
मींह तीरों का बरसे तो कभी मुँह को न मोड़ो,
जीता राजा परिमाल के दुश्मन को न छोड़ो ।
जसराज का खून आज हरीफो को दिखादो,
दुश्मन को मजा उसकी हिमाकत१ का चखा दो ।
दहशत से तलातम२ हो हर एक फौज अदू३ में,
मछली से तड़पने लगें सब खाको लहू में ।
जल जांय अदू आग भड़कती नजर आए,
तलवार पे तलवार चमकती नजर आए ।
तलवारों से सौ टुकड़े अगर होकर गिरो तुम,
मैदाँ से फिरे हो न कभी अब न फिरो तुम ।
तलवारें न हों पास तो हाथों से लड़ो तुम,
हर तरह से मर कर उसी मैदा में गड़ो तुम ।
कुछ ढाल की हाजत नहीं मुश्ताक४ अजल५ को,
दातों से चबा जावो जी तलवारों के फल को ।
इन आँखों के तारे हो कलेजे हो मेरे तुम,
बखशूंगी न मैं दूध अगर रण से फिरे तुम ।
शेरों के हैं यह काम खिचे जिस घड़ी खंजर,

---

(१) मूर्खता (२) तहलका (३) शत्रु (४) इच्छक (५) मौत ।

बेखौफी से रख देवें गला सामने बढ़ कर ।
तोड़ी हैं सफें१ जंग में जब खेत पड़े हैं,
जसराज इसी तौर से मैदाँ में लड़े हैं ।
राजी हूं अगर जान चली जाय तो जाये,
अगर कोई महोबा की न खलकत को सताये ।
उठ बैठो अभी अजमर२ वतन का करो दोनों,
दुश्मन को जिबूं करके जियो या मरो दोनों ।

आल्हा तो माता के बचन सुन कर कांप उठा, परन्तु उदल ने उच्च स्वर से कहा, महोबा पर बिजली गिरे, हम कैसे उस दिन को भुला दें जिस दिन हम को बिना अपराध देश नकाला दिया, महोबा चाहे रहे चाहे जाये, हमारी बला से, आज से कन्नौज मेरा घर है ।

बेटे की बातें सुन कर देवल देवी की आंखें क्रोध से लाल हो गईं । उसने कहा, हाय ! मैं क्या सुन रही हूं, ईश्वर तू ने मुझ को बांझ क्यों नहीं रक्खा, मेरे पुत्र और क्षत्रिय धर्म को तिलांजलि दें, मेरे कोख के जाए और अपने विपद्-ग्रस्त राजा की सहायता से इन्कार करें इतने शब्द उस के मुंह से निकलने पाए थे कि उस पर दुःख का पहाड़ टूट पड़ा, उसने आकाश की ओर हाथ उठाकर कहा "क्या दैव तूने इस अपिमान के लिए मुझे माता होने के कष्ट दिए थे, यह बनाफर के नाम को डबोने वाले हत्यारे लड़के कैसे मेरे पेट से उत्पन्न हुए कपूत सन्तान । अयोग्य लड़को ! युद्ध का नाम सुन कर

(१) कतारें (२) इरादा ।

राजपूत का दिल उछल पड़ता है, तुम राजपूत नहीं हो, न जस-राज के वीर्य्य से तुम्हारी उत्पत्ति है, असावधानी में किसी धूर्त ने मेरा सतीत्व नष्ट किया होगा उसी के वीर्य से तुम उत्पन्न हुए हो, सुन रक्खो यदि तुम धर्मसे पतित होकर मैदान से मुंह मोड़ते हो तो मैं तुम को शाप दूंगी और माता का शाप राजसी पाप से भी बढ़ कर भयानक दुःख देता रहेगा, और जन्म जन्मान्तर में कभी तुम को सुख नहीं मिलेगा।

करते नहीं गर सर को फिदा१ शह के कदम पर,
फिर तुम मेरे फरजन्द२ न मैं दोनों की मादर।
जब दिल हुआ नाराज तो फरजन्द कहां के,
किस काम के वह लाल जो काम आयें न मां के।
गर तुमने नहीं रण की तरफ आज सिधारा,
ईश्वर की कसम मुंह न मैं देखूंगी तुम्हारा।

यह कह कर देवलदेवी चुप होगई, सन्नाटा छा गया, सब के सब सुन्न होगए दोनों बेटों का मुंह कुम्हला गया। उन का चेहरा इस प्रकार सूख गया जैसे कोई किसी नए पौदे के कोमल पत्तों पर पाला पड़ता है निदान वह उठे और हाथ जोड़ कर माता के पांव चुम्बन किए और अल्हा ने ऊदल को सम्बोधन कर के कहा:—

कीजिए बाग निर्मोह होय, करिय न दूसरी बात कोय।
कीजिए युद्ध अब मोह छंडि, चहु आन राय को गर्व खंडि।

---

(१) कुरबान (२) बेटा।

सुनि आल्ह बैन ऊदल बुलाय, दोनों सुबोध भारत्थ भाय।
सामन्त पास बुलाइ लीन, सब सों सुनाय करि बैन कीन।
सेना सुसाठि हज्जार तोलि, उच्चरे आल्ह जिय संग बोलि।
परिमाल शूर सग ही सलाल, चन्देल नोन कीजे हलाल।
लीजिए लोह निर्मोह होय, चाहो सो जीव घर जाहु सोय।

चौपाई।

या विधि आल्ह बनाफर कही। सब राजपूत एक तन सही॥
क्षत्रिय धर्म्म काज सिर दीजे। जो चाहै सो रस्ता लीजे॥

दोहा।

आल्हा मंत्र सुनाय यों, सबन चित्त दिया खेल।
अबहि वरहु सुर अप्सरा नोन उजारि चन्देल॥

दोनों भाई कहते हैं "जिस समय हम महोबा के लिए लड़ कर मर जांयगे। जब हमारे शरीर घावों से छलनी हो जांयगे, जब हमारे सिर मैदान में गेंद की तरह लुढ़कने लगेंगे। जब हम लड़ने वालों से गुत्थम गुत्था होंगे। वीरों के धर्म्म पर चलते हुए चौहान वीरों के साथ रक्त में लतपत होंगे तब हमारी माता को आनन्द होगा।"

भाट ने देखा कि देवलदेवी से प्रार्थना करने में उसे कृतकार्य्यता हुई, दोनों भाई जयचन्द के पास गए और महोबा जाने की आज्ञा मांगी, राजा ने उन को और भाट को पारितोषिक दिए और चलते समय राजपूती धर्म्म पर स्थिर रहने की आज्ञा दी।

राजपूत कन्नौज की ओर चल पड़े, मार्ग में बड़े २ अशगुन दिखाई दिए। जगनिक उनकी व्याख्या करने लगा, आल्हा ने हंस कर कहा "विद्वान भाट! तू चतुर और ज्ञानी है, परन्तु क्या ईश्वर के कार्य्य और आने वाले आगामी काल के हालात के विषय में जान सकता है? ईश्वर ही केवल सर्वज्ञ है। बहादुर राजपूत के लिए सब शकुन अशकुन एक जैसे हैं, परन्तु इस में कोई सन्देह नहीं, मेरा हृदय साक्षी दे रहा है, इस लड़ाई में सब राजपूत मारे जायंगे और चन्देलों की इज्जत को नीचा देखना पड़ेगा।" जब वह आगे बढ़े, सारस दाहने पांव पर खड़ा हुआ मिला, चील्ह के मुख से शिकार छूट कर गिर पड़ा, चकोर अपने जोड़े से अलग हो गया, असील घोड़ों के नेत्रों से आंसू बहने आरम्भ हुए। शृगाल (गीदड़) दिन में चिल्लाने लगे। सूर्य्य मण्डल में काले दाग दिखाई देने लगे।

लाखनसिंह का रङ्ग उतर गया, भय और निराशा ने घेर लिया, परन्तु आल्हा ने कहा यह अशकुन मृत्यु के लक्षण अवश्य हैं किन्तु राजपूत के लिए मौत से बढ़ कर और क्या चीज़ है? जिस का धर्म पर विश्वास है, जो हृदय का पवित्र है उस के लिए मौत शोक नहीं प्रत्युत आनन्द लाती है। राजपूत का जीवन दिक्कत और मुसीबत का जीवन है उस के मार्ग में गुलाब के पुष्प नहीं किन्तु कांटे बिखरे रहते हैं, लेकिन यदि उस के पांव रण क्षेत्र की ओर उठते हैं तो उसे कोई दुःख नहीं, तब वह और किसी बात की भी परवाह नहीं करता। अब हम लोगों को केवल परिमाल को प्रसन्न करने की चिन्ता होनी चाहिए। इस वार्तालाप के पश्चात् सवारों ने घोड़ों के पेड़ लगा दी, और महोबा पहुंचने से पहले

केसरी वस्त्र धारण कर लिया। जिस का हमेशा यह उद्देश्य होता है कि अब सिवाय मरने मारने के और कोई बात बाकी नहीं रह गई है। उन के आने का समाचार सुन कर महोबा में आनन्द बधाव बजने लगा। चन्देल नरेश उनका स्वागत करने के लिए महल से बाहर निकला। और प्रेमपूर्वक छाती से लगा कर महोबा ले गया। महारानी मलिनदेवी देवल देवी से मिली, देवलदेवी ने जगनिक दूत समेत रानी का सन्मान किया, और उस के साथ नगर में दाखिल हुई। दोनों ओर से नज़र भेंट दी गई। रानी ने ऐसे २ जवाहरात भेंट दिए जिनका प्रकाश देख कर आंखें चुन्ध्या जाती थीं। फिर रानी ने आल्हा को बुला भेजा उस ने आकर रानी के सामने घुटना टेक कर प्रणाम किया, मलिनदेवी ने अपना हाथ उस के सिर पर रक्खा और आसीष दी। और एक थाल मोतियों से भर कर उस के सिर पर से निछावर करके ब्राह्मण और उस के साथियों के बीच में बांट दी। आल्हा का हृदय रानी के सलूक को देख कर भर आया। उसने हाथ जोड़ कर कहा माता! यह सिर आप का है जब तक दम में दम है। तेग से, भाले से, हाथ से, पांव से और सिर से महोबा के शत्रुओं को नष्ट करूंगा और संसार देखेगा कि बनाफर के पुत्र अपने स्वामी के लिए किस प्रकार प्राण देते हैं।

किस्मत बुरी थी हम थे हुए आप से जुदा।
लाई है आज भाग्य कि चरनों पे हों फ़िदा।
ताबे हम आप के हैं दिलों जां है आप का।
जो हुक्म हो बताइए लांयें उसे बजा॥

शादी१ हो या कि गम हो शरीके सवाब२ हैं।
हम हर तरह से ताबये हुक्मे जनाब३ हैं।

मलिन देवी ने उत्तर दिया।

मैं क्या कहूं महोबा है अब सख्त बद हवास४।
ऐसा नहीं है कोई जिसे बात का हो पास॥
सब मर मिटे किसी को नहीं है किसी की आस।
सब की जबानों लब पे५ है जारी कलाम६ यास७।
है कौन आज जो हो महोबा के ध्यान में।
सच है किसी का कौन हुआ है जहान में॥
बाकी नहीं है कोई तो बस आप जाइये।
जख्में सनां व खंजरो शमशेर खाइये।
हां आज राजपूती का जोहर दिखाइये।
दुश्मन को कतल कर के लहू में नहाइये॥
आमादा९ वहर१० जंग हो हां गम११ जंग है।
बेचैन दिल है सब्र नहीं वक्त तंग है॥
अब तुम वतन को देखो किसी का न गम करो।
नेजे१२ प नेजे मारो सितम पर सितम करो॥

---

(१) हर्ष (२) पुण्य (३) आधीन (४) बेसुध (५) अधार (६) बचन (७) निराश (८) नोक (९) उद्दित (१०) वास्ते (११) ससय (१२) भाले।

बरछी उठाओ हाथ में तेगे अलम करो ।
दुश्मन के सिरको जिस्मको सबको कलम करो ॥
इज्जत रखो महोबा की तुम उसकी जान हो ।
बुड्ढे की लाजनामे खुदा तुम जवान हो ॥
वक्त ऐसा आगया है मैं कहती हूँ मरने जाओ ।
वक्त ऐसा आ गया है मैं कहती हूँ ज़ख्म खाओ ॥
वक्त ऐसा आगया है मैं कहती हूं जाओ २ ।
दुशमन को ज़ेर कर के महोबा को तुम बचाओ ॥
व्याकुल हुई लबों पे मेरी जान आई है ।
हे धर्म्म पुत्र लाज रखो अब दुहाई है ॥

आल्हा ने रानी के पांव को चुम्बन किया, और फिर निश्चय दिलाया कि वह जसराज की प्राचीन सेवाओं को पुनर्जीवित करने में किंचित कोताही न करेगा ।

यहां तक वर्णन करने के पश्चात चन्द फिर हम को चौहान के तम्बू में पहुंचने का अवसर देता है और पृथ्वी राज को मुहलत समाप्त होने की याद कराते हुए कहता है—

"महाराज ! मुहलत के दिन बीत गए अब चन्देल को मैदान में आने या महोबा छोड़ देने की आज्ञा देनी चाहिए" चन्द्र की प्रेरणा पर परिमाल के पास पत्र भेजा गया जिस में लिखा गया "युद्ध का आरम्भ आप की ओर से हुआ है, न आप हमारे घायल मनुष्यों का वध करते न हम बदला लेने के लिए चढ़ाई करते । आप की प्रार्थना पर लड़ाई बन्द भी की

गई थी मियाद को बीते हुए सात दिन हो गए और यद्यपि आपकी सहायता के लिए कन्नौज से कुमक आगई है तथापि सिंह नाद का शब्द हमें सुनाई नहीं दिया हम ने आगे बढ़ना उचित नहीं समझा अब केवल दो बातें आप को लिखी जाती हैं यदि युद्ध की इच्छा है तो बहुत उत्तम शीघ्र मैदान में आइये अन्यथा दिल्ली की आधीनता स्वीकार कीजिए और महोबा के क़िले की कुञ्जी हमारे पास भेज दीजिए"

परिमाल ने इस पत्र को पढ़ा वह मन में निराश था लेकिन चन्देल सरदारों को बुला कर उनके सन्मुख पृथ्वीराज के दूत से कहा "ऐतवार के दिन मास को प्रथम तारीख को हम आप से मैदान युद्ध में खम ठोक कर मिलेंगे"।

शुक्रवार के दिन पृथ्वीराज ने शंख बजवा दी और डंके पर ३ बार चोट लगवा कर विदित कर दिया की मुहलत की मियाद बीत चुकी झंडा खड़ा किया गया और चौहान सरदार उसके इर्द गिर्द आकर खड़े हो गये और लड़ाई की खुशी में तन में फूले नहीं समाते थे उन के शरीर पर शुगन्धित तेल की मालिश की गई, शरीर पर अतर मर्दन किया गया शंख की ध्वनि से दर व दीवार गूंज उठे।

इस के पश्चात् चन्द अलंकार युक्त और ओजस्विनी भाषा में लशकर की तैयारी और बहादुरों की वीरता का वर्णन करता है उस में बहुत सी बातें पौराणिक विश्वास सम्बन्धी लिखी गई है किन्तु कविता के सुन्दर और हृदय स्पर्शी होने में सन्देह नहीं है। अलबत्ता उस की मिथ्या प्रशंसा आज कल के मज़ाक के विरुद्ध है वह लिखता है। अप्सरायें उन के

गोरे २ शरीरों पर फुलेल लगाती हैं। भौहों पर कज्जल लगाती है। शंख का शब्द सुन कर शिव जी कैलाश से उतर आए समाधि छूट गई। मुण्डमाल के पूरे करने की चिन्ता हुई योगिनियां आनन्द से नाचने लगीं, मांस भक्षण करने वाले पिशाच चौहान चन्देल की सेना के बीच में उछलने कूदने लगे।

बहादुर अपनी कमर से खञ्जर लटका रहे हैं सिरों पर लोहे के टोप बाँध रहे हैं इत्यादि २।

इस रूपक अलंकार को वर्णन करके चन्द कवेश्वर यूं वर्णन करता है, मैं जो कुछ लिख रहा हूं मेरी आंखों का देखा हुआ बृत्तान्त है, यहां यह बात स्मरण रखने योग्य है कि प्राचीन समय में भाटों का बड़ा आदर और सन्मान था उसके कथन पर कभी किसी को एतराज अथवा चूं चरा करने का साहस नहीं होता था, जहां तक इतिहास से सम्बन्ध है चन्द अपनी भान्त का अन्तिम कवि था, उस के पश्चात् फिर किसी को त्रयकाल दर्शी की पदवी नहीं दी गई।

अब हम महोबा की ओर आते हैं सरदार अन्तिम क्रिया के लिए सलाह कररहे हैं, रानी मलिन देवी और आल्हा की माता देवल देवी सभा में वर्तमान है, सब चुप बैठे हैं, रानी प्रसंग चलाने की इच्छा से देवल को कहती है, "हे आल्हा की माता! सम्राट पृथवीराज के साथ हम को कैसे जय प्राप्त हो, यदि हम कर देते हैं तो स्वतंत्रता जाती है, और राजपूती धर्म्म नष्ट होता है, देवल देवी रानी की बात सुन कर सरदारों को सम्बोधन करके पूछता है "वीर पुरुषो! कहो आप क्या कहते हो? और तब आल्हा खड़े होकर उत्तर देता है, हे

धार्मिक माता ! तू अपने पुत्र की बात सुन जो शारीरिक सुखों और भागों को छोड़ कर राज सेवा का दम भरता है वह सच्चा क्षत्रिय और असली मनुष्य है मैं अपना सिर हथेली पर धर कर परिमाल की सेवा के लिये हाजिर हूं मुझे और किसी बात का ध्यान नहीं है यहां तक वीरता और शूरता का काम है किसी को जसराज के पुत्रों को दोष देने का अवसर न मिलेगा, ब्याहता स्त्री यदि जीवित रही तो अपने आप को पार्वती का अवतार प्रमाणित करेगी, सांभर के लड़के मेरे हाथ से जीवित बचकर न जायेंगे, मैं अपने बाप दादों का नाम महान् करूंगा। पुत्र इन्दल ! मैं देवल देवी की इज्जत तेरे सिपुर्द करता हूं"।

रानी ने कहा "चौहान के लड़के सरदार सिंह की तरह भयानक और संख्या में अधिक है, हमारे पास सेना कम है क्यों न कर (खिराज) देकर महोबा को बचालें"।

यह बात सुन कर ऊदल के शरीर में आग लग गई इस ने रानी को सम्बोधन करके कहा, "उस समय आप का ज्ञान कहाँ चला गया था जब निर्दोष मनुष्यों को बध कर दिया था, उस समय मेरी बात किसी ने नहीं मानी, तीन बार मैंने आप से क्षमा प्रार्थना की, फिर हे परिमाल ! जब तक हमारी जान में जान है हम आप के लिए खून बहाने को तैयार हैं, हम लड़ने के लिए हाजिर हैं और वैकुण्ठ में अप्सराओं के साथ विवाह करने के इच्छुक हैं"।

देवल देवी ने कहा "पुत्र ! तूने ठीक कहा, अब इसके सिवाय और कोई उपाय नहीं रहा, कि तू दुशमन के साथ

लड़कर मेरे दूध की पवित्रता और बलको दिखादे, किसानों की नालिश सुनते २ कान बहरे होगए, कृषीकार अपने झोंपड़ों से बाहर किए जा रहे हैं, और कौन जाने इस समय कितने गांव जल रहे होंगे, उन का धुआं आकाश पर उठ रहा है, खेत बनजर किए जा रहे हैं चारों ओर तबाही २ मची हुई है, लेकिन परिमाल ने उत्तर दिया "शनीश्चर सन्मुख है कल हम कैसे शत्रु का सामना करें ?" आल्हा की भौहें चढ़ गई उस ने राजा को सम्बोधन करके कहा जो प्रजा के दुःख को देखकर उसके दूर करने का उपाय नहीं करता वह क्षत्रिय नहीं है, जो शत्रु के आक्रमण के समय जी चुराता है वह क्षत्रिय नहीं हैं उस का आत्मा नर्क में रहेगा और साठ हज़ार वर्ष तक तीन योनियों में भरमता फिरेगा परन्तु जो बाँका लड़ाका अपना धर्म्म पालन करेगा वह सूर्य्य लोक में निवास पावेगा और उसकी कीर्ति हमेशा रहेगी, जब घर और कसबे जल रहे हैं हम कैसे चुप बैठ सकते हैं ?"

कायरता और अत्याचार साथ २ रहते हैं आल्हा ऊदल के बचनों से परिमाल खुश नहीं हुआ और न उसे जोश आया वह अपनी रानी के पास जाकर विलाप करने लगा, मलिन देवी ने कहा "तुम कैसे पुरुष हो देखो बीर चन्देल आज किस आनन्द से मरने के लिये जा रहे हैं आज लड़ो और अपनी सेना को मैदान में स्थिर रक्खो"।

बहादुरों ने अन्तिम बार अपनी प्यारी पत्नियों को गले लगाया और स्वर्ग में मिलने का बचन दिया, बहनों ने भाइयों के शरीर पर हथियार सजाए, और हाथ में तलवार देकर

कहा, बीर आज तुम्हारे वीरता दिखाने का दिन है जो पांव पड़े आगे पड़े या तो शत्रुओं को जय करके आओ या राजपूतों के धर्म्म पर स्थिर रहते हुए सीधे स्वर्ग धाम को चला, माताओं ने मुस्कराते हुए अपने पुत्रों से कहा "आज ही के लिए हमने तुमको नौ मास पेट में रखा था, जाओ हमारे दूध को सुफल करो और अपने पिता का नाम महान करो" बनाफर ने ऊदल और इन्दल को बुलाकर कहा लो अब मैं जाता हूं जसराज का रक्त और देवलदेवी का खून जोश पर है देखें कौन हमारे सामने खड़ा होता है," ऊदल ने कहा यह इरादा मुबारक है मेरा कृपाण भी वालिए सांभर की आँख को अन्धा बना देगा, और यह मेरे सामने से भाग कर कहाँ जा सकता है ? देवलदेवी ने विदा करते समय पुत्रों से कहा "जाओ बेटो ! नमक का पास करो, यदि तुम अपने राजा के लिए बध किए जाओगे तो याद रक्खो स्वर्गी मुकुट तुम्हारे सिर पर होगा, देवलदेवी के चुप होते ही दोनो भाइयों की स्त्रियां एक स्वर होकर बोलीं कौन धार्म्मिक स्त्री अपने पति के पश्चात् संसार में जीती रहना चाहती हैं ? बहादुरों की स्त्रियां यदि मृत लोक में रहेंगी तो उन को सुख नहीं मिलेगा और यह चुड़ैलों की तरह जंगल व मैदान में घूमती फिरेंगी आप चलो हम भी पवित्र करने वाली अग्नि की गोद में बैठ कर तुम्हारे साथ २ वैकुण्ठ को आती हैं।

इस प्रकार एक २ से विदा होकर बहादुर राजपूत हाथी की तरह झूमते हुए मैदान की तरफ झुके, पृथ्वीराज भी तैयार था लोहे से लोहा बजने लगा जिधर आल्हा ऊदल झुकते थे परे के परे साफ हो जाते थे:—

तेग लिए यूं आल्हा आया, ज्यों भेड़ों में शेर समाया।
भगदड़ पड़ी जिधर वह धाया, महा विकट संग्राम मचाया।
बिजली थी या तेग थी उसकी, महिमा कुछ कहि जाय न उस की।
सिर लुढ़कें बरछे वालों के, धड़ लोटें घोड़े वालों के।
ढालें पड़ी जहां तंह देखो, लहू की सरिता को देखो।
तलवारें भुईं माहि पड़ी हैं, ज्यों मछली जल माँहि पड़ी हैं।
ठहर सका नहि कोई रन में, घाव लगे थे सब के तन में।

दोहा।

इस विधि से आल्हा लड़ा, किया विकट संग्राम।
गर्व गंवाया शत्रु का, भय का था नहीं नाम।

(पं० ईशानदेव शर्म्मा)

कई दिन तक युद्ध होता रहा, पृथ्वीराज इन दोनों योधाओं की वीरता को देख कर विस्मत हो गया, उस की बहुत सी सेना केवल इन्हीं दोनों के हाथ मारी गई, अन्तिम दिवस जब तलवार चलाते २ हाथ पांव शल होगए और चन्देलों में से कोई उन की पीठ बचाने वाला नहीं रहा, उस समय अवसर पाकर दिल्ली वालों ने यकदम धावा कर दिया, एक के लिए दो बहुत होते हैं यहां दो के विरुद्ध हज़ारों की भीड़ थी, निदान देवलदेवी के पुत्र स्वर्गधाम को सिधार गए और अपने पिता के रुधिर और माता के दूध को पवित्र कर दिखाया, पृथ्वीराज की जय हुई परन्तु वह चिर स्थाई नहीं थी उस को बहुत दिन तक महोबा पर कबजा रखने का

अवसर नहीं मिला और जैसा कि इतिहास पढ़ने वाले जानते हैं शहाबउद्दीन गोरी व जयचन्द वालिए कन्नौज की लड़ाई में उसको भी नीचा देखना पड़ा।

चन्देलों ने आल्हा की शूरता वीरता देश और जाती की भक्ति की स्मृति रक्षार्थ महोबा से लेकर चुनार तक हजारों देवल तैयार कराये, और यदि आप आज महोबा के शान्दार खंडरों और भारी फसीलों को जाकर देखें तो हर जगह उस सच्चे बहादुर की यादगारें दिखाई देंगी, यह एक कृतज्ञ जाति के वीर पूजा के चिन्ह हैं। मध्य भारत में प्रसिद्ध है कि आल्हा अमर है, और जाति के बच्चों २ के हृदयों में उसकी पवित्र याद को देख कर हम भी कहते हैं कि वह निस्सन्देह अमर है।

देवलदेवी और आल्हा से बहादुर आज इस मुल्क में क्यों नहीं पैदा होते ? वह माताऐं कहां गईं जो सुयोग्य सन्तान उत्पन्न करती थीं, वह उत्तम सन्तान कहां गई जो देश और जाति के लिए छाती की ढाल बनाती थी, क्या हम को उनकी सन्तान और स्वजाति का कुछ गर्व हो सकता है ? प्रत्येक पढ़ने वाला इस प्रश्न का उत्तर स्वयम अपने दिल से पूछें।

हम पर जो मुसीबत हो सितम हो सो रवा है।
कम हिम्मतों नादानों की बस ये ही सज़ा है॥

(२८)

संयोग्यता कन्नौज की राजकुमारी

मैं चाहती हूँ जौहरे शमशेर दिखाओ।
आंच आए न औरों पै तुम्ही बरछियां खाओ॥

खुद सीना सिपर बन के इस आफ़त को हटाओ ।
कुछ देर न हो मुल्क को दुश्मन से बचाओ ।
जयचन्द अदू कौम है तुम कौम के सिरताज ।
तुम कौम पें मिट जावो यह हस्ती की है मेराज ।

उस मनुष्य का पैदा होकर मर जाना अच्छा है जिसमें अपने देश की भक्ति नहीं है । वह मनुष्य पशुओं से निकृष्ट है जो अपनी जाति के नाम पर छाती को ढाल बनाने और अपने प्राण निछावर करने के लिये तैयार नहीं है । कुपूत है वह बालक जो अपनी माता की इज्जत की रक्षा से बेसुध है । धिक्कार है उस मनुष्य को जिसका दिल देश और जाति का नाम लेते ही बल्लियों नहीं उछलने लगता ।

चौपाई

पूत कपूत ने देय विधाता । बाँझ रहे जग में वरु माता ॥
ऐसे पुत्र से कन्या भली । जो न शत्रु को डारे दली ॥

जब संयोग्यता महाराजा पृथ्वीराज को शहाबउद्दीन गोरी के साथ मैदान युद्ध में लड़ने के लिए भेज रही थी तो उपरोक्त शब्द उच्चारण किए थे । उसके पिता जयचन्द ने ईर्षा के बश होकर देश घातकता और जातीय घातकता की थी, उसने देश को शहाबउद्दीन के हाथ बेच दिया । जिस प्रकार कोई अधर्म्मी हिन्दू कसाई के हाथ गाय बेचता है, जिस ने अपने दूध से आयु पर्यन्त उसकी और उसके बाल बच्चों की पालना की और अब पापी ने उसको बध करने के लिये कसाई को

सौंप दिया। भारत के इतिहास में जयचन्द से अधिक शरम-नाक कोई काम नहीं आता। इस देश को आगामी सन्तान चाहे वह किसी मत वा सम्प्रदाय की क्यों न हो इस देश द्रोही के नाम पर हमेशा लानत भेजती रहेगी। जयचन्द ने किस प्रकार इस देश का सत्या नास किया निम्न लिखित वृतान्त से विदित होगा।

बारहवीं सदी के अन्त में कन्नौज नगर में एक राज कुमारी रहती थी उसका नाम संयोग्ता था उस के अद्वितीय रूप और गुण ने अनेक राज वंशों को विनष्ट करा दिया। और हिन्दू मुसलमानों के हाथ में सहज शिकार की तरह कैद हो गए। उसके सम्बन्ध में जो घटनाएं वर्णन की जाती हैं वह बहुत विचित्र हैं।

उस समय में भारत वर्ष का देश चार राज्यों में विभक्त था, कन्नौज, दिल्ली, मेवाड़, और गुजरात। दिल्ली का महा राजा सारे देश में पिथौरा अथवा पृथ्वीराज के नाम से प्रसिद्ध था, वह राजपूतों में सब से अधिक प्रतिष्ठित और बहादुर था। दिल्ली का राज्य बली आवश्य था किन्तु कन्नौज उस से भी अधिक बलवान था उसकी सेना में अस्सी हज़ार सन्नाहधारी, पैंतीस हज़ार सवार, तीन लाख पियादे, दो लाख तीरन्दाज, और कई हजार हाथी थे। और यह बात सर्व साधारण में विख्यात थी कि जयचन्द वालिए कन्नौज अपने समय में दुनियां के बलवान बादशाहों में गिने जाने के योग्य था। उसकी राजकुमारी संयोगता इतनी सुन्दर थी। और ऐसे उच्च गुणों से अलंकृत थी कि उस की प्रशंसा में

कवियों ने अनेक छन्द रचे थे। कवीश्वर कहते हैं जयचन्द इस कन्या को बहुत प्यार करता था और उसकी प्रजा भी राजकुमारी को दिल से चाहती थी।

यह महा सुन्दरी कन्या जीवन के किसी आश्रम में प्रविष्ट होकर अपना नाम महान् कर सकती थी। परन्तु जय चन्द की दुष्ट प्रकृति ने ऐसी घटनाएं उत्पन्न कर दीं जिस से संयोग्यता भारत वर्ष के इतिहास में अजर अमर हो गई। जयचन्द ने अपने सारे शत्रुओं को पराप्त कर दिया था। उसको अपनी सेना पर गर्व था। और वह समझने लगा कि अब दुनियां में मेरे जैसा कोई नहीं है। उसने राजसू यज्ञ की इच्छा की जिस में केवल राजे महाराजे सेवा सम्बन्धी काम पूरे करते है। युधिष्टिर के पीछे फिर किसी को ऐसे यज्ञ का साहस नहीं हुआ यहां तक कि महाराजा विक्रमादित्य ने जिसका संवत् आज तक प्रचलित है और जिस के संवत् ने युधिष्टिर का संवत् बन्द करा दिया इस बात का साहस नहीं किया, इस राजसूयज्ञ के साथ राजकुमारी संयोग्यता का स्वयम्बर भी होना स्थिर हुआ था। अर्थात् राजाओं महा राजाओं में से जो वहां उस अवसर पर वर्तमान हों, उन में से वह अपने लिए किसी को पति वरण कर सकती थी।

सारे भारत वर्ष में इस राजसूयज्ञ की धूम थी। सारे आर्य्यवर्त के राजे उस अवसर पर पूरे ठाट बाट के साथ संयोग्यता के विवाह की अभिलाषा से गए थे। किसी को जयचन्द के राजेश्वर होने में एतराज नहीं था, केवल दो राजे इसके विरुद्ध थे। एक दिल्ली का पिथौरा (पृथ्वीराज) दूसरा

उसका मित्र चित्तौड़ का महाराना समरसिंह, इन दोनों नरेशों ने आने से इनकार कर दिया और कहला भेजा हम अपने आप को जय चन्द से किसी बात में कम नहीं समझते।

जब उनके विरोधता की बात जयचन्द को मिली तो उसका मुंह मारे क्रोध से लाल हो गया, क्यों कि यदि एक राजा को भी आधीनता से इनकार हो तो धर्म्म शास्त्र के अनुसार कभी कोई जन सम्राट नहीं कहला सकता। जब तक कि उनको परास्त करके उनसे आधीनता की प्रतिज्ञा न कराले, आवश्यक था कि दिल्ली व चित्तौढ़ पर चढ़ाई की जाय परन्तु लोभी पुरोहितों ने इस विचार से कि लड़ाई झगड़े में उन का स्वार्थ सिद्ध न होगा। जयचंद को सलाह दी "राजन्! शास्त्र कहता है कि ऐसे अवसर पर शत्रुओं की छवि से काम लेना चाहिए, उनकी तस्वीर बनवा कर रख दीजिए और उस से काम निकल जायगा। जयचंद ने इस सलाह को पसन्द किया, दो मूर्तें सोने की गढ़ी गईं, पृथ्वीराज की मूर्ति दरवान की तरह फाटक पर खड़ी की गईं।

पृथ्वीराज ने सुना कि उसकी मूर्ति बनाकर उसका अभिमान किया गया है उसने बदला लेने की सौगन्ध खाई और उसी समय अपना भेष बदल कर पांच सौ चुने हुए राजपूतों को साथ लेकर यह मंसूबा किया कि भरे दरबार के समय मूर्ति को उठा लाएंगे, देखें हमें कौन रोक सकता है? कन्नौज में आन कर इन बहादुरों ने सर्व साधारण की भीड़ में मिल कर ठीक दरबार के समय मूर्ति पर धावा किया और उसे उठा ले गए यह बड़ी वीरता का काम था दोनों ओर के लाखों सैनिक मारे गए किन्तु पिथोरा कुशल पूर्वक निकल गया।

कन्नौज में प्रत्येक मनुष्य पिथौरा की वीरता की प्रशंसा करने लगा कि किस प्रकार वह जान जोखिम में पड़ कर लाखों आदमियों को नीचा दिखा गया, जब संयोग्यता ने उसकी प्रशंसा सुनी तो उसका हृदय विस्मित होगया और उसने प्रतिज्ञा कि "विवाह करूंगी तो पिथौरा से करूंगी नहीं तो कांरी रहूंगी" भारतवर्ष में हिन्दू स्त्रियां पुरुषों की बीरता को सब गुणों से श्रेष्ट और उत्तम समझती थीं।

इस हार से जयचन्द को जो दुःख हुआ उसका वर्णन करना कठिन है, यज्ञ भंग होगया सारी बड़ाई खाक में मिल गई, वह लाचार हो कर रह गया, निदान स्वयम्बर की रीति होने का समय आ गया उस समय भी पिथौरा की मूर्ति बना कर रक्खी गई संयोग्यता ने घूम फिर चारों ओर दृष्टि की और जब उस से कहा गया कि यह महाराज दिल्ली पत की मूर्ति है तो उसने तुरन्त उसको जयमाल पहना दी, यह दूसरी घटना थी जिसने जयचन्द के हृदय को टुकड़े २ कर दिया, उस ने अपनी राजदुलारी से कहा पृथ्वीराज मेरा महा शत्रु है तूं किसी और को बरण कर, संयोग्यता के नेत्र क्रोध से लाल हो गए उसने कहा "वह मेरा पति हो चुका क्षत्रानी अपने प्रण को नहीं बदलती," जयचन्द क्रोध से होठ चबाने लगा, उस ने आज्ञा दी संयोग्यता बावली होगई है इस को लेजा कर कैद करो, शाही नौकरों ने तुरन्त उस के कोमल हाथ पावों में भारी जंजीरें डालकर बन्दी घर की ओर ले चले।

पिथौरा दिल्ली में था इस राजसू युद्ध में बड़े २ शूरमा काम आ चुके थे अब कुछ दिनों के लिए शान्ति से बैठने की

इच्छा थी। परन्तु जब उसको संयोग्यता के वरण करने और कैद होने की खबर पहुंची तो उसका वीर रुधिर उबलने लगा, उसने अपने बचे खुचे सरदारों को एकत्र किया और कहा "मित्रो! कन्नौज से ऐसी खबर आई है तुम क्या सलाह देते हो" सरदारों ने मियान से तलवार खींच ली और कहा "जिसने दिल्ली के नाम को बे इज्जत करना चाहा है उस को इस तलवार से सज़ा दी जायगी और दिल्ली की रानी जीती जागती महल में लाई जायगी। अब क्या देर थी पिथौरा ने उसी समय फौजी वस्त्र धारण किए। साथियों ने भी इसी प्रकार किया और केवल सौ शूरमा इस अवसर पर दिल्ली की इज्जत कायम रखने के लिए कन्नौज की ओर रवाना हुए, इन में चन्द नामी भाट भी था जिस की कविता की प्रशंसा का वर्णन पाठकों ने सुना होगा।

चन्द धावन बन कर कन्नौज के दरबार में गया उस के साथ पिथौरा और सौ सरदार भेष बदले हुए सेवकों के भेष में थे। उसने दरबार में जाकर जयचन्द से कहा "महाराज! क्षत्रिय किसी स्त्री की आपदा सहन नहीं करते, दिल्ली की महारानी नाहक कैद की गई है उसे बन्धन रहित कीजिए ताकि यह झगड़ा अधिक न बढ़े। क्योंकि जब कभी ऐसी घटनाएं हुई हैं तो दुनिया के इतिहास का पृष्ट बदल गया है। यदि आपको रामायण और महाभारत के वृतान्तों से अवगति है तो फिर महारानी के साथ ऐसा सलूक करना वृथा है"। जयचन्द को क्रोध तो अवश्य आया परन्तु चन्द धावन बन कर गया था, उसने क्रोध को थाम कर कहा संयोग्यता मेरी

पुत्री है मुझ को पूरा २ अधिकार है चाहे जिस प्रकार रक्खूँ । चन्द ने दो बार फिर समझाया किन्तु कोई शिक्षा उस ने स्वीकार न की । निदान वह निराश होकर डेरे पर लौट आया और उस के सौ साथी भी लौट आए ।

रात के समय जब सब गाढ़ निद्रा में थे सौ राजपूत रस्सी के द्वारा महल पर चढ़ गए । उन को पता मिल गया था कि राजकुमारी किस जगह कैद है । वहां जा कर उस को निर्बन्ध किया और अपने साथ लेकर दिल्ली का मार्ग लिया । जयचन्द को पृथ्वीराज के आने का कुछ भी सन्देह न था, नहीं तो वह कदापि इतना गाफ़िल न रहता, जब वह संयोगिता को लेकर कन्नौज की गलियों से निकला, तो महाराज जयचन्द को खबर की गई, लाखों मनुष्यों ने इने गिने मनुष्यों का पीछा किया, अभी वह बहुत दूर नहीं गए थे, नगर से थोड़े फासले पर मुठ भेड़ हुई । चौहान आग के परकाले थे । दम के दम में कन्नौज के हजारों सिपाही खाक और खून में सो गए और इस प्रकार शत्रुओं को बध कर के दिल्ली का महा राजा आगे बढ़ा, एक बार और शत्रुओं से सामना हुआ इस बार भी उस की जीत हुई । और प्रभात होने से दो घण्टे पहले केवल इने गिने मनुष्य दिल्ली की ओर तेजी के साथ जाते हुए दिखाई दिए फिर किसी ने उन का पीछा नहीं किया जब पिथौरा दिली के राज मन्दिर में दाखिल हुआ तो केवल बीस सरदार उस के साथ रह गए थे । शेष सब के सब मारे गए थे । चन्द कहता है उस ने दिली की आबरू रख ली, महारानी को कैद से छुड़ा ला कर अद्वितीय नाम प्राप्त किया, परन्तु

शोक ! जिन खम्भो पर दिल्ली राज की नींव स्थापित थी वह सब नष्ट हो गए ।

जयचन्द इस घटना से बहुत निराश हुआ कन्नौज की सेना को इने गिने चौहानों के हाथ से हार पर हार खाते देख कर समझा मैं अकेले बदला न ले सकूंगा उस ने अपनी निज पुत्री के विधवा करने और देश को तुर्कों के हाथ में सौंपने की इच्छा से कौमी नमक हरामी का टीका अपने माथे पर लगाया और गौर व गज़नी के मुसलमान बादशाह शहाब उद्दीन गौरी को सन्देसा भेजा कि आओ मैं तुमको भारतवर्ष का बादशाह बना दूंगा परन्तु तुम दिल्ली बंश को इति श्री कर दो। आर्य्यावर्त के इतिहासमें कौमी नमक हरामी का यह पहला उदाहरण है। इस से पहले हिन्दू आपस में अवश्य लड़ा भिड़ा करते थे, परन्तु अन्य जातियों के हस्ताक्षेप से बचे रहते थे। महाभारत के पश्चात सैंकड़ों विदेशी बादशाहों ने आक्रमण किया, खुसरू, दारा, सिकन्दर, नौशेरवां, महमद सुबकतगीन सब ने अपनी २ बारी पर कामयाबी के साथ चढ़ाई की परन्तु किसी को इस मुल्क में पांव जमाने व राज्य करने का अवसर नहीं मिला, जयचन्द की मूर्खता और दुष्टता ने इस का नाश करा दिया। शहाबउद्दीन अवसर ढूंढ रहा था, वह इस सन्देसे को पाकर दौड़ा आया और उस समय से लेकर आज तक भारत बासी गुलामी के पाश में बन्धे हुए हैं।

सन्ध्या का समय था, पिथौरा संयोग्यता के साथ बैठा हुआ गीत सुन रहा था, गीत चन्द कवि ने उसी की प्रशंसा में

बनाए थे । संयोग्यता प्रसन्न थी क्योंकि पिथौरा सच मुच वीरता का रूप था। वह दासी की तरह अपने पति की सेवा किया करती थी, और उसको वीरता की प्रशंसा सुनने से कभी नहीं उकताती थी। ठीक उसी आनन्द की सभा के समय दूतों ने आकर खबर सुनाई कि जयचन्द ने शहाबउद्दीन को अपनी सहायता के लिए बुलाया है।

लड़ाई की खबर पिथौरा के लिये महा आनन्द दायक थी। भुज दण्ड फड़क उठे, वह सिंहासन से उछल पड़ा और हाथ से तलवार का कबजा पकड़ कर चंद से कहा अब तुम्हारे गीत गाने का समय आया है चलो मैदान में अपनी ओजस्विनी कविता से राजपूतों को शत्रुओं से लड़ने के लिए तैयार करो। संयोग्यता प्रसन्न हुई और अपने पति को हर्ष और आश्चर्य की दृष्टि से देखने लगी।

प्रातः काल शाही सेना दिल्ली के बाहर एकत्र होने लगी पिथौरा घोड़े पर चढ़ कर राजपूतों के बांकपन और साहस को देख रहा था, सब लोग चित्तौड़ के महाराना समरसिंह के आने का मार्ग देख रहे थे क्योंकि यही एक शूरमा था जो हिन्दुओं का सहायक था, शेष सब राजे निर्लज्ज जयचन्द समेत मुसलमानों के सहायक थे, जब विपरीत समय आता है बुद्धि मारी जाती है।

महाराना अमर सिंह के आने पर राजपूत सेना आगे बढ़ी और तरावड़ी के मैदान में जाकर डेरे डाल दिए, महारानी संयोग्यता भी साथ थी। तरावड़ी के मैदान में पहुंचने के दूसरे दिन जब हिन्दू मुसलमानों के मुकाबले पर आने की आशा

की जा रही थी एक नौजवान बांका राजपूत दूत का भेष धारण किए हुए घोड़े पर सवार अकेले जयचन्द के तम्बू की ओर जाता हुआ दिखाई दिया उसकी सज धज और अद्वितीय रूप से राजपूती शोभा बरस रही थी । उसने वालिए कन्नौज के तम्बू के पास पहुंच कर कहा, महाराज से कहो दिल्ली नरेश का मनुष्य आपसे कुछ बात करना चाहता है । थोड़ी देर के पश्चात् उसको अन्दर चलने की आज्ञा दी गई।

जयचन्द तम्बू में अकेला बैठा था उसने दूत को सिर से पांव तक देखा उसने सीस नवा कर प्रणाम किया । राजा ने पूछा तू कौन हैं ? और इस समय किस इरादे से आया है ? नवयुवक ने राजा का पांव पकड़ कर कहा, पिता जी ! मैं अपनी व अपने पति की ओर से क्षमा मांगने आई हूं । जय चन्द ने अब जा कर पहचाना, यह संयोग्यता थी जो मरदाना भेष में अपने पिता के पास आई थीं । जयचन्द ने भौहें चढ़ा कर कहा "हतभाग्य लड़की जा, अब कहने सुनने का समय नहीं रहा" संयोग्यता ने विनयपूर्वक कहा प्यारे पिता ! हम लोगों का अपराध न क्षमा करो किन्तु अपनी जाति पर अवश्य दया करो, थोड़ी देर के लिए सोचो तो सही मन्दिर ढाए जायेंगे शिवाले गिराये जांयगे, धर्म्म कर्म्म सब मिट्टी में मिल जायगे, वंश तबाह होंगे राम और युधिष्टिर की सन्तान बे दीन होगी । अनेक बालक अनाथ होंगे, गांव कस्बे और नगर भस्म कर दिए जांयगे, देश में दुर्भिक्ष और आपदा छा जायगी और क्या आश्चर्य्य पारस व कन्धार की तरह हमेशा के लिए राम व कृष्ण का नाम इस देश से भी उठ

जावे। यह सब आप की अनुचित क्रिया का फल होगा अभी संयोग्यता ने अपनी प्रार्थना समाप्त भी नहीं की थी कि जयचन्द कांप उठा उसने कहा चाहे जो कुछ हो अब मैं अपना इरादा न बदलूंगा संयोग्यता की आंख में आंसू बहने लगे महाराज ! आगामी इतिहास में आप का नाम घृणा से लिया जायगा और इस कलङ्क को कभी कोई धो न सकेगा यह वह अपराध है जिसका कोई प्रायश्चित नहीं हो सकता। यह अन्तिम शब्द सुनकर जयचन्द उठ खड़ा हुआ और लड़की को आज्ञा दी बाहर चली जाओ। संयोग्यता होंठ चबाने लगी उसने चलते समय कहा जयचंद स्मरण रक्खो जिन मुसलमानों के हाथ से तुम आर्य्य जाति को बध करना चाहते हो वह तुम को भी निर्दयता से बध करेंगे । उस समय लज्जित होगे और अपने किए पर पछताओगे" । यह कहकर राजकुमारी संयोग्यता बाहर चली आई और जिस प्रकार आई थी उसी प्रकार अपने पति के तम्बू की ओर चली गई पृथ्वीराज उसका मार्ग देख रहा था। संयोग्यता ने आकर पति का हाथ पकड़ लिया "प्राणनाथ ! तुम ने मुझको धर्म्म की शिक्षा दी है, सो अब शत्रू को परास्त करो। लड़ते समय मेरा खयाल कदापि न करना, यदि तुमने मैदान से स्वर्ग को सिधारा तो मैं भी परछाईं की न्याईं तुम्हारे पीछे २ आऊंगी। मौत हम को पृथक न कर सकेगी हम उस दशा में भी एकत्र रहेंगे। जयचन्द पर जाति का खून सवार है"। पिथौरा ने आश्चर्य्य की दृष्टि से अपनी रानी को देखा यह सच मुच राजपूतनी के शब्द हैं यह मैदान युद्ध में भी मेरे कान में गूंजते रहेंगे।

जब तक इन का प्रभाव मेरे हृदय पर रहेगा क्या मजाल कि कोई मेरे सामने खड़ा हो सके।

दूसरे दिन तरावड़ी के मैदान में युद्ध हुआ जयचन्द अपने जामात्र की ताक में था उसको देखकर चीते की तरह झपटा और तलवार के वार से मारने लगा, पिथौरा महावीर था उसने अपने आपको बचा लिया, जयचंद का वार खाली गया थोड़ी देर के बाद जयचंद हार गया यदि वह चाहता तो सदा के लिए उसे सुला देता परन्तु उदार हृदय पृथ्वीराज ने मुस्करा कर कहा महाराज! उठो संयोग्यता के ख्याल से मैं तुमको घायल करना नहीं चाहता इसके पश्चात् उस का शहाबउद्दीन से मुकाबला हुआ दोनों बहादुर थे परन्तु राय पिथौरा उस से बलवान था उसने उसको गिरा दिया और निकट था कि उसका सिर उड़ादे कि इतने में बहुत से मुसलमान दौड़े आए और शहाबउद्दीन को उठा ले गए।

पृथ्वीराज की जय हुई। जयचन्द लज्जित होकर कन्नौज की ओर लौट गया। संयोग्यता को इस विजय से आनन्द हुआ और उसने महा आनन्द से पति का स्वागत किया परन्तु चतुर महारानी को हिन्दुओं के इस प्रकार मुसलमानों से मिलने से भय था उसने कहा जब किसी जाति के बुरे दिन आते हैं तो उसकी बुद्धि मारी जाती है। और वह अपने भाई बन्दों की बरबादी के लिए विजातियों से मिल जाते हैं। अस्वाभाविक बात उसके आगामी अधःपतन का लक्षण है। मूर्ख से मूर्ख पशुओं में भी यह बात नहीं होती उसने इस विजय के पश्चात् फिर जयचन्द से मिलाप करने की चेष्टा की परन्तु

दुष्ट जयचन्द मनुष्यत्व से गिर चुका था। बदला लेने की प्रबल आग उसके हृदय में दहक रही थी । उसने एक नहीं सुनी और हिन्दुओं की विरुद्धता दिन प्रति दिन बढ़ती गई।

इधर पृथ्वीराज के मन में भी इस असाधारण विजय से अनुचित गर्व उत्पन्न हो गया, वह जयचन्द आदि राजाओं को तुच्छ समझने लगा और अपनी सेना की तैयारी से बेसुध बन कर आनन्द मनाने लगा । जयचन्द ने अवसर देख कर फिर शहाबउद्दीन को बुला भेजा वह फिर आया और जब हिन्दुओं का अन्तिम सिरताज इस प्रकार आलस्य और गर्व मदिरा में चूर होकर आनन्द मना रहा था शहाब-उद्दीन का संदेशा पहुंचा "आओ मैदान युद्ध में मुकाबला करो। पृथ्वी-राज का नशा उत्तर गया, समझा इस प्रकार की गफलत उचित नहीं थी । संयोग्यता बराबर समझाती रही थी कि तुच्छ से तुच्छ शत्रु को छोटा नहीं समझना चाहिए, परन्तु कौन सुनता था उसकी उन्नति का समय हो चुका था, जो लोग स्त्रियों को मूर्ख और अज्ञान समझकर उन की सम्मति का आदर नहीं करते वह स्मरण रक्खें कि यह उन की आगामी खराबी का लक्षण है। स्त्री पुरुष दोनों का गृहस्थाश्रम समान दर्जा है। यह एक अस्तित्व के विविध अंग है । बाएं हाथ के काटने दाहना हाथ अपने आप दुर्बल हो जाता है। स्त्री वास्तव में पुरुष की सच्ची सहायक बनकर उत्पन्न हुई है। जाति का बनाना वा बिगाड़ना उसी के हाथ में है? जो स्त्रियों को घृणा के दृष्टि से देखते हैं वह न केवल अपने आप को ही हानि पहुंचाते हैं किन्तु जाति की भी हानि करते हैं।

संयोग्यता ने इस प्रकार पति को देख निराश होकर कहा प्राणनाथ ! जाओ क्षत्रियों का धर्म्म है कि देश की रक्षा करें अपना कर्तव्य पालन करो।

पृथ्वीराज अपने सरदारों को लेकर मैदान में आया, वह और उसके साथी सिंह की तरह लड़ने लगे, जिधर मुंह किया परे के परे साफ हो गए, शत्रुओं में खलबली पड़ गई उनके पांव उखड़ने लगे।

हमले जो किए जुलम शआरों को भगाया।
मैदाँ से लईनों की कतारों को भगाया॥
लश्कर के पियादों को सवारों को भगाया।
यक एक बहादुर ने हजारों को भगाया॥

परन्तु उसका अन्त समय पहुंच चुका था, दिल्ली की सेना न केवल संख्या में बहुत थोड़ी थी, बलिक राय पिथौरा के साथी इने गिने रह गए थे। एक के लिए दो बहुत होते हैं। पिथौरा की बीरता काम नहीं आई वह घायल होकर गिर पड़ा, शहाबउद्दीन उसको कैद करके ग़ज़नी ले गया, और वहीं भारतवर्ष के अन्तिम सिंह ने प्राण त्याग किए। उसके मरते ही वह झण्डा जो सूरज की तरह किले की दीवारों पर लहराया करता था सदा के लिए नीचे गिर गया और किंचित ज्ञाति द्रोहियों की दुष्टता ने हिन्दुओं को ऐसा मुंह के बल गिराया कि आज तक उन को उठना नसीब नहीं हुआ।

संयोग्यता ने जब अपने पति का हाल सुना अवाक हो गई और चिता की तैयारी की आज्ञा दी। धरती के नीचे सुरंग

में बारूद भर दी गई, उस पर चिता संवार दी गई, और महारानी ने गैरतदार सहेलियों को निमंत्रण दिया कि आओ अपने २ पतियों की मृत्यु में साथ दो। असंख्य स्त्रियां उसके पास आईं और खुशी २ चिता पर बैठ गईं। मश्याल के द्वारा चिता में अग्नि दी गई, आग दम के दम में भभक उठी, उस की ज्वाला आकाश तक पहुंचने लगी, फिर तड़ाके का शब्द हुआ और इस प्रकार असंख्य नारियों की दमके दम में इति श्री हो गई। जब शहाबउद्दीन दिल्ली पहुंचा, इस भयानक दृश्य को देख कर अवाक होगया। उस ने वहां आकर कुतुबउद्दीन एबक नामी गुलाम को अपना प्रतिनिधि नियत किया और जब से आर्य्यावर्त की सन्तान ने इन गुलामों की आधीनताई स्वीकार की, वह सच मुच के गुलाम बन गए और फिर उनकी अपनी उन्नति व सुधार का अवसर नहीं मिला।

जयचन्द ने अपने दामाद का गला कटवाया, देश और जाति की स्वतन्त्रता को मिट्टी में मिलाया, उसे आशा थी कि इस बदला से उसे आनन्द और सुख मिलेगा, परन्तु यह विचार मिथ्या है जो अपनी जाति के साथ नमक हरामी करता है उसके लिए शांति और आनन्द दोनों संसार से विदा हो जाते हैं। दूसरे वर्ष शहाबउद्दीन ने उस दुष्ट पापी को या तो स्वयम् अपने हाथ से वध कर दिया, या जैसा कि कई कहावतें प्रगट करती हैं, वह गंगा में डूब कर मर गया। और इस प्रकार संयोग्यता की भविष्यत वाणी अक्षर प्रति अक्षर सत्य प्रमाणित हुई।

यह महारानी संयोग्यता का संक्षिप्त जीवन चरित्र है

जिसके प्रत्येक अंग पर विचार करने में अनेक हितकर शिक्षाएं प्राप्त होती हैं।

---

(१६)

एक देश अच्युत राजपूत।

हर तरह के दुनिया में बशर१ होते हैं पैदा।
हर घरमें हमेशा हि पिसर२ होते हैं पैदा।
गुल३ बाग में दुनिया में गोहर४ होते हैं पैदा।
इफ़्लाक५ पहां शम्सोकुमर६ होते हैं पैदा।
पर जिस्ममें जान आती है मजकूर७ से जिनके।
बतला दो कहां होते हैं वह नूर८ के पुतले।

चिरकाल हुआ, राजपूताना के एक बड़े नगर के दक्षिणी द्वार से हजारों सवारों का जथा भाग्य आधीन एक ओर को रवाना हुई। उनके मन कुमलाए हुए थे। चेहरों पर उदासी छाई थी, शरीर के विचार से सब सबल और हृष्ट पुष्ट थे, किन्तु किसी की बुद्धि ठिकाने नहीं थी। सब के सब अपने सरदार के साथ चुप चाप चल पड़े उस समय मानो उनको बात चीत करने की सौगन्द थी, इस दल का जो सरदार था वह बलवान, सुन्दर राजपूत था परन्तु वह सब से अधिक दुखी था। उनके वस्त्रों और भेष से उदासी का कारण साफ़

---

(१) मनुष्य (२) पुत्र (३) फूल (४) मोती (५) आकाश (६) सूर्य्य और चन्द्र (७) वर्णन (८) ज्योति।

प्रगट होता था, सब के वस्त्र काले थे सब की ढालें काली थीं, तलवार के मियान काले थे । और जिन घोड़ों पर वह सवार थे वह भी काले रंग के थे । यह सब अपने देश से निकाल दिए गए थे, और फिर लौटकर आने की आज्ञा नहीं थी। इस देश निकाला का विशेष कारण केवल यह था कि राजपूत सरदार महाराजा धीर का सब से बड़ा लड़का था, वीर, धार्म्मिक, विद्वान, चतुर सब प्रकार से राज गद्दी के योग्य था, रणक्षेत्र में उसने अनेकों बार शत्रुओं को परास्त कर दिया था, निकट व दूर के राजकुमार उसकी मित्रता के अभिलाषी थे, परन्तु शोक ! जैसा कि बहुधा देखने में आया है उसकी सौतेली माता ने पिता के मन में उसकी ओर से घृणा उत्पन्न करदी, क्योंकि वह बहुत सुन्दर थी राजा इस पर लट्टू था इस लिए उस की आज्ञा मान कर उसने छोटे पुत्र लाल बापासिंह को गद्दी का स्वामी बना दिया और बड़े बेटे हिम्मतसिंह को देश अच्युत कर दिया, बापासिंह की आयु पन्द्रह वर्ष की थी, वह चाहता था किसी प्रकार पिता जल्द परलोक को सिधारे तो मैं राजगद्दी पर बैठूं, सोजाबाई उस की माता लड़के की इस बुरी वासना को और भी भड़काया करती थी, हिम्मतसिंह ने पिता की आज्ञा को आदर और सन्मान से सुना और अपने अध्यवसाय की खोज में, विदेश की ओर चल पड़ा, वह श्री रामचन्द्र जी की तरह अकेला नहीं था, एक हजार बांके राजपूत उसके साथ थे जिन्होंने सुख में दुख में युद्ध में शिकार में सदा अपने सरदार का साथ दिया था, अब विपद् के समय वह कैसे पृथक रह

सकते थे, वृद्ध राजा इन राजपूतों की सच्ची प्रीति को देख कर प्रसन्न हुआ क्योंकि उनकी समझ में उन का धीर में रखना उचित न था, कौन जाने किस समय यह हिम्मत सिंह की प्रीति से लाल बापासिंह को तख्त से उतार दें, उसने उनको हिम्मतसिंह के साथ जाने की आज्ञा दी, किसी को भी ठहरने के लिए नहीं कहा गया, और इस प्रकार यह वीरों का समूह भाग्य आशरे उठ खड़ा हुआ और अपने प्रिय देश को त्याग दिया।

इन देश त्यागियों के साथ बहुत से अल्पायु नव युवक जिन को शोक और दुःख की दासत्व में रहना किसी प्रकार नहीं भाता था, जिस समय वह नगर से कुछ फासले पर पहुंचे और धीर नगर के कंगूरे आंखों से ओट हुए, उन के दिलों में उमंग की लहरें उठने लगीं और आगामी काल में आशा की छबि ने उनके सामने आकर देश त्याग का दुःख इस प्रकार से भुला दिया कि मानो वह कभी दुखित हुए ही नहीं थे, मीलों यात्रा तिरोहित (तय) करने के पश्चात् इस दल ने एक पहाड़ी नदी के किनारे डेरा लगाया और धनुष बाण के द्वारा जंगली पशुओं को मार अपनी पेट पालना की, जब सब लोग खा पी कर एक स्थान पर बैठकर नवयुवकों ने कहा "हम को बहुत शोक करने की आवश्यकता नहीं है हम आधुनिक राजा के प्रतिकूल विद्रोह का झण्डा खड़ा कर सकते हैं और हमारा हजारों मनुष्यों का दल इस वचन के अनुसारः—

चौपाई—दो मिल कर पर्वत को तोड़ें।
मनुज कहां हस्ती सिर फोड़ें॥

सुगमता से शत्रु को हरा सकते हैं"। जब हिम्मतसिंह ने यह बात सुनी उस नवयुवक को सम्बोधन करके कहा मित्रो ! इस प्रकार विचार अनुचित है, तुम में देश का प्रेम होना चाहिये क्या तुम चाहते हो राजपूत आपस ही में कट मरें ? तुम्हारे हाथ में तलवार है तुम साबित कर दिखाओ कि तुम धर्म और देश की रक्षा कर सकते हो, आर्य्यावर्त में बहु संख्यक अफ़गान और मुगल भरे पड़े हैं, उन को देश से बाहर निकालने की चेष्टा करो। और आपस में लड़ने भिड़ने की इच्छा को त्याग दो स्मरण रक्खोः—

नहिं धरती कुछ तंग है, नहिं हम पाँव विहीन ।
फिर क्यों नहिं साहस करे, योधा चतुर प्रवीन ॥
(देव कवि जी)

सरदार की बातों से नवयुवकों के हृदयों में जोश उत्पन्न हुआ, तत्काल सब के म्यानों से तलवारें निकल पड़ीं और वायु में चमकने लगीं, सब क्षत्रियों ने एक स्वर होकर कहा "चलो हम को मुसलमानों के मुकाबले के लिए ले चलो हम सब प्रकार से बीरता करने के लिए तैयार हैं"।

उस स्थान से कई मील के फासले पर मुगलों का एक किला बना हुआ था जिसका नाम बार था। किलेदार उस समय गुजरात की चढ़ाई पर गया हुआ था, निकट की रियास्तों को दुर्बल देख कर उन की ओर से बे खटके थे और किले की दृढ़ता का कम ध्यान था। हिम्मतसिंह और उसके लड़ाके मित्रों को अच्छा अवसर मिल गया। उन्हों ने विचार किया यदि किसी प्रकार एक बार वह किले के भीतर दाखिल

हो जाय फिर किसी को मजाल नहीं है कि उन के सामने आवे। और इर्द गिर्द के इलाके सुगमता से हमारे अधिकार में आपही आजायेंगे। मुगलों के मुकाबले में जान जोखिम का भय भी था परन्तु वह इस के लिए तैयार थे।

यह इरादा कर के वह किले की ओर चल पड़े, समय अनुकूल था, मार्ग में किसी मुगल से मुठभेड़ नहीं हुई। और थोड़ी ही देर के पीछे बार के कंगूरे इस प्रकार दिखाई देने लगे मानो जिह्वा दशा से उन को अन्दर प्रविष्ट होने के लिए बुला रहे हैं। आनन्द का समय था चारों ओर से बेधड़क होने के कारण मुगल सरदार बाहर शिकार के लिए गए हुए थे। राजपूतों को इसकी खबर मिल गई, वह उन की ताक में छिप कर बैठ रहे जब वह शिकार खेल कर लौट आए और किले में जाने लगे। राजपूत उन पर टूट पड़े। बहुत से मुगल मारे गए। केवल थोड़े से मुसलमान इधर उधर जान बचा कर भाग गए। भीतर से किले वाले ने फाटक बन्द कर लिया। राजपूतों ने इसका उपाय पहले ही से सोच रक्खा था, वह किले की पीठ की ओर चले गए क्यों कि उधर की दीवारें ढलवान थी और चौकी पहरे का उचित प्रबन्ध नहीं था। राजपूत रस्से डालकर दीवारों पर चढ गए और जब बहुत से राजपूत अन्दर पहुंच गए तो उन्हों ने धावा करके झट पट किले का फाटक खोल दिया और हिम्मतसिंह तथा दूसरे मनुष्यों को सहज में किले में प्रविष्ट होने का अवसर मिल गया। इस लड़ाई में केवल इने गिने दस बीस राजपूत मारे गए और इस प्रकार महावीरता देश त्यागी राजपूतों ने एक बहुत मजबूत किले को अपने हाथ में ले लिया।

यह किला पहाड़ की चोटी पर था, तीन ओर से सब प्रकार की रक्षा का प्रबन्ध था चौथी ओर के चटान ढलवान थे और उनके नीचे ही नदी बहती थी उस ओर पहरे का प्रबन्ध व्यर्थ समझ लिया गया था, और किले के भीतर रसद की सामग्री उचित से बढ़ कर थी। पशु भी खूब थे। हथियार गृह तरह २ के हथियारों से भरा हुआ था, और दीवारों के ऊपर जगह २ पर पत्थरों के टुकड़ों का ढेर लगा हुआ था जो आक्रमण करने वाली सेना का सिर कुचलने के लिए आवश्यक और निश्चित उपाय था।

कुछ काल तक राजपूत शान्ति पूर्वक किले में रहे, परन्तु वह निश्चित नहीं थे। इर्द गिर्द के इलाकों में लूटमार करते हुए वह अपने रसद खाना को हर समय आवश्यक सामानों से भरते रहते थे, जब उनके लूटमार की खबर शाही दरबार में पहुंचने लगी तो उन की रोक टोक के लिए सेना भेजी गई जो राजपूतों का अच्छी तरह सामना करने लगी। और किले को चारों ओर से घेर लिया जिससे उनका बाहर निकलना बन्द हो गया। शाही सेना के पास तोपखाना था। इस लिये उसे आशा थी कि राजपूत उसका सामना न कर सकेंगे। परन्तु प्रत्येक मुकाबले में राजपूतों ने उन्हें परास्त किया। किला छीनने के उपाय सोचे गए, चालाकी से काम लिया गया, राजपूत पत्थर के टुकड़ों से धावा करने वालों को कुचल देते थे, उन की कुछ पेश नहीं जाती थी।

आसिफ खां मुगल सेनापति ने निदान हाथियों की सहायता से किला फतह करने का विचार किया। यह किला तोड़ने का बहुत पुराना ढङ्ग है। उस ने हाथियों को फाटक

पर भेजा ताकि मस्तक की ठोकर से फाटक तोड़ डालें । परन्तु राजपूतों ने इस प्रकार तीर व पत्थर बरसाने आरम्भ किए कि हाथियों को भी आगे पांव धरने का साहस नहीं हुआ। आफिल खां ने विवश होकर फाटक के सामने की सड़क पर ऐसी इमारत बनवाई कि पत्थर आदि सब उस की छत पर रह जांय ।

परन्तु यह काम मुश्किल था, गांव वाले जो जबरदस्ती पकड़ कर लाए जाते ते अवसर पाकर भाग जाते थे। हिन्दुओं में उस समय कुछ जातीय प्रेम भी था धर्म का भाव बढ़ा हुआ था, किसी हिन्दू से सहा नहीं जाता था कि वह मुसलमानों के साथ होकर हिन्दुओं से लड़ाई करे। इस के अतिरिक्त उस को मज़दूरी भी नहीं मिलती थी, वह काम आलस्य के साथ करते थे। जब इमारत बन रही थी ऊपर गाय और भैंसों के चमड़े से साया कर दिया गया था, मजदूर बेचारे भय के मारे काम करते रहे, और ज्यों २ उनका काम फाटक के समीप होता गया वह अधिक भय खाने लगे निदान सात आठ दिन की लगातार मेहनत से दीवारें बन गईं और अब आसिफ खां को आशा हुई कि किले के सर करने में कोई कठिनता न होगी ।

जिस दिन इमारत बन कर तैयार हो गई, उस दिन खुशी के मारे मुगलों की छावनी में बाजे बजने लगे। और सलाह हुई कि दूसरे दिन अवश्य किला सर कर लिया जायगा, परन्तु उन को पता नहीं था, कि "मेरा मन कुछ और है विधना के कुछ और।" बार के किले के भीतर एक सुरंग थी जिस को मुसलमान नहीं जानते थे, क्योंकि यह किला राजपूतों का था।

हिम्मतसिंह बुद्धिमान सरदार था, उसने सोचा, इस गुप्त मार्ग से लाभ उठाने का समय आ पहुंचा है।

जब मुगल रात के समय हर्ष मना रहे थे, गारद और पहरे का कोई उचित प्रबन्ध नहीं था क्योंकि वह राजपूतों को तुच्छ समझते थे और आशा नहीं थी कि वह किसी प्रकार किले के बाहर आकर आक्रमण कर सकेंगे। वह यह भी नहीं जानते थे कि हिम्मतसिंह किस लिए चुप है और किस अभिप्राय से दीवारों के बनाते समय कुछ छेड़ छाड़ नहीं की, अस्तु मुसलमान अपनी निद्रा में चूर थे। उन को इस इमारत की रक्षा का कुछ भी ध्यान नहीं था।

अर्द्ध रात्रि के समय दो सौ मनुष्यों का दल साथ लिए हुए हिम्मतसिंह सुरङ्ग के मार्ग से बाहर निकला और मुसलमानों की दृष्टि से बचता हुआ इमारत की छत पर पहुंच कर तेल आदि डाल कर आग लगा दी। वायु प्रचण्ड थी, आग शीघ्रता से फैल गई और दम के दम में सब जल कर भस्म हो गया, कई दिन का परिश्रम आन की आन में नष्ट कर दिया गया, मुसलमान बहुत क्रोधित और व्याकुल हुए, मशालें हाथ में लेकर इधर उधर देखने लगे, परन्तु रात्रि का समय था वह क्या कर सकते थे। जब उनकी व्याकुलता शान्त हुई, हिम्मतसिंह ने अपने मनुष्यों को धावा करने का संकेत किया। राजपूत नङ्गी तलवारें लिए हुए पिल पड़े वह मारधाड़ हुई कि जिसका हिसाब नहीं। असंख्य मुसलमान मारे गए राजपूतों की हानि बहुत थोड़ी हुई।

मुसलमान फिर भी बहुत थे वह इस आक्रमण से निराश

नहीं हुए, दूसरी बार फिर उन्हों ने काम करना आरम्भ किया और अब उन को एक बार आलस्य का फल मिल चुका था, वह अधिक चौकस रहने लगे। इस बार राजपूतों ने आक्रमण नहीं किया। आग लगाने की तो अवश्य चेष्टा की गई, परन्तु कृतकार्य्यता न हुई। निदान जब वह तैयार हो चुकी, हाथियों को फाटक तोड़ने के लिए हूला गया।

आसफ खां के पास तीन जंगी हाथी थे। एक इन में से अधिक बलवान था, किले के फाटक पर लोहे की सलाखें लगी हुई थीं, इस लिए हाथी का सिर बचाने के लिए लोहे का मोटा तवा बांध दिया गया था। हौदा भी लोहे का था ताकि महावत सुरक्षित रह सके।

एक २ कर के यह हाथी फाटक तक लाए गए जब पहला हाथी फाटक के समीप आया उस पर हथियारों की वर्षा होने लगी और उसका शरीर छलनी हो गया, किन्तु महावत को आघात नहीं पहुंचा वह हाथी को आगे बढ़ाता गया जिस समय वह दीवार के नीचे पहुंचा तत्काल ऊपर से एक भारी चटान गिर पड़ा, हाथी घायल हो कर पीछे हटा और इमारत को हानी पहुंचाते हुए भाग निकला। दूसरे हाथी को टक्कर मारने के लिए तैयार किया गया, इसने भी पहले की तरह तीरों और हथियारों की परवाह नहीं की परन्तु जब लोहे की सलाखों पर दृष्टि पड़ी वह भी बेतहाशा पीछे की ओर भाग निकला।

अब केवल एक हाथी रह गया था, जिस की ओर मुसलमानों की आंख लगी हुई थी, यदि कहीं इसने भी कायरता

की तो फिर उनके परिश्रम के व्यर्थ जाने में क्या सन्देह था, परन्तु तीसरा हाथी अधिक बहादुर और धीर बीर था उसने फाटक को धक्का दिया और उस के आघात से किले की दीवार तक हिल गई, राजपूत भयभीत हुए क्यों कि उनका रक्षक केवल मजबूत किला ही था, ।

किन्तु अभी किले के सर होने का समय नहीं आया था, जिस समय हाथी फाटक तोड़ने में बल लगा रहा था, किले की दीवार से एक रस्सी लटकती हुई उस की गर्दन पर पहुंची और बहादुर हिम्मतसिंह उस के सहारे नङ्गी तलवार लिए हुए हाथी के दांतों पर उतर आया उसने आते ही पहले महावत को बध किया, फिर हाथी के सिर पर लोहे की मेख गाड़ दी जिसको वह अपने साथ लाया था, हाथी ने व्याकुल होकर अपना सिर इस ज़ोर से हिलाया कि हिम्मतसिंह नीचे गिर पड़ा, परन्तु उसने अपना काम पूरा कर लिया था और हाथी, बेकार हो गया था, हिम्मतसिंह के बचने की आशा नहीं थी सैंकड़ों मुगल उस की ओर झुके, निकट था कि उस पर वीर मुगलों की तलवारें बरसने लगे कि इतने में यह संभल गया और उसी रस्से के सहारे जल्दी से किले के ऊपर चढ़ गया, मुसलमान देखते रह गए ।

इस अकृतकार्य्यता के पश्चात् मुसलमान ढीले पड़ गए, परन्तु छावनी नहीं उठाई क्योंकि जब चारों ओर से रसद का सामान बन्द हो जायगा राजपूतों के लिए सिवाए भूखों मरने के और क्या चारा था ऐसी दशा में वह कब तक मुकाबिला कर सकते थे।

एक दिन संध्या के समय मुगलों के तम्बू में किसी गवाले ने आकर कहा कि यदि तुम हमको सब से अधिक धनाढ्य बनादो तो हम किले में जाने का रास्ता बतादें. उसने यह भी कहा कि जिस ओर से मैं लेजाना चाहता हूं उधर का मार्ग कठिन है और इसी कारण से दीवारें बहुत ऊंची नहीं बनी हैं और उन पर चढ़ना सहज है, सुगमता से किले पर अधिकार करने का अवसर मिल जायगा, कासिम खां मुगल सरदार का भतीजा बड़ा मनचला और बहादुर था वह बहुत दिनों से अपनी बहादुरी दिखलाने का अवसर खोज रहा था, उसी क्षण उस के साथ जाने को तैयार हुआ।

उस की प्रार्थना स्वीकार की गई, ५०० सिपाही उस के साथ कर दिए गए गवाला उन को पेचदार रास्तों से लेजाकर किले की ओर चला।

कुछ देर में वह नदी के पार हुए गवाला आगे और कासिम पीछे था, सब सिपाही नंगे पांव थे और पहाड़ पर धीरे२ लोहे की मेख गाड़ कर चढ़ गए क्योंकि पहाड़ की चटान और किले की दीवार दोनों ढलवान थीं, मुसलमान चुप चाप अपना काम करने लगे जब सब दीवारों पर चढ़ आए कासिम खां ने गवाले को पीछे कर दिया और आप आगे होगया, जिस जगह वह दीवारों पर चढ़े थे वह अपेक्षा कृत ऊंची नहीं थीं और पहरे पर भी कोई मनुष्य नहीं था मुसलमानों ने जाना अब काम हो गया और किले के हाथ आने में कोई बात बाकी नहीं रही।

कासिम खां का दिल धड़क रहा था उस ने रात के

अन्धेरे में इधर उधर देखना आरम्भ किया, प्रथम इस के कि वह नीचे उतर कर जावे किसी बहादुर मनुष्य के बलवान हाथ ने इस जोर से उसकी छाती पर धक्का मारा कि वह नीचे गिर पड़ा, और एक मुगल जो नीचे खड़ा था, उस पर जा पड़ा, इन दोनों का गिरना था कि मुसलमान घबड़ा गए, तलवारें मियान से निकल पड़ी परन्तु उन पर पत्थरों की ऐसी बरसा हुई कि भागने के सिवा कुछ करते धरते न बना एक पल पहले कासिम खाँ को यह आशा थी कि किला उस के हाथ आजायगा अब वह पहाड़ पर मुर्दह पड़ा हुआ है, उस के बाकी साथी भी या तो पत्थरों की बोछार से पहाड़ ही पर मर गए या भय के मारे भागते हुए नदी में गिर कर मर गए ।

जिस ने कासिम को गिराया वह हिम्मतसिंह का हाथ था, वह रात के समय आप पहरा दिया करता था, कि कहीं पहरे वाले गाफिल तो नहीं हैं, इस अवसर पर उत्तरी दीवार से गुजरते हुए उसने पत्थर गिरने का शब्द सुना कासिम खां दीवार पर चढ़ रहा था, उसने चारों ओर दृष्टि की और कासिम को इस ज़ोर से धक्का मारा कि वह दूसरी ओर धरती पर जा गिरा ।

यद्यपि राजपूत होशियार और बहादुर थे परन्तु वह चारों ओर शत्रुओं से घिरे हुए थे, रसद का आना बन्द हो गया था और यदि वह कुछ दिन और किले में बन्द रहते तो भूकों मरने के सिवाय और कोई उपाय नहीं था, एक दिन जब हिम्मतसिंह इसी विचार में बैठा हुआ था, एक मनुष्य ने

आकर उसे एक पत्र दिया जिस में लिखा था "आप के पिता घोर विपद में हैं आइये और उन को बचाइए, आप की प्राण प्रिया...... यह पत्र पढ़ते ही हिम्मतसिंह अवाक रह गया, थोड़ी देर पीछे उस ने यह सोचा कि अब जल्द चल कर पिता को बचाना चाहिए।

जिस रात को राजपूतों ने किले से निकलने का मन्सूबा किया वह बड़ी अन्धेरी थी बादल गर्ज रहे थे, समय बड़ा भयावना लगता था, मुसलमानों को एक किसान ने कह दिया था कि राजपूत आज तुम पर आक्रमण करेंगे, वह सब तैयार थे, राजपूत किले से निकल कर नदी पार हो चुके थे कि उन पर यवन दल आ गिरा, खूब घमासान की लड़ाई हुई, राजपूतों ने मुगलों को बुरी तरह हराया और रात ही रात अपने घर की ओर चल दिए प्रातः काल मुगलों ने किला पा लिया वह पूर्णतः खाली था।

राजपूत थोड़े ही दिनों के पीछे अपने देश में पहुंचे और उस धरती के नदी नालों टीले पहाड़ों आदि को देख कर उन का दिल भर आया देश की भक्ति नवीन होगई, बाजों ने उसको प्रणाम किया क्यों कि उन की उत्पत्ति उस देश की मट्टी से हुई थीः—

नमस्कार है तुझको हे मातृ भूमि।
करें तेरी भक्ति चरण तेरे चूमी॥

हैं उपकार हम पर बहुत तेरे माता।
तेरे अंश से है बना सर्व गाता॥

है जीना वृथा काम तेरे न आवें ।
दुखी तू हो हम रंग रलियां मनावें ॥
विनय है ईशन की उस प्रभु से ।
कि सींचें तेरी जड़ को अपने लहू से ॥

अभी वह राह ही में थे कि एक सरदार तेज़ी से घोड़ा दौड़ाता हुआ जा रहा था, राजपूतों ने उसको पकड़ लिया और इस प्रकार भागने का कारण पूछा वह बेचारा अवाक रह गया परन्तु जब उस की दृष्टि हिम्मतसिंह पर पड़ी तो उसने आनन्द पूर्वक उस को प्रणाम करके एक पत्र दिया, यह पत्र भी हिम्मत सिंह की स्त्री का था, उस में लिखा हुआ था "जिस प्रकार हो सके जल्द आओ पितृ ऋण का ध्यान रख कर शत्रुओं का सामना करो, तुम्हारा पिता सोजाबाई और लाल बापा सिंह के साथ गरम महल में है और उस के प्राण अथवा स्वतन्त्रता दोनों में से एक अवश्य संकट में है"।

हिम्मतसिंह के लिए अधिक सोचने का अवसर नहीं था उसने परमात्मा को धन्यवाद दिया कि ठीक समय पर पहुंच गया। सम्भव था कि वहां पिता का प्राणान्त हो गया हो किन्तु फिर भी शीघ्र जाने की आवश्यकता थी, फागुन का महीना था राजा ने अपने सरदारों को बसन्ती वस्त्र बांट दिए थे, और उस श्वेत महल में जो मकराना के उज्ज्वल पत्थर से बनाया गया था अपनी छोटी रानी और लाल बापा सिंह के साथ बैठा हुआ था।

हिम्मतसिंह के साथी पैदल थे, इस लिए हिम्मतसिंह ने

उसी दूत के घोड़े को ले लिया और उस पर चढ़ कर अपने पिता के महल की ओर झपटा।

कुछ देर में वह महल के द्वार पर जा पहुंचा, यदि वह इसी प्रकार पिता के पास चला जाता तो आप भी जान जोखिम में पड़ जाता और पिता को न बचा सकता, इस लिए वह गुप्त रूप से छिप कर महल के भीतर गया।

राजा, लाल बापासिंह, और सोजा तीनों आनन्द से बैठे थे, खाने पीने के पदार्थ रक्खे हुए थे, राजा आनन्द से मुस्करा रहा था, क्योंकि उस को सन्देह भी न था कि लोग उस का घात करना चाहते हैं, सोजा बाई पंखा झूल रही थी, ताकि खाने पर मक्खियां न बैठें, बापा सिंह प्रसन्न नहीं था, क्योंकि उसके मन का पाप उसे डरा रहा था, सोजा बाई सिर से लेकर पांव तक जवाहिरात से जड़ी हुई थी, उसने वृद्ध राजा को बिल्कुल अपना वशीभूत बना लिया था, हिम्मतसिंह को दृष्टि में वह ऐसी प्रतीत हुई जैसे कमल पुष्प के तले नागिनी बैठी हो, इतने में रानी कुछ पकवान राजा के लिए लाई, राजा तो बिल्कुल उसके प्रेम में आसक्त था परन्तु फिर भी उस पापिनी के हाथ कांप रहे थे, हिम्मतसिंह ने सोचा दाल में कुछ न कुछ काला अवश्य है। बापा सिंह पर भी एक प्रकार का भय चढ़ा हुआ था, प्रथम इस के कि राजा उस पकवान को खाय, हिम्मत सिंह कूद कर उसके सामने जा खड़ा हुआ।

सब डर गए, राजा और बापा सिंह ने तलवारें म्यान से खींच लीं और अपने नौकरों को सहायता के लिए बुलाया। जब वह आ गए राजा ने उन को सम्बोधन करके कहा, इस

राजद्रोही को जीता कैद करलो, इस का यह साहस कि राज-आज्ञा को भङ्ग कर के महल में आया है। इस का अपराध क्षमा के अयोग्य है, या तो यह बावला हो गया है या राज-द्रोही है। हिम्मतसिंह ने हाथ के इशारे से नौकरों को मना कर दिया कि आगे बढ़ने में कुशल न होगी और आप पिता को सम्बोधन कर के कहा "मैं किसी शत्रुता अथवा आज्ञा भङ्ग के विचार से महल में नहीं आया, मैं केवल आपके प्राणों के बचाने के लिए आया हूं, आप सोजा बाई को कहिए कि यह पकवान जो उस ने अभी आप के सामने रक्खा है। बापा सिंह को खिलावे, इतना सुनना था कि सोजा बाई मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी, पकवान उठा लिया गया और राज वैद्य ने परीक्षा कर के बतलाया कि उस में हलाहल विष मिला हुआ है।

यह सुन कर राजा के कान खड़े हुए, स्त्री के फन्दे में आकर उसने अपने पुत्र को बिना अपराध देश से निकाल दिया था बापासिंह और रानी दोनों उसी समय बन्दी बनाए गए और हिम्मतसिंह को युवराज प्रसिद्ध किया गया।

दूसरे दिन हिम्मतसिंह पिता के साथ राजधानी में आया अपनी स्त्री से मिल कर प्रसन्न हुआ और इस बात के कहने की आवश्यकता नहीं कि पिता के पश्चात वह धोर नगर का राजा हुआ।

देश का प्रेम हो जिसमें मित्रो ! पुत्र उसे हम जानें,
हरी प्रेम हो जिसमें अविचल, साधु उसे हम मानें।

(देव कवि जी)

(३१)

जयसल्मेर की राजपूतनी ।

नारे१ करो ऐसे कि दिले कोह२ दहल जाय ।
जल जाय वह सफ़ वार जिधर तेग़ का चल जाय ॥
रुस्तम हो तो घबरा के सफ़े. जंग से टल जाय ।
मछली की तरह एक से यक आगे निकल जाय ॥
तारीफ़ करें डर के तो खुरसन्द३ न होना ।
अदू४ की किसी बात में तुम बन्द न होना ॥

हिन्दू राजभक्त प्रसिद्ध हैं। वह राजा को जाति का सरदार देश का स्वामी और प्रजा का रक्षक समझते हैं। जब किसी राजा ने अपनी प्रजा की प्रसन्नता का ध्यान रक्खा तो प्रजा ने उस की सेवा के लिए क्या नहीं किया ? आदर सन्मान, आत्म त्याग का कौन सा अङ्ग है जो छोड़ दिया गया है, रामचन्द्र ने प्रजा को प्रसन्न करने के लिए रावण जैसे बलवान बादशाह को नीचा दिखाया, इस नीयत से कि प्रजा प्रसन्न रहे अपने सुख और चैन को परित्याग किया। प्रजा ने इस के बदले में क्या किया ? राम को अपने हृदय में स्थान दिया। अपना उपासनीय समझा । भारतवर्ष का एक कोना ऐसा न मिलेगा जहां राम की प्रतिष्ठा में मन्दिर न बना हो। या उनका पवित्र नाम बच्चों तक की जिह्वा पर न

(३) प्रसन्न (४) शत्रु।
(१) गर्जना (२) पहाड़

हो। उत्पत्ति के समय राम नाम की बधाई बजाई जाती है। विवाह के समय राम और सीता के स्वम्बर के गीत गाए जाते हैं। अन्त में मरते समय "राम नाम सत्य है" कहते हुए मुरदे की लाश उठाई जाती है। दुःख में सुख में हर समय राम चन्द्र की जय की पवित्र ध्वनि से दरो दीवार गूंज रहे हैं। महाराज कृष्ण जी ने इन से भी अधिक प्रजा का उपकार किया था, इनके नाम की भी ऐसी ही महिमा है।

जो लोग इन बातों पर विचार करेंगे उन को मालूम हो जायगा कि प्रजा पालक बादशाह को हिन्दू लोग पीढ़ी प्रति पीढ़ी स्मरण रखते हैं। यहां तक कि अपनी भक्ति के आरम्भ में उन्हें अवतार की पदवी देने तक को तैयार रहे हैं जिस के सत्य अथवा मिथ्या होने के विषय में मत प्रगट करना न हमारा कर्तव्य है न उसकी आवश्यकता है।

हिन्दुओं में कहां तक राज भक्ति पाई जाती है निम्न लिखित कथा से विदित होगी जो टाड साहब की राजिस्थान से उद्धृत की है:—

मूलराज सन् १७६२ ई० में जयसलमेर की गद्दी पर बैठा, उसके तीन पुत्र थे, रायसिंह जीतसिंह, और मानसिंह मूलराज ने भूल से अच्छा दीवान नहीं नियत किया था, फल यह हुआ कि भारी सरदार उससे बिगड़ गए। यह दीवान जाति का बनियां था इस का नाम स्वरूप सिंह और मत जैन था। कर्म की गति या भाग्य के उलट फेर ने कुछ ऐसी घटनाएं उत्पन्न कीं कि यह मनुष्य जयसलमेर की सन्तान की बरबादी का कारण बन गया। इस से घृणा करने का कारण

एक भक्कन नामकी सुन्दर स्त्री थी। यह उसपर मोहित था और वह सरदार सिंह भाटी पर मोहित थी। भाटी सरदार ने राम सिंह युवराज से शिकायत की। राम सिंह भी स्वरूप सिंह से द्वेष रखता था क्यों कि इसने राजकुमार का मासिक घटा दिया था इन दोनों ने मिल कर आपस में षड्यन्त्र किया और अन्त में यह सलाह हुई कि राजकुमार राजा के सामने दीवान को बध कर दे।

जब राज कुमार ने दीवान पर तलवार चलाई वह घायल होगया और मूलराज के पीछे जाकर छिप गया। सरदारों ने सलाह दी कि लगे हाथों मूलराज को भी साफ़ कर दो, परन्तु उसने यह शब्द घृणा से सुने और अपनी तलवार म्यान में करली।

रावल डर कर रनिवास में चला गया सरदारों ने सलाह की कि रायसिंह को गद्दी पर बिठा दिया जावे यदि वह इनकार करे तो उसके भाई को राजा बनाया जावे। सच मुच रायसिंह ने राजा बनने से इनकार कर दिया, जब तक पिता जीवत है गद्दी पर बैठने का मेरा कोई अधिकार नहीं है। फिर भी सरदारों ने उसे नायब बना कर बेठा दिया और वह खाट पर बैठ कर राज का काम किया करता था।

मूलराज तीन महीने पांच दिन कैद में रहा, सरदारों ने उस को इस प्रकार कैद रक्खा था कि कोई उस तक पहुंच नहीं सकता था, भोजन भी दूसरे जन नहीं ले जाने पाते थे उन्होंने उस

स्वरूपसिंह ने पश्चात् सब राजपूतों से बदला लिया और बहुतों को विष देकर बध किया।

को एक गहरे तहखाने में बन्दी कर रक्खा था कि रस्सी के द्वारा अन्न जल भीतर पहुंचाया जाता था। रायसिंह को अपने पिता की प्रकृति अवस्था का पता नहीं था नहीं था अथवा वह उस के छुड़ाने का यत्न करता।

जिस जगह यह राजा कैद था। उस जगह अनूप सिंह अञ्जनवाली रहता था यह सरदार बड़ा माननीय और बल-वान समझा जाता था दीवान के अत्याचारों से क्रोधित हो कर वह राजा से बिगड़ बैठा था। इसी ने जैनी दीवान के मरवाने और राजा को कैद कराने का यत्न किया था और अपने मकान के पास ही उसे कैद किया था ताकि किसी को इस के छुड़ाने का अवसर न मिले। राय सिंह को भी इस ने अपने वश में कर रक्खा था कोई बात इस की आज्ञा के बिना नहीं होती थी परन्तुः—

"राखन हार भये भुज चारि तो क्या बिगड़े दो भुजा के बिगाड़े"?

मारने वाले से बचाने वाला अधिक बलवान है जब ईश्वर कृपा करता है तो अनेक उपाय उत्पन्न होजाते हैं सरदार की चतुरता कुछ भी काम नहीं आई। परमात्मा ने अपनी कृपा से उस के छुड़ाने का प्रबन्ध किया।

एक दिन आधीरात के समय अनूपसिंह की स्त्री कहीं बाहर से आ रही थी कदाचित बिरादरी के किसी निमन्त्रण से आती थी, रात अन्धेरी थी और उस के साथ केवल दस स्त्रियां थी। और आते समय वह मार्ग भूल गई और उस जगह से हो कर निकली जहां राजा कैद था निकट पहुंचने पर उसे

ज्ञात हुआ कि कोई दुखिया ईश्वर से प्रार्थना कर रहा है। राज पूतनी ने उस प्रार्थना की ओर ध्यान दिया, वह सचमुच हृदय द्रावक थी। सहेलियों ने उसे रोका किन्तु उसने कुछ परवाह नहीं की उस ने कहा मैं देखूंगी यह कौन मनुष्य है और इस पर क्या आपदा पड़ी है।

स्त्री जाति से ऐसी बीरता कम होती है परन्तु वह असामान्य स्त्री थी उस ने कान लगा कर सुना आवाज़ आई हाय ! ईश्वर !!

फ़लक तूने इतना हंसाया न था।
कि जिसके इवज़ यूं रुलाने लगा॥

मैं ने ऐसा क्या पाप किया था कि जिसका यह दण्ड मिल रहा है, मैंने तो किसी जीव को कभी दुःख भी नहीं दिया था, बुरे दिन का कोई साथी नहीं एक पुत्र तो राज के लालच से शत्रु बन गया औरों को क्या हो गया और क्या मेरी प्रजा में से किसी को भी मेरे साथ प्रेम भाव नहीं रहा? क्या मैं इसी गुफा में मरूंगा" ?

सरदारनी के लिए इतना सुनना बहुत था। वह अज्ञान नहीं थी वह जान गई कि राजा का कैद स्थान यही है। जी में आया आगे बढ़ कर उस को प्रार्थना को अच्छी तरह सुने, इतने में पहरे वाले आगए। सहेलियों ने कह दिया कि यह सरदारनी है मार्ग भूल कर इधर आगई है। फिर भी उस के मन में सन्देह हो ही गया।

इस घटना के दूसरे दिन सरदारनी ने अपने लड़के जोरावर सिंह को बुलाया और पास बैठा कर प्रीति पूर्वक कहने लगी "जोरावर ! तुझ को मालूम है पुत्र पर माता के बड़े उपकार हैं तूने मेरी छाती का दूध पान किया है मैंने अपने रक्त से तेरी पालना की है, नौ मास तक उदर में रक्खा है आज का अवसर है कि तू मेरा ऋण अदा कर" । जोरावर ने उस के उद्देश्य को बिलकुल नहीं जाना । उसने माता के चरण चूम कर कहा माता ! मैं तेरा ऋण अदा करने की सामर्थ्य तो नहीं रखता परन्तु जो तेरी आज्ञा हो मैं पालन करूंगा । माता ने कहा "पुत्र सोच समझ कर उत्तर दे क्या तू सच मुच मेरी आज्ञा पालन करने को तैयार है" ? पुत्र ने कहा—

राजी हूं अगर तन से यह सिर जाय तो जाये ।
पर हुक्म की तामील[१] में यक हर्फ न आये ॥

पुत्र के बचन सुनकर राजपूतनी आनन्द से भर गई उसने कहा मेरी आज्ञा है कि तू मूलराज को कैद से छुड़ादे" इतना सुनना था कि उसके रोंगटे खड़े हुए उसने कहा "माता ! क्या तू नहीं जानती कि उसकी रखवाली पिता जी आप करते हैं" ।

अभी वह यह कहने भी न पाया था कि राजपूतनी का मुंह क्रोध से लाल होगया शरीर थर २ कांपने लगा और उसने पुत्र को कहा कपूत, या तो मेरी आज्ञा पालन कर या

(१) पालन ।

अपना मुंह मुझे न दिखा, जोरावर ने कहा माता ! क्रोध न कर प्रथम इस के कि मैं इस काम पर जाऊं ऊंच नीच समझ लेना अच्छा है, तू क्रोध न कर जो कुछ तू कहेगी मैं करने को तैयार हूं मैंने यह नहीं कहा कि मैं तेरी आज्ञा पालन न करूंगा।

माता—कहो क्या कहते हो ?

पुत्र—पहले तू मुझे बतादे कि ऐसी आज्ञा क्यो देती है ?

माता—इसलिए कि राजा की रक्षा करना प्रजा का धर्म है देश माता, राजा पिता और राजपूत उसका सच्चा पुत्र है क्या यह शोक और अनर्थ की बात नहीं कि राजा कूप में घुट घुट कर मरे और हम सुख से जीवन व्यतीत करें ?

पुत्र—यदि पिता जी सामना करें तो मैं क्या करूं ?

पिता—उसपर खड़ग का प्रहार कर, राजा के मुकाबले में राजपूत माता पिता का खयाल नहीं करते । तू जा अपना काम कर। जिस प्रकार मुझको राज धर्म का ध्यान है, वैसे ही पतिव्रत धर्म का ध्यान है। पति, पुत्र, धन धरती सब राजा की है आवश्यतका के समय सब कुछ उस पर वार देना चाहिए जा अब देर न कर जो आज्ञा मुझे दी है उसे पालन कर यदि तू संकोच करेगा तो मैं स्वयम जाकर उसको बन्धन रहित करूंगी और देखूंगी कि कौन मेरा सामना करता है ? हे जोरावर !

आगे मेरे तू बाप का जिकर आज है लाया,
मूलराज की हालत पर तुझे रहम न आया।
राजपूत है तू और मेरे कोख का जाया,
मालूम नहीं राजा है भगवान की छाया।
दिल सीने में टुकड़े हो कि सद्मा हो जिगर पर,
राजा प करूं शौहरो१ फरज़िन्द२ निछावर।
राजाही से है ताज३ की और तख्त की ज़ीनत४।
राजा ही से है कौम की मखलूक५ की इज्ज़त६।
राजा को कहा करते हैं सब बाप से बरकत,
वह फख्र है इन्सान का और मुल्क की हुरमत।
कुरबान हो राजा पे यह तुझ को सज़ा७ है,
रजपूत को इस मौत में मरने का मज़ा है।
बुलबुल ने कभी साथ चमन८ का नहीं छोड़ा,
कब शमा९ से परवाने१० ने मुंह अपनेको मोड़ा।
कुमरी११ ने न कभी सरो१२ के रिस्ते को न तोड़ा,
दीदार ने नाता नहीं बेदीनी से जोड़ा।
राजा हो जहां यह दिले दिवाना वहीं है,

---

(१) पति (२) पुत्र (३) मुकुट (४) शोभा (५) सृष्टि (६) कारण (७) उचित (८) फूलवाड़ी (९) दीपक (१०) पतंग (११) पक्षी (१२) वृक्ष

महफिल में जहाँ शमा हो परवाना वहीं है ।
जा देर न कर आज शुजाअत को दिखादे,
यह धर्म्म है यह कर्म्म है लोगों को सुनादे ।
राजा की अतायत१ का सवाब२ उनको बतादे,
जा राज की भक्ति का सबक सब को सिखादे ।
राजा के लिए जी से गुज़र जाना है बेटे,
आँच उस पर अगर आए तो मर जाना है बेटे ।
राजा के लिए खूब लड़ो फौज सितम से,
परवा न कर अब बाप की मत हट तू धर्म्म से ।
दिल हिलता है जी तंग है अब करते अलम३ से,
देख अशक४ रवाँ कैसे हैं हाँ ! दीदए नमसे ।
अफसोस सितम शाह पे क्या होता है लोगो,
किस तरह से वह कैद में जां खोता है लोगों ।

यह कह कर राजपूतनी मौन हो गई और पुत्र की ओर देखने लगी ।

जोरावर—मैं तैयार हूं आज के पन्द्रहवें दिन या तो मूल राज सिंहासन पर होगा या तू मेरे मरने की खबर सुनेगी ।

राजपूतनी ने आनन्दित हो कर जोरावर की पीठ ठोकी और कहा "जोरावर तू अपने पिता का सच्चा पुत्र है । ईश्वर

---

(१) सेवा (२) पुण्य (३) शोक (४) आँसू ।

तेरी सहायता करेगा माता का आशीर्वाद तेरी रक्षा करेगा, जा राजपूती धर्म्म का पालन कर"।

जोरावर ने माता को प्रणाम किया और महल से बाहर आया।

इधर जोरावर अपना माता की आज्ञा में लगा, इधर वीर राजपूतनी भी इस बात से गाफिल नहीं थी उसने अपने मन में सोचा कि यदि जोरावर अकृत कार्य्य हुआ तो मैं आप रावल को छुड़ा दूंगी 'पुरुष कभी मेरे सामने न ठहर सकेंगे। उस ने अपने देवर सरदार अर्जुनसिंह को भी इसी प्रकार इस काम के लिए उद्दित किया और इलाका बारू का राजा मेघ सिंह भी उसका सहायक हो गया।

यद्यपि रात की घटना और रानी के बन्दी खाने तक पहुंचने की खबर अनूपसिंह को मिल गई थी तथापि अनूप ने उसे एक साधारण बात समझा और उसकी कुछ परवाह न की। उधर उसकी स्त्री बराबर इस धुन में लगी रही और गुप्त रीति से बहुत से सरदार भी आ मिले।

ठीक पन्द्रहवें दिन जैसा कि जोरावर ने कहा था एक बहादुर राजपूत का जथा बन्दीगृह के द्वार पर पहुंचा। पन्द्रह वर्ष की आयु का युवक उसका सरदार था। उसने तहखाने के पास जाकर पहरे वालों को हथियार रखने की आज्ञा दी। उन्हों ने सामना करने की इच्छा प्रगट की, जोरावर ने उनको समझाया कि यहां राजा कैद है हम उस को छुड़ाने

आए हैं उचित यह है कि तुम उसके छुड़ाने में हमारी सहायता करो"। सिपाहियों ने कहा 'हमारा सरदार रायसिंह है हम और किसी को नहीं जानते'। जोरावर ने उत्तर दिया, "राय सिंह उसका पुत्र है पिताके जीते जो रायसिंह रावल नहीं हो सकता यदि तुम नहीं मानते तो यह लो "यह कह कर उसने एक बार से ही सिपाही का सिर अलग कर दिया, उधर उस के साथियों की तलवारें भी म्यान से निकली और शेष सन्तरी था तो मारे गए या भाग गए। जोरावर रस्सी के द्वारा तह-खाने मैं उतरा और रावल के हाथ पाँव के बन्धन काटने आरम्भ किए, रावल ने जान लिया कि मेरे छुड़ाने के लिए यह यत्न हुआ है। उसने सम्बोधन करके कहा "तू कौन है"? जोरावर ने अपना नाम बताया। मूलराज ने कहा पुत्र! तू जा तेरी हिम्मत पर शाबाश है। परन्तु जब तक मेरी जाति जिसका मैं सरदार हूं मुझे न निकालेगी मैं इससे न निकलूंगा।

यह बात चीत हो रही थी कि अनूपसिंह को खबर दी गई और वह अपनी सेना साथ लिए हुए आ पहुंचा, निकट था कि अर्जुनसिंह और मेघसिंह के साथ लड़ाई छिड़ जाय कि इतने में एक औरत आ पहुंची और उसने सरदार अनूप सिंह को सम्बोधन करके कहा, सरदार जी! महल में मैं स्त्री हूं, तुम्हारी सेवा करना अपना कर्तव्य समझती हूं यदि तुम मर गए तो तुम्हारे साथ सती हूंगी परन्तु यहां इस समय प्रजा के रूप में राजा को बचाने आई हूं। जोरावर नीचे उतर

गया है मैं उसकी सहायता करने आई हूं। भाई अर्जुनसिंह और सरदार मेघसिंह मेरे दाहने बायें हैं। जिसको साहस हो वह स्त्री के सन्मुख आए और उसकी तलवार के जौहर देखे। मैं राजभक्ति की तुलना में किसी की भी परवाह न करूंगी। यह कह कर उसने तलवार म्यान से निकाल ली, अनूप हक्का बक्का रह गयाः—

काटो तो लहू नहीं बदन में ।

उसने झट पट तलवार म्यान में करली उसके सिपाहियों ने भी ऐसा ही किया और सब मनुष्य इस शेरनी का मुंह देखने लगे।

फिर राजपूतनी ने तहखाने के द्वार पर खड़े होकर राजा से बाहर निकलने की प्रार्थना की। राजा ने उसको भी वही उत्तर दिया कि जब तक मेरी जाती मुझे न निकालेगी मैं न निकलूंगा। राजपूतनी ने कहा महाराज! मैं आप की प्रजा और आपकी जाति में से हूं। जोरावर मेरा पुत्र है आप बाहर निकलें। मेरी और मेरे पति तथा देवर व पत्नि की नजरें ग्रहण करो। अब कदापि कोई आपका अपमान न कर सकेगा"। यह सुन कर राजा बाहर निकला। अनूपसिंह ने प्रणाम किया दूसरे मनुष्यों ने भी उसका सन्मान किया। उसके छूटने के आनन्द में बधाई बजाई गई और वह पहले की भान्ति गद्दी पर बैठकर राज करने लगा।

पाठक! यह है हिन्दू जाति की राजभक्ति का उदाहरण

यह है सच्ची वीरता, यह है सच्चा मनुष्यत्व, क्या अब भी हम में यह गुण वर्तमान हैं शोक !

"जो सो के उठते नहीं ऐसे हुशियार हैं हम"

(३२)

एक राजपूतनी का सन्देसा

गो बालक और स्त्रीकी, जो नर सहाय नहि करते ।
ईशान देव सो वृथा जगतमें, मनुज देह हैं धरते ॥

राजपूताना के एक दृढ़ पहाड़ी किले के भीतर थोड़े से वृद्ध शूरमा बैठे हुए शत्रुओं से बचने के उपाय सोच रहे थे। उनके बीच में एक वृद्ध सरदार तेज युक्त दीवार से तकिया लगाए हुए बैठा था यह नागौर का राजा था इसका नाम मानसिंह था इस के मुख पर उदासी छाई हुई थी। इस को दुखित देख कर दूसरे मनुष्य भी उदास थे। राजा के कई लड़के नागौर की सेना को साथ लिए दक्खिन में बादशाह की ओर से लड़ रहे थे, इस लिए यहां सेना की संख्या थोड़ी रह गई थी। नागौर की दुर्बलता देख कर गुजरात के मुसलमान बादशाह ने यकायक राजधानी पर धावा कर दिया। और अपने साथ बहुत बड़ी सेना लाया। वृद्ध राजा मानसिंह ने अपने बचाव का कोई उपाय न देखकर धन, सम्पत, स्त्री, बच्चों, और विशेष २ सरदारों को साथ लेकर गोदावरी के पहाड़ी किले में शरण ली। और नागौर के संगमरमर के सुन्दर महलों को शत्रुओं के हाथ में दे दिया।

किले में रसद की सामग्री बहुत सी वर्तमान थी। और बावलियों में जल भी खूब था। हथियार खाने में हथियार भी कुछ कम नहीं थे, परन्तु शोक कि राजा के पास सेना बहुत थोड़ी थी गुजरात की सेना ने किले को चारों ओर से घेर लिया था सिवाय इसके अब कोई उपाय नहीं था कि वह या तो किला शत्रुओं के हाथ में दे दें या बहादुरों की तरह लड़ कर प्राण बचाने के लिए दूसरी जगह को भाग जाना भी असम्भव था क्योंकि शत्रुओं ने चारों ओर से घेर रक्खा था।

सरदारों ने मिलकर बहुत कुछ सोच विचार किया परन्तु कोई उपाय शत्रुओं से बचने का दिखाई नहीं दिया। सेना थोड़ी, नवयुवक कोई नहीं, आस पास की रियास्तें भी दुर्बल, वह सब फिरोजशाह गुजरात नरेश से डरते थे। कौन उस से लड़ने का साहस कर सकता था, सिवाय मरने मारने के कोई तदबीर समझ में नहीं आती थी। किले की कुञ्जी सौंप देने में भी कुशल नहीं थी। इस दशा में न केवल प्राणों का भय था। प्रत्युत मुसलमनों के हाथ से इज्जत जाने का भी था। सब तरफ से निराश होकर अन्त में यह सलाह हुई कि स्त्रियां अग्नि विमान पर चढ़ कर स्वर्ग धाम को सिधारें और पुरुष केसरी वस्त्र पहन कर क्षत्रिय धर्म का पालन करें।

सलाह के पश्चात् सरदार रनिवास में गए। स्त्रियां उनकी आज्ञा सुनने के लिए तैयार बैठी थी। और जब पुरुषों ने कहा मरने का समय आगया है। तो सभों ने बहुत हर्ष प्रगट किया।

उन स्त्रियों में एक अल्पायु कन्या थी जिसका नाम पन्ना था और वह राजा गान सिंह की राजकुमारी थी यह कन्या अत्यन्त रूपवती थी पिता उस को बहुत प्रिय समझता था। उसकी माता बाल्यकाल में ही चल बसी थी। पन्ना वृद्ध पिता की आंखों की पुतली बनी हुई थी। जिस समय वृद्ध राजा कन्या को चिता पर चढ़ने की आज्ञा सुनाने लगा उस का हृदय भर आया, वहअपने आँसू थाम न सका। पन्ना ने उस को दुखित देख कर कहा, "पिता जी! घबड़ाने की कौन सी बात है। मरना जीना प्रकृति के नियम हैं। जिसने अपने उत्पन्न होने की चिन्ता नहीं की उसको मरने की चिन्ता क्यों होनी चाहिए। हम क्षत्रिय कुल में उत्पन्न हुई हैं और क्षत्रानियों ही की तरह मरेंगी और जियेंगी" । इन शब्दों को सुन कर वृद्ध की आंखों में भी खून भर आया। उसकी सौ वर्ष वृद्ध माता ने भी एक अवसर पर मुसलमानों की लड़ाई में भी इसी प्रकार वीरता से जान दी थी। पिछली घटनाओं का दृश्य फिर उसके नेत्रों के सामने आ गया और पन्ना के शब्दों से जो जोश उत्पन्न हुआ था हव जाता रहा उसकी आंखें डवडबा आईं और वह विस्मत से कन्या की ओर देखने लगा।

पन्ना ने पिता का मर्म समझ लिया और उसके पास से उठ कर चली और खिड़की खोलकर पहाड़ की ओर देखने लगी सामने एक बड़ी ऊंची पहाड़ी थी जिसका नाम अरिकन्दा था इसका चोटी पर एक सुन्दर बङ्गला बना था जिसमें एक

बहादुर राजपूत रहा करता था उसका नाम उम्मीदसिंह था, दो वर्ष हुए जब पन्ना ने इस राजकुमार को नागौर की गलियों में जाते हुए देखा था, वह उसी समय से उस की प्रेमिका बन चुकी थी। इसके अतिरिक्त नगर में उम्मीदसिंह की वीरता की भी प्रशंसा करते थे, क्योंकि उसने लुटेरे भीलों को खाक में मिला दिया था। बड़े २ योधा उसका नाम सुन कर कांप उठते थे। पन्ना ने अपने मन में सोचा मैं इस बहादुर राजपूत से सहायता की प्रार्थना करूं। किन्तु इस विचार ने उस को दुखी कर दिया कि उम्मीदसिंह और उसके पिता का परस्पर मेल नहीं था तत्काल उसकी आशा निराशा से बदल गई।

परन्तु बाहरी दुनिया तेरी नींव सच मुच आशा के ऊपर स्थिति करती है। बात पर सब सहमत हैं। घटनाओं पर दृष्टि पात करने से मनुष्य समझ सकता है, कि मेरी भाग्य आगामी क्या फल उत्पन्न करने वाली है। थोड़ी ही देर पीछे सारी अवस्था बदल जाती है। करूणा और दया की वायु बहने लगती है। शोक और दुख के बादल दूर हो कर आनन्द के सूर्य्य को चमकने का अवसर देते हैं। यह आशा है।

आ उमीद१ मेरे गमर की मिटाने वाली।
शक्ल३ शादी४ की हमेशा से दिखाने वाली॥
आ ऐ उमीद चटानों को बनाने वाली।

---

(१) आशा (२) शोक (३) रूप (४) हर्ष।

तू है हर बात का अंजाम समझाने वाली ॥
आ कि आबाद१ मखलूक२ है तेरे दम से,
तू न दे साथ तो गिर जाय यह दम में धम से।
बोल इस दहर३ में उम्मीद है बाला तेरा,
शान चढ़ बढ़ के तेरी मर्तबा आला४ तेरा।
क्या कहूं कैसा यह जोबन है निराला५ तेरा,
जो है इन्सान वह है जानने वाला तेरा।
तू समुन्दर है वह जिस की कि कोई थाह नहीं,
कोई दिल ऐसा नहीं जिस को तेरी चाह नहीं।
तू है वह शमा६ कि जिससे है उजाला हर७ सू,
रोशनी कम नहीं खुरशेद८ से तेरी हर सू।
हो मसीहा कि मुसलमान होवे हिन्दू,
जिलवागर९ सब के दिलों में है गरज तू ही तू।
आस सब को है तेरी तू उन्हें जिन्नत देगी,
समरे१० ज्वहदो११ मुनाजातो१२ रियाजत देगी।
तेरे गुलजार१४ में आती नहीं जिन्हार खिजाँ१५,

(१) बसा (२) सृष्टि (३) संसार (४) ऊंचा (५) अजीब (६) दीपका (७) चारों ओर (८) सूर्य (९) प्रकाश (१०) फल (११) भक्ति, (१२) प्रार्थना (१३) तपस्या (१४) पुष्प वाटिका (१५) पात झाड़।

तेरे गुलज़ार की है फसल हमेशा यकसां।
फूल और फल की महक वहकि कहता है जहां,
तलबए अतर बना जिस से हरयक दिल का मकां।
तू तो उम्मीद खिज़ां को भी बनाती है बहार,
कोई मुश्किल नजर आती नहीं मुश्किल ज़िन्हार।
असल में तुझ को ऐउम्मीद मसर्रत१ कहिए,
सर बसर नाम तेरा मायये बेहतर कहिए।
तंग दस्ती की तुझे माइये दौलत कहिए।
और कमज़ोरों के हक़ में तुझे हिम्मत कहिए।
तेरे अफज़ाल२ से मायूस नहीं होते वह,
मुफ़त में मञ्जिले मकसूद नहीं खोते।
तेरे चर्चे का पसन्द आतो है तकरीर हमें,
कामियाबी की दिखाती है तू तस्वीर हमें।
होने देती नहीं मायूस न दिलगीर हमें,
दाम तेरा ही सदा करता है नखचीर हमें।
कौन सा दिल है वह किस को नहीं चाहत तेरी,
हम को हर सिम्त नजर आती है सूरत तेरी।

---

(१) हर्ष (२) कृपा।

पन्ना ने सोचा बहादुर योधा सदैव से स्त्रियों की प्रार्थना पर ध्यान देते आये हैं और उनकी सहायता में अपने प्राण तक लड़ा दिए हैं मैं अवश्य उस शूरमा से सहायता की प्रार्थना करूंगी और वह कभी इनकार न करेगा, और नाही मुसलमान उससे जीत सकेंगे।

उसका हृदय आनन्दित हो गया वह हंसती हुई पिता के सामने आई, पिता उस को आनन्दित देख कर विस्मत हुआ राजकुमारी ने उस का हाथ पकड़ लिया और खिड़की के समीप ले गई।

पन्ना–पिता जी, इस पहाड़ी की ओर देखिए।

मानसिंह–हां देख रहा हूं तेरा क्या मतलब है?

पन्ना–अरि कन्दा की पहाड़ी पर जो सरदार रहता है उसने कभी आप के साथ ऐसा वर्ताव तो नहीं किया जिस से आप कृपा न कर सकें?

मानसिंह–नहीं उस के साथ केवल धरती के विषय में हमारा पुराना झगड़ा चला आता है वह उस धरती को लेना चाहता है मैं उसे दे नहीं सकता और सब तरह से बड़ा श्रेष्ट राजपूत है।

पन्ना–यदि आपकी वह कोई सेवा करे तो आप को एतराज तो न होगा।

मनसिंह–ऐसे समय पर जब कि चारों ओर से मुसल-

मानों ने घेर रक्खा है वह हमारी क्या सेवा कर सकता है।

पन्न---मैं उसको सहायता के लिए बुला भेजूंगी और वह सच्चे राजपूत की तरह पहाड़ी पर से नदी की बाढ़ की तरह उतरता हुआ हमारे शत्रुओं का नाश कर देगा।

मानसिंह---(क्रोध से) क्या हम ऐसे शत्रु से सहाय प्रार्थना कर सकते हैं जिस ने सदैव हमारा सामना किया हो, मेरे बेटे यहां होते तो अब तक उसे जीता न छोड़ते मानसिंह इस बात को सुन कर बहुत क्रोधित हुआ परन्तु पन्ना ने उसे सारे कुटुम्ब और परिवार की बरबादी के चित्र खींच कर भली भान्त समझाया, उसने कहा यदि मुसलमानों की जीत होगई तो नागौर के सारे मन्दिर और देवालय गिरा दिए जांयगे, एक मनुष्य जीता न बचेगा, भाई भी दखिन से लौट कर लड़ने के योग्य न रहेंगे इसलिए आप मुझे अरिकन्दा के सरदार से सहायता मांगने की आज्ञा दें।

मानसिंह चुप हो गया, पन्ना समझ गई कि वह इस बात पर राजी है, उसने एक राजपूत लड़के को जो चतुर था बुला भेजा और एक पत्र लिख कर उसके हवाले किया कि इसको सरदार अरिकन्दा के पास पहुंचा दो, पत्र में लिखा था।

"वीर राजपूत" !

मैं राजा मानसिंह की कन्या हूं किले वालों की दशा खराब है, मेरे भाई सम्राट दिल्ली की ओर से दक्खिन को चढ़ाई पर गए हैं, मुसलमानों ने चारों ओर से गोदावर को

घेर रखा है, स्त्रियों के लिए अग्नि विमान तैयार किया जा रहा है, पुरुष केसरी वस्त्र पहन रहे हैं, कहने सुनने का अवसर कदापि नहीं है, यदि किसी विपदग्रस्त स्त्री की पुकार राजपूत शेर को जोश में ला सकती है तो देर न करो, मुसलमानों की बरबादी केवल हम को जीवन दे सकती है ।

"राजकुमारी पन्ना"

लड़के ने पत्र लेकर पगड़ी की तह में लपेट लिया और भेष बदल कर किले से बाहर निकला।

रात अन्धेरी थी वह रस्सी के द्वारा फसील पर पांव धरता हुआ नीचे उतरा, मार्ग कठिन था परन्तु वह उस से अच्छी तरह अवगत था इसलिए तेज़ी से चल निकला, आगे शत्रुओं का पहरा था वहां से जाना कठिन था किन्तु किसी प्रकार उनकी आंख से बचकर वह निकल गया अब वह निश्चिन्त होकर जाने लगा, अभी वह बहुत दूर नहीं गया था कि एक बलवान हाथ ने उसे पीछे से आकर पकड़ लिया और कहा "चल तुझे गुजरात नरेश के सामने पेश किया जायगा।"

वह विवश होकर चल पड़ा। इस बालक का नाम बेनीसिंह था, यद्यपि वह शत्रु के हाथ में पड़ गया था तथापि उस ने अपने साहस को नहीं त्यागा था, उस ने शत्रु के हाथ से निकल भागने की चेष्टा की, मुसलमान इस को दुर्बल लड़का समझ गाफिल होगया था, बेनीसिंह ने उसके सिर पर पीछे से एक ऐसा बेलचा मारा कि वह धरती पर गिर पड़ा

और आप भाग निकला, परन्तु भागते हुए उसकी पगड़ी गिर गई थी जिसमें राजकुमारी का पत्र बंधा हुआ था उस के पकड़ने के लिए वह फिर मुड़ा, सामने से कई मुसलमान उस के पकड़ने के लिए आ रहे थे। बेनीसिंह एक पहाड़ी की आड़ में छिप रहा, जब वह दूर निकल गए इसने पगड़ी उठा कर सिर पर रखली और फिर चलता बना।

अभी कुछ ही दूर गया था कि उसी मार्ग पर एक मुसलमान सवार घोड़ी को एक वृक्ष से बांध कर पैदल पहाड़ी चढ़ने लगा। बेनी सिंह इस बात को ताड़ता। रहा जब वह कुछ आगे चला गया बेनीसिंह ने घोड़े की लगाम पकड़ ली और उसकी पीठ पर आरहा, अब क्या था, यह जा वह जा घोड़ा अरिकन्दा की पहाड़ी की ओर बेगसे चल निकला शत्रुओं ने उसको जाते देख कर घोड़ों पर चढ़ कर उसका पीछा किया परन्तु वह अच्छा सवार था कोई उसकी गर्द को भी न पहुंचा वह पहाड़ की चोटी पर पहुंच गया। उसका घोड़ा थक गया फिर भी उसने उसे अरिकन्दा की पहाड़ी पर पहुंचा ही दिया। उम्मीदसिंह के नौकर उसको दूत जान अपने स्वामी के पास ले गए। उस समय वह हाथ पर बाज बैठाए हुए शिकार की इच्छा से जा रहा था। दो युवक एक ही प्रकार के वस्त्र पहने हुए थे। बेनीसिंह ने उम्मीदसिंह के सामने जा कर उसे प्रणाम किया और राजकुमारी का पत्र हाथ में दिया। उम्मीद सिंह इस पत्र को पाकर बहुत प्रसन्न हुआ। पन्ना जैसी राज-

कुमारी का सहाय प्रार्थना करना कोई साधारण बात न थी। और फिर इस सहायता से पीढ़ियों की लड़ाई और झगड़े की समाप्ति होती थी।

उसने अपने साथी से "कहा मैं अब सच्चे शिकार के लिये जा रहा हूं। मुसलमानों ने गोदावर के किले को घेर रक्खा है मानसिंह विवश है, राजकुमार ने मुझ से सहाय प्रार्थना की है। स्त्री गोहार का अवसर बार २ नहीं मिलता इस लिए मैं तुम से बिदा होता हूं"।

साथी ने कहा मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगा और इस काम में तुम्हारा हाथ बटाऊंगाः—

क्षत्रिय तनु धरि समर सकाना।
कुल कलंक तेहि पामर जाना॥

उसने यवनों से युद्ध की तैयारी करदी और वेनीसिंह को अहार आदि करा के गोदावर का सारा वृतान्त सुना।

जिस समय वह वेनीसिंह से किले का वृतान्त सुन रहा था "मुसलमान किले पर धावा करने की तैयारी कर रहे थे। गुप्तचरों (जासूसों) ने उन्हें राजपूतों की दुर्बलता की खबर दे दी थी; यद्यपि यवनों का तोपखाना आ रहा था और एक ही दो मंजिल पर था, किन्तु उन्होंने उसका मार्ग देखना आवश्यक नहीं समझा। फीरोजशाह किले पर चढ़ दौड़ा। एक दुष्ट नागौर निवासी ने किले का मार्ग भी बता दिया था और लोभ के मारे स्वयं उनके साथ था। मुसलमानों को निश्चय

था कि अवश्य कृतकार्य्य होंगे, किन्तु यह आशा उन की शीघ्र निशफल हुई। अभी वह दीवार पर चढ़ने ही लगे थे कि ऊपर से एक गोल सी चीज़ गिरी। यह उसी दुष्ट नागौरी का सिर था जिसने उनको मार्ग बताया था। जिस समय वह किले के ऊपर से मुसलमानों के चढ़ने के लिए रस्सा लटका रहा था, पहरे वालों ने देख लिया और एक ही वार में उसका सिर उड़ा दिया जो नीचे कट के गिर पड़ा।

दूसरे दिन मुसलमानों ने सुरंगें खुदवानी आरम्भ कीं। किले के भीतर मनुष्य बहुत थोड़े थे, शत्रुओं का रोकना अथवा उनका सामना कठिन था। दीवार को यद्यपि बहुत हानि नहीं पहुंची तथापि वह कई जगहों से फट गई। मुसलमानों को तेज़ी से काम करने का साहस नहीं हुआ। क्योंकि वह फिर भी राजपूतों से डरते थे। और इस दशा में जब वह जान लेने के लिए तुले हुए बैठे थे। उन्होंने तोपों के आने का मार्ग देखना उचित समझा क्योंकि तोपों पर उनका बड़ा भरोसा था। पुर्तगेज़ गोलन्दाज उसमें नौकर थे। कई एक किले उसके द्वारा उन्होंने जीत लिए थे। उस दिन सन्ध्या समय एक मनुष्य ने किले की दीवार पर चढ़ कर राजकुमारी के पत्र के उत्तर में कुछ मोती लटकाए और किले वालों को निश्चय दिलाया कि उम्मीदसिंह और जालिमसिंह राजपूतों की सेना लिए हुए हमारी सहायता को आ रहे हैं। यह सुनते ही सब के मन प्रसन्न होगए, जीने की आशा हुई और परमात्मा को धन्यवाद दिया।

चौपाई—कृपा करत उसे देर न लागे ।
उसका दास आस नहिं त्यागे ।।
(देवकवि जी)

उम्मीदसिंह और जालिमसिंह दोनों पहाड़ से सेना लेकर चल पड़े। जब किले के समीप पहुंचे तो दोनों ने सलाह की कि किस ढङ्ग से युद्ध करना चाहिए ताकि यवनों की हार हो। उनके पास केवल पाँच हज़ार मनुष्य थे । यवनों की सेना चौगुनी पंचगुनी थी । यह उचित समझा गया कि थोड़ी थोड़ी सेना शत्रुओं को चारों ओर से घेर ले ताकि रसद का सामान उन तक न पहुंच सके। और गुजरात से जो कुछ आ रहा है वह भी उनके हाथ न लगे। इस विचार से दक्षिण पश्चिम के नाके की ओर अहमदाबाद की सडक पर अधिक सेना भेज दी और बाकी इधर उधर डट गई।

अभी उन्होंने अपना काम आरम्भ नहीं किया था कि एक राजपूत सवार ने आकर खबर दी कि यवन तोपखाना आ रहा है और उसके साथ आदमी भी बहुत नहीं हैं । उम्मीद सिंह उधर चल पड़ा। गुजरात के बड़े २ बैल उसमें जुते थे। आगे २ कुछ सवार थे, राजपूतों ने उन्हें छेड़ा, वह आगे चले गए। जब तोपखाना मौके पर पहुंचा तो राजपूतों ने तीरों और गोलियों की बौछार आरम्भ की । तोपखाने वालों को शत्रु दिखाई नहीं देते थे। उनकी चेष्टा व्यर्थ थी. वह तीरों और गोलियों से घायल होकर भागने लगे। राजपूतों ने उन्हें पकड़ लिया। तोपें

हाथ में आगईं परन्तु राजपूत अपने आप को सुरक्षित नहीं समझते थे क्योंकि उनके चलाने की विधि से वह अवगत नहीं थे। कुछ सोच विचार के पश्चात् उनको एक गहरे तालाब में डबो दिया गया। जब फीरोजशाह को खबर मिली कि तोप-खाना छीन लिया गया, वह बहुत दुखी हुआ। इस चर्चा ने उस की सेना में हल चल डाल दी थी। वह चाहते थे किसी प्रकार गुजरात चले जाने का अवसर मिल जाय।

राजपूतों का साहस बढ़ गया, किले वाले तोपखाने के पकड़े जाने का वृत्तान्त सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। आस पास के राजपूतों के मन में भी उत्साह पैदा हुआ। दल के दल उम्मीद सिंह के झण्डे के तले लड़ने के लिए आने लगे। नागौर से भी इक्के दुक्के मनुष्य इसी इरादे से चलने लगे और जल्दी ही राजपूतों का अच्छा दल एकत्र हो गया।

फीरोजशाह दिक्कत में पड़ गया। गुजरात का आना जाना बन्द होगया। रसद का सामान पहले ही कम था अब इस के सिवाय कोई उपाय नहीं था कि किले पर धावा किया जाय सुरंगें उड़ाई गईं और जिस समय दीवार का कुछ भाग टूट गया और मुसलमान "दीन दीन" पुकारते हुए आगे बढ़े। उम्मीदसिंह की सेना ने उन्हें पीछे से धर दबाया, जालिमसिंह और उसके साथी भी पिलपड़े और जिसकी तलवार जहां पड़ी वहीं सैंकड़ों यवन घायल होकर गिर पड़े। दिन भर तलवारों पर तलवारें चलती रहीं, शाम को दोनों ओर के मनुष्य अपने अपने स्थान पर गए।

फीरोज़शाह की हिम्मत टूट गई। उस को निश्चय होगया कि गोदावर का हाथ आना कठिन है और जब तक उम्मीद्सिंह को पराह्त न किया जायगा कदापि कृतकार्य्यता न हो सकेगी।

दूसरे दिन उसने अहमदाबाद के नाके की ओर चढ़ाई की क्योंकि उम्मीद्सिंह उसी नाके पर डटा हुआ था, सारी यवन सेना उधर उमड़ चली, थोड़े से आदमी किले के सामने रहे ताकि किले वाले उनकी सहायता न कर सकें, फीरोज-शाह हाथी पर चढ़ा हुआ अपने सिपाहियों का हौसिला बढ़ा रहा था। यदि सब राजपूत उस के टिड्डी दल के सामने आ जाते तो अवश्य मारे जाते, किन्तु उम्मीद्सिंह वीर होने के अतिरिक्त चतुर भी था। जिस समय मुसलमान सामने आए उसके साथियों ने एक ओर से गोला बरसाना आरम्भ किया, और कुछ देर के बाद पीछे हटने लगे। मुसलमान आगे बढ़े। उनकी परिपाटी बिगड़ गई। जालिमसिंह और उम्मीद्सिंह दोनों यक बारगी उन पर टूट पड़े और बहुत से यवनों को वध कर डाला और आशा से बढ़कर कृतकार्य्यता लाभ की। जालिमसिंह और उसके साथियों ने प्रलय करदी। मुसलमान निराश होगए। जब राजपूतों को किसी प्रकार का भय न रहा वह रणक्षेत्र से अलग हुए।

उम्मीद्सिंह के पास केवल एक हज़ार मनुष्य थे। जब मुसलमान जालिमसिंह के साथ लड़ने लगे, वह चुपके से किले की ओर चला, मानसिंह और पन्ना दोनों एक बुर्ज की

खिड़की से झांक रहे थे जहाँ से लड़ने वाली फौजों के करतब अच्छी तरह दिखाई देते थे। जब वह इस प्रकार देख रहे थे सामने से गर्द और घट्टे का बादल उठता हुआ दिखाई दिया उसके भीतर कभी २ तलवारें बिजली की तरह चमक उठती थीं, थोड़ी देर के पीछे प्रगट हुआ कि सवारों का एक जथ्था उधर आ रहा था और अरिकन्दा का झंडा दिखाई दिया जिसके नीचे उम्मीदसिंह आरहा था। पन्ना ने उसको अच्छी तरह से देखा। मुसलमान उसको किले की ओर जाते देख कर लड़ने के लिए तैयार हुए। यवन सरदार ने उच्च स्वर से कहा मित्रो! आगे बढ़ो। अगर तुमने फतह किया तो दीन की उन्नति और खुदा की प्रसन्नता, और शहीद हुए तो स्वर्ग का द्वार तुम्हारे लिए खुला है "अल्लाहु अकबर" की सदा बुलन्द करते हुए शत्रुओं का नाश करो।

उम्मीदसिंह ने मुसलमानों की कुछ परवाह नहीं की। उसके लड़ाके राजपूतों ने एक ही हल्ले में मुसलमानों को धरती में लिटा दिया, इतने में किले वालों ने भी फाटक खोल कर शत्रुओं को गर्द में मिलाया, दोनों से घिर कर मुसलमान बुरी तरह से मारे गए। केवल थोड़े से मनुष्य जान लेकर भाग गए। विजयी राजपूत किले में दाखिल हुए किले वालों ने उनका बड़ा आदर और सन्मान किया।

जब फीरोज़शाह खेमे की ओर लौट कर आया, वह बिलकुल निराश और व्याकुल था क्योंकि राजपूतों ने न

केवल गोदावर के किले को बचा लिया वरञ्च उसके गुजरात जाने का मार्ग भी रोक दिया था। और मानसिंह के लड़कों के आने का समय भी अब आ चुका था और उनके आने तक किले वाले उसकी रक्षा कर सकते थे।

ऐसी अवस्था में उसने वहां से कूच करने में ही कुशल देखा, और उसने उम्मीदसिंह को सुलह का सन्देशा भेजा, और कहला भेजा, कि "यदि मेरी सेना के साथ छेड़ छाड़ न की जाय तो मैं गुजरात जाने को तैयार हूं"। उम्मीदसिंह ने सन्धि करने से इन्कार कर दिया तब उसने मानसिंह के पास कहला भेजा—"बहुत अच्छा यदि तुम सन्धि करने पर राज़ी नहीं हो, तो मैं अभी नागौर जाकर ईंट से ईंट बजवा दूंगा और एक मकान भी नहीं छोड़ूंगा"। वृद्ध ने डर कर उस से सौगन्द लेकर सुलह करली और फीरोज़शाह की सेना ने हार खाने के पश्चात् गुजरात का मार्ग लिया।

गोदावर के किले में शत्रु के जाने के पश्चात् आनन्द बधाई बजने लगी, छोटे बड़े ने हर्ष मनाया, राग रंग आरम्भ हुआ, सर्व साधारण ने उम्मीदसिंह को आशीश दी, जिसकी बदौलत उनकी जान माल की रक्षा हुई थी। जब अच्छी तरह से निश्चिन्त होगए। मानसिंह ने उम्मीदसिंह से कहा—"आबरू में फर्क नहीं आने दिया। मेरी सन्तान तुम्हारी इस सहायता को स्मरण रक्खेगी। तुम्हारे उपकार का बदला देने की मैं सामर्थ्य नहीं रखता, तथापि जो कुछ तुम मांगो मैं देने को तैयार हूं। यदि तुम गोदावर का किला चाहते हो तो वह भी हाजिर है। पन्ना, जवाहिर सब कुछ मैं तुम को देने को तैयार हूं"।

उम्मीदसिंह ने सन्मान पूर्वक उत्तर दिया—"महाराज! यदि आप सच मुच मेरी सेवा से प्रसन्न हैं और मुझे पुरस्कार देना चाहते हैं तो मैं आपकी आज्ञानुसार प्रार्थना करता हूं कि आप मुझे अपना पन्ना प्रदान करें, जो आपके राजमुकुट में सब से कीमती रत्न है"। मानसिंह ने समझा उम्मीदसिंह उसके मुकुट का पन्ना चाहता है, उसने हर्ष से मुकुट उतार कर कहा—"यह तुमको मुबारक हो, तुम्हारी सन्तान इसको सन्मान पूर्वक अपने पास रक्खेगी"।

उम्मीदसिंह ने कहा "मैं इस पन्ना का इच्छुक नहीं हूं प्रत्युत उस पन्ना का इच्छुक हूं जिसकी प्रार्थना ने मुझे इस इज्जत का अधिकार दिया है"।

मानसिंह ने कहा—"बहुत अच्छा मुझे स्वीकार है। आज से मैं अपनी कन्या तुम को देता हूं और तुम सचमुच उसको बहुमूल्य रत्न पावोगे"। इस पर उम्मीदसिंह ने राजा का हाथ चुम्बन किया, और उसने उसी समय पन्ना को बुलाकर नागौर और अरिकन्दा के निवासियों के सन्मुख जो उसके साथ आए थे, विवाह कर दिया। इस विवाह से सब बहुत प्रसन्न हुए। मानसिंहने सब को निमंत्रण दिया कि इस विवाह उत्सव में आप लोगों को आकर शामिल होना चाहिये।

जब दूतों ने आकर खबर दी कि फीरोजशाह अहमदाबाद में पहुंच गया है मानसिंह, पन्ना, उम्मीदसिंह, जालिमसिंह और सब सरदार नागौर को चल पड़े और वहां पहुंच कर

विधि पूर्वक विवाह की रीति पूरी की गई । छोटे बड़े सब महा आनन्दित हुए और नागौर व अरिकन्दा के पीढ़ियों के झगड़े सदैव के लिए मिट गए ।

देश पै हम बलिहार जाएंगे, देश हमें अति प्यारा है ।
माता, पिता, भ्रात, सुत दारा, सब कुछ देश हमारा है ।
एम. ए., बी. ए., वृथा सब पदवी, जो पै नहीं देश भक्ति।
बिना देश भक्ति के मित्रो ! निष्फल हैं सारी शक्ति ।
सच्चे पुरुष कभी नहीं डरते, चाहे काल भी सन्मुख हो ।
प्राण जांय चहे लाख बार, हरिभक्त कभी नहिं वेमुख हो ।
मिथ्या को है सत्य मानते, तुच्छ को श्रेष्ट समझते हैं ।
अधम, मन्द, दासत्व नौकरी, उसको प्रिया समझते हैं ।
अच्छा था उत्पन्न न होते, जग में हम जैसे कायर ।
बोझ से बचती भारत माता, और होता उसका आदर ।
चाहते यदि भलाई अपनी, पाखण्डों में क्यों फंसते ।
बुरी दशा यह देखि हमारी, लोग विदेशी क्यों हंसते ।
एक ओर ताऊन दुष्ट है, एक ओर दुर्भिक्ष पड़ा ।
एक ओर रेलों की घटना, एक ओर नृप त्रास कड़ा ।
क्यों कर न व्याकुल हो हृदय, क्योंकर न हम आह करें ।
क्यों कर न सुमिरें ईश्वर को, क्योंकर न हम चाह करें ।

(देव कवि)